आनंद पंछी निहारन क़ा

(भारत की सांस्कृतिक परंपरा)

भारत—देश और लोग

आनंद पंछी निहारन का

(भारत की सांस्कृतिक परंपरा)

विश्वमोहन तिवारी

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, भारत सरकार से प्राप्त वित्तीय सहायता द्वारा प्रकाशित

ISBN 81-237-2534-5

पहला संस्करण : 1998 *(शक 1920)*

ANAND PANCHHI NIHARAN KA *(Hindi)*

रु. 85.00

निदेशक, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया,
ए-5 ग्रीन पार्क, नई दिल्ली-110016 द्वारा प्रकाशित

हिंदी के लिए हरावल दस्ते का काम करने वाली तथा
शब्दकोश निर्माण करने वाली अप्रतिम प्रतिभा
डा. रघुवीर
तथा
अद्वितीय पक्षी प्रेमी एवं पक्षी विज्ञानी विश्वविख्यात
सालिम अली
को

विषय सूची

चित्रों एवं पारदर्शियों के लिए आभार ज्ञापन

इस पुस्तक में चार चांद लगाने का कार्य जिन कलाकारों ने अपने चित्र व किरण चित्र देकर किया है, उसका सारा श्रेय तो उनका है ही, उनके प्रति आभार लेखक के इन शब्दों से परे भी है। वास्तव में उन कलाकारों का सहयोग उनके पर्यावरण तथा पक्षी प्रेम का द्योतक है। लेखक इन कलाकारों का उनके अमूल्य सहयोग के लिए हृदय से आभारी है–

प्रतिभा पांडे : 1876, 1884, 1885 तथा 1891

आर.जे.आर. डेनियल्स : 570, 1008, 1057, 1717, 1933 तथा 1964

पी. कुमार : 27, 28, 60 क, 81, 90, 105, 115, 133, 138, 185 186, 311, 323 क, 350, 454, 455, 503, 549, 600, 650, 755, 767, 780, 819, 953, 1515, 1917 तथा 1957

विंसेंट वान रॉस : 49, 82, 93, 401, 430, 534, 722, 940, 962, 1049, 1127

सतीश अग्रवाल : 94, 97, 719, 763, 792, 847 तथा 946

अशोक जैन : 52, 72 तथा 750

कल्प वृक्ष : पृ. सं. 26

आभार

इस पुस्तक को लिखने में मुझे अनेक मित्रों, पुस्तकों तथा संस्थाओं से सहायता मिली है। कल्पवृक्ष दिल्ली स्थित पर्यावरण संरक्षण में कार्यरत संस्था ने एक पुस्तिका 'What's that bird ?' प्रकाशित की जिसे पढ़कर मुझे लगा कि पक्षियों के नाम हिंदी में चयन करने तथा गढ़ने का कार्य इस पुस्तक के अनुवाद से शुरू हो सकता है। कल्पवृक्ष के अध्यक्ष डा. आशीष कोठारी ने सहर्ष अनुमति दी। अनुवाद से विकसित होते होते यह एक स्वतंत्र पुस्तक बन गई है, किंतु पक्षियों का चयन उसी पुस्तिका के आधार पर है तथा कुछ रेखाचित्र भी उसी से लिए गए हैं।

मेरे पंछियों के निहारन को सुदृढ़ बनाने में मुझे श्री सुरेश शर्मा से बहुत सहायता मिली है। पुष्पघाटी तथा दिल्ली निकट स्थित पक्षी अभ्यारण्य भिंदावास (जिसके निर्माण में उनका बड़ा योगदान है) में उनके साथ हमें अनेक दुर्लभ पंछी भी निहारने को मिले। 'पंछी निहारन' के लिए जिन मित्रों ने विशेष सहयोग दिया उनमें सर्वश्री विंसेंट वान रॉस, मोहित अग्रवाल प्रमुख हैं। पुस्तक के लिए पंछियों के 'किरणचित्र' (फोटोग्राफ) अनेक मित्रों ने दिए हैं जिनके नाम अलग सूची में दे रहा हूं। मैंने Nature Photographars Society of India द्वारा आयोजित देश के अनेक वनों एवं अभ्यारण्यों में पंछी निहारन का आनंद लूटा, जिसे संस्था के सचिव डा. प्रमोद कुमार की निष्ठा ने सफल बनाया। देश के चारों कोनों में स्थित अभ्यारण्य-धामों के संस्थापक तथा कर्मचारी पक्षियों के रख-रखाव में जो कार्य कर रहे हैं वह प्रशंसनीय है। 'हरिणी नेचर कंजर्वेशन' के अध्यक्ष डा. भारत भूषण, विश्व प्रकृति निधि के कर्नल गौतम दास तथा रजत भार्गव अपने सुझावों के लिए धन्यवाद के पात्र हैं।

सालिम अली की अनेक पुस्तकों, प्रमुखतया 'Handbook', 'A Pictorial Guide, तथा 'Birds of India', से अनमोल ज्ञान प्राप्त हुआ है। डा. रघुवीर का हिंदी शब्दावली का शोध तथा निर्माण का 'हरावल दस्ते' का काम वंदनीय है, वह चाहे उतना व्यावहारिक न बन पाया हो किंतु हिंदी में शब्दों के निर्माण की अनंत प्रतिभा की नींव का कार्य, अदृश्य रहकर भी, वह कर ही रहा है। उनके *Indian Scientific Nomenclature of Birds* शब्दकोश के बिना मानक तथा वैज्ञानिक

शब्दावली का निर्माण अत्यंत दुष्कर होता। इस अनुपलब्ध शब्दकोश की प्रति मुझे डा. रघुवीर के पुत्र सांसद श्री लोकेशचंद्र के अनुग्रह से प्राप्त हुई। इस अनोखे शब्दकोश के निर्माण में जो प्रमुख योगदान श्री के एन दवे ने दिया वह चिरस्मरणीय रहेगा। श्री दवे ने सारे संस्कृत वाङ्मय को छानकर हमारे प्रकृति प्रेम तथा पक्षी-प्रेम की परंपरा को अंधकार में से निकाला तथा 'Birds in Sanskrit Literature' पुस्तक के द्वारा उसे प्रकाश में लाए। मैंने अपनी पुस्तक में सांस्कृतिक परंपरा संबंधी ज्ञान, मुख्यतया उन्हीं की पुस्तक के आधार पर दिया है।

इस पुस्तक को उपयोगी बनाने के लिए परिशुद्ध रंगीन चित्र नितांत आवश्यक हैं। उस खर्च के लिए सहयोग राशि (लगभग 70,000 रु.) का अनुदान 'केंद्रीय हिंदी निदेशालय' के माध्यम से संस्कृति विभाग ने देना स्वीकार किया और नेशनल बुक ट्रस्ट ने आगे बढ़कर इस पुस्तक के प्रकाशन का बीड़ा उठाया—यह उस संस्था का भारत में ज्ञान प्रसार का दुष्कर कार्य करने का एक ज्वलंत प्रतीक है, अपने कर्तव्यों के प्रति उसकी, उसके अध्यक्ष की तथा संबंधित अधिकारियों की कर्तव्यनिष्ठा का भी प्रतीक है। मुझे पक्षियों के नाम गढ़ने के लिए, संस्कृति विभाग के माध्यम से मानव संसाधन मंत्रालय ने 'सीनियर फेलोशिप' प्रदान की है जिसने मेरे उत्साह को बढ़ाया है, ऊर्जा प्रदान की है।

मेरे कुछ मित्र हैं—आदरणीय रामेश बेदी, सर्वश्री सुधा तिवारी, अम्बरीश बुद्धिराजा, आनंद प्रकाश, जगदीश चतुर्वेदी, गंगा प्रसाद विमल, शशि सहगल, चित्रा मुद्गल, दिविक रमेश, प्रताप सहगल जिनसे शब्दों तथा नाम के चुनाव के लिए बहुत चर्चाएं हुई हैं। श्रीमती संगीता गुप्ता ने रंगों के परिशुद्ध नमूने चित्रित किए हैं जिनसे रंगों के नाम द्वारा रंगों की लगभग निश्चित पहचान बनाने में उपयोगी सहायता मिलेगी। कुछ पंछी जिनके चित्र दुर्लभ थे, उनके रंगीन जल-चित्र बनाकर श्रीमती प्रतिभा पांडे ने अनोखा तथा बहुमूल्य सहयोग दिया है। डा. दीप्ति गंगवाणे ने अपने आलेख 'प्लेटो और भाषा' की प्रति उपलब्ध कराई।

उपरोक्त संस्थाओं तथा मित्रों के प्रति शब्दों द्वारा आभार प्रकट करने में अपने को असमर्थ पाता हूं, किंतु उनके सहयोग तथा अनुग्रह मेरे हृदय पर अंकित हैं तथा इस पुस्तक की गुणवत्ता में प्रदर्शित हैं जिसका लाभ सभी पाठकों को मिलेगा।

'देखा जाए तो शब्द अर्थ का स्पर्श ही नहीं कर पाते।'

पुस्तक क्यों ? कैसी ?

भारत में अंग्रेजों ने उपनिवेशीकरण के जो अनेक तरीके अपनाए उनमें से तीन तरीकों ने उन्हें सर्वाधिक लाभ पहुंचाया। एक तो था 'फूट डालो, राज्य करो', दूसरा था भारतीय संस्कृति पर आक्रमण तथा तीसरा तरीका था भारतीय भाषाओं का निष्कासन कर, अंग्रेजी को स्थापित करना।

भाषा का औपनिवेशीकरण इतना अधिक हो गया है कि हम परिवार, माता, पिता, भाई, बहन, पत्नी, पुत्र, पुत्री, आजी (दादी), नानी आदि शब्दों के स्थान पर अंग्रेजी शब्दों का ही उपयोग करते हैं। विशेषकर ये सारे शब्द अपने साथ पूरी संस्कृति लेकर चलते हैं, हमारी भावनात्मक ऊर्जा तो बढ़ाते ही हैं, हमारे अधिकारों तथा कर्तव्यों का भी अवचेतन में ही बोध करा देते हैं। क्या हम भावनाहीनता की तरफ बढ़ रहे हैं तथा इसीलिए और भी भावनात्मक ऊर्जा से भरे शब्दों का बहिष्कार करते जा रहे हैं, यथा जन्म, मृत्यु, प्रेम, प्रसव, शिक्षक, शिष्य, समाज, भाषा, भारत आदि ? ये शब्द भी हम अंग्रेजी में ही बोलते हैं। इन भावनात्मक शब्दों को अंग्रेजी में बोलने के कारण हम भी भावनाहीन होते जा रहे हैं, हमारा कहीं मशीनीकरण हो रहा है।

परिवार तथा समाज के बाद हमारा हृदय को स्पर्श करने वाला भावनात्मक गहरा संबंध प्रकृति से होता है, प्रकृति में सूर्य, चंद्र, पृथ्वी, पर्वत, वन, वृक्ष, नदी, पशु-पक्षी आदि आते हैं। और अब इन शब्दों पर भी अंग्रेजी का अधिकार बढ़ता जा रहा है। पढ़े-लिखे भारतीय आज पक्षी के नाम अंग्रेजी में ही जानते हैं। हमारी जो पक्षी-प्रेम तथा पंछी-निहारन की बहुत ही सशक्त परंपरा प्राचीन काल से रही है, उसे हम भूलते जा रहे हैं।

भारतीय संस्कृति में पक्षियों का बहुत महत्व है। विभिन्न देवताओं के वाहन के रूप में उन्हें सम्मान मिलता रहा है यथा विष्णु का गरुड़, ब्रह्मा और सरस्वती का हंस, कामदेव का तोता, कार्त्तिकेय का मयूर, इंद्र तथा अग्नि का अरुण क्रुंच (फ्लैमिंगो), वरुण का चक्रवाक (शैलडक) आदि। लक्ष्मी के वाहन उल्लू को यदि सम्मान नहीं मिलता है तब वह वास्तव में लक्ष्मी को कम सम्मान देने की इच्छा से। कृष्ण का 'मोर पंख' तो सभी भारतीयों के हृदय में स्थान पा चुका है। हंसों

का 'नीर-क्षीर' न्याय तो प्रसिद्ध ही है। पहले तो मैं इसे कवियों की कल्पना ही मानता था किंतु जब अरुण क्रुंचों को बहते पानी में से (जिसमें मानो 'नीर-क्षीर' मिला हो) अपनी विशेष छन्नीदार चोंचों की सहायता से अपने लिए पौष्टिक भोजन (क्षीर) निकाल कर खाते हुए देखा तब संस्कृत साहित्यकारों की अवलोकन शक्ति और रचना शक्ति की भूरि भूरि प्रशंसा ही कर सका।

ऋग्वेद के (1, 164, 20) मंत्र में वृक्ष पर बैठे दो सुपर्णों के रूपक से जीव और आत्मा का अंतर बतलाया गया है। अथर्ववेद (14/2/64) के मंत्र में नवदंपति को चकवा दंपति के समान निष्ठावान रहने का आशीर्वाद दिया गया है। यजुर्वेद की दो संहिताओं—वाजसनेयी तथा तैत्तिरीय का नाम क्रमशः वाज तथा तित्तिर पक्षियों के वंश नाम पर ही है। पहाड़ी मैना तथा शुकों को उनकी वाक क्षमता के आधार पर उन्हें वाग्देवी सरस्वती को समर्पित किया गया है। जहां ऋग्वेद में 20 पक्षियों का उल्लेख है, यजुर्वेद में 60 पक्षियों का है। यह ध्यान देने योग्य है क्योंकि ऋग्वेद का रचनाकाल लगभग 4000 वर्ष ई. पू. है *(New Light on the date of the Rgveda*—Dr. Waradpande, Sanskrit B.P. Sabha, Nagpur)

रामायण तथा महाभारत में, फिर पुराणों में अनेक पक्षियों पर सूक्ष्म अवलोकन हैं। सारा संस्कृत साहित्य, प्राकृत तथा पालि साहित्य भी, पक्षियों के ज्ञान से समृद्ध है। यह और भी प्रशंसनीय है कि पक्षियों के संरक्षण हेतु मनुस्मृति, पराशरस्मृति आदि में कुछ विशेष पक्षियों के शिकार का निषेध किया गया है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में भी ऐसे ही पक्षी-संरक्षण के समुचित निर्देश हैं। ये सब उस काल की घटनाएं हैं जब विश्व में अन्यत्र पालतू के अतिरिक्त पशु-पक्षियों को मुख्यतया शिकार तथा भोजन के रूप में ही देखा जा रहा था।

चरक संहिता का संकलन काल सातवीं शती ईसा पूर्व है (भारतीय विज्ञान के कर्णधार, डा, सत्यप्रकाश, Research Institute of Ancient Scientific Studies, Delhi) चरक संहिता, सुश्रुत संहिता, संगीत रत्नाकर तथा भरतमुनि के नाट्यशास्त्र में पक्षियों की चारित्रिक विशेषताओं का सूक्ष्म वर्णन है जो वैज्ञानिक पद्धति पर आधारित है। किंतु इसके बाद के उपलब्ध साहित्य से ऐसा लगता है कि, बाद में, संभवतया बर्बरों से अपनी रक्षा में जूझते भारत में, पक्षियों का अध्ययन वैज्ञानिक दृष्टि से विशेष नहीं किया जा सका। हां संस्कृत साहित्य में पक्षियों का वर्णन सूक्ष्म अवलोकन के आधार पर, बहुत ही कोमल तथा अनुरागपूर्ण भावनाओं के साथ किया गया है। मिथुनरत क्रौंच के वध को देखकर आदिकवि वाल्मीकि का हृदय करुण रस से ओतप्रोत होकर कविता के रूप में बह निकला था, "मा निषाद प्रतिष्ठाम् त्वम्..." अर्थात हे निषाद तुम्हें समाज में प्रतिष्ठा नहीं मिलेगी... हां, मुगल काल में बाबर, हुमायूं तथा जहांगीर ने, जो बहुत शिकार प्रेमी थे, पक्षियों का सूक्ष्म अवलोकन किया और लिखा। लोक साहित्य में भी पक्षियों का विशेष स्थान

है, किंतु न केवल हिंदी साहित्य में पक्षियों को वह स्थान (संस्कृत तथा लोक साहित्य वाला) प्राप्त नहीं है वरन जो है भी उसमें भी पक्षियों का वर्णन अधिकतर बंधी बंधाई रूढ़ि पर है चाहे वे पक्षी चातक, चकोर, पपीहा, सारस, चक्रवाक आदि हों अथवा तोता, मैना, हंस, उल्लू, कौआ, गिद्ध, अबाबील, खंजन आदि हों। किंतु इसके साथ यह भी दुखद सच है कि सामान्य विद्यार्थी या व्यक्ति को पक्षियों तथा पेड़ पौधों की सही पहचान बतलाने वाला रुचिकर साहित्य, हिंदी में, नहीं के बराबर है।

मुझे बहुत दिनों से, कोई 20 वर्षों से, जब से मैंने पंछी-निहारन गंभीरतापूर्वक शुरू किया, लग रहा था कि हिंदी में पक्षियों की पहचान बतलाने वाली, वैज्ञानिक जानकारी देने वाली तथा हमारी समृद्ध परंपरा से जोड़ने वाली रोचक पुस्तक की सख्त जरूरत है। सेवानिवृत्त होने पर जब नजर दौड़ाई तब हिंदी में अच्छे स्तर की तीन पुस्तकें दिखाई दीं–(1) 'भारत के पक्षी'–राजेश्वर प्रसाद नारायण सिंह; (2) 'भारत के पक्षी'–सालिम अली (हिंदी में अनुवाद किया रामकृष्ण सक्सेना ने), 1985; (3) 'पक्षी निरीक्षण'–पर्यावरण शिक्षण केंद्र द्वारा प्रकृति परिचय शृंखला में प्रकाशित।

राजेश्वर प्रसाद की पुस्तक 1958 में प्रकाशित हुई थी और उसका मुख्य ध्येय पक्षियों के प्रति, साहित्यिक उद्धरणों द्वारा, दिलचस्पी उत्पन्न करना था और उसमें वह अधिकतर सफल रही है; किंतु पहचान बतलाने में और विज्ञानसंगत जानकारी तथा नाम बतलाने में यह पुस्तक बहुत कमजोर रही। सालिम अली की पुस्तक तो 'मानक' है वह शुद्ध वैज्ञानिक शैली में लिखी गई है किंतु, अनुवाद में काफी कमियां हैं, यथा, Size शब्द का अर्थ 'आकार' (Shape) है जो 'कद' या 'आमाप' होना चाहिए, breeding के लिए 'नीड़न' है जिसके स्थान पर 'प्रजनन' अधिक सटीक है क्योंकि कुछ पक्षी नीड़ बनाते ही नहीं हालांकि प्रजनन तो सभी करते हैं। इसी तरह अनेक शब्दों के अनुवाद कमजोर हैं, अधिकतर स्थानीय नामों के अतिरिक्त जो हिंदी नाम दिए हैं वे उस पक्षी के अंग्रेजी नाम के शब्दशः अनुवाद हैं, या फिर अंग्रेजी नाम देवनागरी लिपि में लिख दिए गए हैं। तब भी इस कठिन समय में रामकृष्ण का एक गंभीर पुस्तक के हिंदी अनुवाद का प्रयास कहूं कि ऐसे विषयों पर लगभग प्रथम प्रयास, को प्रशंसनीय ही मानना चाहिए। पक्षी निरीक्षण पुस्तिका की शैली 'क्षेत्रकार्य' पुस्तिका के अनुरूप है और हिंदी में बहुत ही प्रशंसनीय कार्य है। इस पुस्तिका में नामों के अतिरिक्त 'विवरणात्मक नाम' भी दिए हैं जो पहचान करने में थोड़ी मदद करते हैं किंतु अधिकांश नाम अंग्रेजी नामों के शब्दशः अनुवाद हैं। एक तो अंग्रेजी नामों की शैली अधिकतर हिंदी के नामों की प्रकृति के अनुकूल नहीं बैठती, यथा, Red Wattled Lapwing का अनुवाद 'रक्तवैटलटिट्टिभ' किया है जब कि 'ललमुखीटिट्टिभ या ललमुंही टिटहरी' हिंदी की प्रकृति के अधिक अनुकूल होता। दूसरे, अधिकांश अंग्रेजी नामों से पक्षी की पहचान नहीं बनती यथा,

Maharatta Woodpecker, Tickell's Warbler, Common Iora, Sand Lark, Common Swallow etc.

लेकिन मेरे मन में हिंदी में पक्षियों की पहचान बतलाने वाली विशेष पुस्तक की सख्त जरूरत लगती ही रही। वैसे तो सालिम अली की 'भारत के पक्षी' में अधिकांश पक्षियों के (हिंदी भाषी क्षेत्रों के) अधिकांश स्थानीय नाम दिए हैं। किंतु जहां स्थानीय नाम काफी हद तक जीवंत नाम हैं, वहीं, एक तो, वे वैज्ञानिक दृष्टि से वर्गीकृत आधार (उदाहरणार्थ वे कुल तथा वंश का भेद नहीं समझते) पर नहीं हैं। उदाहरण के लिए 'बगला' ही लें। प्रचलित नामों में ग्यारह पक्षियों के नाम बगलों पर हैं—किल्चिया बगला, गाय बगला, बड़ा बगला, कड़छिया बगला, लाल बगला, पीला (जून) बगला, काला बगला, ताल बगला, कांचा बगला, अंधा बगला और तार बगला। पक्षियों के नाम वास्तव में एक जाति (या उपजाति) के नाम होते हैं। वे पक्षी एक ही जाति के माने जाते हैं जिनका आपस में रोटी-बेटी का व्यवहार हो, अर्थात जो आपस में प्रजनन कर वंश चला सकते हैं। जिन जातियों के आनुवंशिकी 'गुण' बहुत मिलते-जुलते हैं वे सब मिलकर 'वंश' (genus) बनाती हैं और इसी तरह वंशों से मिलकर 'कुल' (family) बनते हैं। बड़ा बगला, कड़छी बगला तथा किल्चिया बगला जातियां मिलकर 'बलाका' (Egretta) वंश बनाती हैं। गाय बगला (bubulcus) 'पिंगलिका' वंश का है, 'अंधा बगला' 'अंधबक' (ardeola) वंश का है। ये वंश कुछ अन्य के साथ मिलकर 'बक कुल' बनाते हैं। बक कुल Ardeidae, महाबक कुल Ciconiidae, दर्वीमुख कुल Plataleidae, तथा आटी कुल Plegadidae, मिलकर बक गण (Ciconiiformes Order) बनाते हैं। बक गण, हंस गण, जलचारि गण, विष्किर गण, कपोत गण, वाजि गण आदि अनेक गण मिलकर पक्षी वर्ग (Aves Class) बनता है। पक्षी वर्ग, स्तनपायी वर्ग आदि अनेक वर्ग मिलकर 'कशेरुकी संघ' (Vertebrata Phylum) बनता है। इस तरह हिंदी में 'बगला' नाम एक जाति, एक वंश का न होकर बक कुल की बहुत-सी जातियों का नाम है किंतु बिना किसी वैज्ञानिक वर्गीकरण के। शब्दकोशों की तो बात ही छोड़ दें उनमें 'बगला' शब्द न केवल बक कुल वरन महाबक कुल तथा जलचारि गण के क्रौंच कुल के पक्षियों पर भी लागू होता है। '(सितकंठी) काला तट बगला' (Indian Reef Heron) तथा 'रेखीवक्ष काला ऊर्ध्वमुखीबक' (Black Bittern) दो अलग वंश के पक्षियों का एक ही नाम है 'काला बगला'। भारतीय भाषाओं में अधिकांश पक्षियों के अधिकांश नाम उनके 'वंश' के या 'कुल' के नाम हैं, जाति के नाम नहीं हैं, उदाहरणार्थ मैना, पनकौआ, फूलचुही, कठफोड़ा, किलकिला, तीतर, बटेर, सुपर्ण, कूजिनी आदि। इस तरह की भ्रांतियां अधिकांश पक्षियों के स्थानीय तथा अन्य प्रचलित हिंदी तथा सभी भारतीय भाषाओं के नामों में हैं। हिंदी प्रचलित नामों का एक और बड़ा दोष यह है कि वे हर 200-300 किमी.

पर बदल जाते हैं। इसलिए आवश्यक है कि हिंदी में पक्षियों के नामों को मानक तथा वैज्ञानिक वर्गीकरण के यथासंभव अनुरूप बनाया जाए। श्री सालिम अली ने भी इसे अत्यंत आवश्यक माना है।

मैंने पक्षियों के नाम गढ़ने के लिए आवश्यक गुणों की खोज की तथा मेरे विचार से पक्षियों के नाम चुनते या गढ़ते समय निम्नलिखित गुणों को ध्यान में रखना चाहिए—

(1) नाम उच्चारण में सरल हो। यथासंभव छोटा हो।

(2) नाम जाति, वंश तथा कुल को ध्यान में रखकर दिया जाए। नाम से वंश और कुल का पता चल सके तो और उत्तम होगा।

(3) उस पक्षी के नाम से उसी वंश तथा कुल की अन्य जातियों के पक्षियों से पहचान बनाने में मदद मिले।

(4) नाम से उस पक्षी का विशिष्ट गुण या गुणों का पता चले।

(5) नाम यथासंभव भारतीय समृद्ध परंपरा से जुड़ा रहना चाहिए।

(6) नाम में राष्ट्रीय बन सकने की संभावना होनी चाहिए।

(7) प्रचलित नामों को यथासंभव उपयोग में लाया जाए।

डाक्टर रघुवीर के शब्दकोश *Indian Scientific Nomenclature of Birds* में जो नाम दिए हैं उनमें उपर्लिखित सात में से मुख्यतया चार गुण पर्याप्त मात्रा में मौजूद हैं, पहला अर्थात सरलता का तथा सातवां गुण नहीं है क्योंकि वे पूर्णतया संस्कृतनिष्ठ हैं। तथा तीसरा, पहचान में मदद कराने वाला गुण भी लगभग नहीं है। यद्यपि उन्होंने रंग के नाम देने की भी एक उत्तम पद्धति दी है, किंतु रंगों के नाम व्यावहारिक रूप से सुग्राह्य तथा सरल नहीं बन पाए। पक्षियों की पहचान के लिए रंगों को स्पष्ट तथा सही नाम देना आवश्यक हो जाता है। मैंने रंगों की पहचान के लिए प्रकृति से ही परंपरा के अनुसार नाम लिए हैं, उदाहरणार्थ, लाल के विभिन्न वर्णों के लिए खरबूजी, तरबूजी, सेंदुरी, ईंगुरी, रक्त, लोहित, अरुण, पिंगल, पाटल, ईंट, कत्थई, गुलाबी, महावरी, कपिल, बदामी आदि विशेषणों का उपयोग किया है। मैं स्पष्ट करना चाहूंगा कि यद्यपि 'प्रचलित नामों के उपयोग' वाला गुण उपर्लिखित तालिकाओं में अंतिम है, किंतु उसका महत्व न्यूनतम नहीं है, पुष्टि के लिए यथेष्ट होगा कि मैंने 98 में से (57 हिंदी से तथा 10 हिंदीतर से) 67 नाम (अधिकांशतः वंश के) प्रचलित नाम ही लिए हैं।

पक्षियों के भिन्न अंग अधिकतर भिन्न रंगों के होते हैं अतएव पक्षियों के अंगों के नामों की जानकारी भी पक्षियों की पहचान के लिए आवश्यक है। अंगों के नामों के विषय में भी भ्रांतियां विद्यमान हैं या उनकी जानकारी में सुनिश्चितता कम है। जैसाकि *Whitenecked Stork* का 'श्वेतकंठ महाबक;', जब कि उसे होना चाहिए 'श्वेतग्रीवा महाबक'। इसी तरह Nape के लिए हिंदी में 'घाटा' के अतिरिक्त

'कंधर' भी मिला। ऊपरी Nape को 'घाटा' (ऊपरी गरदन), तथा निचली Nape (निचली गरदन) को कंधर माना गया है। गरदन का एक अर्थ तो ग्रीवा होता है, यद्यपि अधिकांशतः उसका अर्थ ग्रीवा के पिछले (या ऊपरी) हिस्से के लिए किया जाता है—जैसे 'गरदन पर जुवा डालना'; गरदनी—बैल या घोड़े की गरदन पर डाला जाने वाला कपड़ा आदि। इसलिए इस पुस्तक में 'गरदनी' या 'गरदन' शब्द को पूरी Nape के अर्थ में प्रयुक्त किया गया है। Wing के लिए पंख; Feather के लिए पर या पिच्छ; Plume के लिए पिच्छक; Plumage के लिए पक्षति; winglet के लिए पक्षक आदि पद मैंने श्री रामेश बेदी के वानिकी शब्दकोश से लिए हैं। आवश्यकतानुसार कुछ सामान्य शब्दों को यथासंभव निश्चित अर्थ देने के लिए अर्थात उन्हें 'पद' का दर्जा देने का भी प्रयत्न किया है, यथा, streaked के लिए रेखित या धारीदार; striped के लिए पट्टित या पट्टेदार; striated के लिए खांचेदार आदि।

पक्षियों के मात्र नाम से उनकी विश्व में संशयहीन सुनिश्चित पहचान कठिन है। मात्र 'नाम' की पहचान को भी निश्चित करने के लिए इस पुस्तक में पक्षियों के लातिन भाषा में वैज्ञानिक वर्गीकरण के आधार पर द्विपदी या त्रिपदी नाम भी दिए गए हैं; और मैंने सालिम अली द्वारा *Hand book of the Birds of India and Pakistan* में दिए गए नामों का ही उपयोग किया है, और उसमें चौथे पद का उपयोग नहीं किया है। वैसे इनकी पुस्तक के कुछ अंग्रेजी तथा लातिनी नामों को बदलने के सुझाव दिए जा रहे हैं, देखिए 'TRAFFIC. India' (WWF)।

ऊपर दिए गए, नाम के सात गुणों में से पक्षी की पहचान देने वाला गुण अत्यंत कठिन है। पक्षियों की पहचान मुख्यतया रंग, रूप, बोल तथा गुणों से ही दी जानी चाहिए। पक्षियों के, विशेषकर एक ही कुल या वंश के पक्षियों के, रंगों और रूपों में बहुत ही सूक्ष्म अंतर होता है जिसे दर्शाने के लिए नाम बहुत लंबा हो जाता है। विभिन्न रंगों तथा एक ही रंग के विभिन्न वर्णों या आभाओं के सही शब्द भी दुर्लभ हैं। इसलिए नए विशेषणों का उपयोग भी आवश्यक हो जाता है, यथा आडुई भूरा; कत्थई आभा लिए केसरिया, chestnut या पांगर; पाटल (भूरापन लिए लाल) (rufous); इत्यादि। पहचान बतलाने वाले लंबे नामों को छोटा तथा सरल करने के लिए, मुझे एक नए नियम का आविष्कार करना पड़ा—"जब दो रंगों के नाम साथ साथ हों तथा उनके बीच खड़ी लकीर हो, यथा 'कल/सित', तब उस पक्षी का रंग, मुख्यतया, ऊपर काला तथा नीचे सफेद है।" यदि यह नियम नहीं बनता तो लिखना पड़ता "ऊपर काला नीचे सफेद" जो कि अत्यधिक लंबा हो जाता है यथा 'ऊपर काला नीचे सफेद शिखी चातक' जो नए नियम से 'कल/सित शिखी चातक' हो जाता है। इसी तरह 'कल-सित' का अर्थ सामने काला तथा पीछे सफेद है। तथा 'सामने लाल, पीछे हरा कुटुरूं' इस नियम से 'लाल-हरा कुटुरूं' हो

जाता है।

नाम से एक पक्षी की पहचान देना बहुत कठिन है क्योंकि तब इसके साथ कि उस नाम से आप उसे पहचान सकें यह भी अत्यावश्यक होता है कि उसी पक्षी के वंश या कुल के अन्य पक्षियों से वह नाम एक तरफ समानता रखे तथा दूसरी तरफ अपनी भिन्न पहचान बनाए रखे। एक पक्षी का नाम गढ़ते समय अन्य पक्षियों की विशेषकर उससे मिलते जुलते पक्षियों की, पहचान भी देखना अत्यंत आवश्यक है।

पक्षियों की पहचान बनाने में एक बहुत बड़ी बाधा है जो पक्षियों के जीवन से जुड़ी है। अधिकांश पक्षी अपने रंग तथा कभी कभी रूप भी ऋतु, लिंग तथा उम्र के अनुसार बदलते हैं और कभी कभी भौगोलिक क्षेत्रों के अनुसार भी बदलते हैं। अधिकांश जाति की मादाएं तथा लगभग सभी जाति के शावक भड़कीले रंग नहीं लेते, अधिकांश नर भी 'ग्रहणकाल' (प्रजनन ऋतु का समय छोड़कर) में अपनी मादा के दबे रंगों के ही लगभग समान दिखते हैं। शावकों और 'दबे रंग' की एक कुल या वंश की विभिन्न जातियों की मादाओं की अलग पहचान बहुत अनुभवी एवं कुशल पंछी-निहारक ही कर सकता है। किंतु प्रजननकाल के नर की पहचान तुलनात्मक रूप से सरल होती है तथा नए सिखाड़ियों को इनसे ही पहचान बनाना प्रारंभ करना चाहिए। अनुभव से तो प्रत्येक पंछी-निहारक उड़ती चिड़िया पहचानने लगता है। **इस पुस्तक में मुख्यतया, नाम गढ़ते समय तथा पहचान दिखाते समय, प्रजननकालीन नर के रंग ही लिए गए हैं।**

कुछ पक्षियों के नामों के उदाहरण देने से नामकरण की प्रणाली स्पष्ट हो जाएगी। Grey Heron का नाम 'सितसिर अंजन,' Night Heron का 'कल/सित चंद्रवाक' तथा Pond Heron का 'पांडु-कथ अंधबक' गढ़ा गया है। यद्यपि ये तीनों पक्षी क्रमशः कंक Ardea, वाक Nycticorax तथा अंधबक Ardeola वंश के हैं तथा इनके रूप में भी यथेष्ट अंतर है तब भी अंग्रेजी में तीनों के नामों में Heron आता है। इससे उनका वैज्ञानिक वर्गीकरण समझने में भ्रम होता है तथा उनके सर्वनिष्ठ गुणों को समझने में उतनी सहायता नहीं मिलती। Grey Heron नाम से उसका रंग समझ में आता है तथा 'कंक वंश' में भारत में एक ही पक्षी है जो भस्मी या अंजन (Grey) रंग का है, तथा इसके रंग के लिए 'अंजन' उपयुक्त है, इसलिए इसका नाम 'सितसिर अंजन' रखा गया। साथ ही हिंदी में कई स्थानों में तथा संस्कृत में और बंग्ला में भी इसका नाम 'अंजन' ही है, इस तरह यह नाम परंपरा से जुड़ता है, यह स्थानीय नाम तीन भाषाओं में प्रचलित है। इसका नाम छोटा रखने के लिए वंश का नाम 'कंक' कोष्ठक में रखा गया है। बक तथा अंजन दो शब्द भारत की अनेक भाषाओं में प्रचलित हैं इसलिए 'सितसिर अंजन' में राष्ट्रीय नाम बनने की संभावना है; अत्यंत सरल है; तथा इसे 'कंक' वंश में रखकर प्रचलित नाम की कमजोरी को दूर करते

हुए उसे उचित वैज्ञानिक वर्गीकरण में रखा गया है। इस तरह इस नाम में सातों आवश्यक गुण हैं, परंतु ऐसे संपूर्ण नाम कम ही बन पाए हैं। अंग्रेजी नाम Night Heron से न केवल बहुत कम मदद मिलती है वरन यह पक्षी Grey Heron के Ardea (कंक) वंश का न होकर Nycticorax (वाक वंश) वंश का है। हिंदी में इसका नाम 'कल/सित चंद्रवाक' गढ़ा गया है। इसका रंग मुख्यतया ऊपर काला तथा नीचे सफेद है; इसके काले माथे पर वक्र चंद्र के समान सफेद पट्टी है तथा इसके काले शिखर से लंबे सफेद वक्र 'पर' लटकते हैं (वे भी काली रात्रि में 'दूज के चांद' के समान दिखते हैं), तथा चंद्र की तरह यह पक्षी भी रात्रिचर है। इस तरह तीन कारणों से इसके नाम में 'चंद्र' बहुत उपयोगी है। इसके बोल, इसके वंश के पक्षियों के समान 'वाक' या 'क्वाक' ध्वनि वाले होते हैं, इसलिए Nycticorax वंश का नाम 'वाक' वंश चुना गया, संस्कृत में भी इसका एक नाम 'वाकश्चंद्रविहंगम्' है, गुजराती में 'वाक' है, तेलुगु में 'वाख' और तमिल में 'वाक्क' है। इस तरह इस नाम में भी सातों गुण पर्याप्त मात्रा में हैं। तीसरा अंग्रेजी नाम 'Pond Heron' (Ardeola वंश) भी विशेष उपयोगी नहीं है। इसका नया हिंदी नाम पांडु-कथ 'अंधबक' पहले तो बतलाता है कि यह 'सामने' मुख्यतया भूरी आभा लिए हल्का पीला (पांडु) है तथा 'पीछे' इसका मुख्य रंग कत्थई है तथा यह 'अंधबक वंश' का पक्षी है। अंधबक वंश की विशेषता है इनका 'छद्म आवरण' या 'एकरूपता' का बहुत प्रभावी होना, इसलिए यह देखने वालों को आसानी से नहीं दिखता है अर्थात देखने वाले अंधे के समान हैं। इसका हिंदी में प्रचलित नाम 'अंधा बगला' है किंतु 'बगला' वंश नाम Egretta वंश को दिया गया है, इसलिए 'अंधबक वंश' नाम देकर इसका उचित वर्गीकरण (Ardeola) किया गया है। संस्कृत में इसे 'अंधबक' कहते हैं। इस तरह इस नाम में भी सातों के सात उपलब्ध गुण हैं, यह ध्यान देने योग्य है कि Heron नाम Ardeidae कुल के चार वंश (Ardea, Ardeola, Egretta तथा Nycticorax) के पक्षियों के लिए आता है, किंतु ऐसा भी नहीं कि इन चारों वंशों के लिए हमेशा Heron ही आए; Egretta वंश के लिए Egret आता है, तथा Ardea वंश के लिए Egret भी आता है। मैंने इस कमजोरी को हिंदी नामों में नहीं आने दिया है। अधिकांश गणों (orders), कुलों (Family) तथा अनेक वंशों (genera) के नाम मैंने डा. रघुवीर तथा श्री दवे से लिए हैं, और इस कार्य के लिए उनके प्रति जितना भी आभार प्रदर्शित किया जाए, कम है।

भारत में कंक वंश (ardea) की आठ जातियां हैं, आठों को देखने से कंक वंश के जो सर्वनिष्ठ गुण मोटे रूप में दिखते हैं वे, लंबाई लगभग 91 सेमी. से लेकर 127 सेमी., लंबी गर्दन और टांगें; मोटी, लंबी नुकीली चोंच आदि हैं। ये सर्वनिष्ठ गुण अंग्रेजी नामांकित सभी Heron पक्षियों में नहीं मिलते इसलिए Heron नाम से पहचानने में विशेष मदद नहीं मिलती जब कि 'कंक' नाम से मिलती है। इसके

अतिरिक्त कंक वंशियों में और भी सर्वनिष्ठ गुण हैं जो गंभीर निहारक को थोड़े ही समय में समझ में आ जाते हैं। प्रत्येक वंश के पक्षियों में कुछ सर्वनिष्ठ गुण होते हैं जिनकी मदद से पक्षियों की पहचान सरल हो जाती है। 'बगला' वंशी (Egretta) भी लंबे, लंबी गर्दन तथा लंबी टांगों वाले होते हैं किंतु उनकी लंबाई 75 सेमी. से कम ही होती है, चोंच भी तुलनात्मक रूप से पतली होती है। यह बगला वंशी सर्वनिष्ठ गुण अंग्रेजी के सभी Egrets में नहीं हैं किंतु (Egretta) बगला वंशियों में हैं।

आंग्ल साहित्य में Swan, Goose तथा Ducks में स्पष्ट भेद है, किंतु संस्कृत साहित्य में Swan, तथा बहुत से Goose को हंस की ही संज्ञा देते हैं और कुछ कुछ भारतीय तथा लोक साहित्य में तो Ducks को भी हंस कह देते हैं। ये तीनों प्रकार की जातियां या कहना चाहिए उपकुल एक ही कुल 'अनातिदी' (Anatidae) (हंस) कुल के हैं। इस भेद को स्पष्ट रखने के लिए मैंने तीनों उपकुलों के नाम Swan–महाहंस, Goose–हंस तथा Duck–हंसक, डा. रघुवीर से लिए हैं किंतु सभी जाति नाम मैंने गढ़े हैं। मैंने Barheaded Goose का नाम 'पट्टसिर हंस' (डा. रघुवीर) न देकर 'दुपट्टी हंस' ही दिया है क्योंकि इसके सिर पर दो काली पट्टियां साफ दिखती हैं और यह नाम बोलने में सरल है। संस्कृत साहित्य में इसे 'कादंब हंस' तथा 'राजहंस नाम' दिए गए हैं किंतु हमारे काम के लिए वे अनुपयुक्त हैं। कई नामों को त्यागने के बाद Ruddy Shelduck का नाम 'कलकंठी बदामी चकवा' स्पष्ट पहचान बनाने के लिए चुना था क्योंकि ये दोनों ही (दृष्टिक) गुण इस प्रसिद्ध हंसक की पहचान बनाने के लिए पर्याप्त हैं और चकवा इनका पारंपरिक एवं बहुप्रचलित नाम है। किंतु यह नाम अत्यधिक लंबा है, अतएव इसे छोटा कर 'बदामी चकवा' ही रखा गया है किंतु लिखते समय इसे (कलकंठी) बदामी चकवा लिखते हैं; कोष्ठक के भीतर का शब्द नौसिखियों की मदद के लिए रखा गया है।

Grey Partridge नाम तो उनके लिए यथेष्ट है जो इस पक्षी को पहले से ही पहचानते हैं जैसे शिकारी या कुशल पंछी निहारक, किंतु आम आदमी या नौसिखियों के लिए इसे इस नाम से पहचानना बहुत मुश्किल होगा। पहली बात तो तीतर और बटेर में अंतर करना भी कठिन है और अनेक बटेर हैं जो नौसिखियों द्वारा 'Grey' शब्द के तहत माने जा सकते हैं। फिर कुछ तीतर भी हैं जिनसे यह नाम भ्रम पैदा कर सकता है इसलिए इन सभी तीतर बटेरों का अवलोकन करने के बाद मैंने Grey Partridge का नाम तय किया है–कथ/पिंग जाल तीतर। 'कथ/पिंग' तीतर मात्र से चकोर तथा Redbreasted Hill Partridge से भ्रम बना रह सकता है, इसलिए 'जाल' विशेषण लगाना पड़ा–'वर्गांकित' (जालीदार), क्योंकि बाकी तीतरों या बटेरों में बिंदियां, रेखाएं या पट्टियां होती हैं। यह वर्गांकित जाल गौर से देखने पर ही स्पष्ट होता है। नाम सरल करने के लिए 'कथ/पिंग' को कोष्ठक में रखा गया है।

Small Blue Kingfisher (Alcedo atthis) कहने से भी नौसिखियों को कोई मदद नहीं मिलती क्योंकि एक तो सभी किलकिले या मछरंगे (Kingfishers) छोटे ही होते हैं, यह उनमें भी छोटा है। दूसरा लगभग सभी किलकिलों या मछरंगों में (तीन-चार अपवाद हैं) नीला रंग (कम या अधिक) होता है। फिर इसमें ऊपर नीले के साथ नीचे केसरी रंग भी है। इसलिए मैंने इसका नाम रखा 'नील/केसर मछरंगा'। इस नाम से इसकी पहचान बहुत आसान हो जाती है। वैसे और भी आसान तथा स्पष्ट करने के लिए या तो 'केसरकर्णी' या 'सितकंधी' या 'नीली चोंच' भी जोड़ा जा सकता है, विशेषकर उसके चचेरे भाई Blue-eared Kingfisher (Alcedo Meninting) से अलग पहचान बनाने के लिए। इसलिए नौसिखियों के लिए इसका ठीक नाम 'नील/केसर (नीलचंचु) मछरंगा' होना चाहिए, किंतु यह नाम लंबा हो जाता है, इसलिए 'नील चंचु' को कोष्ठक में रखकर उसे नौसिखियों की सहायता करने का काम दे दिया है।

Small Minivet के अंग्रेजी नाम से तो जरा भी मदद नहीं मिलती। (इस सुंदर पक्षी के वर्णन के लिए देखिए पक्षी संख्या 1093) इतने सुंदर रंगों के अनुरूप इसके हिंदी नाम बुलाल चश्म, राजालाल, सजनी तथा सहेली (क्योंकि ये 6-10 तक के समूह में अक्सर देखे जाते हैं) हैं जो इसके साथ पूरा न्याय नहीं कर पाते हैं। किंतु संस्कृत नाम 'विस्फुलिंगक' बहुत सुंदर है जिसका अर्थ होता है 'चिनगारी' जो इसके मेघी रंग में हल्दी तथा कुमकुमी रंगों की सुंदरता को बखूबी दर्शाता है। Small Minivet *(P. cinnamomeus)* का नाम 'हल्दी कुमकुम (विस्फुलिंग)', एक सुंदर पक्षी के लिए सुंदर तथा सटीक नाम है।

Baya Weaver *(Ploceus phillippinus)* नाम से बया पक्षी जो घोंसला बुनता है, वह तो समझ में आता है, किंतु भारत में बुनकर पक्षियों की सात जातियां हैं तथा बया नाम से पांच जातियां हैं। इसलिए Baya Weaver नाम से पहचान के लिए विशेष सहायता नहीं मिलती। इस Baya Weaver का वक्ष सुनहला होता है तथा आंख, गाल और ठोड़ी कत्थई होते हैं (अन्य दो बयाओं के केवल गाल तथा आंख कत्थई होते हैं) इसलिए इसका नाम 'कथकंठ सोनल बया' रचा गया।

इन नामों को गढ़ते समय यह ध्यान बराबर रखा गया कि वे राष्ट्रीय बन सकें। अनेक (10) नाम हिंदीतर भाषाओं से चुने गए हैं। चूंकि भारतीय भाषाओं में, लोक में, पक्षियों के नाम अधिकतर उनके वंशों या कुलों के नाम होते हैं, जातियों के नहीं, इसलिए भारतीय भाषाओं से नाम लेते समय वंश या कुलों के नाम ही लिए जा सके हैं। Green Barbet का 'कुटुरू' नाम एक अपवाद है जो सात भाषाओं में इस जाति विशेष के लिए मिला। परिशिष्ट में एक सूची दी जा रही है जिसमें वे 90 नाम सम्मिलित हैं जो कम से कम तीन भारतीय भाषाओं में मिले हैं, क्योंकि अधिकांश नाम दो भाषाओं में तो मिलते ही हैं। इन नामों को सरल

तथा छोटा बनाने का प्रयास भी किया गया है। ऐसा करने में 'पहचान' वाले गुण का थोड़ा 'त्याग' भी करना पड़ा है, जहां ऐसा हुआ है वहां सुविधा के लिए नाम में एक सहायक पद जोड़ दिया गया है किंतु उसे कोष्ठक में रखा गया है। कोष्ठक यह इंगित करता है कि वह शब्द नाम का अंतर्निष्ठ अथवा आवश्यक अंग नहीं है, वरन सहायता तथा वैज्ञानिक समझ के लिए रखा गया है। नामों को छोटा करने के भरसक प्रयास के बाद तीन शब्दों वाले नामों की संख्या 35 है, दो शब्दों वाले नामों की संख्या 53, चार शब्द वाले 2 तथा एक शब्द वाले 8 नाम हैं। तदनरूप अंग्रेजी नामों में एक शब्द वाले नाम 10, दो वाले 75 तथा तीन वाले 13 नाम हैं। हिंदी नामों में शब्दों की संख्या लगभग नगण्य बढ़ी है, लेकिन साथ ही उसके अनुपात में 'पहचान गुण' में विपुल वृद्धि हुई है तथा नाम बहुत उपयोगी हो गए हैं।

यहां एक 'आत्मस्वीकार' आवश्यक समझता हूं। नामों को छोटा करने, सरल करने तथा बोलने में 'अवरोधहीन' बनाने में मैंने व्याकरण के नियमों का कड़ाई से पालन नहीं किया है। यास्क ऋषि ने भी कहा है "संस्कारं नाद्रियेत, निर्वचनम् कुर्यात", अर्थात निर्वचन या अर्थ समझना प्रमुख है नियम-पालन नहीं। मैंने विशेषणों का संज्ञा की तरह उपयोग किया है, संज्ञाओं का विशेषणों की तरह; ऐसे सामासिक शब्द बनाये हैं जिन पर संभवतः वैयाकरणियों को आपत्ति हो सकती है किंतु अर्थ बनता है, नाम सरल तथा छोटा होता है। व्याकरण से जो स्वतंत्रता मैंने ली है वह लोकोपयोगी होगी, ऐसा मेरा विश्वास है। भाषा-विज्ञानी मेरी कठिनाइयों को समझते हुए, महत उद्देश्य हेतु मुझे क्षमा करेंगे, ऐसा मेरा विश्वास है। किसी ऋषि ने कहा है कि 'शब्द गढ़ते समय एक अक्षर या एक मात्रा कम कर सकने पर, एक पुत्र प्राप्ति-सा आनंद मिलता है' यह आनंद मुझे अनेक बार मिला है। आशा है पाठक भी इस आनंद को निहारन-आनंद के साथ लूटेंगे।

पक्षियों को प्रकृति में देखने के बाद, अक्सर या तो उनकी पहचान सुनिश्चित करने के लिए, या उनके विषय में और जानकारी लेने के लिए पुस्तकों की शरण में जाना पड़ता है। प्रश्न उठता है कि पक्षियों के नाम किस क्रम में रखे जाएं। सालिम अली ने जो अंतर्राष्ट्रीय पद्धति अपनाई है, वह सर्वमान्य है इसलिए मैंने भी वही क्रम अपनाया है। अब सोचा गया कि सालिम अली ने जो क्रमांक दिए हैं, उनका उपयोग किया जाए या नहीं। 'तुरंत-संदर्भ' तथा 'अंतर-संदर्भ' में तो इन क्रमांकों का उपयोग है ही, जाति को सुनिश्चित करने में, विशेषकर उपजातियों को भी सुनिश्चित करने में वे अत्यंत उपयोगी हैं। उपजाति तक की सुनिश्चिति करने के लिए त्रिपद लातीनी नामों का उपयोग होता है, और प्रत्येक त्रिपद लातीनी नाम के लिए एक सालिम अली क्रमांक है। आमतौर पर पुस्तकों में द्विपद लातीनी नाम ही उपयोग में लाए जाते हैं क्योंकि उपजातियों में भेद करना, अधिकांशतया क्षेत्रों में नहीं वरन प्रयोगशालाओं में ही हो सकता है। किंतु उपजातियों की रिहाइश में, अधिकांशतया, भिन्नता रहती

है, मात्र इन विभिन्नताओं को दिखलाने के लिए ही त्रिपद लातीनी नाम का उपयोग किया गया है। प्रत्येक पक्षी की अन्य (भारतीय) उपजातियों के नाम भी दिए गए हैं।

ये नाम लोकप्रिय हो सकें इस उद्देश्य से यह पुस्तक लिखी है। लगभग तीन वर्षों से चल रहे इस पुस्तक का लेखन अक्तूबर 95 को पूरा करने के बाद मैंने पांडुलिपि कंप्यूटर में टंकित होने के लिए दे दी थी। और तब हरिद्वार में हो रही 'सत्तरवीं आल इंडिया फिलॉसफिकल कांग्रेस' में 'पुनर्जन्म—एक आधुनिक दृष्टि' प्रपत्र प्रस्तुत करने के लिए मैं गया था। वहां मुझे भाषा-विज्ञान पर कुछ प्रपत्र सुनने को मिले। इनमें से पूना विश्वविद्यालय की डा. दीप्ति गंगवाणे का 'भाषा पर प्लेटो' नामक प्रपत्र मुझे इस पुस्तक के लिए बहुत उपयोगी लगा। यह जानकार मुझे सुखद आश्चर्य हुआ कि प्लेटो ने नाम तथा ज्ञान की जो विशद व्याख्या की है, मेरी पुस्तक उनका पालन पहले से ही पूरी तरह कर रही है। प्लेटो के अनुसार "नाम नामांकित वस्तुओं के प्रतिबिंब (या चित्र या मूर्ति) या उनके प्रतिनिधि होते हैं, नाम उपकरण हैं जिनका कार्य जानकारी देना या आदेश देना है। चूंकि वे उपकरण हैं इसलिए उनका गढ़ना या उनकी खोज एक कुशल कारीगर या कलाकार का काम है। नाम नामांकित वस्तुओं के विशेष गुणों का चित्रण करते हैं तथा उनकी सारभूत सच्चाई का भी। किसी भी ज्ञान को प्राप्त करने के लिए सर्वप्रथम आवश्यकता होती है नाम की, तब उसके वर्णन की, फिर उसके चित्र या प्रतिबिंब की तत्पश्चात इस तरह ज्ञान प्राप्त करने के बाद ही उस विषय या वस्तु की समझ आती है और उस समझ का मेल उस वास्तविक जानकारी से होना चाहिए जो जीवन की प्राकृतिक विधि से प्राप्त की जाती है।" इस पुस्तक में पक्षियों के नाम तथा उनकी जो भी जानकारी मिलेगी उसे भी पंछियों को प्रकृति में निहारकर मेल स्थापित करने से जो आनंद आएगा वह एक पंछी निहारक ही जान सकता है।

पंछियों में कितनी विविधा है, देखकर सुखद आश्चर्य होता है। एक तरफ तो बतासी जैसे पंछी हैं जो अंडे देने, सेने तथा शावक पालन के अलावा अन्य सारे कार्य हवा में कर लेते हैं, तो दूसरी तरफ शुतुरमुर्ग सरीखे पंछी हैं जो उड़ना जानते ही नहीं। एक तरफ नर बया है जो केवल घोंसला बुनता है और गृहस्थी का अन्य काम नहीं करता तो दूसरी तरफ लमपूंछा जलमंजुर है जो गृहस्थी का सारा काम स्वयं करता है, मादा अंडा देने के बाद, दूसरे नर के पास चली जाती है; तो तीसरी तरफ कोयल हैं जो प्रजनन के सिवाय कुछ काम नहीं करते। अनगिनत वैविध्य से भरा है पक्षीजगत। वे किस तरह अपने जीवन की, तूफान, बाढ़, सांप जैसे घुसपैठियों तथा बाज जैसे शिकारियों से रक्षा करते हैं, यह प्रेरणाप्रद तो है, सुखद भी है। बस वे किसी तरह मनुष्य के अन्याय से अपनी रक्षा नहीं कर पाते। उनकी निरीहता और असहायता करुणाजनक तो है ही, हमारे आत्मघाती स्वार्थ के प्रति हमें चेतावनी भी देती है। इसमें किसी को भी संदेह नहीं होना चाहिए कि इस पृथ्वी पर यदि

पंछी नहीं बचेंगे तो मनुष्य भी नहीं बचेगा। कीड़े-मकोड़े यदि प्रकृति की जैव शृंखला में एक आवश्यक कड़ी हैं, तो वे लाभ के साथ हमें, यदि उन पर नियंत्रण न रखा जाए तब, भयंकर जानलेवा नुकसान भी पहुंचाते हैं; उन पर पर्याप्त नियंत्रण आज का अंतरिक्ष विज्ञानी भी नहीं कर सकता। क्षुद्र कीड़ों के पास बुद्धिमान वैज्ञानिकों के प्रत्येक अस्त्र-शस्त्र की काट है, वैज्ञानिकों की कीड़ों से युद्ध में हार निश्चित है। संतुलन बचा सकते हैं तो पंछी तथा प्रकृति की शृंखला से बद्ध अन्य जीव। आज पाश्चात्य सोच से प्रभावित वैज्ञानिक अपने स्वार्थ के मोह में प्रकृति को शत्रु समझता हुआ उससे युद्ध कर उसे जीतना चाहता है, जबकि भारतीय ऋषियों को हजारों वर्ष पहले यह समझ में आ गया था कि मानव इस अद्भुत प्रकृति की शृंखला की ही एक कड़ी है, और यदि वह योग्यतम है तो उसकी जिम्मेदारी भी सर्वाधिक है तथा वह अन्य जीवों के साथ सृष्टि में, जीवन जीने में उनका मात्र एक सहजीवी है। यदि मैं बार बार संस्कृति की बात कर रहा हूं तो वह इसलिए कि भाषा और संस्कृति में अटूट तथा जीवंत संबंध है। अंग्रेजी नामों से तो हम पाश्चात्य संस्कृति की ओर ही जाएंगे। भारतीय संस्कृति की ओर तो भारतीय भाषाएं ही लाएंगी।

इस पुस्तक को लिखते समय पूरा प्रयास किया गया है कि वैज्ञानिक तथा साहित्यिक/सांस्कृतिक जानकारी में संतुलन बना रहे। पुस्तक को रोचक तथा उपयोगी बनाने के लिए पक्षियों के विषय में जो प्रचलित धारणाएं हैं, जैसे सुंदर स्त्री के नयनों की उपमा खंजनों से की जाती है, चातक केवल स्वाति-नक्षत्र-काल की वर्षा का जल ही पीता है, चकवा-चकवी रात में विरही रहते हैं आदि, इनके वैज्ञानिक कारण भी समझाए गए हैं। मैं नहीं मानता कि वैज्ञानिक ज्ञान तथा दृष्टि के बढ़ने से भावनात्मक संसार को खतरा है, वरन भावनात्मक तथा कल्पना शक्ति का इससे विस्तार ही होता है। पक्षियों से प्रेम द्वारा प्रकृति से प्रेम भी बढ़ेगा तथा समाज में भी प्रेम, समृद्धि, स्वास्थ्य तथा सुख की वृद्धि होगी।

इन नामों को रचने/गढ़ने का, इस पुस्तक को रचने का ध्येय देश में, बकौल सालिम अली, 'चिड़ियों के अध्ययन को विकसित करना है' किंतु उतना ही महत्वपूर्ण ध्येय भारतीय भाषा, संस्कृति तथा पक्षी-प्रेम के संरक्षण तथा विकास, प्रकृति से प्रेम की हमारी परंपरा की वापसी भी है। तेजी से बढ़ती आबादी, भोगवाद तथा प्रदूषण प्रकृति पर आत्मघाती आक्रमण कर रहे हैं और प्रकृति से प्रेम हमें नया जीवन दान दे सकता है। तुलसीदास के समान, सच्चा भारतीय अनुभव करता है कि यदि शरद ऋतु में खंजन हमारी जमीन पर आते हैं तब वह हमारे पुण्यकर्मों का समयानुकूल फल है—"जानि सरद ऋतु खंजन आए। पाइ समय मनु सुकृत सुहाए।।" और यदि साइबेरियाई क्रेन (सिंदूरीमुख सितक्रौंच) नहीं आ रहे हैं तो हमें मानना चाहिए कि वह हमारे पाप कर्मों का समयानुकूल परिणाम है। किंतु मानव अब प्रायश्चित कर रहा है, इसलिए मैं सारे असगुनों को देखते हुए भी भविष्य के

प्रति आश्वस्त हूं कि पंछी इस अद्वितीय नीले ग्रह से विलुप्त नहीं होंगे तथा यह पृथ्वी हरी-भरी लहलहाती रहेगी। और भारतीय भाषाओं के अपना जन्मसिद्ध स्थान पाने से भारतीय संस्कृति, प्रकृति प्रेम तथा प्रकृति के संरक्षण की हमारी परंपरा भी लहलहाती रहेगी।

यह पुस्तक, अपनी संरचना में, शायद पहली तथा अकेली पुस्तक है अतएव इसमें भरपूर सावधानी बरतने के बावजूद त्रुटियों की संभावना है, जिनके लिए मैं क्षमायाचना के साथ यह अनुरोध करना चाहता हूं कि सुधी पाठक मुझे उनसे अवगत कराने की कृपा करें।

जन्माष्टमी 1997 **विश्वमोहन तिवारी**

वनस्पतयः शांतिः पृथिवी शांतिः अंतरिक्ष शांतिः

"...चिड़ियों को दूर से ही देख लेना और एक तरह का आनंद अनुभव कर लेना ही काफी नहीं है। अगर हम उन्हें पहचानें, उनके नाम को हम जानें, और उनको गाते चहचहाते सुनकर उनको पहचान सकें, तो हमारा आनंद और भी बढ़ जाएगा। अगर हम उनके साथ इस तरह हिलमिल जाएं तो वह हर जगह हमारी साथी हो जाती हैं।..."

–जवाहरलाल नेहरू

प्रकृति और पंछी

अन्न उनका पोषण करता है जो वन का पोषण करते हैं।

—कश्मीरी कहावत

प्रकृति जीवन देती है, पालन-पोषण करती है, सुख देती है, आनंद देती है। प्रकृति मां के समान अपने ऊपर अत्याचार भी सह सकती है और उसके दुष्प्रभाव के बावजूद अपना संरक्षण तथा स्वास्थ्यलाभ भी कर सकती है। किंतु यह सब एक सीमा तक ही जिसके अतिक्रमण के बाद जीवों की जातियां की जातियां विलुप्त होने लगती हैं, मडागास्कर के 'डोडो' के समान, या अभी विलुप्त हुई 'यात्री कबूतर' के समान जो लाखों की संख्या में उत्तरी अमेरिका में थे। अनेक जातियां आज भी विलुप्त हो रही हैं क्योंकि जंगल बेहिसाब काटे जा रहे हैं, नदियां प्रदूषण द्वारा स्वयं मृतप्राय हो रही हैं, अथाह समुद्र भी प्रदूषण के शिकार हैं क्योंकि हमारी भोग की लालसा भी अथाह है जिसे हम 'विकास' का नाम दे रहे हैं। लगता है कि प्रकृति पर अत्याचार की लक्ष्मण रेखा हमने यदि पार नहीं कर ली है तो पार कर रहे हैं। 400 करोड़ की आबादी से लदी-फदी धरती अब भी सभी की 'आवश्यकताओं' को पूरा कर सकती है किंतु हमें अनावश्यक भोग से बचना है। हमारी सांस्कृतिक परंपरा ने सदा ही हमें स्वस्थ और सुखदायक विकल्प दिया है—वास्तविक सुख अनावश्यक भोग में नहीं है, वरन वह दुख को ही बढ़ाता है; प्रकृति के साथ एकात्म होकर ही हम विकास कर सकते हैं, सुखी हो सकते हैं। प्रकृति को जीतने की इच्छा के स्थान पर हमें उसे मां के समान समझ प्रेम करना चाहिए : माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः।

प्रकृति के स्वास्थ्य पर ध्यान रखना हमारा परम कर्तव्य बन जाता है, इसलिए भी कि हमने ही उसे विनाश के कगार पर ला खड़ा किया है। इस महत कार्य के लिए पंछी हमारी अनमोल मदद कर सकते हैं। इसलिए पंछियों से स्वाभाविक प्रेम के आवेग को हमें अवरुद्ध न कर खोल देना है। इस कार्य में पंछियों के विषय में हमें जानकारी—दोनों, वैज्ञानिक तथा सांस्कृतिक—प्राप्त करनी चाहिए।

वैज्ञानिक जानकारी को सरल तथा सुबोध बनाने में प्राणियों के वैज्ञानिक

वर्गीकरण की जानकारी बहुत मदद करती है। अधिकांश व्यक्तियों को प्राणियों के विषय में अनेक अद्‌भुत तथ्य, आंकड़े इत्यादि की जानकारी रहती है किंतु वे 'ज्ञान' के स्तर पर नहीं पहुंच पाते। एक लेखक हैं, अपनी विद्वत्ता तथा उत्सुकता के लिए प्रसिद्ध हैं। उन्होंने एक लेख में लिखा कि, 'अजगर सांप के पसीने को एक स्थान पर तितलियां पी रही थीं' किंतु अजगर सांप को पसीना आता ही नहीं। तो मैंने इस (पसीने वाले) विषय पर कहीं भी पढ़ा नहीं था, बस यह पढ़ा था कि सरीसृपों की तरह सांप भी असमतापी (cold blooded) प्राणी है। इसलिए उसके शरीर का तापक्रम मानवों या पक्षियों की तरह निश्चित न रहकर वातावरण के अनुसार चढ़ता उतरता रहता है, अर्थात उसे पसीने की आवश्यकता ही नहीं। यह हुआ ज्ञान, मात्र जानकारी नहीं। गिद्ध चूंकि मृत मांस खाते हैं वे घृणा के नहीं स्वागत के पात्र हैं—'जटायु' तथा 'शकुंत' की तरह और सांपों की आबादी पर बाज तथा सुपर्ण बराबर नियंत्रण रखते हैं। इस तरह मात्र जानकारियों से नहीं वरन वर्गीकरण तथा अन्य वैज्ञानिक ज्ञान से हमें पक्षियों का प्रकृति में जो स्थान है उसका विवेक प्राप्त हो सकेगा।

पक्षियों की सांस्कृतिक जानकारी (ज्ञान) भी वैज्ञानिक जानकारी के समान महत्वपूर्ण है, इसलिए इस पुस्तक में दोनों प्रकार की जानकारियां (ज्ञान) दी गई हैं। हम सारस पक्षी को, आसान होते हुए भी, क्यों नहीं मारते, चकवा-चकवी को इतना ऊंचा स्थान क्यों दिया है; मोर भी अभी तक क्यों बचे हुए हैं, आदि आदि रोचक बातों को इस पुस्तक में स्थान दिया गया है।

सर्वप्रथम पक्षियों का वैज्ञानिक अध्ययन भारत में प्रारंभ हुआ। जब तक जानकारी फुटकर तथ्यों तथा आंकड़ों तक ही सीमित रहती है वह वही रहती है—'फुटकर जानकारी', वह ज्ञान का दर्जा तभी पा सकती है जब उसे कुछ नियमों द्वारा सुसंबद्ध किया जाए। ईसा पूर्व सातवीं शती में संकलित (रचना तो उससे भी पहले की होगी) 'चरक संहिता' में पक्षियों को चार वर्गों में बांटा गया है : प्रतुदः (peckers), विष्किराः (scratchers), प्लवाः (Water birds) तथा प्रसहाः (birds of prey); साथ ही और अन्य उपयोगी जानकारियां भी सुसंबद्ध रूप से दी गई हैं। 'चरक संहिता' का अनुवाद फारसी में ई. पू. छठी शती में हो गया था। ई. पू. चौथी शती में यूनानी दार्शनिक अरस्तू ने सभी जीवों को तीन भागों में बांटा था—वनस्पति, प्राणी तथा मानव। 'चरक संहिता' अरस्तू से तीन सौ वर्ष पहले उनसे बहुत आगे थी। पूर्णतः वैज्ञानिक वर्गीकरण की आधारशिला रखने का श्रेय स्वीडी जीव विज्ञानी 'कार्लवान लीने' को मिलता है जिन्होंने सन 1735 में अपनी पुस्तक 'सिस्तेमा नातुरी' (Systema Naturae) में अपने वर्गीकरण के सिद्धांत को प्रतिपादित किया। उन्होंने संसार के समस्त जीवों तथा पदार्थों को 'तीन जगतों' में बांटा—खनिज जगत, वनस्पति जगत तथा प्राणी जगत। फिर प्रत्येक जगत

(kingdom) को उन्होंने संघों (phylum) में बांटा; संघों को वर्गों (classes) में; वर्गों को गणों (orders) में; गणों को कुलों (families) में, कुलों को वंशों (genera) में और वंशों को जातियों (species) में बांटा। पक्षी की जातियां वे समूह हैं जो अपने मुख्य गुणों में समान रहते हुए, आपस में प्रजनन कर सकते हैं।

पक्षी की परिभाषा क्या है ? मात्र उड़ सकने वाले प्राणी को पक्षी नहीं कहते, अर्थात उड़ सकना पक्षी का आवश्यक गुण नहीं है। पक्षी वह द्विपाद प्राणी है जो 'परों' से ढंका रहता है। पक्षी भी स्तनपायी की तरह समतापी है किंतु अंडे देता है। अंडों को वह (अपवाद सहित) अपने शरीर की गर्मी से 'सेता' (ऊष्मायन) है। (निकोबार में 'मेगापोड' पंछी कुशल ताप-इंजीनियर के समान रेत की गर्मी से अपने अंडों का ऊष्मायन करते हैं)। शुतुरमुर्ग उड़ नहीं सकते।

पक्षियों का उद्भव, प्राणियों की विकास शृंखला में, लगता है कि अब तक मान्य चौदह करोड़ वर्ष पूर्व के आर्कियॉप्टेरिक्स (जुरासिक काल में) से भी पहले लगभग 22 करोड़ वर्ष पूर्व हुआ होगा, इस काल के एक पक्षी के जीवाश्म मिले हैं जिसका जातीय नाम 'आद्य पक्षी' (Protoavis) रखा गया है। इस जीवाश्म की संरचना से ऐसा मालूम होता है कि पक्षियों का विकास डायनासोर प्रकार के सरीसृपों से हुआ है।

पक्षियों का वर्गीकरण जो सालिम अली तथा डिलॉन रिप्ले ने अपनी पुस्तक *Handbook of the birds of India and Pakistan* में स्वीकार किया है मैंने उसी का अनुसरण अपनी इस पुस्तक में किया है। इसमें प्रत्येक जाति तथा उपजाति की एक क्रम संख्या है जो उनकी सभी पुस्तकों में निश्चित है तथा वह उनकी सरल पहचान बनाती है, उस क्रम का भी मैंने अनुसरण किया है क्योंकि वह मुझे पक्षियों का संदर्भ ढूंढ़ने के लिए एक सरल तथा सुबोध पद्धति लगती है। पक्षी-वैज्ञानिकों का ऐसा विश्वास है कि अधिक क्रम संख्या वाले पक्षी कम क्रम संख्या वाले पक्षियों की तुलना में अधिक विकसित हैं।

पक्षियों की एक विशेषता गौरतलब है—इन 'समतापियों' के तापमान का मानव के तापमान से अधिक (38° से 44°) होना। इसका लाभ यह है कि उनकी कार्यशीलता बढ़ जाती है किंतु साथ ही उनकी भोजन की आवश्यकता भी बढ़ जाती है। इसीलिए पंछियों का अधिकांश समय 'आहार' में ही निकलता है। किंतु पक्षियों के दांत नहीं होते, केवल चोंच होती है जो पकड़ने, चीरने, फाड़ने का काम करती है, और पीसने के कार्य के लिए पक्षियों के पाकाशय (पेट में) में 'पोटा' (gizzard) होता है। यदि पक्षियों के मुंह में दांत होते तो एक तो उनका वजन बढ़ जाता, दूसरे उनके गुरुत्वकेंद्र का संतुलन कठिन हो जाता; पोटा की स्थिति गुरुत्वकेंद्र के बहुत निकट होती है। पक्षी दांतों का काम कंकड़ खाकर चलाते हैं।

पक्षियों की ज्ञानेंद्रियों में दृष्टि तथा श्रवण शक्ति बहुत तीव्र होती है, स्पर्श की सामान्य तथा स्वाद एवं घ्राण की कम होती है। हमें तेज प्रकाश से कम प्रकाश में आने पर देखने के लिए थोड़े समय रुकना पड़ता है, पक्षियों को नहीं; इसी तरह दूर देखते हुए एकदम पास देखने में भी पक्षियों को देर नहीं लगती। अन्य पशुओं की तुलना में पंछियों में गायन शक्ति अद्‌भुत रूप से विकसित होती है। पक्षियों की ग्रीवा इतनी लचीली होती है कि कुछ जातियां (उल्लू) केवल अपनी गर्दन घुमाकर चारों तरफ देख सकती हैं। कुछ पक्षियों की दोनों आंखें अलग अलग स्वतंत्र रूप से देख सकती हैं तथा कुछ की (विशेषकर शिकारी पक्षियों की) दोनों आंखें एक सीध में आकर त्रिविमा में आश्चर्यजनक परिशुद्धता से दूरी का अनुमान लगा सकती हैं।

पक्षियों में मौसम तथा मौसम के पूर्वानुमान की भी अद्‌भुत क्षमता होती है। अधिकांश पक्षी एक वर्ष में एक बार या दो बार ही अंडे देते हैं, और उसी मौसम में अंडे देते हैं जब उनके तथा उनके शावकों के लिए आहार खूब उपलब्ध हो। अधिकांश, अनुकूल मौसम न होने पर, अंडा देते ही नहीं। वे ठीक मौसम में ही प्रवास के लिए प्रयाण करते हैं तथा लौटते हैं, जिसका कैलेंडर से संबंध न होकर आने वाले मौसम से होता है। कभी कभी वे धोखा भी खाते हैं, तूफानों में भी फंसते हैं, धुंध में फंसकर दिग्भ्रमित भी हो जाते हैं। ठंडी जलवायु में रहने वाली जाति या उपजाति, गरम जलवायु में रहने वाली उसी उपजाति या जाति के पक्षी की तुलना में अधिक बड़ी होती है, इससे शरीर के क्षेत्रफल की तुलना में भार में अधिक वृद्धि होती है जो उसे ठंड सह सकने के लिए अधिक गर्मी देती है।

भारत पक्षियों में विविधता की दृष्टि से विश्व में, भूमध्यरेखा पर स्थित विशालतर देश ब्राजील के बाद, दूसरे स्थान का देश है। विश्व में पक्षियों की लगभग 8650 जातियों में से भारत में लगभग 1200 जातियां हैं। यह हिमालय का ही वरदान है कि एक तरफ तो साइबेरिया, उत्तरी ध्रुव, चीन से आने वाली ठंडी हवाओं को रोकता है किंतु दूसरी तरफ, वहां से आने वाले पक्षियों को, ठंड में, भारत में सुरक्षा देता है। भारत में टंड्रा जैसी जलवायु के साथ साथ भूमध्य रैखिक समेत लगभग सभी मुख्य तरह की जलवायु हैं।

भारत प्रायःद्वीप विश्व के छह जैव-भौगोलिक क्षेत्रों में से पौर्वात्य (oriental) क्षेत्र में आता है। भारत-क्षेत्र को सात उपक्षेत्रों में बांटा गया है—(1) हिमालय (2) पश्चिमोत्तर भारत (3) उत्तर (4) दक्षिण प्रायःद्वीप (5) दक्षिण-पश्चिमी (6) उत्तर-पूर्व और बंगलादेश, तथा (7) श्री लंका। यह गौरतलब है कि भारतीय गरानों (mangroves, ज्वार वनों) के पक्षी 'हिंदचीन' क्षेत्र के पक्षियों से बहुत मिलते-जुलते हैं; भारत के ऊष्ण-कंटीले वनों के पक्षी पूर्वी अफ्रीकी सोमाली-शुष्क क्षेत्र के पक्षियों

से, तथा उच्च हिमालय क्षेत्र के पक्षी यूरेशीय ध्रुव क्षेत्र के पक्षियों से बहुत समानता रखते हैं।

पक्षियों का प्रवासन उनका अत्यंत अद्भुत एवं रहस्यमय गुण है। ध्रुव कुररी इतनी सूर्यप्रेमी है कि प्रत्येक वर्ष उत्तरी ध्रुव में लगभग 5 महीने की गर्मी बिताकर लगभग 17,000 किमी. की दूरी तयकर दक्षिण ध्रुव की गर्मी में प्रवास करने चली जाती है। खंजन साइबेरिया तथा मंगोलिया आदि से शीतकाल में प्रवास करने हिमालय पार कर भारत आते हैं और चातक मानसून के साथ अफ्रीका से। इस प्रकार लगभग 350 जातियां भारत प्रवास करने आती हैं। रहस्य यह है कि ये पक्षी अपना मार्गदर्शन किस यंत्र की सहायता से करते हैं और वह भी इतना परिशुद्ध कि वे पक्षी न केवल उसी स्थान पर अंडा देने लौटते हैं जहां से गए थे, वरन अक्सर उसी घोंसले में ! और भी अजीब यह है कि प्रवास के लिए प्रयाण सर्वप्रथम बाल या किशोर पक्षी करते हैं—जीवन में पहली बार ! कोई मार्गदर्शक नहीं ! गंतव्य भी उन्हें क्या मालूम ! इस सब को उनका 'सहज ज्ञान' (instinctive knowledge) कहने से रहस्यमयता कम नहीं होती। मुझे तो लगता है कि इस प्रवासी बाल समूह के साथ कुछ एक वर्ष से अधिक उम्र वाले पक्षी होते होंगे, किंतु अभी तक यह प्रमाणित नहीं हुआ है। ऐसा अनुमान है कि दिन में प्रवास-यात्रा करने वाले पक्षी सूर्य से अपना दिशा निर्देश लेते हैं। किंतु इतना यथेष्ट नहीं होगा क्योंकि एक ही दिशा, चाहे सही हो, में उड़ते रहने पर भी 'अपवाह' (हवा के वेग के कारण भटकन) की त्रुटियों को ठीक करने के लिए उन्हें कहीं से जानकारी मिलनी चाहिए अर्थात कोई नक्शा उनके पास—अर्थात उनकी स्मृति में—अंकित होना चाहिए। और जो प्रवासी पक्षी नैशयात्री अर्थात रात्रि में यात्रा करते हैं उन्हें तो सूर्य से भी निर्देश नहीं मिल सकता, तब क्या वे नक्षत्रों से दिशा निर्देश लेते हैं ? वह तो और भी कठिन है क्योंकि नक्षत्रों की स्थिति प्रत्येक रात्रि में ठीक उसी समय पिछली रात्रि के समान नहीं होती ! वैज्ञानिकों ने सिद्ध कर दिया है कि मछली की नाक में चुंबक होता है यह अब सभी मानते हैं कि पक्षियों के सिर में भी एक चुंबक या कहें 'कुतुबनुमा'-सी होती है। यह मार्गदर्शन में मदद करती है किंतु 'अपवाह' की भटकन को सुधारने के लिए कोई और यंत्र या नक्शा चाहिए ! यह रहस्य अभी तक बना हुआ है। और यह भी कि प्रवास से लौटते समय किशोर पक्षी सबसे बाद में लौटते हैं, सबसे पहले नर, बाद में मादा और अंत में किशोर ! यह विभाजन क्यों ? रहस्य ही रहस्य ! किशोर पक्षी देर तक प्रवास का जो आनंद उठाते हैं क्या वह दिशा संचालन की कठिनाइयों की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण है ?

प्रवासी पक्षियों की औसत उड़ान की दूरी 200 कि.मी. (महाबक) से लेकर 1,000 कि.मी. (टिट्टिभ की एक जाति) तक होती है। इनका औसत वेग क्रमशः 40 कि.मी. प्रतिघंटा से लेकर 80 कि.मी. प्रति घंटा होता है। कुछ पक्षी तो एक

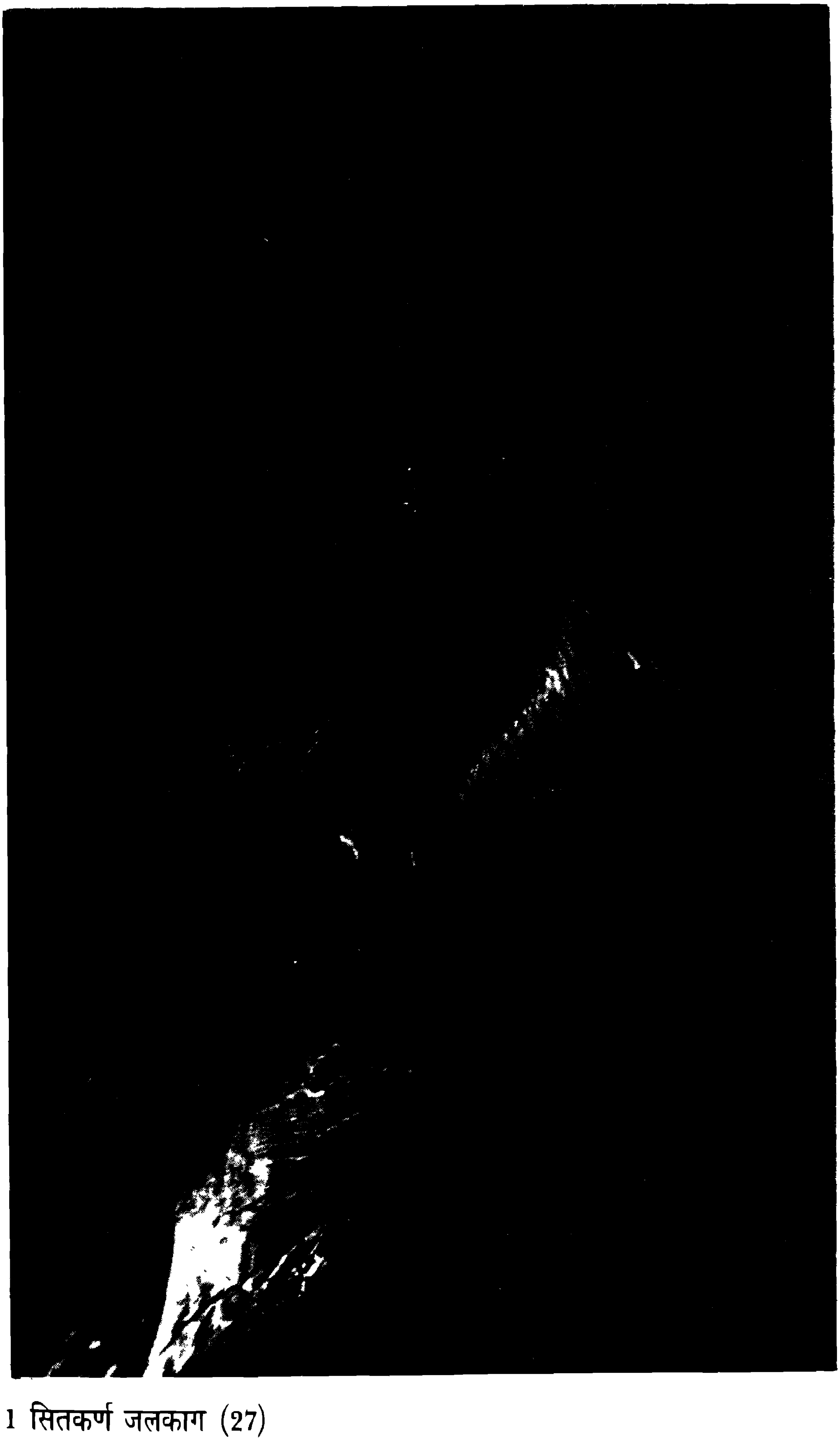
उड़ान में 3000 कि. मी. (स्वर्ण टिट्टिभ) से लेकर 7000 कि. मी. (आक्सफोर्ड, स्विफ्ट) तक की 'अंतरिक्षी' दूरी तय कर लेते हैं। सचमुच बहुत विस्मयकारी हैं पक्षियों की प्रवास यात्राएं !

द्यौः पिता पृथिवी माता

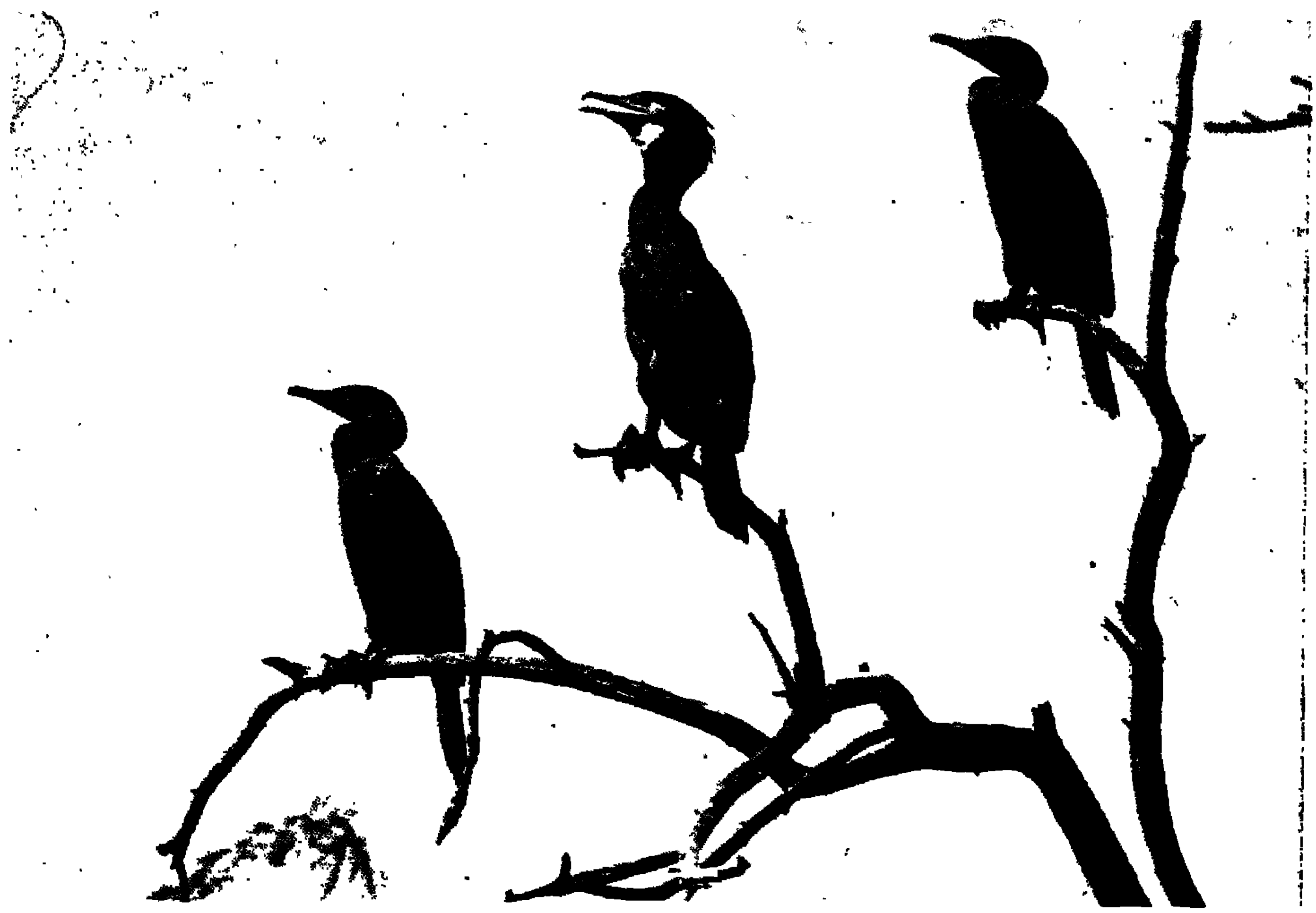
—अथर्ववेद

"जाने-पहचाने व्यक्तियों तथा वातावरण में हम प्रफुल्लित रहते हैं, तब भी हम में से बहुत कम हैं जो अपने पर्यावरण से जान-पहचान बढ़ाते हैं। पेड़-पौधों को पहचानने तथा विभिन्न जातियों के पंछियों को पहचानने मात्र से अपनत्व की भावना का विस्तार होता है, जीवन में अपार उत्साह तथा उमंग बढ़ती है तथा यह हमारे व्यक्तित्व को समृद्ध करती है।"

—इंदिरा गांधी



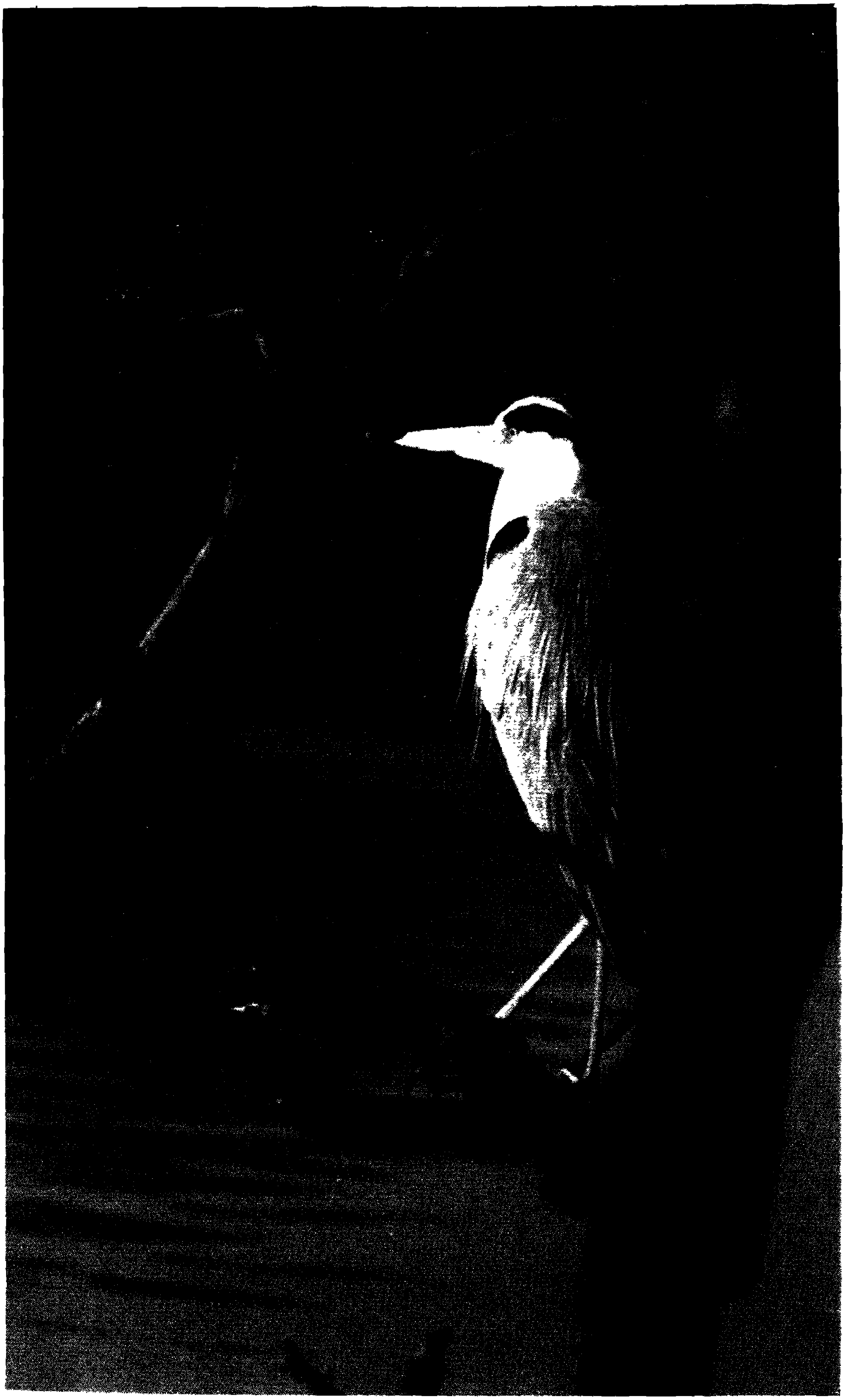
1 सितकर्ण जलकाग (27)



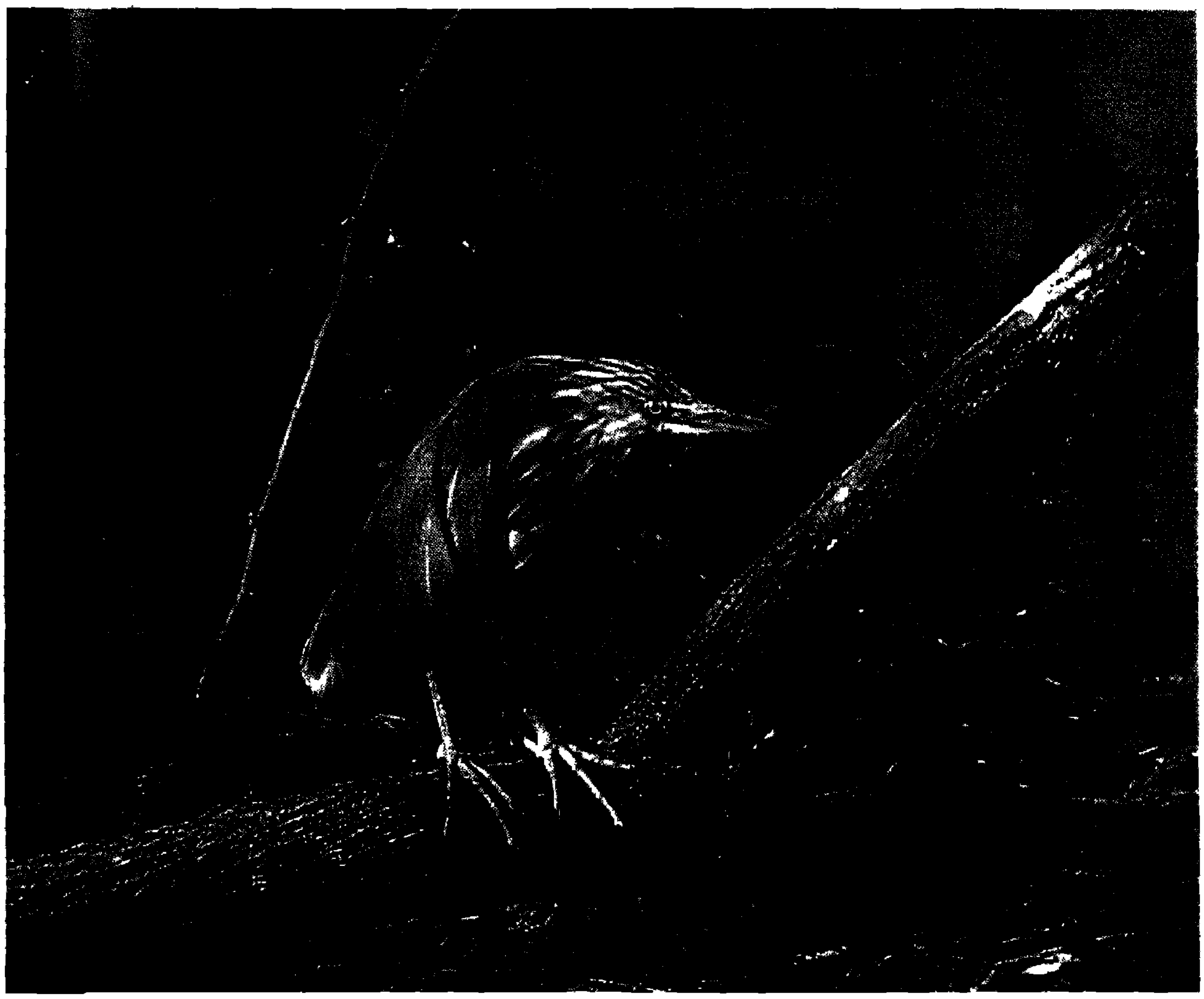
2 क — सितठोड़ी जलकाग (28)



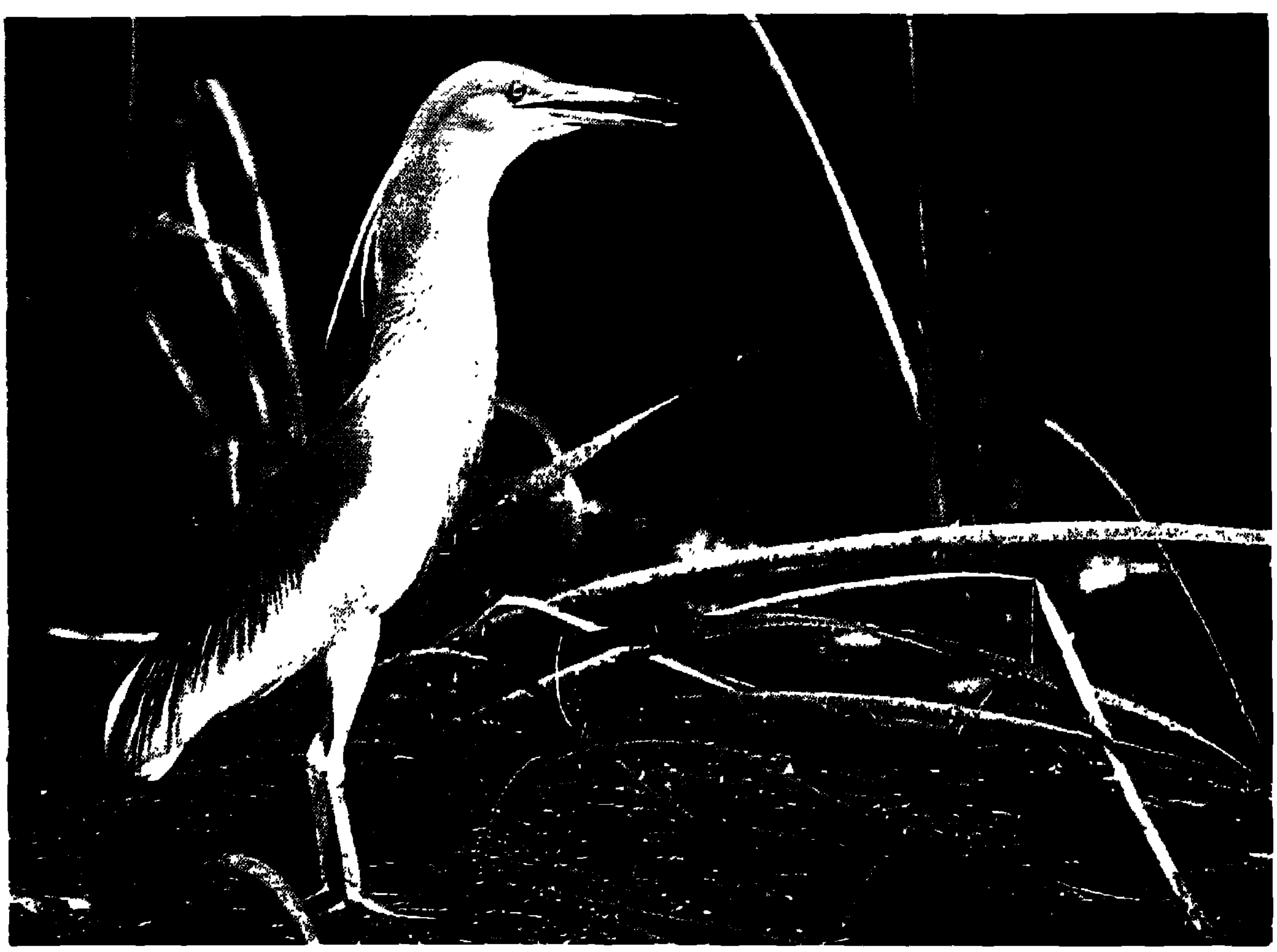
2 ख — जांबुकी कंक (37)



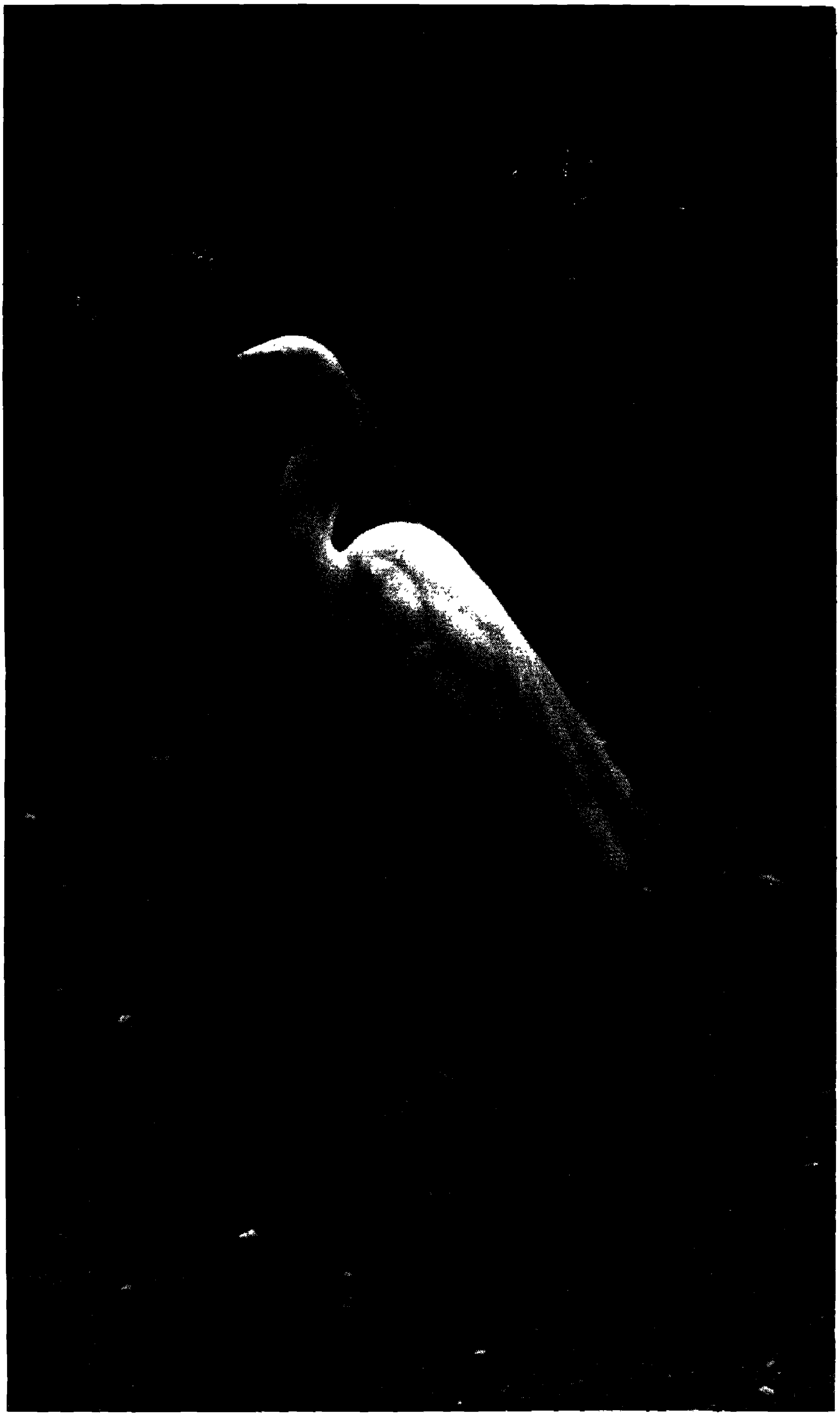
3 सितसिर अंजन (कंक) (36)



4 क – पांडु/कथ अंधबक (42)



4 ख – कल/सित चंद्र वाक (52)



5 कलचंचु शिखी बगला (49)



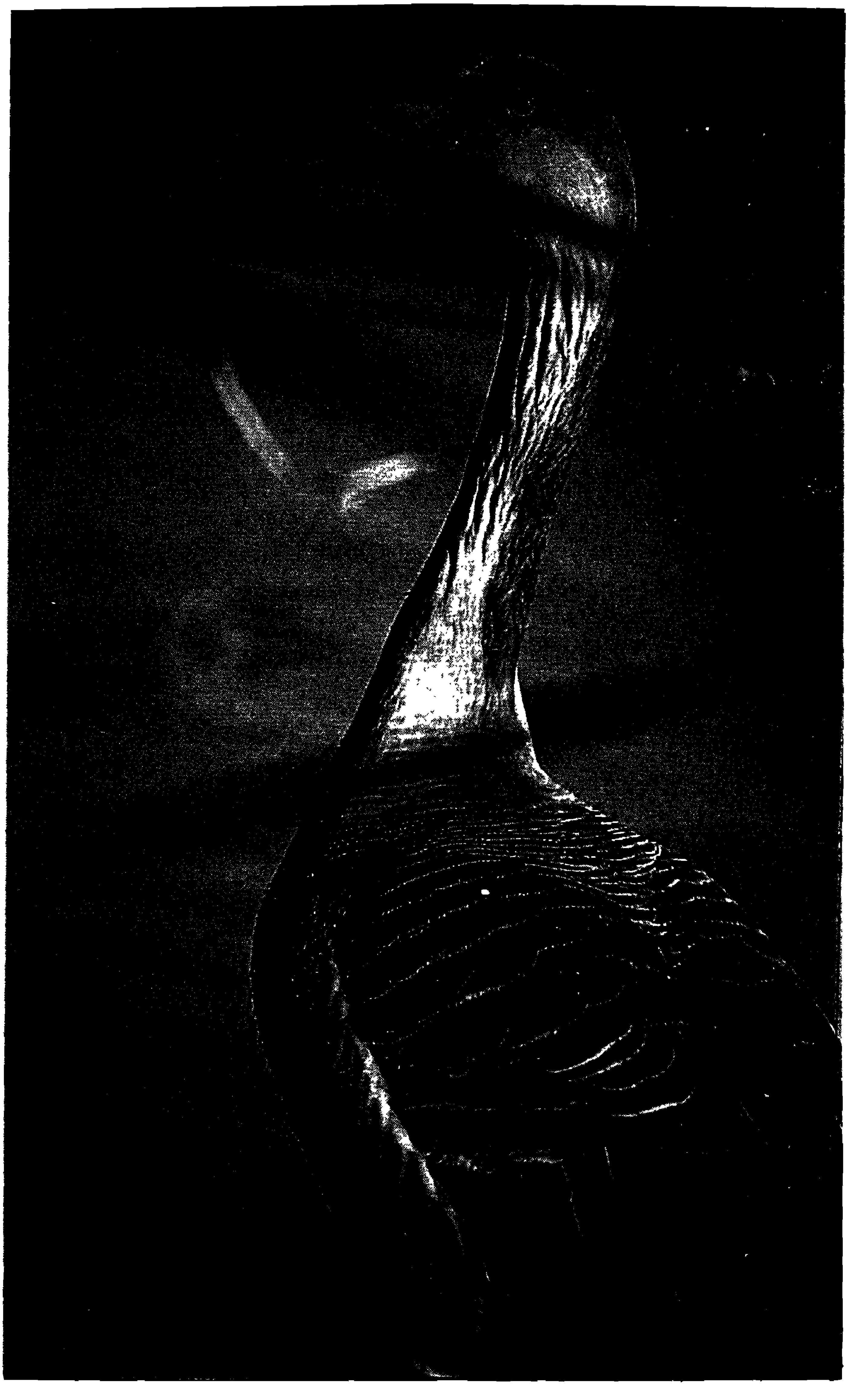
6 क — केसरमुखी महाबक (60)



6 ख — सींकपर (93)



7 कयाली हंस (81)



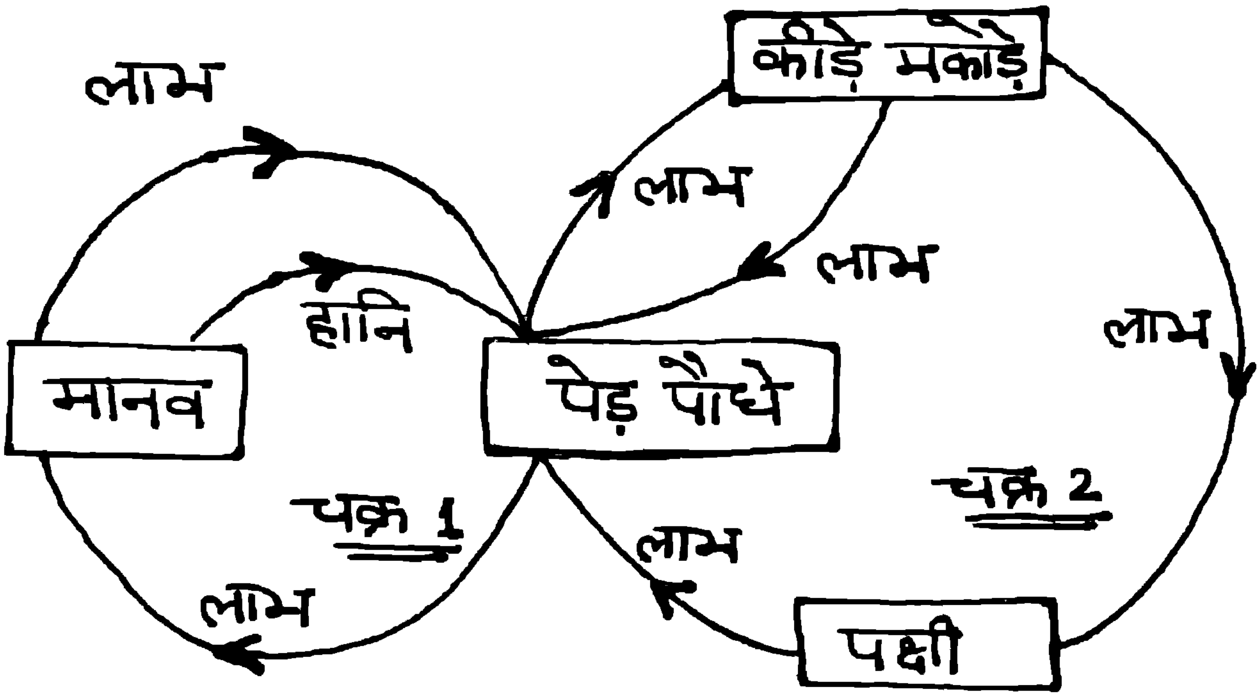
8 रेखी ग्रीवा हंस (81)

पक्षियों से महत्वपूर्ण लाभ

पंछी वरदान हैं प्रकृति के, मानव के लिए। पंछियों के तीन गुण विशेषरूप से लाभदायक हैं। पहला, वे पुष्पों का परागण करते हैं जिससे स्वस्थ फल विपुल मात्रा में उत्पन्न होते हैं। दूसरा, वे असंख्य विनाशकारी कीटों का भक्षण कर उन पर नियंत्रण रखते हैं अन्यथा कीट पृथ्वी पर विनाश की चादर फैला दें। उदाहरणार्थ एक प्रकार का आंलू भृंग (कोलोरैडो बीटल) का एक जोड़ा यदि बिना किसी बाधा के प्रजनन करता रहे तब एक ही मौसम में इनकी संख्या छह करोड़ हो जाएगी। इसी तरह 'हाप' पौधे (जो बियर को कड़ुवा करने के काम में आते हैं) की एक 'जूं' होती है, इसका एक जोड़ा एक वर्ष में तेरह संतति पैदा करता है जिसके फलस्वरूप वह एक जोड़ा, एक ही वर्ष में अरबों या खरबों जूं पैदा कर सकता है। टीड़ी भी इसी भयंकर गति से संतति पैदा करती हैं और इन पर नियंत्रण न किया जाए तो पृथ्वी को मरुस्थल बनने में देर नहीं। कई बार पक्षियों ने टीड़ी दलों का सफाया कर अनेक क्षेत्रों को दुर्भिक्ष से बचाया है। इसी तरह छोटे छोटे चूहों, जो दानवों की तरह अनाज खाते हैं, का एक जोड़ा एक वर्ष में, यदि कोई बाधा न हो, तो कुल मिलाकर 880 चूहे पैदा कर देगा। इन सारे विनाशकारी जंतुओं की आबादी पर पक्षी ही नियंत्रण कर सकते हैं, वैज्ञानिक और 'हाइटैक' नहीं। तीसरा, वे फलों के बीजों का प्रसार करते हैं तथा उनकी विष्ठा उत्तम प्रकार की खाद होती है। और भी; गिद्ध, कौए, चील आदि मृत पशुओं का सफाया तेजी से करते हैं। स्वयं पक्षी मानव का भोजन हैं। ये वातावरण को सुंदर, स्वस्थ, जीवंत एवं मधुर बनाते हैं, पंछी सच ही मानव के लिए प्रकृति का अनोखा वरदान हैं।

प्रकृति में संतुलन बनाए रखने में पक्षियों का जो अतुलनीय योगदान है उसे एक चक्र द्वारा समझाया जा सकता है।

इस चक्र में पेड़-पौधों, कीड़े-मकोड़ों, मानव तथा पक्षियों का अन्योन्याश्रित (परस्पर सहारा) संबंध स्पष्ट दिखता है। चक्र 1 में से कोई भी एक अवयव काट दीजिए, तीनों अवयव समाप्त हो जाएंगे, साथ ही मानव भी। किंतु मानव पेड़-पौधों को काटे जा रहा है अर्थात वह वृक्ष की उसी शाख को काट रहा है जिस पर



वह बैठा है। भोगवाद-दानव का पेट भरने के लिए वनों को काटा जा रहा है। किंतु जितना ही उस भोगवाद-दानव का पेट भरता जाता है वह उतना ही बड़ा मुंह खोलता जाता है। क्या हमें सुरसा राक्षसी और हनुमान जी की कथा याद नहीं आ रही ? क्या हनुमान जी ने तुरंत ही यह नहीं समझ लिया था कि सुरसा से बचने का उपाय उसके मुंह से बड़े होने में नहीं वरन उससे बहुत छोटा होने में है।

पक्षी की कम से कम, अस्सी जातियों का विलोपन पिछले 300 वर्षों में हो चुका है जिसमें से 1850 से 1900 ई. तक के 50 वर्षों में 45 जातियों का तथा 1885 से 1907 ई. तक के 22 वर्षों में 21 पक्षी जातियों का विलोपन हुआ है। अब पक्षी जाति के विलोपन की दर एक जाति प्रतिवर्ष से भी अधिक है। विश्व में 7,600 पक्षी जातियां हैं, यदि सौ भी लुप्त हो जाएं तो कौन-सा आसमान गिर जाएगा या फट पड़ेगा ? एक जटिल विशाल मशीन में से एक छोटा-सा बोल्ट भी गिर जाए तो मशीन टूट भी सकती है, रुक भी सकती है। इस पृथ्वी पर जीवों के जटिल तंत्र-चक्र में कौन-सी एक छोटी-सी चिरैया कौन-सा महत कार्य कर रही है यह हम नहीं जानते और हो सकता है कि एक छोटी-सी चिरैया के विलोपन से प्रकृति का जटिल तंत्र चाहे न टूटे किंतु उसके कार्य में गंभीर बाधा अवश्य आ सकती है। वह पता नहीं कौन-से खतरनाक कीड़े पर नियंत्रण रख रही है, वह विलुप्त हुई और महामारी फैली ! क्या हम अपनी आबादी पर नियंत्रण हेतु, इसी घटना की प्रतीक्षा कर रहे हैं ?

पक्षी जातियों के विलोपन के अनेक में से दो कारण मुख्य हैं। एक, मानव की बढ़ती तथा जंगलों की घटती आबादी है। कश्मीरी कहावत है कि 'अन्न उसी

का पोषण करता है जो वन का पोषण करता है'। दो, बढ़ती प्रौद्योगिकी से वायु तथा जल के प्रदूषण का बढ़ना। पाश्चात्य सभ्यता तो मानकर चलती है कि यदि प्रगति करनी है तब प्रदूषण बढ़ेगा ही, किंतु चिंता की कोई बात नहीं विज्ञान तथा 'हाइटैक' उसे ठीक कर लेंगे ! और प्रदूषण है कि ज्वालामुखी से निकले काले धुएं-सा छाता ही जा रहा है। कृष्ण की यमुना प्रदूषण रूपी कालिया नाग के विष से मृत प्राय है, भगीरथ की गंगा को पुनर्जीवित करने के प्रयास भी मृतप्राय हैं ! अथाह सागरों को भी प्रदूषण का घुन खा रहा है। भारत में इस समय पक्षियों की लगभग 100 जातियां मृत्यु के कगार पर बैठी हैं। हमें प्रगति के अर्थ को जीवन के ध्येय के संदर्भ में समझना चाहिए। बात केवल पक्षियों के संरक्षण की नहीं, सारे अर्थवान जीवन के संरक्षण की है। कटते वनों, बढ़ते प्रदूषण से न केवल वन्य जंतुओं, पक्षी जातियों का विलोपन होगा वरन पहले तो आसमान ही फट पड़ेगा। ओजोनमंडल में जो विशाल गह्वर बन गया है वह मात्र चेतावनी है आसमान के फटने की। तब भी यदि 'समझदार मानव' नहीं समझा, तब पृथ्वी को बुखार चढ़ेगा, और फिर प्रलय होगा। प्रलय के लिए पृथ्वी के औसत तापमान का मात्र 3 या 4 डिग्री ही बढ़ना पर्याप्त होगा। किंतु जब तक थार मरुस्थल में रहने वाले बिशनोई समुदाय के समान प्रकृति प्रेमी इस पृथ्वी पर हैं, मैं भविष्य के प्रति आश्वस्त हूं।

पंछी निहारन तथा अध्ययन का संक्षिप्त इतिहास

पंछी प्रेम की भारतीय परंपरा, जैसा कि बताया गया, विश्व में सबसे पुरानी है। ऋग्वेद न तो पक्षी शास्त्र है और न प्रकृति का वैज्ञानिक शास्त्र ही, किंतु उसमें भी बीस पक्षियों का वर्णन है। ऋग्वेद की रचना कई शतियों में की गई और उसका रचनाकाल लगभग 4000 वर्ष ई. पूर्व माना जाता है। ('ऋग्वेद के काल पर नया प्रकाश'—डा. वराडपांडे, संस्कृत भाषा प्रचार समिति, नागपुर)। यजुर्वेदकालीन ऋषियों ने शुक तथा पहाड़ी मैना को बोलना भी सिखा दिया था। उन्होंने यह भी निहार लिया था कि कोयल अपने अंडे कौओं के घोंसलों में देती है। यजुर्वेद में साठ पक्षियों की चर्चा है। बाद के वेद, अथर्ववेद, में शिकारी पक्षियों, विशेषकर बाजों, का विस्तृत वर्णन है; चकवा और चकई के एकनिष्ठ प्रेम के आधार पर नवदंपत्तियों को आशीर्वाद का मंत्र है। उपनिषदों में पक्षियों के और भी ज्ञानमय वर्णन हैं। वाल्मीकि रामायण में अनेक पक्षियों का ज्ञानप्रद, रससिक्त एवं विवेकमय वर्णन है। वाल्मीकि रामायण का रचना काल 3700 ई. पू. माना जाता है (संदर्भ वही)। महाभारत (रचना काल लगभग 3000 ई. पू.) में पक्षियों का वैज्ञानिक वर्णन भी है। बाद के समस्त संस्कृत साहित्य में, 700 ई. पू. में संकलित 'चरक संहिता' से लेकर अनेक पुराणों, कौटिल्य अर्थशास्त्र (इसमें पक्षियों के शिकार के नियम हैं), संगीत रत्नाकर, नाट्यशास्त्र (भरत मुनि), अमरकोश, अभिधान, चिंतामणि, कल्पद्रुकोश, मृगपक्षीशास्त्र; तथा कालिदास, भवभूति, शूद्रक, माघ, अश्वघोष, भारवि, श्रीहर्ष, जयदेव, भर्तृहरि आदि की कृतियां; कथा सरित्सागर, हितोपदेश, पंचतंत्र, शब्दकल्पद्रुम, बृहत्संहिता (वाराहमिहिर), वसंतराज शकुन, याज्ञवल्क्य तथा मनु आदि की स्मृतियां आदि अनेकानेक ग्रंथ हमारे वन्य जीवन तथा पक्षी-ज्ञान से भरे पड़े हैं। अनेक ग्रंथों में पक्षियों के शिकार के नियम दिए गए हैं, सम्राट अशोक के पांचवें स्तंभ में दस पक्षियों के शिकार का निषेध है। संस्कृत साहित्य के अतिरिक्त प्राकृत तथा पालि भाषाओं में भी वन्य तथा पक्षी ज्ञान से भरपूर साहित्य है। मध्यकाल में भी बाबर, हुमायूं तथा जहांगीर आदि ने पंछी निहारन में गहरी रुचि ली थी।

आधुनिक पंछी निहारन की शुरुआत, भारत में, 1713 में एडवर्ड बकली, 1831 में कैप्टैन जेम्स फ्रैंकलिन तथा 1832 में कर्नल डब्ल्यू एच साइक्स द्वारा

लिखित प्रपत्रों से मानी जा सकती है। आधुनिक वैज्ञानिक पंछी निहारन की नींव भारत में हॉजसन, जैर्डन तथा ब्लाइथ की त्रिमूर्ति ने डाली, उन्नीसवीं शती के प्रारंभ में। इसके फलस्वरूप, जैर्डन ने 1862 में *Birds of India* पुस्तक लिखकर पक्षी-विज्ञान की इमारत शुरू की। 1842 से 1888 में प्रकाशित अद्भुत ज्ञान से भरे, *Stray Feathers* नाम से ग्यारह खंड, एलन ह्यूम (कांग्रेस के संस्थापक) के पक्षी प्रेम तथा पक्षी ज्ञान को दर्शाते हैं। ब्लैनफोर्ड तथा ओट्स ने 1889-1898 के बीच *Fauna of British India* नाम से चार खंड प्रकाशित किए जो इस विषय के अमूल्य संदर्भ ग्रंथ हैं। स्ट्युअर्ट बेकर ने इसी ग्रंथ का दूसरा संस्करण (संवर्धित) 1922-1930 के बीच प्रकाशित किया। इस शती के उत्तरार्ध में सालिम अली तथा डिलन रिप्ले ने पक्षी विज्ञान तथा प्रकृति संरक्षण के क्षेत्र में अद्वितीय कार्य किए। सालिम अली को बनाने में बांबे नेचुरल हिस्ट्री सोसायटी के सचिव श्री मिलर्ड जैसे संवेदनशील तथा सहृदय व्यक्तियों का भी बड़ा योगदान है। सालिम अली की अनेक पुस्तकों के बाद 1968 में इस अनोखे जोड़े (श्री रिप्ले के साथ) की अनोखी पुस्तक, कहना चाहिए, विशाल संदर्भ ग्रंथ, *Handbook of the Birds of India and Pakistan* प्रकाशित हुआ। 2100 पक्षियों के वैज्ञानिक, जीवंत तथा परिशुद्ध वर्णन से भरपूर यह हैंडबुक किसी भी भारतीय पक्षी शास्त्र के विद्यार्थी तथा गंभीर पंछी निहारक के लिए अनिवार्य मानक ग्रंथ है।

उपर्युक्त विभूतियों के बुनियादी काम ने पंछी निहारन तथा पंछी विज्ञान को स्फूर्ति दी, ऊर्जा दी, जिसके फलस्वरूप सरकारी संस्थाओं तथा अनेक गैरसरकारी संस्थाओं ने इन क्षेत्रों में काम करना शुरू किया। उल्लेखनीय कार्य करने वाले सभी व्यक्तियों तथा संस्थाओं के काम का संक्षिप्त वर्णन भी इस पुस्तक में संभव नहीं है। किंतु कुछ का वर्णन, जो मेरी जानकारी में आ गए हैं, अपने अज्ञान के लिए क्षमा चाहते हुए, संक्षिप्त में प्रस्तुत है। प्रभावी काम करने वालों में एक व्यक्ति हैं श्री ज़फर फ़तेहअली जिन्होंने (1) जनता में पंछी प्रेम बढ़ाने के लिए, छठवें तथा सातवें दशक में 'टाइम्स आफ इंडिया' में नियमित स्तंभ *Bird Watchers' Diary* लिखा। (2) *Bird Watchers' Field Club* बनाया, (3) *Bird Watchers' Diary* का स्वतंत्र पाक्षिक प्रकाशन दिसंबर 1959 में प्रारंभ किया जो निरंतर कार्य कर रहा है; (4) 1969 में दिल्ली में हुई 'International Union for Conservation of Nature' में 'बाघ' को 'संकटग्रस्त प्राणी' घोषित करने में उनसे मदद मिली; (5) उनकी मदद से 1972 में 'पर्यावरण योजना एवं समन्वय समिति का गठन हुआ, तथा 'बाघ परियोजना' (Project Tiger) का शुभारंभ हुआ; (6) उनकी मदद से भारत की पांचवीं पंचवर्षीय योजना में, पहली बार, 'पंचम योजना दस्तावेज' में 'पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी' अनुभाग सम्मिलित किया गया।

बी एन एच एस, ज़फर साहब तथा श्री अलीक पदमसी आदि के संयुक्त

प्रयासों से 'संरक्षण–सूखे का उपचार' नामक श्रव्य-दृष्टिक कार्यक्रम देश-विदेश की महत्वपूर्ण संस्थाओं में प्रस्तुत किया गया। आठवें दशक (उत्तरार्ध) में सरकार ने 'पारिस्थितिकी योजना कार्यबल' (Ecology Planning Task force) की स्थापना की। मार्च 1980 में तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने अनेक देशों के सहयोग से एक दस्तावेज 'विश्व संरक्षण रणनीति' (World Conservation Strategies)—प्रस्तुत किया। इसकी तीन प्रमुख नीतियों–यथा, संसाधनों का दीर्घकालीन उपयोग, पारिस्थितिक तंत्र तथा जैव संसाधनों की रक्षा–का अनुकरण प्राकृतिक वातावरण को स्वस्थ बनाने में मदद करेगा।

दुर्लभ पक्षी Jerdon's Courser (केसरकंठ दुपट्टी धावक) को विश्वसनीय रूप से 1900 में हावर्ड कैंपबैल ने देखा था, तत्पश्चात 1929 तथा 1931 में क्रमशः ह्विस्लर एवं किन्नियर ने देखा था। 1932 की सालिम अली की अथक खोज में वह जब नहीं देखा गया, तब संशय हुआ कि कहीं यह संकटग्रस्त पक्षी लुप्त तो नहीं हो गया। 1985 में भारत सरकार तथा सं. रा. अमरीकी सरकार की संयुक्त प्रयोजना के तहत बी एन एच एस के डा. भारत भूषण ने, आंध्रप्रदेश की पैन्नर तथा गोदावरी घाटियों तथा 'लंकामलय' पहाड़ियों पर लगन पूर्वक खोज कर, जनवरी 1986 में इस पक्षी की खोज की। उन्होंने 2000 वर्ग कि. मी. के क्षेत्र में 6 स्थानों पर 'केसरकंठ दुपट्टी धावकों' को देखा था। पता चला कि नागार्जुन सागर से मद्रास तक जल ले जाने के लिए जो नहर बनाई जाने वाली थी वह उसी क्षेत्र में से जाने वाली थी–सभी के प्रयासों से इसका मार्ग बदला गया। आजकल भारत भूषण 'हरिणी प्रकृति संरक्षण प्रतिष्ठान' के तहत पूर्वीघाट के क्षेत्रों में संरक्षण कार्य में लगे हुए हैं।

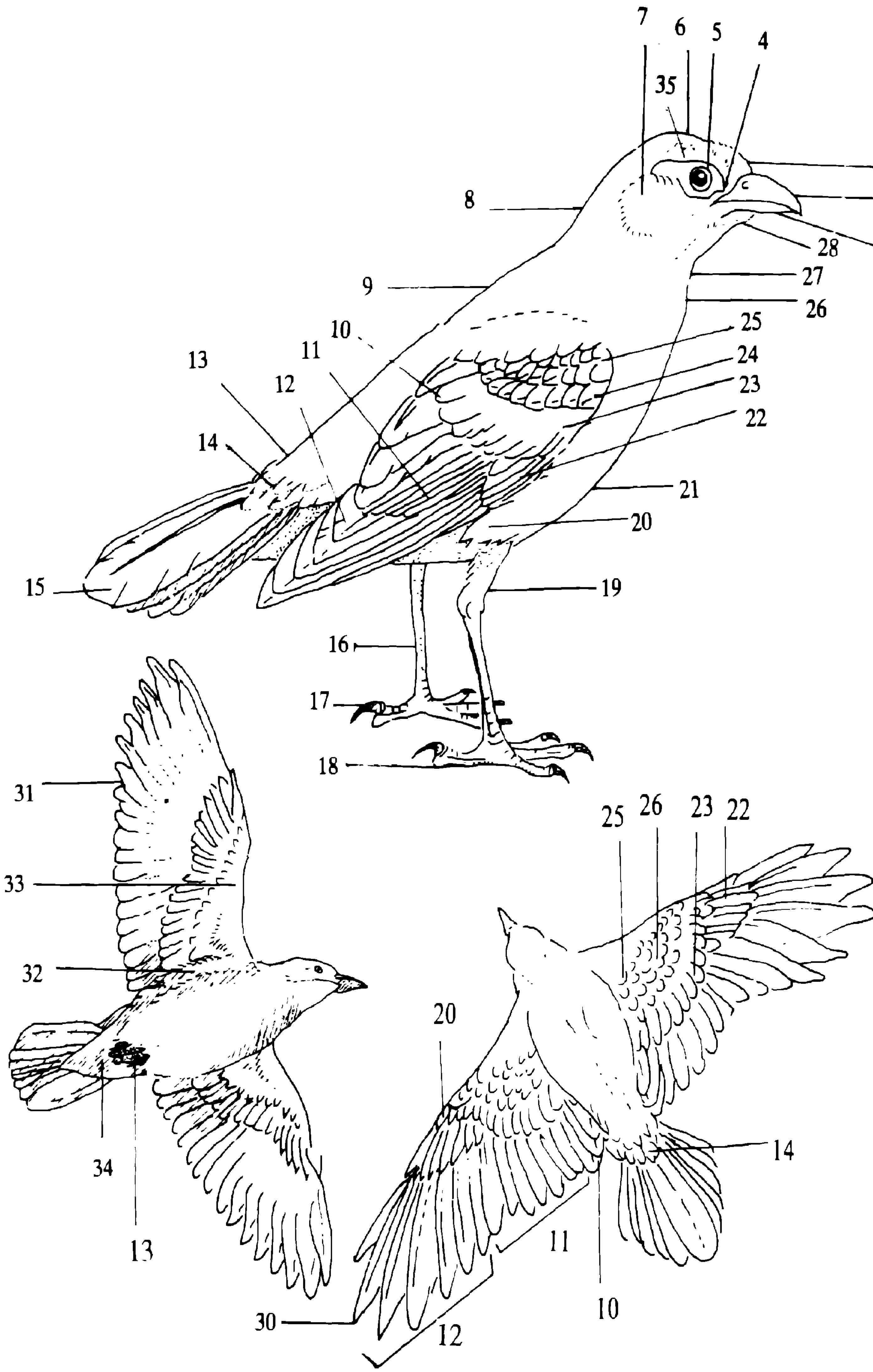
1980 से 88 तक पक्षी प्रेमी डा. असद रहमानी ने बी एन एच एस में सालिम अली के साथ संरक्षण कार्य किए। इन्होंने सोहन कुल (Bustard family) के पक्षियों, विशेषकर संकटग्रस्त 'कलशिखी सोहन' (Great Indian Bustard) का अनेक क्षेत्रों में अध्ययन किया तथा उनके सरंक्षण के लिए सुझाव दिए। इनके सुझावों को महाराष्ट्र सरकार ने माना फलस्वरूप कलशिखी सोहन वहां पनप रहा है, किंतु अन्य प्रदेशों ने सुझाव नहीं माने, जिसके फलस्वरूप स्थिति बद से बदतर हो गई है। तत्पश्चात असद रहमानी ने अलीगढ़ विश्वविद्यालय में 'वन्य जीवन तथा पक्षी शास्त्र केंद्र' की स्थापना की, तथा अन्य कार्यो के साथ, दुर्लभ पक्षियों, यथा, राजस्थान में पाया जाने वाला सितभ्रू कल/सित अश्वक (Whitebrowed Chat), की खोज की। असद रहमानी मई 97 से बी एन एच एस के निदेशक पद पर कार्यरत हैं।

आज भारत में डब्ल्यू डब्ल्यू एफ (विश्व प्रकृति निधि), बिट्टू सहगल की सेंक्चुअरी आदि के अतिरिक्त अनेक 'गैरसरकारी संस्थाएं' प्रकृति संरक्षण के कार्य

में रत हैं। एक संस्था है, दिल्ली स्थित 'कल्पवृक्ष' जो पंछी निहारन, पक्षी सर्वेक्षण, तथा संबंधित ज्ञान के प्रसार के अतिरिक्त 'नर्मदा बचाओ' जैसे आंदोलनों में, अभ्यारण्यों के वन्य-जीवों के लेखा-जोखों आदि कार्यों में निरंतर लगी हुई है। एक संस्था, भुवनेश्वर स्थित *Bihang Institute for Ornithology and Mass Eco-development* भी, अनेक कार्यों के साथ, चिलिका झील के संरक्षणार्थ कार्यरत है। दिल्ली की एक और संस्था है, *Development Alternatives*। कलकत्ता स्थित *The Junhglees* संस्था भी, कार्यरत है। अहमदाबाद स्थित 'पर्यावरण शिक्षण केंद्र' अब भी उपयोगी काम कर रही है। इस तरह 'प्रकृति संरक्षण' के विषय में अनेक संस्थाएं जिन सभी के नाम यहां नहीं दिए जा सकते काम कर रही हैं। सुंदरलाल बहुगुणा के 'चिपको आंदोलन' ने हिमालय की तराई के क्षेत्रों में आश्चर्यजनक काम किए हैं, किंतु आबादी के तथाकथित विकास के दबावों को देखते हुए अभी बहुत काम करते रहने की आवश्यकता है।

पक्षियों के अंग-उपांग

1. निम्न चंचु (lower mandible)
2. उपरि चंचु (upper mandible)
3. माथा, भाल, ललाट (forehead)
4. कूर्च (lores)
5. नेत्रवलय (eye ring)
6. शिखर (crown)
7. कर्णावरक, कर्णछाद (ear-coverts)
8. घाटा, गरदन, कंधर (nape)
9. पीठ, कूब, पृष्ठ (back)
10. तृतीयक (tertiaries)
11. द्वितीयक (secondaries)
12. प्राथमिक (primaries)
13. कटीर (rump)
14. उपरि पिच्छावरक (uppertail coverts)
15. पुच्छ, पूंछ (tail)
16. गुल्फ (tarsus)
17. पंजा (claw)
18. पादांगुल (toe)
19. पिंडली (calf)
20. बाजू, पार्श्व (flank)
21. उदर (stomach)
22. प्राथमिक छाद (primary coverts)
23. बृहत्तर पंख छाद (greater wing coverts)
24. माध्यक पंख छाद (median wing coverts)
25. लघु पंख छाद (lesser wing coverts)
26. वक्ष, उर (breast)



पक्षियों के अंग तथा उपांग

27. कंठ (throat)
28. ठोड़ी, चिबुक (chin)
29. पंखाग्र, अग्रग कोर (leading wing edge)
30. पंख छोर, नोक (wing tip)
31. पश्चग कोर (trailing wing edge)
32. काक्षिक, बगली (axillaries)
33. पक्ष-अस्तर (wing lining)
34. पायु (vent)
35. भौंह, बभ्रु (eye brow)

पंछियों की उड़ान

पक्षियों का उड़ना उनका एक अत्यंत विशिष्ट गुण है। सभी पक्षी आकाश में उड़ने के लिए स्वतंत्र नहीं हैं, उनकी उड़ान उनकी जीवन-शैली से संबद्ध है। कुछ पक्षी 10,000 कि.मी. से अधिक उड़ान कर प्रवास पर जाते हैं और कुछ पक्षी 10 कि. मी. की त्रिज्या में ही रहते हैं। कुछ हिमालय की ऊंचाइयों को भी पार कर जाते हैं और कुछ मात्र 100 मीटर की ऊंचाई ही। उड़ती चिड़िया पहचानने में न केवल रूप, रंग तथा आकृति मदद करती है, वरन उनके उड़ने की शैली या 'उड़ान' भी। कुछ की (कौओं की) उड़ानें सीधी ('अविडीन'); कुछ की (कुलिंग की) लहरियादार ('एता'); कुछ की आड़ी टेढ़ी ('चाहा' की), सरकसी (माखीचोर की); फड़फड़िया (कबूतर की) तो कुछ की (उल्लुओं की) इतनी नीरव कि आपके निकट से उड़ जाएं और आपको सुनाई ही न दे। कुछ तेज, कुछ धीरे, कुछ 'विडीन' (बिना पंख चलाए, कुंडलीकार में, तप्त हवा के साथ ऊपर चढ़ते हैं), करते हैं, कुछ चक्राकार में ('परिडीन') और कुछ ('उड्डीन') ऊपर चढ़कर गोता लगाते हैं, इत्यादि। यहां कुछ उदाहरण दिए जा रहे हैं :

(1) बाज़ का झपट्टा

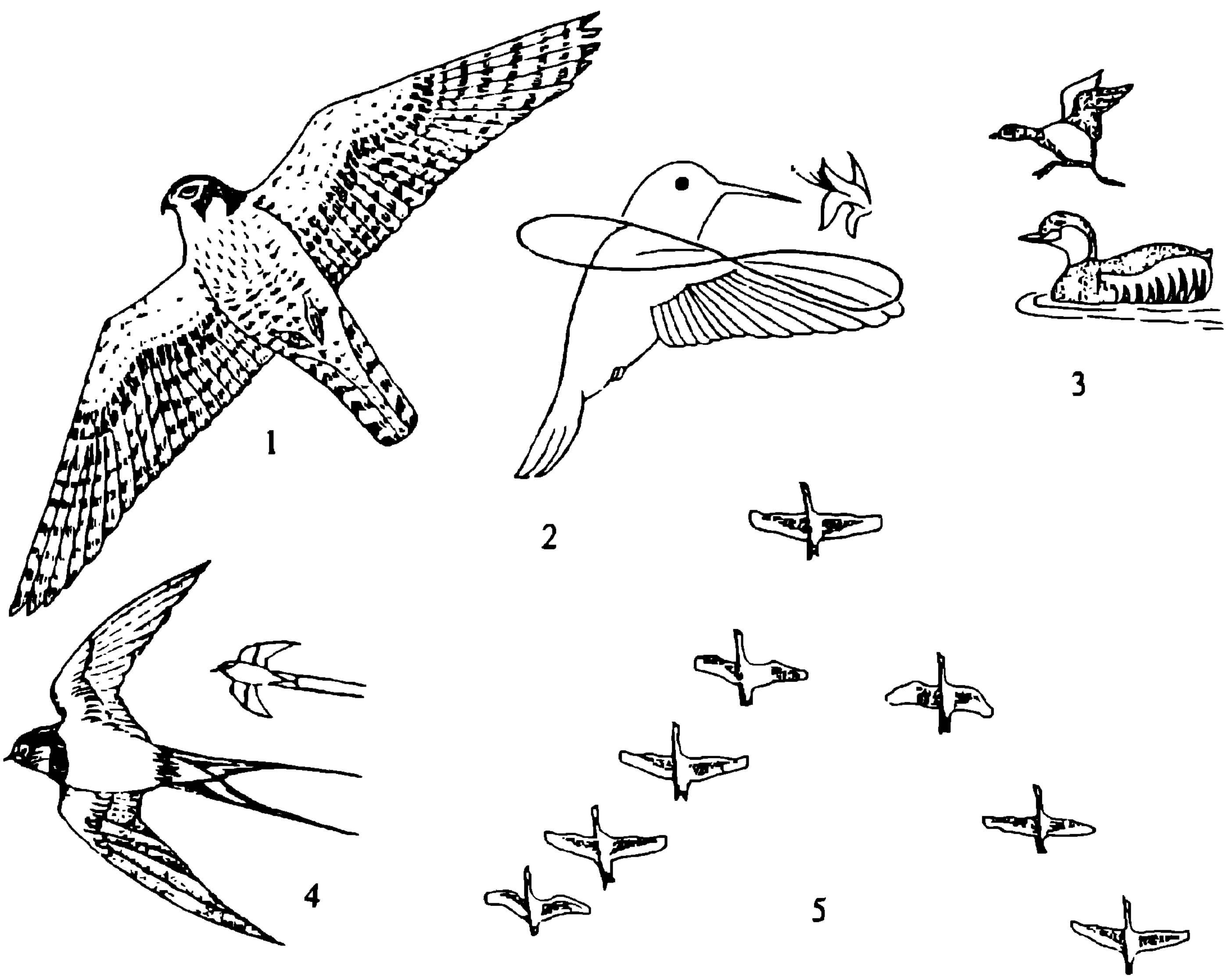
(2) मरमर पक्षी का रंगण (एक स्थान पर थरथराना) (क); (ख) कंधों की विशेष बनावट : पंखों का विशेष चलन

(3) पांगर ग्रीवी अपुच्छी का (take-off) उपरितरण

(4) (जांबुकंठा) भांडीक तथा तारपुच्छी भांडीक

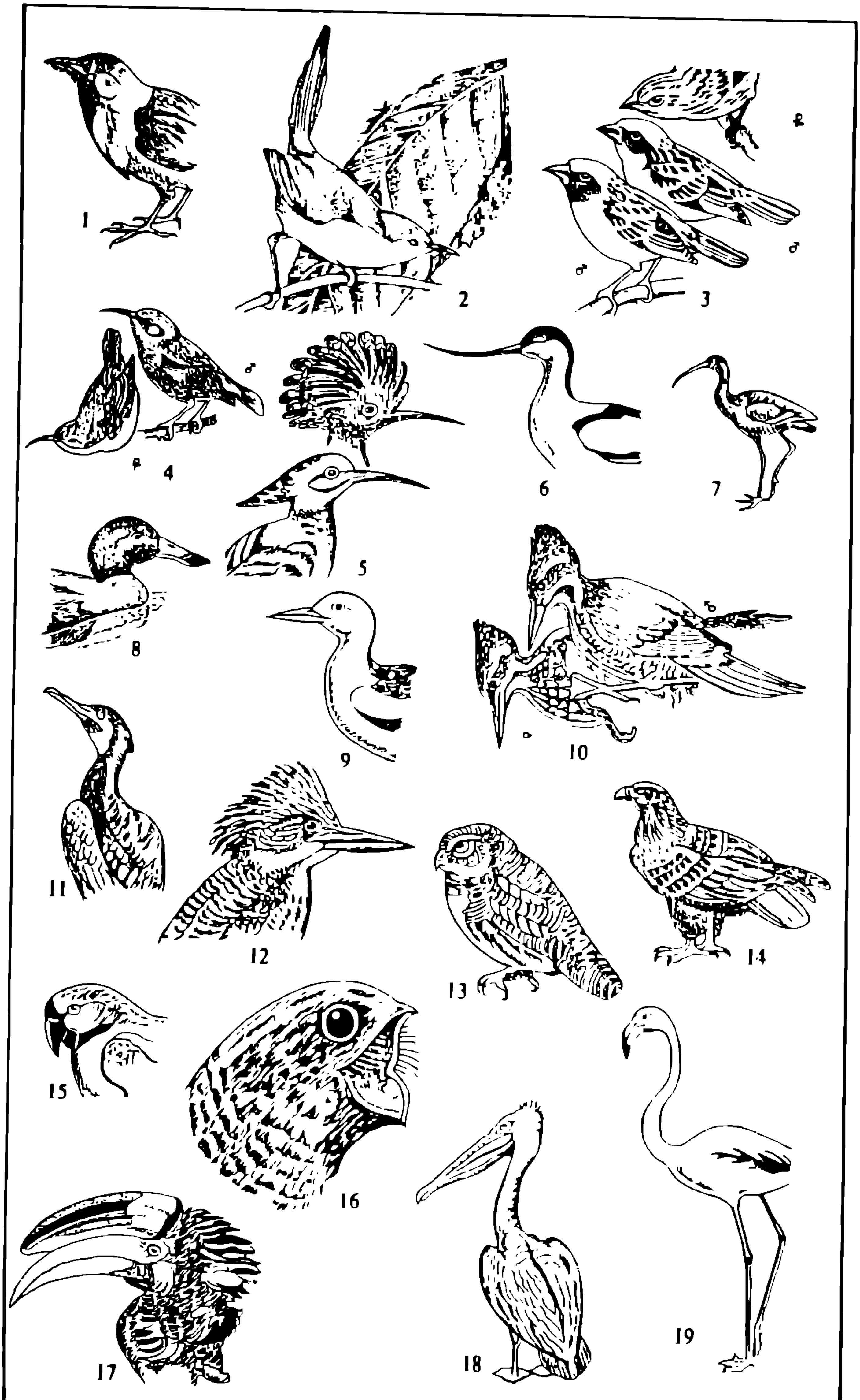
(5) महाहंसों का 8,000 मीटर ऊंचाई पर लंबी यात्रा के लिए 'नुकीला विरचन'

पक्षियों का कद भी उनकी पहचान, गुणों तथा व्यवहार समझने में मदद करता



है। उनके कदों को से.मी. में याद रखने के स्थान पर तुलनात्मक रूप से याद रखना अधिक आसान होता है, इसके लिए एक तालिका दी जा रही है—

पक्षी	कद (से.मी.) (लगभग)	पक्षी	कद (से.मी.) (लगभग)
जामुनी शकरखोरा	10	कौआ	43
गौरैया	15	चील	60
बुलबुल	20	हंसक	80
मैना	22	गिद्ध	90
पंडुक	27	महाबक (काला या सफेद)	106
कबूतर (दुपट्टी)	32		
सारस (खड़ा हुआ)	156		


1
2
3
4
5
6
7
8
9
10
11
12
13
14
15
16
17
18
19

कद : चोंच की नोक से लेकर पूंछ की नोक तक वयस्क पक्षी की वह लंबाई जो उसे पीठ के बल लिटाकर नापी जाती है, उसका कद कहलाती है। किसी पक्षी के कुल के सदस्यों के कद में अधिक फैलाव होता है वहां उनका औसत सरीखा कद दिया गया है (यथा हंसक)।

चंचु : पक्षियों की चोंचें, हम सोचें तो देखें कि, विचित्र विचित्र काम करती हैं, तरह तरह की चोंचें :

(1) निर्विशेष, सर्वोपयोगी—सर्वभक्षी 'कौआ'
(2) 'दर्जिन' की तरह सिलाई करने वाली
(3) 'बया' की तरह बुनकर
(4) मकरंद पान करने वाला 'शकरखोरा'
(5) 'पुत्रप्रिय' की तरह छानबीन करने वाली एषणी
(6) 'लमगोड़ा'-सी हल चलाने वाली
(7) 'शराटियों' की तरह कीचड़ में से आहार निकालने वाली
(8) 'खजाक' के फावड़े-सी मिट्टी सरकाने वाली
(9) 'टिट्टिभ' की तरह सीपी तोड़ने वाली
(10) 'कठफोड़वे' की तरह लकड़ी छीलने वाली तथा एषणी
(11) 'जलकाक' मछली मार
(12) 'किलकिला'—गोताखोर मछलीमार
(13) 'उल्लू' की तरह केवल पकड़ने तथा गुटकने के लिए
(14) 'सुपर्ण' चीर फाड़ करने वाले
(15) 'तोते' की तरह—बीज फोड़ने वाली
(16) 'छिप्पक' की तरह मुंह खोलकर उड़ने वाली
(17) 'धनेश' : शक्ति का अजीब प्रतीक
(18) 'क्रुंच' की तरह 'नीर-क्षीर' न्याय करने वाली
(19) 'हवासील' की तरह जाल के थैले-सी

पंछी निहारन–एक कला

पंछी निहारन भी एक कला है जो आते आते ही आती है। यह ठीक है कि पंछी निहारन का आनंद लेने के लिए वैज्ञानिक ज्ञान अनिवार्य नहीं है किंतु पढ़े हुए सिद्धांतों से पंछियों को देखने, सुनने, पहचानने में मदद मिलती है, तथा पंछियों के व्यवहार, गुण आदि बेहतर समझ में आने लगते हैं। प्रारंभ में पंछी निहारन के लिए किसी कुशल पंछी निहारक के साथ जाना बहुत लाभदायक होता है, अन्यथा निराशा हाथ लग सकती है। प्रारंभ में आती कठिनाइयों से; असफलताओं से निराश नहीं होना चाहिए। शुरू में तो पानी के पास कोई भी लंबा, सफेद-सा पंछी बगला लग सकता है। फिर धीरे धीरे पता लगता है कि जिन्हें हम बगला कहते हैं वे अनेक वंशों एवं कुलों के पक्षी हैं, उनमें विपुल समानताएं दिखते हुए भी वे नितांत भिन्न कुलों के पक्षी भी हो सकते हैं। और निहारते निहारते जब बहुत-से नामों वाले भ्रम दूर होने लगते हैं तब हमें न केवल आनंद अधिक मिलता है वरन यह भी समझ में आने लगता है कि 'गो पिंगला' (गाय बगला, सुर्खिया बगला, बदामी बगला, ढोरिया बगला इसी एक के ही नाम हैं) का 'पिंगलिका' वंश 'कलचंचु शिखी बगला' (किल्चिया बगला, कड़छिया बगला इसी एक के नाम हैं) के 'बलाका' वंश से नितांत भिन्न है जबकि इनके रहने का ढंग एक-सा ही है और देखने में ग्रहण काल में अंतर भी कम ही दिखता है; तथा काला बगला जो देखने में कलचंचु शिखी बगला से एकदम अलग दिखता है–ये दोनों एक ही वंश के निकलते हैं। तथा बड़ा बगला जो दिखने में 'कलचंचु शिखी' का सगा बड़ा भाई दिखता है, इसके वंश का न होकर कंक वंश का है, और इस तरह खोज करते करते हमारा ज्ञान तथा आनंद दोनों बढ़ने लगते हैं।

गौरैया, कौआ, मैना आदि सहभोजी पक्षियों के अतिरिक्त अन्य पक्षी हमसे अपनी दूरी सुरक्षित बनाकर ही रखते हैं जो हमारे बहेलियेपन या शिकारीपन को देखते हुए ठीक ही है। इसलिए यदि आपके पास एक मध्यम शक्ति वाली दूरबीन हो तब आप पक्षियों के अंग, उपांग तथा रंगों को सूक्ष्मता से देखकर पूरा आनंद उठा सकेंगे।

दीमकों के वल्मीक, ऊंचे मिट्टी के 'गढ़', आपने अवश्य देखे होंगे। दीमक

बहुत अधिक नुकसान करने वाला तथा प्रजनन करने वाला कीट है। लगता है कि प्रकृति ने इसीलिए इसे अनेकानेक पक्षियों का प्रिय आहार बनाया है। वर्षा ऋतु की पहली बूंद के साथ, इन वल्मीकियां में से रानी दीमकें प्रणय उड़ानों पर निकलती हैं; और साथ में असंख्य दीमकें भी उड़ने के लिए वल्मीकों से निकलती हैं, मानो कि बड़े बिजलीघरों की चिमनियों से सफेद धुआं निकल रहा हो। तथा साथ ही कौए, बताशी, भांडीक, चील, बाज, उल्लू, मैना, बुलबुल, गौरैया, बया, मुनिया, कोतवाल, पीलक, दरजिन, फुटकियां आदि आदि भंडारे के लिए पहुंच जाते हैं। गौरैया, कौओं तथा मैनाओं की थोड़ी अटपटी उड़ानें, कोतवाल की सरकसी, बाज की तेज आक्रामक, दरजिन तथा फुटकियों की खिलंदड़ी उड़ानों का एक ही स्थान (वल्मीकों) पर मिलना एक दुर्लभ तथा आनंददायक अनुभव है।

3 प्रवासी तथा आवासी जलपक्षी शीतकाल में जलाशयों तथा नदियों को बड़ी संख्या में मनोरम बनाते हैं। रेलयात्रा के दौरान, दूरभाष तारों पर बैठे अनेक पंछी; खेतों में हल चलने से, फसल पकने, कटने तक अपनी योग्यताओं का प्रदर्शन करते हैं। इन सबको देखने का आनंद तो है ही, किंतु वह दुगना चौगुना हो सकता है यदि हम उन पंछियों से पहचान कर लें, उनकी जीवन-यापन की विधियों को समझने लगें।

4- जलपक्षी दिनभर जलविहार के पश्चात रात में कहां बसेरा करते हैं; अलग जाति के पक्षियों के बसेरों में क्या अंतर है ? बक, बगले, पिंगला, अंधबक आदि अर्थात बक कुल के पंछी तो अपने कुल की कालोनी में अपनी जाति के मोहल्लों में बसेरा करते हैं। कौए, मैना, बुलबुल, पीलक आदि में इस तरह का कोई जातिवाद नहीं है, ये सब उदार होकर पीपल, बरगद जैसे विशाल वृक्षों में, विशेषकर यदि उस वृक्ष में भुजंगे का भी घोंसला हो, मिलजुल कर रहते हैं। बया कुल की जातियां भी मोहल्ला बसाना पसंद करती हैं, उनके घोंसले जहां ऊंची कारीगरी के नमूने, सुंदर तथा मजबूत होते हैं, वहीं ललमुंही टिटिहरी अपना काम एक खत्ती से चला लेती है, ये खत्ती किसी गाय या भैंस के गीली मिट्टी में बने खुर का सूखा निशान भी हो सकती है।

5 पक्षियों के पारिवारिक जीवन की विविधता भी अद्भुत है। एक तरफ बया है जिसका नर केवल गाना गाता है और अद्भुत घोंसले बुनता है, अंडे सेने, शावक पालने का सारा कार्य केवल मादा करती है; और कुशल नर एक ऋतु में चार-पांच मादाओं के लिए घोंसला बनाता है। क्या विश्व में बया कुल के सदस्यों की संख्या का अधिकतमं में से एक होने का रहस्य यही है ? दूसरी तरफ मादा जलमंजुर अंडे देने के बाद उनका सारा काम नर पर छोड़कर, अगले नर के पास चली जाती है और एक ऋतु में अंडों की चार-पांच खेप दे डालती है। यह रहस्य भी रोचक है। रहस्यों से भरी पड़ी है पंछियों की दुनिया। फिर कोयल और चातक हैं जो अपने

अंडे किसी अन्य पक्षी के घोंसले में देते हैं।

पक्षियों की गायन क्षमता पशु जगत में अद्वितीय है। एक तरफ अग्निकंठ कत्थई भरद्वाज अपने गान के लिए विश्वविख्यात है, वहीं महाबक अपनी चोंचों से, साधुओं के चिमटे की तरह केवल खटखट ही कर सकते हैं। पक्षियों की विविधता अनंत है, सभी पक्षियों के सभी गुणों का पूरा वर्णन करने के लिए सालिम अली की विशाल हैंडबुक भी छोटी पड़ जाएगी। इसलिए इस पुस्तक में प्रत्येक पक्षी की एक या दो विशेषताओं का ही वर्णन किया जा सका है, किंतु अलग पक्षियों की अलग विशेषताओं का, ताकि आपको उनके लगभग सारे गुणों का विहंगम दृश्य मिल सके। और इससे आपको निहारन के समय अन्य गुणों को खोजने के लिए अवसर भी मिल सकता है।

पक्षी संसार के विभिन्न रूपों, व्यवहारों तथा विचित्रताओं को देखने, समझने का आनंद निराला है जो इस मशीनी जीवन में भी आपको प्रकृति के सच्चे आनंदमय जगत में पहुंचा सकता है। आपकी मदद के लिए पक्षियों के रूप, रंग, अंग, उपांग और उड़ानों का संक्षिप्त वर्गीकृत वर्णन दिया गया है।

पक्षियों के अंग तथा उपांग

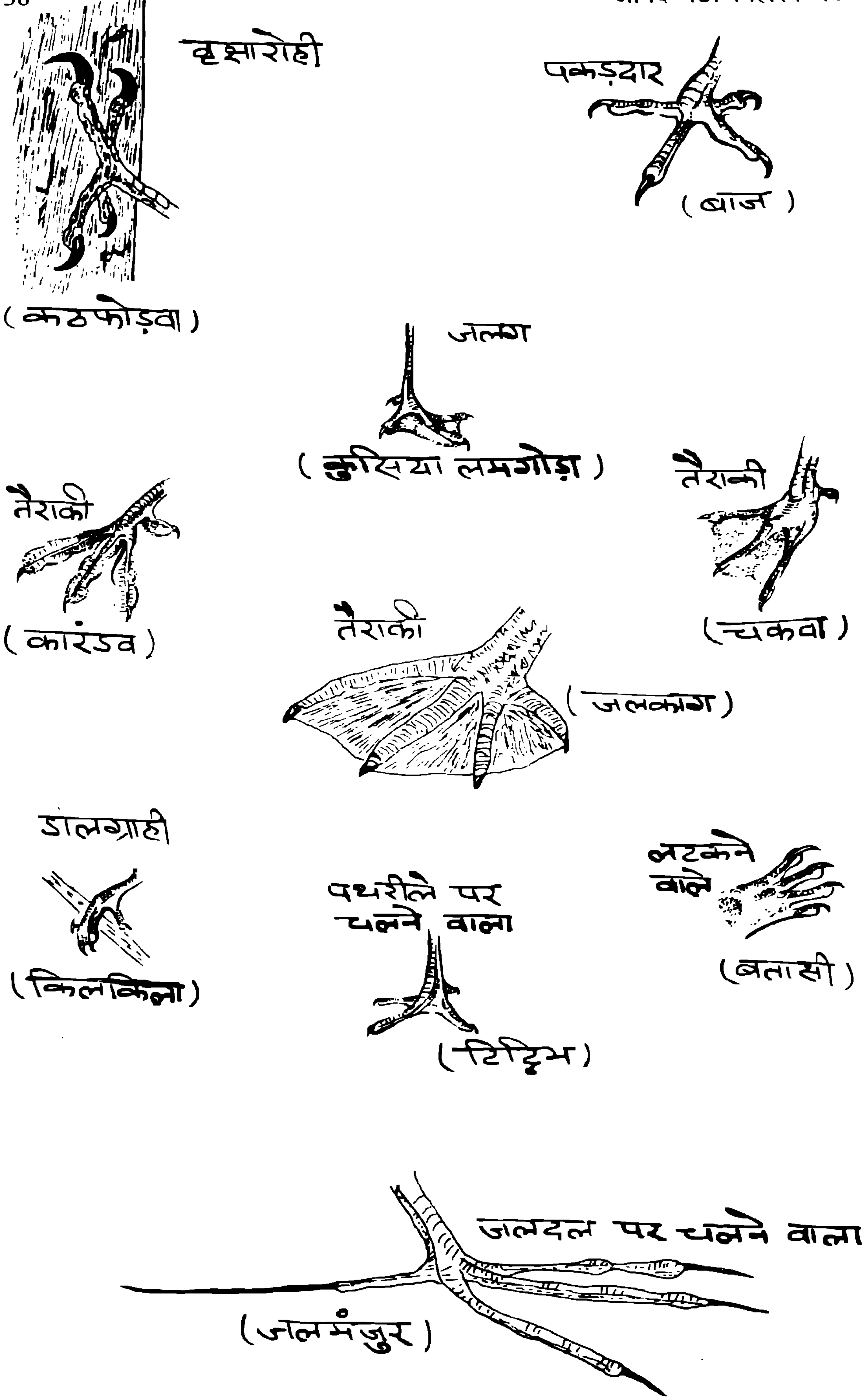
पंक्षियों की पहचान निहारने के आनंद के साथ आती है और पहचान बढ़ने से निहारने का आनंद भी बढ़ता है। उड़ती चिड़िया पहचानने का अपना निराला आनंद है। भिन्न कुलों के पक्षियों में इतने अंतर शीघ्र ही दिखने लगते हैं कि उनकी पहचान में भ्रम कम ही होता है। किंतु एक ही कुल तथा एक ही वंश के पक्षियों को ठीक ठीक पहचानने में समय लग सकता है। एक बार ऐसी पहचान समझने के बाद, यदि उस पक्षी को दुबारा देखने में देर हो जाए, तब हम अक्सर उस पहचान को भूल जाते हैं। भूलने के अनेक कारणों में से एक महत्वपूर्ण कारण यह भी है कि प्रचलित नामों (अंग्रेजी या भारतीय) में पहचान के गुण बहुत कम रहते हैं। इस पुस्तक में जो नाम दिए गए हैं उन्हें गढ़ते समय 'पहचान' के गुणों को सर्वाधिक महत्व दिया गया है। अतएव नामों में यदि सरलता कम हो गई है तो उसे स्वीकार्य होना चाहिए।

पक्षियों के पहचानने में उनके शरीर के रंगों के अलावा उनके शरीर के अंगों के आकार, गठन, आमाप तथा अनुपात से भी बहुत मदद मिलती है, इसलिए पक्षियों के अंगों तथा उपांगों को भी हमें जानना चाहिए। पक्षी दो पैरों वाला वह प्राणी है जिसके 'पर' होते हैं। परों से पिच्छ (feathers) बनते हैं तथा पिच्छों से पंख (wings)। पिच्छ में एक अक्षीय शल या पिच्छाक्ष होता है जिसमें पर लगकर पिच्छ

बनते हैं। छोटे पिच्छों को पिच्छक कहा जाता हैं। जहां जहां पंखों में जोड़ होते हैं या शरीर में छिद्र (कान या पायु या कटीर), उस स्थान को ठीक से ढांकने के लिए 'छाद' (coverts) होते हैं। पक्षियों के शरीर परों से इतने सुघड़ रूप से ढंके रहते हैं कि वे -50° या -60° सेल्सियस तक का भयंकर शीतकारी तापक्रम भी सह लेते हैं। इतना अच्छा ताप-अवरोधक गुण केवल देह-पिच्छों से नहीं हो सकता, यह देहपिच्छों के 'नीचे' छोटे मृदु (down) पिच्छों या कोमल पिच्छों की सहायता से होता है। स्तनपायी प्राणी पंजों (पादांगुलों) तथा एड़ी पर बैठता या खड़ा होता है किंतु पक्षी केवल अपने पंजों (पादांगुलों के तुल्य) पर खड़ा होता है। तथा उसके पंजे और टखने के बीच की हड्डी को हम भ्रमवश पिंडली समझ लेते हैं और टखने को घुटना। पक्षियों के पंख, देखा जाए तो हमारे हाथों के या पशुओं के आगे के पैरों तुल्य होते हैं। पक्षियों के शरीर की संरचना भी अद्‌भुत है जिसने उन्हें गगनविहारी बना दिया है। संलग्न चित्रों में अंग, उपांग तथा उनके नाम दर्शाए गए हैं।

रंग बिरंगे सुंदर पंछी : पहचानने की कला

पक्षियों के रंगों का वर्णन शब्दों में उसी को समझ में आएगा जिसने वह रंग देखा है, क्योंकि शब्द रंग के लिए मात्र एक संकेत है, ऐसा संकेत जो तभी सार्थक बनता है जब आप इस संकेतित रंग को या तो देख चुके हैं या देख रहे हैं। बिना रंग दिखलाए रंगों का शब्दों के द्वारा वर्णन असंभव है—'गिरा अनयन नयन बिनु बानी' वाली रामचरित मानस की उक्ति पूरी तरह चरितार्थ होती है। इसलिए इस पुस्तक में रंगों के नाम के साथ रंगों की पट्टियां भी दिखलाई गई हैं ताकि रंग के नाम में तथा संकेतित रंग में कोई दरार न रह जाए। तब भी कुछ दरार तो रहेगी क्योंकि रंगों की कुल संख्या यदि अनंत नहीं तो हजारों में तो है। और व्यवहार में हम हजारों नाम तो याद नहीं रख सकते, हमें तो मात्र चालीस नामों से काम चलाना है। अर्थात रंग का नाम एक शुद्ध रंग की ओर संकेत न कर, रंगों की आभा या छटा या छाया के छोटे विस्तार की ओर संकेत करेगा। अर्थात रंग दिखलाने पर भी वास्तविक परिशुद्ध रंग तो पंछी को देखने के बाद ही मालूम पड़ेगा। किंतु हमारा प्रयास नाम तथा वास्तविक रंग के बीच की दरार को यथासंभव छोटा बनाना रहा है। वैसे भी वही रंग गीला होने पर सूखे की अपेक्षा समृद्धतर नजर आता है, छाया पड़ने पर अलग, भिन्न रंगों के पड़ोस में भिन्न नजर आता है। और जैसे कि यह समस्या पर्याप्त जटिल नहीं थी, पक्षी स्वयं अपना रंग बदलते हैं ऋतु के अनुसार, उम्र के अनुसार तथा लिंग के अनुसार। इसलिए इस पुस्तक में पंछियों के रंग, यदि अन्यथा स्पष्ट नहीं किया गया है, वयस्क नर के हैं तथा उनकी साज-सज्जा



पंछियों के पंजे और नाखून

प्रजननकाल की है।

पंछियों की पहचान के लिए उनके रंग-रूप, व्यवहार तथा आवास-प्रवास की जानकारी यथेष्ट तो होगी किंतु पंछियों को व्यवस्थित ढंग से निहारने से सफलता शीघ्र मिलेगी

(1) **रंग**—पंछी को देखते समय उसके मुख्य रंग, तथा वे रंग उसके अंगों-उपांगों में किस तरह बंटे हैं, देखना चाहिए—कि क्या उसका मुख्य रंग कौए की तरह एक ही है; या 'नीलकंठ' की तरह भूरा तथा नीला दो हैं; या 'पुत्रप्रिय' की तरह बदामी, सीपिया तथा काला तीन रंगों वाला है और रंगों का अंगों पर वितरण कैसा है—क्या 'पुत्रप्रिय' की तरह सामने बदामी तथा पीछे सीपिया है ? क्या 'नील/केसर किलकिले' की तरह मुख्यतया ऊपर नीलम सरीखा गाढ़ा चमकीला नीला, तथा नीचे भूरी आभा लिए केसरिया के समान है ? क्या 'कठफोड़' की तरह मुख्यतया चितकबरा है या नीलकंठ की तरह उसका सिर तथा पंख फिरोजी तथा शेष शरीर भूरा है ? इत्यादि।

(2) **विशेष निशान**—क्या वह मुनियां की तरह बिंदुकित है ? क्या शिकरा या मादा कोयल की तरह धारीदार है ? क्या दुपट्टी भस्मी कबूतर की तरह इसके भस्मी शरीर पर स्पष्ट काली पट्टियां हैं ? क्या उसके सिर पर मोर की तरह शिखा या कलगी है ? या 'चकोर' की तरह उसके कंठ के आसपास गार्जेट है ? या 'टिटिहरी' की तरह उसके चेहरे पर लाल ठाठल हैं ? या तोते की तरह कंठ में माला पहनी है ? या 'लहटोरों' की तरह काली लंबी काजल रेखा (लगभग नकाब की तरह) है ? आदि। विशेष निशानों से न केवल पंछियों की जाति पहचान में आती है, वरन उनके वंश या कुल की भी पहचान बन सकती है।

(3) **कद तथा बनावट**—पक्षियों के कद का माप से.मी. में याद रखना या दूर से देखकर उसका अनुमान करना थोड़ा कठिन है। पक्षियों की एक-दूसरे से तुलनात्मक माप याद रखना आसान है; यथा—हम 'जामुनी शकरखोरा' से शुरू करें तो क्रमशः बड़े होते क्रम में गौरैया, बुलबुल, मैना, पंडुक, कबूतर, कौआ, चील, हंसक, गिद्ध, महाबक तथा सारस। जब किसी पक्षी को देखें तो यह अनुमान अवश्य लगाएं कि इनमें से किस के माप के निकट उसका माप है, जैसे 'पुत्रप्रिय' पक्षी 'कबूतर' के बराबर है, किंतु 'दुपट्टी कबूतर' की तरह 'मोटा' न होकर छरहरा है। सुविधा के लिए कदों की सूची संलग्न है। कद या लंबाई के अतिरिक्त पंछियों के अंगों के अनुपात भी पहचान के लिए महत्वपूर्ण हैं। किसी की पूंछ शरीर की तुलना में छोटी होती है (कत्थकल्ला सोनल बया); किसी की बराबर (कस्तूरा वंश) तो किसी की बहुत लंबी (दूधराज माखी खोर)।

कुछ पंछी (यथा बसंता) मोटे होते हैं, कुछ (धनेश) छरहरे, कुछ सुगढ़ (खंजन); किसी का सिर बड़ा होता है (लहटोरे) तो किसी के गोड़े (लमगोड़े)।

(4) **चित्रक (pattern)**–कुछ पंछियों के शरीर पर रेखाएं, या पट्टियां एक चित्रक बनाती हैं जो उनके लिए विशेष पहचान बना सकता है। अधिकांश चित्रक उड़ान के समय अधिक स्पष्ट दिखते हैं। यथा–'पुत्रप्रिय' की बाजू पर काली धारियां, कुसिया लमगोड़ा की अनुदैर्घ्य (लंबाई के अनुरूप) पट्टियां, लगभग सभी मैनाओं के उड़ते समय उनकी केहुनी पर सफेद आभा चमकती है। 'पांडु-कथ' रंग का अंधबक उड़ान में दूधिया सफेद दिखता है। चित्रक उड़ती चिड़िया को पहचानने में विशेष मदद करते हैं।

(5) **चोंच**–आहारों की तथा उनके प्राप्त करने की विभिन्नता के आधार पर चोंचों का रूप तथा गठन भिन्न होता है। चोंचों की मदद से वंश पहचानने में तथा कुल पहचानने में बहुत मदद मिलती है, और अपवाद स्वरूप जाति पहचानने में भी। यथा 'चिमटा चोंची' अपनी चिमटे जैसी चोंच से एकदम पहचाना जा सकता है। 'शुक कुल' के पंछी अपनी विशिष्ट बीज तोड़नेवाली चोंच से; 'श्येन गण' के 'बाज कुल' तथा 'श्येन कुल' के सभी पक्षियों की चोंचें अंकुड़ी होती हैं जिनसे न केवल हम उनके गण को पहचान सकते हैं वरन श्येन तथा बाज कुलों को भी अलग अलग पहचान सकते हैं; तथा बाज कुल के सुपर्ण वंशों तथा गिद्ध वंशों को भी। चोंचों के प्रकार सचित्र दिखलाए गए हैं। चोंचों के रंग भी बहुत मदद करते हैं–विशेषकर 'बगला वंश' तथा 'नदकुररी वंश' की अलग जातियों को पहचानने में। चोंचें बहुत विशिष्ट भी होती हैं, यथा अरुण क्रुंच की जिसमें बहुत बारीक छन्नी होती है जो कि पानी में से विशिष्ट सूक्ष्म जीव छान लेती है जो कि उसका विशिष्ट आहार है और उनमें से किसी जीव के कारण अरुण क्रुंच में सुंदर अरुण रंग आता है। यदि पानी का प्रदूषण बढ़ता गया तब इन क्रुंचों का अस्तित्व भी संकट में पड़ जाएगा। पक्षियों की चोंचों की विभिन्नता यह भी दर्शाती है कि विभिन्न पक्षी एक ही आवास में विभिन्न आहार चुनकर विभिन्न जातियों की आपस में अनावश्यक प्रतिस्पर्धा कम कर देते हैं, और मिलजुलकर रहते हैं। हां एक जाति के भीतर तो प्रतिस्पर्धा तीक्ष्ण होती है।

(6) **पंख और उड़ान**–भिन्न पंछियों की उड़ान भिन्न होती है। कुछ प्रकार की उड़ानों का वर्णन हम कर चुके हैं। उड़ानें पक्षियों के पंख के आकार पर भी निर्भर करती हैं। किसी पंछी के पंखों के कंधे ऊंचे होते हैं तथा छोर नुकीले (यथा, बाज या सुपर्ण), किसी के पंख पतले तथा नुकीले (भांडीक); किसी के विशाल अर्थात चौड़े भी और लंबे भी (गिद्ध); किसी के गोलाई लिए हुए (उल्लू)।

(7) **पूंछ**—पंछी अपने उड़ने की दिशा मुख्यतया पूंछ से ही निर्धारित करते हैं। पूंछ के विभिन्न आकारों का वर्णन तो हम कर चुके हैं। पूंछ के रंग तथा चित्रक भी पहचानने में मदद करते हैं। 'पुच्छमूल' (पायु के निकट) का रंग कभी विशेष होता है यथा शोण पायु बुलबुल की पायु का रंग शोण होता है। पक्षियों के अपनी पूंछ हिलाने के तरीके भी भिन्न होते हैं—कोई ऊपर नीचे (यथा खंजन); कोई बाएं-दाएं (यथा भूरी कूजिनी), किसी की पूंछ एकदम खड़ी होती है (यथा, दर्जिन)।

(8) **आंख और कान**—पक्षियों का कान के नाम पर एक छेद ही होता है, वह भी छाद पिच्छों या परों से ढंका रहता है। कुछ अपनी छोटी गोल आंख के आसपास आधुनिकाओं की तरह बहुत रंगीन तथा सुंदर सजावट करते हैं (मैनाएं)। पक्षियों की भौंहें बाल या परों की अलग से बनी नहीं होतीं, किंतु कुछ में परों का रंग भौंह के समान अलग दिखता है।

(9) **आवाज, बोल तथा गान**—किन्हीं पंछियों की आवाज बहुत मधुर होती है (यथा, बुलबुल की चांदी-सी खनक वाली आवाज); किसी की कर्कश (जंगली कौआ); किसी की मृदुल तथा मधुर (कूजिनी) तो किसी की तेज तथा लयात्मक (किलकिला); किसी की आकुलता भरी (चातक, कोयल); किसी की लंबी सुरीली तानें (भरद्वाज) तो कोई नकलचोर (लहटोरा); तो किसी की आवाज ही नहीं होती, बस बहुत हुआ तो, महाबक, अपनी चोंचों को साधुओं के चिमटों की तरह खटखटा देते हैं, तो कोई हाथी के समान तेज गूंजती चिंघाड़-सी आवाज कर सकते हैं (सारस, क्रौंच), इत्यादि। अनेक वन-पंछी दिखते मुश्किल से हैं किंतु उनके बोल या गान उनकी उपस्थिति की घोषणा कर देते हैं।

(10) **पैर तथा चाल**—पैरों के आकार, कद तथा उनके शिकार की विधि पर उनकी चाल निर्भर करती है। फुदकना (गौरैया), चलना (मैना), दौड़ना (तीतर, कुक्कुभ), मटकूचाल (हंसक), वृक्षारोही (कठफोड़), वारिकंक (अंजन बक) आदि चालें वंशों और कुलों की पहचान बनने के अलावा अपने आप में रुचिकर हैं।

(11) **आवास**—पक्षी नभचारी तो हैं किंतु हर पक्षी हर जगह नहीं रह सकता। आवास तथा प्रवास से उनके अनेक गुण पहचान में आते हैं। कुछ सूखी जलवायु पसंद करते हैं (चर्चरी, भरत); कुछ झील (चकवा), कुछ नदी तट (नदकुररी), कुछ समुद्रतट (जलरंग,) कुछ दलदल (खजाक), कुछ पर्वत (स्वर्ण सुपर्ण), कुछ झाड़ियां (फुटकियां), कुछ वृक्ष (कठफोड़), कुछ वन (हरियल), कुछ घास के मैदान (टिट्टिभ), कुछ कचड़ा घर (चील) आदि आदि। आवास की भिन्नता से भी पक्षियों की पहचान की पुष्टि हो सकती है—Common Shelduck तथा Redbreasted Merganser में रूप की

कुछ समानता है किंतु भारत में दोनों एक ही आवास में भूले-भटके ही मिल सकते हैं।

(12) अन्य व्यवहार—कुछ पंक्षी शांत होते हैं (भुजंग), कुछ वाचाल (मैना), कुछ पैं पैं करने वाले (सतभाई); कुछ छिपना पसंद करते हैं (जांबुकी कंक), कुछ साहसी (कलसिरी कपिल काक), कुछ आदमियों की परवाह ही नहीं करते (मैना); कुछ एकचर होते हैं (नीलकंठ), कुछ जोड़ीदार (सारस), कुछ परिवार प्रेमी (कौआ); कुछ यूथप्रिय (दसरी कारंडव), कुछ यूथचर (पांगर सिर हरिताक्षी), और कुछ झुंड प्रिय (मैना); कुछ शांत किंतु चौकस बैठते हैं (किलकिला, बक), कुछ चलते-फिरते हैं (सतभाई); कुछ चंचल (खंजन), कुछ एक से दूसरे वृक्ष पर उड़ते रहते हैं (दर्जिन), और कुछ उड़ते ही रहते हैं (बतासी); किसी के प्रणय गान बहुत आकर्षक होते हैं (भरद्वाज); किसी के खतरों से बचने के नाटकीय तरीके (तारकचंद्र हंसक), किसी के प्रणय नृत्य बहुत मनोरम होते हैं (मयूर); इस तरह पक्षी-संसार में वैविध्य, वैशिष्ट्य तथा सौंदर्य भरा पड़ा है।

(13) घोंसले, आहार और अंडे भी गंभीर पंछी-निहारक के लिए आकर्षक विषय हैं, किंतु पंछी निहारकों को पहले कुछ पंछियों से पहचान कर, तब इन विषयों का अवलोकन करना चाहिए।

पंछी निहारक जब निहारन के लिए जाता है तब वह वातावरण से मेल खाते कपड़े पहनता है, शांत होकर चलता है, किंतु पूरी तरह चौकन्ना होकर, वह जानता है कि पंछी समझदारी के साथ आदमियों से दो नहीं बीस हाथ दूर रहता है इसलिए एक तो वह सावधानीपूर्वक पक्षी के पास जाता है—अर्थात यथासंभव पक्षी से अपने को छिपाकर, उसके तरफ सीधे न जाकर आड़े-तिरछे जाता है, एकदम बिना आवाज किए और दूरबीन का उपयोग अधिक करता है। यदि उसे चित्र भी लेना हो तब तो और भी अधिक सावधानी से चलना पड़ता है। बाद में जब थोड़ी पहचान हो जाए, पंछी-निहारन का आनंद बढ़ जाए तब चित्र लेने के लिए एक छोटा तंबू लिया जा सकता है।

हमें पंछी आकर्षक क्यों लगते हैं ? क्या उनका रूप आकर्षक, रंग लुभावने तथा गान मधुर होते हैं, सिर्फ इसलिए ? या उनकी अनोखी उड़ान, रहस्यमय प्रवास यात्राएं, और प्रतीत रूप से बहुत ही बुद्धिमानी से किए गए कार्यों से हम प्रभावित होते हैं, इसलिए ? या वे हमारे जीवन के लिए अनिवार्य हैं, इसलिए ? इन सब कारणों के साथ, मुझे लगता है कि वन प्रांतर, वन्य प्राणियों, पक्षियों, नदी के कलकल प्रवाहों से हमें जो प्रेम है जिसे हम तर्क से समझा नहीं सकते, क्योंकि वह सब—पूरा प्राकृतिक जीवन—हमारे सामूहिक अवचेतन में समाया हुआ है। आखिर

हमारा उनका साथ लाखों वर्ष पुराना है, सहज है, इस सहज अनुभूति का आनंद उसी को मिल सकता है जो अपने हृदय की आवाज सुनकर, मशीनी जिंदगी के सतही आकर्षण को छोड़कर, प्रकृति के बीच जाकर नदियों की कलकल, पंछियों के गान, नृत्य, उड़ान आदि की अनुभूति करेगा। हमने प्रकृति के साथ, पंछियों के साथ जो लाखों वर्ष, इस विशाल विराट अंतरिक्ष में, छोटे-से नीले अंतरिक्ष यान में बिताए हैं वे ही तो सहज आनंद के स्रोत हैं, हम उन्हें सूखने न दें, वरन उस प्रेम को हमें पंछियों से, प्रकृति से मिलते रहकर बढ़ाना चाहिए।

पंछियों की सूची
(सालिम अली क्रम* अनुसार)
(नामों के साथ सहायक नाम नहीं दिये हैं)

5	Grebe. Little; Dabchick	Podiceps ruficollis capensis	अपुच्छी, पांगरग्रीव
27	Shag. Indian	Phalacrocorax fusicollis	जलकाग, सितकर्ण
28	Cormorant, Little	Phalacrocorax niger	जलकाग, सितठोड़ी
36	Heron, Grey	Ardea cinerea rectirostris	अंजन, सितसिर
37	Heron, Purple	Ardea purpurea manilensis	कंक, जांबुकी
42	Heron. Pond; Paddy Bird	Ardeola grayii g	अंधबक, पांडु/कथ
44	Egret. Cattle	Bubulcus ibis coromandus	पिंगला, गौ
49	Egret, Little	Egretta garzetta g.	बगला, कलचंचु शिखी
52	Heron, Night	Nycticorax n.	वाक, कल/सित चंद्र
60	Stork. Painted	Mycteria leucocephala	महाबक, केसरमुखी
72	Spoonbill	Platalea leucorodia major	चिमटा चंचु
81	Goose, Greylag	Anser a. rubrirostris	हंस, कथाली
82	Goose, Barheaded	Anser indicus	हंस, दुपट्टी
90	Shelduck, Ruddy	Tadorna ferruginea	चकवा, बदामी
93	Pintail	Anas acuta	सींकपर
94	Teal. Common	Anas crecca c.	पांगरसिर हरिताक्षी
97	Duck, Spotbill	Anas Poecilorhyncha p.	वरमुखी
105	Shoveller	Anas clypeata	खंतिया
115	Nakta or Comb Duck	Sarkidiornis melanotos m.	नकटा, कल/सित
133	Kite, Pariah	Milvus migrans govinda	चील, दुशाखी
138	Shikra	Accipiter badius dussumieri	शिकरा, मेघ/केसर
185	Vulture, Whitebacked	Gyps bengalensis	गिद्ध, सितकालर

---

* सालिम अली ने हैंडबुक में जिस क्रम में पक्षियों का वर्णन किया है उन्हीं क्रमांकों के साथ इस पुस्तक में वर्णन किया गया है।

* बहुपद लातिनी नामों में दुहराया हुआ शब्द उसके आद्य अक्षर से दर्शाया गया है।

186	Vulture. Egyptian	Neophron percnopterus p.	शकुंत, पाण्डु...सित
236	Partridge, Chukar	Alectoris chukar	चकोर, सितगार्जेट
245	Partridge. Grey	Francolinus pondicerianus interpositus	तीतर, जाल
311	Peafowl. Indian	Pavo cristatus linnaeus	मोर, या मयूर
323	Crane. Sarus	Grus antigone a.	सारस, लोहितसिरी
343	Whitebreasted Waterhen	Amaurornis phoenicurus chinensis	दवाक, कल/सित
347	Moorhen. Indian	Gallinula chloropus indica	जलमुर्गी, सितकिनार
350	Coot	Fulica atra.	दसरी, तिलक
358	Jacana, Pheasant-tailed	Hydrophasianus chirurgus	जलमंजुर, पुच्छल
366	Lapwing. Redwattled	Vanellus indicus i.	टिटिहरी, ललमुंही
401	Sandpiper. Common	Tringa hypoleucos h.	सिकतार, चंद्रकंधी
430	Stilt, Blackwinged	Himantopus h. h.	लमगोड़ा, कल/सित
432	Avocet	Recurvirostra avosetta	कुसिया, चुटीला
454	Gull. Brownheaded	Larus brunnicephalus	गंगचील, कथसिरी
455	Gull. Blackheaded	Larus ridibundus r.	गंगचील, कलसिरी
463	Tern, Indian River	Sterna aurantia	कुररी, कुंदन/लाल
503	Pigeon, Bengal Green	Treron phoenicoptera p.	हरियल, सोनकंठा
517	Pigeon. Blue Rock	Columba livia intermedia	पारावत, धूमिल
534	Dove. Indian Ring	Streptopelia decaoct d.	पंडुक, कलकंधर नीलक
541	Dove. Little Brown	Streptopelia senegalensis cambayensis	पंडुक, सुकिनार नीलक
549	Parakeet, Roseringed	Psittacula krameri borealis	तोता, ललकलकंठी
570	Cuckoo. Pied Crested	Clamator jacobinus serratus	चातक, कल/सित
590	Koel. Indian	Eudynamys scolopacea s.	कोयल
600	Crow-Pheasant	Centropus sinensis s	कुक्कुभ, पांगरपंख
650	Owlet, Spotted	Athene brama Indica	पैंचा, चीतल
703	Swift. Indian House	Apus affinis a.	बतासी, वर्गपूंछ
719	Kingfisher, Lesser Pied	Ceryle rudis leucomelanura	कौड़ियाला, सितभ्रू
722	Kingfisher. Little Blue	Alcedo atthis	मछरंगा, नील/केसर
736	Kingfisher, Whitebreasted	Halcyon smyrnensis fusca	किलकिला, खंड्या कथ
750	Bee-eater, Green	Merops orientalis o.	पत्रिंगा, पिंग/तूतिया
755	Indian, Roller	Coracias benghalensis b.	नीलकंठ, पाटलग्रीव

763	Hoopoe, European	Upupa epops e.	पुत्रप्रिय, बदामी शेखर
767	Hornbill, Grey	Tockus birostris	धनेश, कलनक श्याव
780	Barbet, Green	Megalaima zeylanica caniceps	कुटुरूं, ललौंछ-हरा
792	Barbet, Crimsonbreasted	Megalaima haemacephala indica	तम्हेरा, सोनकंठ
819	Woodpecker, Golden-backed	Dinopium benghalense b.	कठफोड़, चीतलकंधी सोन
847	Woodpecker, Yellow-fronted Pied	Picoides maharattensis m.	कठफोड़, चीतलपुच्छ
899	Lark, Crested	Galerida cristata chendoola	भरत, बलुइ चंडूल
907	Skylark, Small	Alauda gulgula g.	भरद्वाज, कत्थ/अगिन
912	Martin, Plain Sand	Reparia paludicola chinensis	चटी, दुग्धोदर कॉफी
916	Swallow, Western	Hirundo rustica r.	भांडीक, पिंगोदर जमुनकंठ
940	Shrike, Baybacked	Lanius vittatus v.	लटोरा, कथपीठ
946	Shrike, Rufousbacked	Lanius schach erythronotus	लटोरा, केसरिया
953	Oriole, Golden	Oriolus o. kundoo	पीलक, कलपंखी
962	Drongo, Black; King Crow	Dicrurus adsimilis albirictus	भुजंगा, दुशाखी काला
994	Myna, Brahminy	Sturnus pagodarum	मैना, ब्राह्मणी
997	Starling	Sturnus vulgaris poltaratskyi	मैना; तेलन
1008	Myna, Bank	Acridotheres ginginianus	गंगमैना; केसराक्षी
1032	Tree Pie, Indian	Dendrocitta vagabunda v.	पुच्छलकाक, कपिल
1049	Crow, House	Corvus splendens s.	कौआ, घरेलू या कलौंछी काक
1057	Crow, Jungle	Corvus macrorhynchos culminatus	कौआ, काला जंगली
1093	Minivet, Small	Pericrocotus cinnamomeus c.	मेघा कुमकुम
1102	Iora, Marshall's	Aegithina nigrolutea	शोबिगी, सोनकालर
1119	Bulbul, Redwhiskered	Pycnonotus jocosus	बुलबुल, कनेरा
1127	Bulbul, Redvented	Pycnonotus cafer humayuni	बुलबुल, गुलदुम
1258	Babbler, Large Grey	Turdoides malcolmi	सतभाई, सितकिनार
1262	Babbler, Jungle	Turdoides striatus orientalis	सतभाई, जंगली
1461	Flycatcher, Paradise	Terpsiphone paradisi p.	माखीखोर, दूधराज
1515	Wren-warbler, Ashy	Prinia socialis stewarti	फुटकी, मेघ/केसर

1535	Tailor Bird	Orthotomus sutorius guzuratus	दर्जिन, ध्वजधानी
1567	Whitethroat. Lesser	Sylvia curruca blythi	सितकंठी, धूमिल
1661	Magpie-Robin	Copsychus saularis s.	दहियल, सितोदर काला
1671	Redstart. Black	Phoenicurus ochruros phoenicuroides	थिरथिरा, कथपंख कल
1701	Bushchat. Pied	Saxicola caprata burmanica	अश्वक, सुकंधी कल/सित
1717	Robin. Indian	Saxicoloides fulicata cambaiensis	श्यामा, सुकंधी
1858	Pipit, Paddyfield	Anthus novaeseelandiae waitei	चर्चरी, कथ/सित पिंजर
1876	Wagtail. Blueheaded Yellow	Motacilla flava beema	पीलकिया, भस्मी शिखर
1884	Wagtail, Grey	Motacilla caspica c.	पीलकिया, कलकंठी मेघा
1885	Wagtail. White	Motacilla alba dukhunensis	खंजन, भस्मी/सित
1891	Wagtail. Large Pied	Motacilla maderaspatensis	खंजन, सितोदर काला
1917	Sunbird. Purple	Nectarinia asiatica a.	शकरखोरा, जामुनी
1933	White Eye. Indian	Zosterops palpebrosa p.	सिताक्षी, कंचन/सित
1938	Sparrow, House	Passer domesticus indicus	गौरैया
1957	Weaver Bird. Baya	Ploceus philippinus p.	बया, कथकंट सोनल
1964	Munia. Red	Estrilda amandava	मुनियां, लाल
1966	Munia. Whitethroated	Lonchura malabarica m.	मुनियां, सितकंठी

पक्षियों का वर्णन

पांगरग्रीव अपुच्छी Little Grebe; Dabchick

5. Podiceps ruficollis capensis

कद : मैना; 23 सेमी.; आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : छोटी पनडुब्बी, पनतिरी, लओकरी, डुबडुबी, चूड़क, वंजुलक, पाणंतरा; **बंग्ला :** डुबारी, पनडुब्बी, डुबडुबी; **तेलुगु :** मुनु-गुडि-कोडि; **तमिल :** मुक्कुलिप्पन, तण्णि पुल्लु; **कश्मीरी :** पिंड; **सिंधी :** टुबीणो; **संस्कृत :** वञ्जुल।

पहचान : बित्तेभर का *छोटा मोटा पुच्छहीन* जलपक्षी, छोटी नुकीली काली चोंच, पैर थोड़ा पीछे की तरफ होते हैं जो तैरने और डुबकी लगाने में मदद करते हैं, पिच्छक रेशमी। **प्रजननकाल** में पीठ तथा शिखर श्याव भूरा, कपोल तथा गरदन पांगर; कंठ हल्का भूरा; पिछाड़ी सफेद; ठोड़ी काली, नीचे-उदर चमकीला धूमिल, बाजू हल्के कलौंछ भूरे; केवल उड़ते समय दिखने वाला पंखों पर सफेद धब्बा; **प्रमुखतः** इसका ऊपरी रंग श्याव भूरा तथा पीछे और नीचे सफेद। **ग्रहणकाल** (शीतकाल) में सफेद ठोड़ी के साथ मैला भूरा पक्षी, हल्की पिंजर ग्रीवा; नीचे सफेद। **नर-मादा** एक समान।

यह भारत का सबसे छोटा, सर्वसुलभ, जलप्रिय एवं जलाश्रित जलपक्षी है और पूंछ न होना मात्र इसके वंश का ही अनोखा गुण है। इसका कुल विश्व के दस अधिकतम सुविस्तृत कुलों में से एक है। यह आवासी पक्षी मौसम और वर्षा आदि के साथ, रात्रि के अंधकार की सुरक्षा में, स्थानीय प्रवास करता है। यह अपने पैरों की कमजोर बनावट के कारण जमीन पर चलना पसंद नहीं करता तथा 'पर्च' (यष्टिसादन) नहीं कर सकता। छोटी मछली पकड़ने में कुशल है, जो इसका प्रिय भोजन है। यह जलकीट तथा जल-वनस्पति भी खाते हैं। अपने 'पर' गुटकने की इस वंश की विचित्र आदत है, शावकों को भी ये 'पर' खिलाते हैं। इस परिवार के पंछी लंबी डुबकी लगाने में बहुत कुशल तथा सूंघने की शक्ति में तेज होते हैं। खतरा होने पर डुबकी लगाना पसंद करते हैं और यदि उनके शावक उन पर सवारी कर रहे होते हैं, तब वे भी पंख पकड़े काफी देर तक डुबकी साध सकते हैं। डुबकी

इतनी सफाई से लगाते हैं कि वहां एक लहर भी नहीं बनती। इनके शावक भी अंडों से निकलने के थोड़ी ही देर बाद तैरने लगते हैं और दूसरे दिन से डुबकी लगाना भी आरंभ कर देते हैं।

नर-मादा मिलकर घोंसला नरकुलों पर या चोई आदि के तैरते छोटे टापुओं पर चोई आदि से बनाते हैं तथा सेने का काम करते हैं। सेने के लिए अपनी बारी आने पर, आने वाला पंछी अपनी चोंच में भेंट स्वरूप शैवाल का टुकड़ा लाता है। अक्सर मादा अंडों का दूसरा खेप दे देती है जबकि पहले खेप के अंडों को सेने का काम पूरा नहीं होता, तब नर पहले खेप के तथा मादा दूसरे खेप के अंडों को सेती है। घोंसले को छोड़ते समय ये अंडों को जल-वनस्पति से ढक देते हैं। इसके शावक पानी में सैर के लिए माता-पिता के ऊपर सवारी करते हैं या उनके बाजू के पंख (हमारे बच्चों के मां के पल्लू पकड़ने के समान) अपनी चोंच से पकड़ लेते हैं। कुछ दिनों की उम्र वाले शावकों को किलकिलों से डर रहता है, और कौए भी इसके अंडों को मौका पाते ही खा जाते हैं।

इसका गान ऊंचे स्वरों में कंपन के साथ हल्का तथा मधुर होता है जिसकी प्रशंसा भवभूति ने उत्तररामचरित में की है। संध्या के समय ये पानी की सतह पर आधे दौड़ते, आधे उड़ते, तार स्वरों में गाते एक-दूसरे का पीछा करते हैं। इसलिए आवासी तथा सर्वसुलभ होते हुए भी पांगरग्रीव अपुच्छी को शुभ शकुन माना गया है।

सितकर्ण जलकाग **Indian Shag**

27. Phalacrocorax fuscicollis

कद : हंसक+, 63 सेमी.; आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : पनकौआ, घोगर; **बंग्ला :** पनकौरी; **असमिया :** पानीकौरी; **तेलुगु :** बोटा काकी; **कछार :** दि दुक्वा; **कश्मीरी :** नेआर; **सिंधी :** सिल्ली; **संस्कृत :** जलकाक, प्लव, पानीयकाकिका।

पहचान : तीनों पनकौओं में मझोला कद; ऊपर कांस्य काला, नीचे चमकदार काला; कान के पीछे सफेद परों का पतला गुच्छा; सिर पर कुछ सफेद बिंदु; ऊपरी कंठ सफेदी लिए हुए। **नर-मादा** एक समान। **ग्रहणकाल :** परों में चमक नहीं, कंठ में सफेद धब्बा।

सितठोड़ी (छोटा) जलकाग तथा सितकर्ण पहाड़ी हिमालय के अतिरिक्त सारे भारत में पानी के पास तथा सागरतट पर अक्सर एक साथ मिलते हैं। इन्हें न केवल

झुंड में रहना पसंद है वरन अक्सर ये सुनियोजित संघ की तरह मछलियों का शिकार भी करते हैं। मछलियों के समूह को हंकाल उन्हें उथले में ले जाकर ये उन पर अपनी पैनी चोंचों से हमला करते हैं। बांध-द्वारों से पानी के साथ निकलती मछलियों पर सीधे आक्रमण करते हैं। पानी में थोड़ा-सा उछलकर अपने गोते की ताकत को बढ़ाते हुए हमला करते हैं और पानी के अंदर भी (मानो उड़ते हुए) उसका पीछा करते हैं। फिर शान से जब सिर पानी के ऊपर निकालते हैं तब उनकी चोंच में एक रूपहली मछली आड़ी नजर आती है। चोंच को ऊपर करते हुए, एक झटके से उस मछली को चोंच में इस तरह पकड़ते हैं कि उसका मुंह पहले अंदर आता है। ऐसे खाने से मछली का शल्क कोई अवरोध पैदा नहीं करता। शाही भोज के बाद वे किसी टहनी या चट्टान पर बैठकर, अपने पंखों को फैलाकर सूर्यदेव की तपस्या करते हैं। जलकाग परिप्लावी पंछी हैं किंतु ये मात्र भोजन के लिए पानी में जाते हैं।

इसका **प्रजननकाल** उत्तरी भारत में अगस्त-अक्तूबर तथा दक्षिणी भारत में नवंबर-फरवरी है। इसका रहन-सहन तथा व्यवहार लगभग सितठोड़ी पनकौआ के समान है। ये अपना घोंसला पानी के पास के वृक्षों तथा चट्टानों आदि पर बनाते हैं। इनका घोंसला सूखी टहनियों का बड़ा तथा गहरा और मजबूत होता है जिसे ये हर साल मरम्मत कर फिर उपयोग में लाते हैं।

बहुत से जलपक्षी हैं, जो गोता लगाकर आहार ढूंढ़ते हैं, तब जलकाग ही क्यों पंख फैलाकर सूर्य की पूजा करते हैं ? गोताखोर पक्षियों की विशेष क्षमताएं होती हैं। अधिकांश गोताखोर पक्षियों की नाक जलकाग की तरह बंद रहती है जिससे कि नाक के अंदर पानी न जा सके, वे सांस मुंह के कोने से लेते हैं। गोताखोर पक्षियों को, अपने परों का पानी से गीले होने का डर हमेशा बना रहता है इसीलिए इनकी ग्रंथियों से अच्छी मात्रा में जल-रोधक तेल निकलता है। अन्य गोताखोरों की अपेक्षा जलकागों के पर-पिच्छकों के बीच दूरी कुछ अधिक रहती है, जिसके फलस्वरूप उनके परों के बीच हवा के बुलबुले निकल जाने से उनकी उत्प्लावकता कम हो जाती है जिससे वे पानी के अंदर अधिक आसानी से तैर सकते हैं, किंतु इस दूरी के कारण उनके परों को जलाक्रांत होने का भय बना रहता है। इसलिए पंखों को सुखाने की आवश्यकता हो जाती है, साथ साथ यह सूरज की गर्मी भी लेते हैं क्योंकि परों के गीले होने से उनकी ताप-अवरोधकता भी कम हो जाती है।

मनुस्मृति में जलकागों के शिकार का निषेध है। जलकागों का होना पानी की जीवंतता की निशानी है। इसीलिए वैदिक साहित्य में इसे नदी के देवता को समर्पित किया गया है।

सितठोड़ी (छोटा) जलकाग Little Cormorant

28. Phalacrocorax niger

कद : कौआ +, 51 सेमी.; आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : *पनकौआ,* गनहिल, जग्रोबी; **बंग्ला :** पनकौरी, पनकुटी; **असमिया :** पानीकौरी; **तेलुगु :** नीतिकाकि; **तमिल :** कडल कागम, नीर कागम; **मलयालम :** काकताखु; **संस्कृत :** प्लव, जलकाग, **काकमद्गु,** पानीयकाकिका।

पहचान : नीली हरी आभा लिए चमकदार काला पक्षी; ऊपरी पीठ तथा पंख गाढ़े रजत-धूसर जिन पर काले धब्बे; ऊपरी माथे तथा बाजू में कुछ सफेद रेशमी पिच्छक। **प्रजननकाल** के बाद ठोड़ी तथा ऊपरी कंठ सफेद। टंकाकार बड़ी पूंछ; **नर-मादा** एक समान।

हमारा सबसे छोटा जलकाग हिमालय के अतिरिक्त समस्त भारत को, जहां भी जीवंत पानी मिलता है, आबाद करता है। जलाशयों के कद के अनुरूप झुंडों में रहता है और अक्सर अपने भाई 'सितकर्ण' की संगति पसंद करता है। 'सितकर्ण' जलकाग के समान यह गोता लगाकर मछली का शिकार करता है तथा पेड़ों, खंभों और चट्टानों आदि पर बैठकर अपने पंखों को फैलाकर सुखाता रहता है। मछली के अतिरिक्त मेंढक, बैंगची, कवचधारी भी इसके आहार हैं।

इसका **प्रजननकाल** उत्तरी भारत में जुलाई-सितंबर है तथा दक्षिण भारत में नवंबर-फरवरी है। जलपक्षियों की कालोनी में ये घोंसला अधिकतर पानी के किनारों के वृक्षों, चट्टानों तथा ऊंची जमीन पर सूखी पतली डंडियों के अनगढ़ छोटे चबूतरे सरीखा बनाते हैं। घोंसलों के लिए अक्सर ये पक्षी वह टहनी पसंद करते हैं जो पानी के ठीक ऊपर हो। यदि ये तथा शावक जब कोई खतरा आते देखते हैं तब सीधे पानी में 'गिर' जाते हैं। मादा एक खेप में 3 से 5 तक अंडे देती है। इन अंडों के बीच का अंतराल आम पक्षियों की तुलना में कहीं अधिक होता है। **नीड़ निर्माण** तथा सेने का काम नर-मादा दोनों करते हैं। सेने में पहले के अंडों को प्राथमिकता दी जाती है। इसलिए पहला चूजा दूसरे से और दूसरा तीसरे से काफी बड़ा होता है। ऐसा करने से इनकी अतिजीविता बढ़ जाती है। जलकाग परिवार के पक्षी अपने शावकों को जुगालीकृत **भोजन** देते हैं। थोड़े बड़े शावक अपने माता या पिता के मुंह के अंदर चोंच ले जाकर उनकी अन्न की नली में से भोजन निकालकर खाते हैं। ये शावक उस समय तक पंख फड़फड़ाते हुए पूरी ताकत लगाते और खाते रहते हैं जब तक कि माता या पिता जोर लगाकर इन्हें अलग नहीं कर देते। जब कि नीड़शावक अपनी ग्रीवा दाएं बाएं करते हुए, माता-पिता की चोंच को अपनी चोंच से हिलाते हैं और इस तरह उन्हें जुगालीकृत भोजन निकालने के लिए प्रेरित करते हैं।

जलकाग लंबी उड़ानें 'वी' (V) आकृति के धोरण में भरते हैं, किंतु बाधा पड़ने पर 'प्रडीन' उड़ान करते हैं। कभी ये अनुदैर्घ्य (उड़ान दिशा के अनुरूप) रेखा में उड़ते हैं और कभी पार्श्वीय (उड़ान दिशा के लंबे रूप) रेखा के धोरण में। जब ये पानी पर अवतरण करते हैं तो सिसकारी-सी हल्की आवाज करते हैं। अपने विशिष्ट गुणों के कारण ही जलकाग कुल विश्व के दस अधिकतम सुविस्तृत कुलों में से एक हैं। जलकाग वंश की एक और जाति भारत में सुलभ है, 'सितकपोल जलकाग', जो आमाप में 'सितठोड़ी' से बहुत बड़ा है (80 सें.मी.)।

सितसिर अंजन (कंक) Eastern Grey Heron

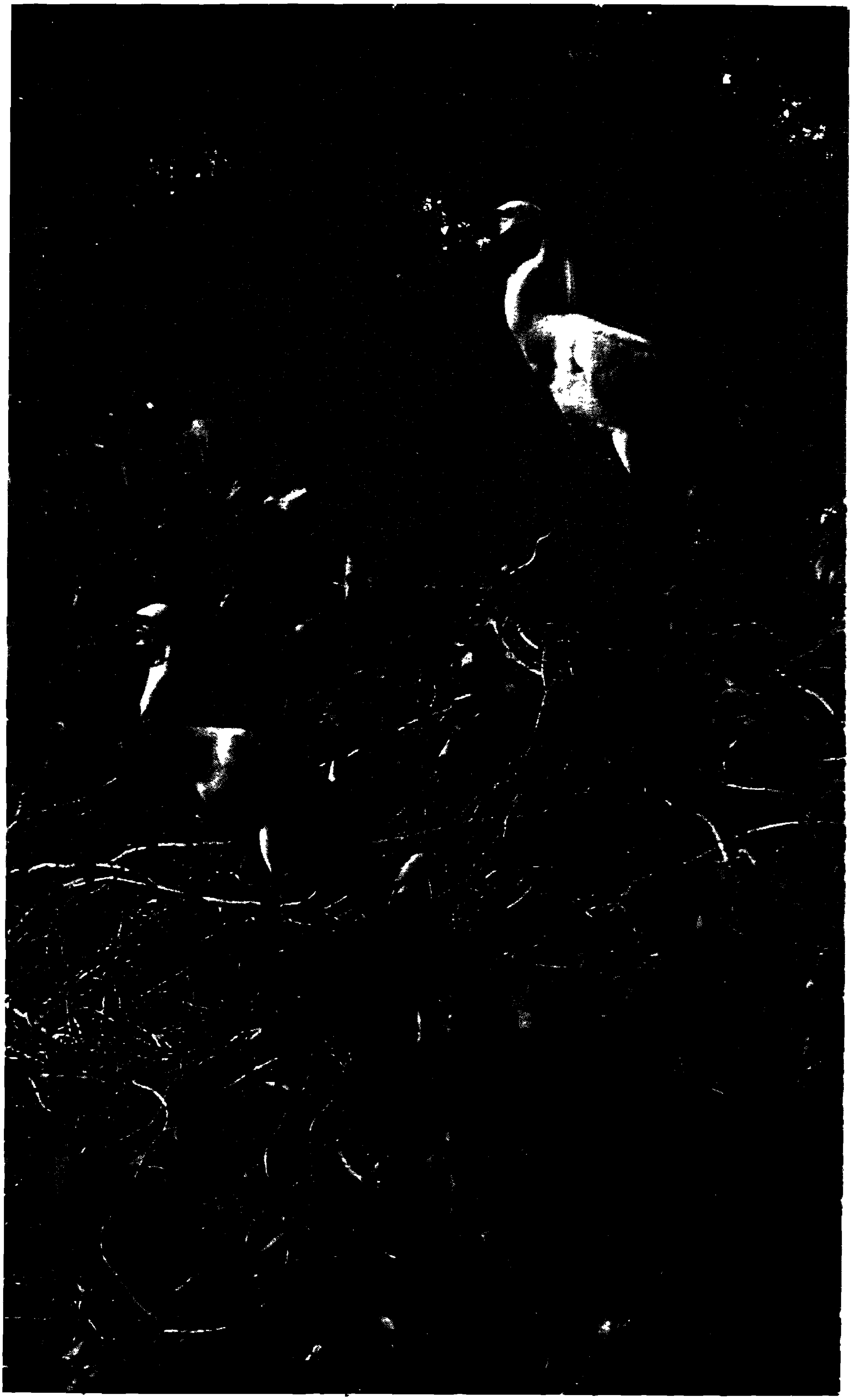
36. Ardea cinerea rectirostris 35. A.c.c. (यूरोपी)

लंबाई पैर मिलाकर 98 सेमी.; ऊंचाई 75 सेमी.; आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : नरी, सैन, कबुद, *अंजन,* खेरा; **बंगला** : सादा *कंक,* कंक, *अंजन;* **कश्मीरी** : *ब्राग;* **कन्नड़** : बक; **तेलुगु** : नारायण पच्छी; **तमिल** : नारइ, सम्बल नारइ; **मलयालम** : चारामुंटि; **महाराष्ट्र (कोली)** : कुडाल; **सिंधी** : सा; **संस्कृत** : कंक, कृशचंचु कंक, वारिकंक, बलाहक, श्वेतनील *अंजन,* जलसूचि।

पहचान : सिर तथा ग्रीवा सफेद; टांगें तथा ग्रीवा लंबी; दो लंबी काली चोटियों वाला दलदल का पक्षी जिसका रंग मुख्यतया बादल के समान कजरारा (अंजन) है। **ऊपर** : भस्मी आभा लिए सांवला; **नीचे** : कंठ और वक्ष के बीच खड़ी काले बिंदुओं की स्पष्ट रेखा, वक्ष पर काली धारी वाले चंपई लंबे 'पर' तथा शेष निचला भाग भस्मी सफेद। पैर तथा चोंच लाल। **मादा** अपेक्षाकृत छोटी तथा चोटियां एवं चक्षीय-पर भी छोटे।

सारे भारत में पानी के पास, चाहे मीठा या खारा (तट पर नहीं) जैसे ज्वार पूरित निवेषिका, तालाब आदि में अधिकतर अकेला, गोधूलि बेला में निश्चल बैठा मिल सकता है। यह अपने शिकार की टोह में कभी कभी अपनी लंबी टांगों को बहुत ही सावधानी से उठाता और आगे बढ़ता हुआ भी दिख सकता है। उसकी इस चाल का नाम कौटिल्य ने 'दीर्घपाद कंक' (एडजुटेंट) की लंबे डगों वाली चाल की अपेक्षा **वारिकंक** रखा था। वारिकंक चाल में अपनी गर्दन को आगे, थोड़ा खींचकर, बहुत ही ध्यानपूर्वक शिकार को खोजता है। जब यह शिकार के अपने पास आने की बाट जोहता है तब बिलकुल निश्चल होकर, अपनी गर्दन सिकोड़कर मानो अपने सिर को कंधों के बीच रख लेता है। शिकार को अपने परास के भीतर देखते ही अपनी गर्दन को पूरा खींचकर फिर एकदम जड़ हो जाता है और मौका



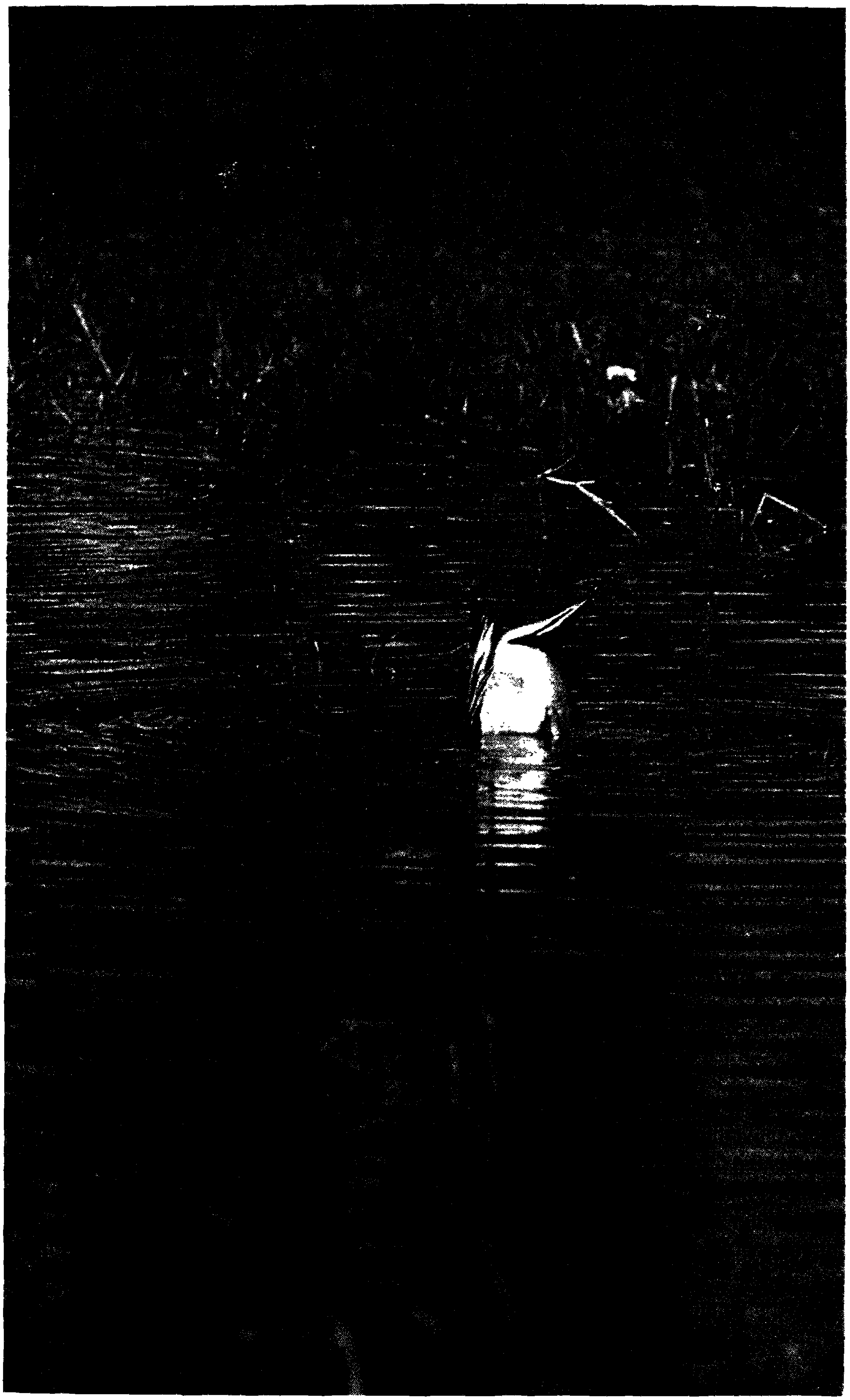
9 चिमटा चंचु (72)



10 क – दुपट्टी हंस (82)



10 ख – बदामी चकवा (90)



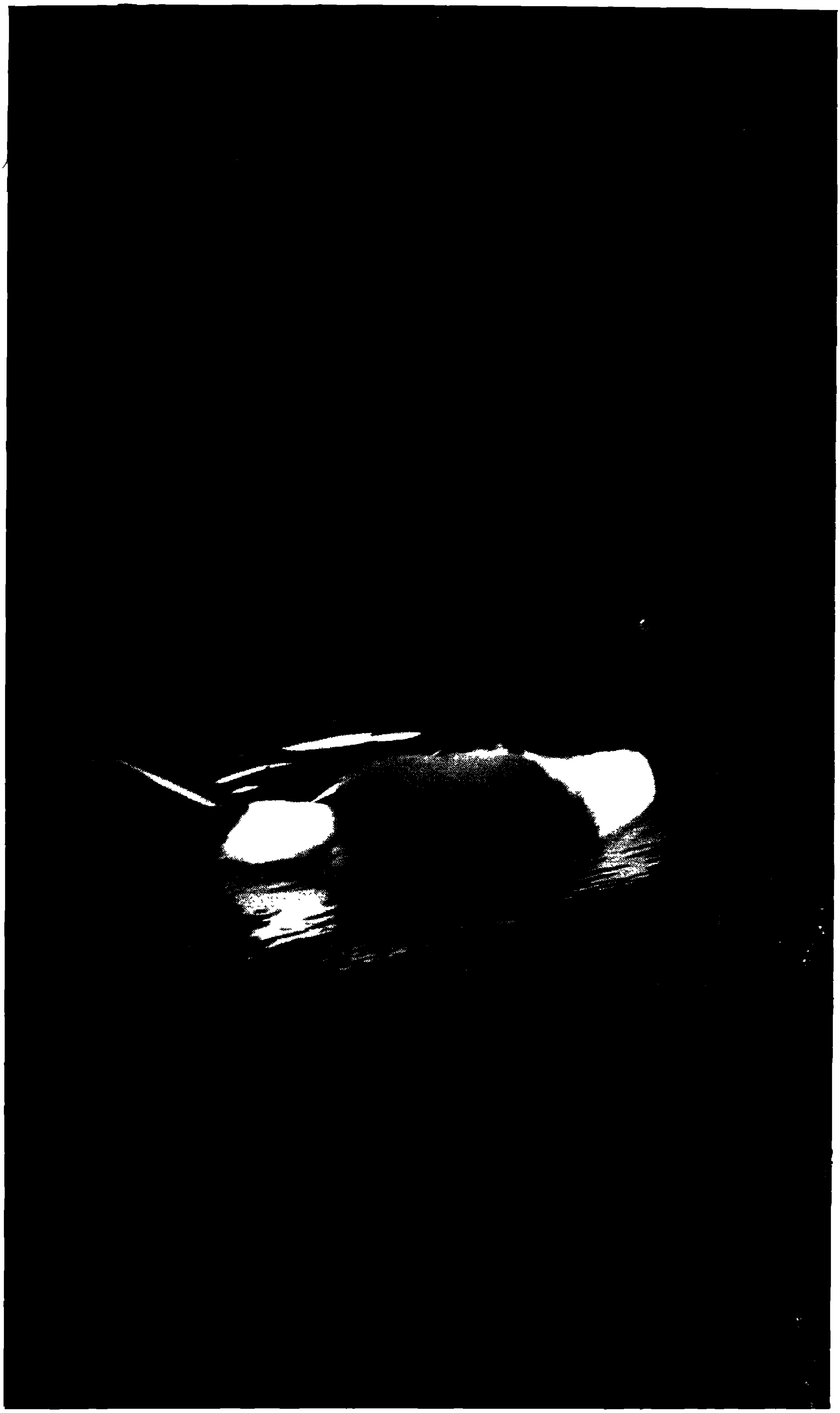
11 सींकपर (93)



12 क – वरमुखी (97)



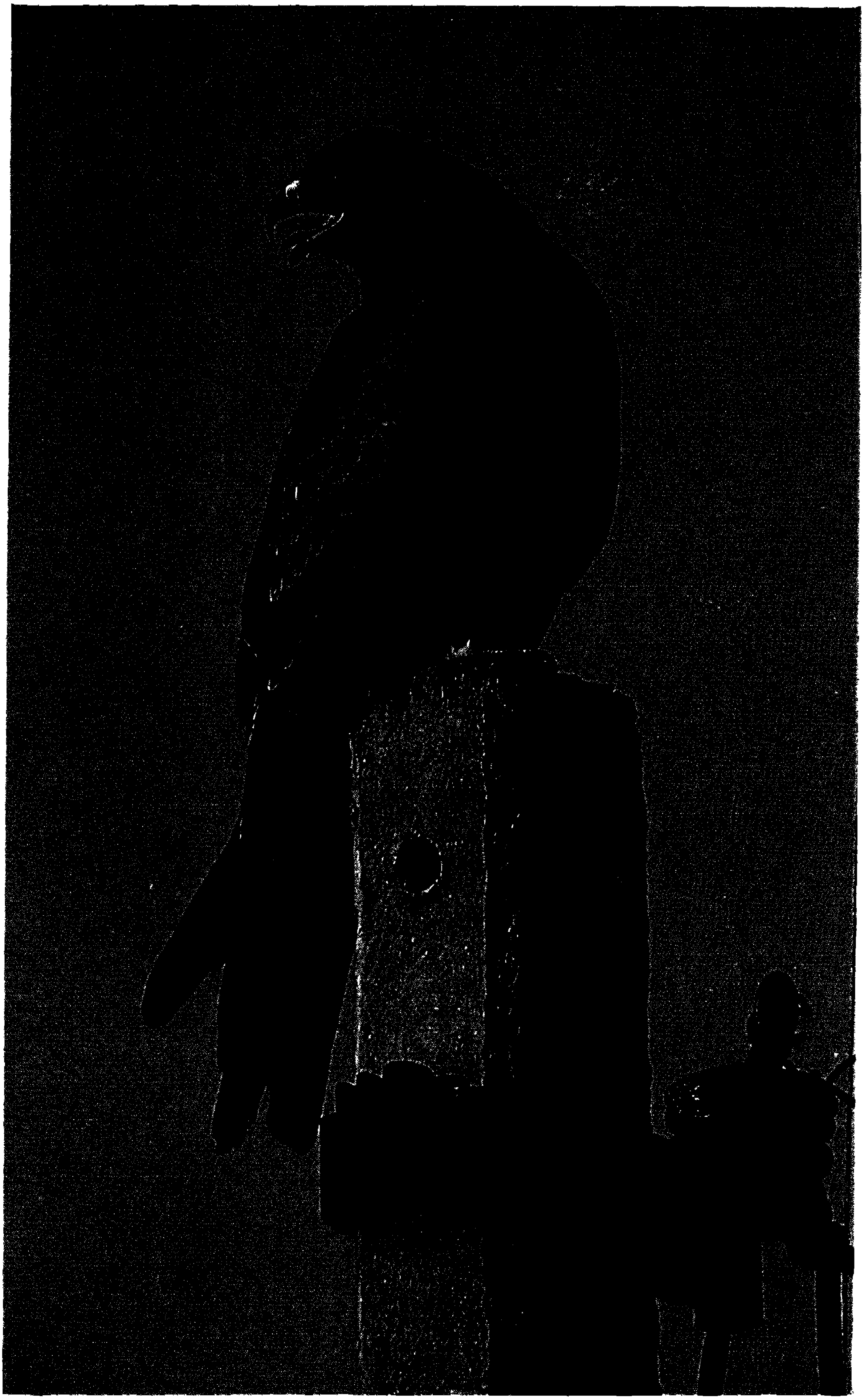
12 ख – पांगरसिर हरिताक्षी (94)



13 खंतिया (105)



14 कल/सित नकटा (115)



15 दुशाखी चील (133)



16 क – सितकालर गिद्ध (185)



16 ख – मेघ/केसर शिकरा (138)

पाते ही बिजली की-सी गति से शिकार पर अपने भाले-सी चोंच (अतएव इसका 'जलसूचि' नाम) से या तो वार करता है या चोंच में दबा लेता है। भोजन के बाद जब यह अपने पंख सुखाता है तब इसके शरीर में से एक प्रकार का पाउडर निकलता है जो सुखाने में मदद करता है।

कोई **खतरा** देखने पर, 'क्वारंक'-सा हार्न बजाता बड़ी ताकत लगाता हुआ उड़ता है--पहले तो इसकी पूंछ ऊपर नीचे होती है, फिर गर्दन को सीधी कर अपने पैरों पर ताकत लगाकर छलांग-सी लगाकर और अपने पंखों से ताकत लगाकर फड़फड़ाता हुआ उड़ना शुरू करता है। साथ ही अपने लंबे लटकते पैरों से संतुलन बनाए रखता है। थोड़ा-सा वेग आने पर अपनी गर्दन को समेट कर सधी उड़ान भरने लगता है।

कंक वंश के सभी पक्षियों (यह सामान्य रूप से सभी वंशों, कुलों, गणों, के लिए सच है) में कुछ गुण सर्वनिष्ठ होते हैं। कंकवंशी (Ardea) लंबी गर्दन, लंबी टांगों वाले लंबे (95-130 सेमी.) पक्षी हैं। इनकी चोंच (आधार पर) मोटी, लंबी तथा नुकीली होती है। ये अधिकांशतया अपने घोंसले पानी के पास बनाना पसंद करते हैं। यह शिकार या तो वारिकंक चाल में सावधानीपूर्वक चलकर या 'बक शैली' में निश्चल बैठकर करते हैं। शिकार अधिकांशतया सुबह या शाम को करते हैं। इसे अकेला रहना पसंद है, केवल प्रजननकाल में झुंडों में रहता है।

इसका सगा भाई यूरोपीय सितसिर अंजन (कंक) (A.cinerea c.) जो मुख्यतया बलूचिस्तान, सिंध, कच्छ तथा नेपाल को आबाद करता है, कभी कभार पश्चिमी भारत में भटककर आ जाता है। हमेशा की तरह इन सगे भाइयों में भेद करना अत्यंत कठिन कार्य है।

जांबुकी कंक Purple Heron

37. Ardea purpurea manilensis (पूर्वी) *37क. A. purpurea p. (पश्चिमी)*

लंबाई 97 सेमी.; ऊंचाई 70 सेमी.; आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : नरी, लाल सैन, लाल अंजन, खैरा, बिसनासिक; **बंग्ला :** लाल *कंक*; **असमिया :** लाल कोल; **तेलुगु :** येर्रा नारायण पक्षी; **तमिल :** चैन्नाइ; **मलयालम :** छायामुंठी; **संस्कृत :** *कंकरू*, नीलक्रौंच।

पहचान : ऊपर पीठ नीलाभ लिए चमकीली जांबुकी, किंतु पंख और पूंछ के जांबुकी में श्यामाभा; शिखर तथा शिखा सलेटी काली, बाकी सिर तथा लंबी ग्रीवा कालीधारी सहित जांबुकी पाटल; **नीचे** ठोड़ी तथा कंठ सफेद, वक्ष पर लंबे और लटकते हुए

पांडुर (पीताभ सफेद) 'पर', वक्ष पर काली तथा पांगर-धारियां तथा नीचे के अन्य भाग प्रगाढ़ पांगर। **नर-मादा** एक समान किंतु मादा की शिखा तथा वक्ष 'पर' छोटे। किशोर शावक, दूर से, मुख्यतया दालचीनी भूरा दिखता है, यहां तक कि उसके सलेटी जामुनी पंख भी उसमें छिप जाते हैं।

अंजन कंक की तरह जांबुकी कंक सारे भारत में मिलता है किंतु उसकी अपेक्षा बहुत शर्मीला। इसलिए अधिकतर उन जलाशयों में मिलता है जहां नरकुल के समान वनस्पति इसे छिपने को मिलती है। अंजन कंक की ही तरह शीतकाल में इसके भी प्रवासी भाई बाहर से आकर इसकी संख्या बढ़ाते हैं। कंक का प्रजननकाल भारत में पानी की स्थिति पर निर्भर करता है उदाहरणार्थ उत्तर भारत में जून से सितंबर-अक्तूबर तक तथा दक्षिण में नवंबर-मार्च तक। नर और मादा मिलकर गृहस्थी के सारे काम करते हैं। बक कुल की तरह इनके शावक भी जुगालीकृत भोजन प्राप्त करते हैं। अंजन कंक के समान इसके आहार में मछली, मेंढक, मृदुकवची, कवचधारी, जलकीट, छोटे चूहे तथा पक्षी शामिल हैं।

कंक वंश (Ardea) के विशाल पक्षी अपने घोंसले, अधिकतर मोहल्लों के रूप में, पानी के पास बनाना पंसद करते हैं, विशेषकर उन वृक्षों पर जिनके नीचे पानी हो तथा गरान वृक्षों पर भी बनाते हैं। जलकागों की तरह मादा 3 से 5 अंडे एक खेप में देती है और उनमें प्रत्येक के बीच लगभग 48 घंटों का अंतराल रहता है।

यह अत्यंत शर्मीला पक्षी बहुत ही चौकस रहता है और नरकुलों से चारों तरफ झांकता रहता है। यह गोधूलि बेला में निकलना पसंद करता है। खतरा होने पर चोंच को नरकुलों की तरह सीधा ऊपर कर जड़वत अपना 'कैमाफ्लाज' (समरूपण) प्रभावी ढंग से करता है। 'बिसनासिक' का अर्थ होता है कमल की नाल के समान और इस पक्षी के लिए यह नाम सटीक है क्योंकि यह अपना सिर, पीली चोंच और ग्रीवा कमल सहित कमलनाल की तरह सीधा ऊर्ध्वमुखी रख सकता है।

जांबुकी कंक अपने वंश के सदस्यों की तरह अचानक खतरा आने पर, फड़फड़ाहट के साथ नरकुल से तेजी से उड़कर दूर किसी छोटे वृक्ष पर बैठकर नरकुल के निरापद होने की बाट जोहता है। अपनी 'अनुकूलन' क्षमता के कारण बक कुल विश्व के दस अधिकतम सुविस्तृत कुलों में से एक है।

इसका सगा भाई A.p. purpurea प्रवास में यूरोप से पाकिस्तान तक ही आता है। किंतु यह (A.p.m.) स्वयं यद्यपि आवासी है तथापि स्थानीय प्रवास के साथ कुछ A.p.m. बर्मा, थाइलैंड, इंडोनेशिया, दक्षिण चीन तथा फिलिपीन भी प्रवास कर आते हैं। जबकि अंजन कंक भी इन्हीं देशों के साथ मध्यपूर्व एशियाई क्षेत्रों में भी प्रवास करते हैं।

पांडु-कथ अंधबक Indian Pond Heron or Paddy Bird.

42. Ardeola grayii g. (*भारतीय*) *42क. A.g. phillipsi* (*मालदीवी*)

कद : कौआ +, 46 सेमी.; आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : बगला, अंधा बगला, चमा बगला, चमरिया, खुंच बगला, बोग्ली; **बंग्ला** : खुंच बोगला, कॅचबॅक; **गोंडी** : रत्न पुच्छक; **तमिल** : कुलथु कोक्कु, कुरुथु कोक्कु, मडइ कटन, मुडयन; **तेलुगु** : गुड्डि कोंगा; **कश्मीरी** : ब्रोकु; बोगला; **मलयालम** : कुलमुंटि; **संस्कृत** : *अंधबक,* अंधकाक, स्वल्प कंक, कोयष्टि।

पहचान : प्रजननकाल में 'सुंदर' सिर तथा ग्रीवा पीताभ भूरे (पांडु), शिखर अधिक भूरा; कलपीत चोंच, अनुकपाल पर मक्खनी पतली शिखा; जामुनी आभा लिए कत्थई पीठ तथा उस पर लंबे पर जो पूंछ तक पहुंचते हैं। **नीचे** ठोड़ी तथा कंठ सफेद; उर भस्मी सफेद, उदर सफेद; शेष शरीर, पंख तथा पूंछ सफेद।
ग्रहणकाल : सिर तथा ग्रीवा रेखित गाढ़ी भूरी, तथा पीठ कत्थई भूरी। परों में कुछ सफेदी। **नर-मादा** एक समान।

यदि आप किसी नाले या तालाब के पास से जा रहे हों, और विशेषकर कुछ झाड़ झंखाड़ भी आस पास हों तो हो सकता है कि अचानक आपके पास से मुर्गी के बराबर एक सफेद-सी चीज फड़फड़ाकर उड़ जाए, और इतने पास से कि, शायद आप अचकचा जाएं या डर जाएं। तब समझ लीजिए कि, हो न हो वह पांडु-कथ अंधबक है। एक तो वह अकेले या दुकेले रहना ही पसंद करता है। अब जब आप उसके इतने पास पहुंच जाएं और तब वह उड़कर भागे तब आप उसे **अंधा** ही कहेंगे। हालांकि बात उलटी है क्योंकि अपने प्रभावी 'कैमाफ्लाज' (समरूपता) से उसने अपने आप को इस दृश्य में इतनी सफलता से 'एकरूप' या 'समरूप' कर लिया है कि आप उसे देख ही नहीं पाये और अपने समरूप की प्रभावशीलता पर उसे पूर्ण विश्वास है इसलिए आपको देखता हुआ भी वह निडर बैठा रहता है।

वैसे यहां अंधा शब्द का एक और सटीक अर्थ गहरे गड्ढे वाला पानी है जो इसका प्रियस्थल है; शिकार शैली में यह बक वंश की तरह या तो निश्चल रहकर या वारिकंक चाल से करता है। इसके आहार में मछली, मेंढक, कवचधारी, जलभृंग, जलकीट, ज्वार द्वारा लाई गई 'पंक नटिनी' (Mudskipper), केंकड़े आदि हैं। इसका आहार इसे धान के पानी भरे खेतों में खूब मिलता है और धान की बालों के बीच यह अपने को सुरक्षित पाता है इसलिए यह अक्सर वहां दिखता है और इसीलिए इसका एक नाम Paddy Bird भी है। मां बाप के घोंसले पर वापिस लौटते ही, सारे शावक दौड़े दौड़े आते हैं। एक शावक उनकी चोंच पकड़कर खूब हिलाता है, इससे जुगालीकृत (अधपचा) भोजन बाहर आ जाता है। जिसे कुछ शावक तो सीधा

ही खा लेते हैं और कुछ जमीन पर गिरे हुए को उठाकर खा लेते हैं।

यह **घोंसले** इमली, आम जैसे वृक्षों से लेकर बबूल, बेर तथा झाड़ियों पर तथा गरानों में भी बस्तियों के रूप में बनाते हैं। इनका **प्रजननकाल** उत्तर भारत में मई-सितंबर तथा दक्षिण भारत में नवंबर से फरवरी रहता है। मादा एक खेप में 3 से 5 तक चौड़े अंडे देती है जो चिकने तथा हल्के पीताभ सामुद्रिक हरे रंग के होते हैं। नर-मादा गृहस्थी का काम मिलकर करते हैं और ऐसा माना जाता है कि ये जोड़ा जीवन भर के लिए बनाते हैं। सारे भारत में अभी भी यह 'अंधा' पक्षी सफलतापूर्वक अपना जीवनयापन कर रहा है, यह खुशी की बात है।

गौ पिंगला (बक) Cattle Egret

44. Bubulcus ibis coromandus

कद : 51 से.मी., पालतू मुर्गी; आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : *गाय बगला,* ढोरिया बगला, सुर्खिया बगला, बदामी बगला; **बंग्ला :** *गौ बॅक,* गाय बॅक; **तेलुगु :** सम्टि कोंगा; **तमिल :** उन्नि कोक्कु; **मलयालम :** काली मुटि; **मराठी :** गोचंडी खड; **असमिया :** जॅबॅगालि; **मणिपुरी :** सान डुंग इल; **सिंधी :** पिंगला, पिंगलिका, करायिका, *गौ बक,* गौ बलाकिका।

पहचान : प्रजननकाल : सिर, गरदन तथा पीठ प्रगाढ़ पिंग या पिंगल रंग की; चोंच तथा टांगें पीली; **ग्रहणकाल :** हिमधवल, जानवरों के साथ चलने वाला लंबा पक्षी। **नर-मादा** हमेशा एक समान (नर मादा से थोड़ा बड़ा होता है)।

हाथी, गैंडों, जंगली भैंसों से लेकर पालतू ढोरों के साथ इस पक्षी के यूथ मजे से, कुशलतापूर्वक उनके पैरों के बीच से भी फुदकते हुए कीड़ों को खाते हैं। जानवरों के साथ यह पानी से दूर भी चले जाते हैं। जानवरों के कान तथा अन्य भागों से यह किलनी जैसे कीड़े निकालकर खाने के लिए उनके ऊपर मजे से सवारी करते हैं। ताजे हल चलाए गए खेतों पर किसानों की तथा कचरे के ढेरों पर सभी की मदद करते हुए इनके यूथ देखे जा सकते हैं। जानवरों के साथ इनकी मित्रता 'संकर्मिता' का अच्छा उदाहरण है। गौ पिंगला Bubulcus वंश का भारत में इकलौता पक्षी है। जानवरों की मित्रता से इसे तो चलने में तीस प्रतिशत कम ऊर्जा खर्च करनी पड़ती है क्योंकि यह मुफ्त में उन पर सवारी कर लेता है, दूसरे उतने ही चलने में इसे अकेले खोजने की तुलना में पचास प्रतिशत ही कीड़े खाने के लिए मिलते है। जानवरों के बढ़ने से भी तथा अमेरिका के खुले क्षेत्र मिलने से इन्होंने अपने क्षेत्र का विस्तार खूब किया है। हिमालय की 1500 मीटर की ऊंचाई से लेकर

अंडमान, निकोबार, मालद्वीप सहित सारे उपमहाद्वीप को ये पक्षी आबाद करते हैं। शीत ऋतु में हिमालय में ये पक्षी कुछ नीचे उतर आते हैं।

ये पक्षी यूथचारी हैं मगर 'सांप्रदायिक' नहीं हैं अर्थात ये अपने घोंसले जलकागों, कल/सित चंद्रवाकों, बगलों आदि के साथ आम, पीपल, इमली, सरीखे विशाल वृक्षों पर बनाकर रहते हैं। गिद्धों के साथ तथा अन्य जलपक्षियों के साथ पंगत में भोजन करते हैं। **भोजन** : मुख्यतया टिड्डे घास वल्गी, गुबरैले, केंचुए, मक्खियां, कीड़े विशेषकर मांस भोजी कीड़े, डिंभ, तथा बैंगची, मेंढक तथा छिपकली आदि हैं। **बोल तथा गान** : साधारणतया चुपचाप रहते हैं, घोंसलों के पास पड़ोसियों से कभी-कभार 'घर्घर' बोल लेते हैं।

प्रजननकाल उत्तर भारत में जून-अगस्त तथा दक्षिण भारत में नवंबर से फरवरी होता है। मादा एक बार में 3 से 5 हल्के पीताभ हरित चौड़े अंडे देती है। नर-मादा नीड़ बनने, अंडे सेने तथा पालन-पोषण में बराबरी से काम करते हैं। शावक माता-पिता की चोंच पकड़ (बक कुल की तरह) उसे हिलाकर अधपचा भोजन लेते हैं।

कलचंचु शिखी बगला Little Egret

49. Egretta garzetta g.

कद : चील + या (पालतू) मुर्गी +, 63 से. मी.; आवासी

स्थानीय नाम : **हिंदी** : किल्चिया बगला, कड़छिया बगला, शिखिनी बलाका; **बंग्ला** : छोटा कड़छी बॅक; **असमिया** : टेटेरी बॅग; टेटेरी बॅग; **तमिल** : चिन्ना वैल्लई कोक्कु; **तेलुगु** : चिन्ना तेल्ला कोंगा; **मलयालम** : चिन्ना मुंटि; **सिंधी** : बड़ारो; **संस्कृत** : बलाकिका, बिसकंठिका, शिखी चंद्रविहंगम, बकेरुका।

पहचान : **ग्रहणकाल** : काली चोंच, काली टांगें, पीले पंजे, लंबा छरहरा हिमधवल पक्षी। ग्रहणकाल में इसे इसके भाई 'कल-पीत चंचु बगले' (Intermediate Egret) से अलग पहचान उससे लगभग 15 सेमी. छोटा होने तथा अक्सर उसकी चोंच काली तथा पीली होने से बनती है, तथा गौ पिंगला की पीली चोंच के द्वारा भी बनती है। बृहत सितबक (Great Egret) भी, बक वंशियों की तरह बहुत बड़ा होता है (96 सेमी.) तथा उसकी चोंच भी अधिकतर काली/पीली होती है।

प्रजननकाल : इसकी पीठ तथा वक्ष पर धवल, शृंगारिक पर निकल आते हैं तथा सिर के पिछले हिस्से से दो लंबी शिखाएं इसकी शोभा बढ़ाती हैं। **नर-मादा** एक समान होते हैं।

बक कुल की तरह सारे भारत के जलाशयों को आबाद करता है, और उन्हीं

की तरह भोजन खोजता है इसलिए पानी के अनुसार आवास बदलता है। यह अन्य बगलों की अपेक्षा अधिक यूथचर है। इसके (Egretta) वंश की तीन और जातियां भारत को आबाद करती है : Intermediate Egret (E.intermedia) कलपीत चोंच बगला, Western Reef Egret (E. gularis) सितकंठी सलेटी बगला तथा Eastern Reef Egret (E. sacra) पुरबिया सितकंठी सलेटी बगला।

इस शताब्दी के पूर्वार्द्ध में इस पक्षी की 'खेती' की जाती थी क्योंकि इसके श्रृंगारिक 'पर' राजा महाराजाओं के मुकुट में तो लगते ही थे, इन्हें फैशनेबल महिलाएं लगभग सोने के भाव भी खरीदती थीं। सिंध के मीरबहर तथा मोहन मछुए लोग झीलों में इन्हें पालते थे। ये उड़ न जाएं इसलिए इनके पक्षांत काट दिया करते थे और बाड़ों में रखते थे। मार्च से सितंबर के प्रजननकाल में ये जोड़े बनाकर घोंसले बनाते थे जिसके लिए इनके मालिक छोटी पतली टहनियां लाकर रख दिया करते थे। मादा एक खेप में 3 से 5 अंडे देती थी और अंडों से चूजे निकलने के एक सप्ताह बाद ही वे शावकों को अलग ले जाकर पालते थे। फलस्वरूप नर-मादा दूसरे खेप की तैयारी करने लगते थे। इस विधि से एक **प्रजननकाल** में एक जोड़ा चार या कभी कभी पांच बार तक अंडे देता था। एक वर्ष में एक जोड़ा इस तरह एक तोले (दस ग्राम) से भी अधिक श्रृंगारिक 'पर' पैदा करता था। अब यह फैशन खतम हो गया है तो खुशी है कि वह क्रूर खेती भी खतम हो गई। बगला वंशी (Egretta) लंबे (60 सेमी. से 90 सेमी.) होते हैं, छरहरे, लंबी गरदन, लंबी टांगों वाले। इनकी चोंच कंकवंशियों की तुलना में पतली होती है। ये कंक तथा बकवंशियों की तरह अकेले नहीं, वरन झुंडों में रहना पसंद करते हैं। किंतु शिकार बकों की तरह ही या तो जड़वत या वारिकंक चाल में करते हैं किंतु मुख्यतया सुबह शाम ही नहीं वरन, समझदारों की तरह दिन में कभी भी। 'बगला भगत' जो मुहावरा नकली भक्तों के लिए बना है वह इनके शिकार की प्रतीक्षा में निश्चल एक टांग पर खड़े रहने के कारण बना है क्योंकि एक प्रकार की तपस्या में साधु भी एक टांग पर निश्चल खड़े होकर तपस्या करते हैं। किंतु 'बगला भगत' की अपमानजनक ध्वनि इस पक्षी के साथ अन्याय है। क्योंकि ये जो तपस्या करते हैं वह निश्चित रूप से, प्राकृत्या, केवल आहार के लिए ही करते हैं और इस तरह प्रकृति में संतुलन बनाकर भी रखते हैं।

कल/सित चंद्रवाक **Night Heron,**

52. Nycticorax nycticorax n.

कद : चील, 58 सेमी.; आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : *वाक,* क्वाक, तार बगला, कुकरई; **कश्मीरी :** बोर;

बंगला : कौवा डौक, बचका; **मणिपुरी :** चोंग्खु; **मराठी :** रात बोग्गल, रात कोक्कु, राजकोक; **गुजराती :** वाक, अवाक; **तेलुगु :** चिन्टा वाख; **तमिल :** वाक्क; **मलयालम :** टोपी कोबकु; **सिंधी :** गाड़ि; **संस्कृत :** *वाक,* चंद्रविहंग, कोयष्टि, शिखी चंद्रविहंगम, वाकश्चंद्रविहंगम।

पहचान : ऊपर : पीठ, कंधे, सिर हरिताभा लिए हुए काले, बाकी ऊपर भस्मी, माथे से आंख की भौंह पर जाती सफेद पट्टी, गरदन के ऊपर सफेद शिखा वाले चंद्र के समान लंबे पर; **नीचे :** बाजू भस्मी, शेष सफेद; आंखें मणि-सी लाल। **नर-मादा** एक समान।

ये पंछी **प्रजननकाल** के अतिरिक्त यूथ, संध्या तथा रात्रिप्रिय होते हैं। इनके बोल 'वाक-वाक' अथवा 'क्वार्क-क्वार्क' होते हैं इसीलिए हिंदी, गुजराती, तेलुगु, तमिल, तथा संस्कृत में इनका नाम ही 'वाक' है। नाम से पहचान में अच्छी मदद मिल सके इसीलिए एक विशेषण 'कल/सित' तथा दूसरा 'चंद्र' लगाया गया है। चंद्र से इसकी विशिष्ट सफेद शिखा और सफेद होने का अर्थ निकलता है तथा इसके निशाप्रिय होने का भी। प्रणय नृत्य के समय नर और मादा इन नरम, सुंदर दोनों शिखाओं को ऊपर उठाते हैं।

यह जलप्रिय कल/सित चंद्रवाक सारे उपमहाद्वीप में खारे मीठे जलाशयों के पास शाम तथा रात में भोजन की टोह में देखे जा सकते हैं। **प्रजननकाल** में (भारत में अक्षांशों के अनुसार अप्रैल से फरवरी तक होता है) दिन में भी, किसी सघनता के भीतर से लाल आंखें अपलक घूरती देखी जा सकती हैं। परिवार के अन्य 'बगला भगतों' की तरह ये निश्चल बैठकर शिकार की बाट न जोहकर, शिकार की खोज में घूमते हैं। इनके आहार में मछलियों के अतिरिक्त मेंढक, जलकीट, व्याधपतंग की इल्लियां आदि शामिल हैं। अधिकतर इनकी कालोनी शुद्ध रूप से इन्हीं के लिए होती है यदि यह अन्य बकों के नगर में भी अपने घोंसले बनाते हैं तब वहां भी इनके मुहल्ले शुद्ध इन्हीं के लिए होते हैं। अपनी 'निशाप्रिय' आदत के कारण इसका शुद्ध कालोनियों या मुहल्लों में रहना आवश्यक हो जाता है। मादा एक खेप में 3 या 4 अंडे, लगभग 48 घंटे के अंतराल से देती है। 'नीड़ निर्माण' से लेकर 'शावक पालन' के सभी काम नर-मादा मिलकर करते हैं। अपने कुल के चलन के अनुसार शावकों को जुगाली कृत आहार देते हैं।

इनकी उड़ान गोलाईदार पंखों के तेजी से फड़फड़ाने के कारण शक्तिशाली होती है। उड़ान के समय यह अपनी गर्दन अन्य बक कुल सदस्यों के समान छोटी तो करता है किंतु सितसिर अंजन बक के समान छोटे 'S' आकार में नहीं। बक कुल के पंछी उड़ान के समय अपने पैर पीछे रखते हैं या तो सीधे या थोड़े लटकते हुए। उड़ते हुए बक कुल (Ardeidae) के पक्षियों को महाबक कुल (Ciconiidae)

तथा क्रौंच कुल (Gruidae) के पक्षियों से अलग पहचाना जा सकता है क्योंकि महाबक तथा क्रौंच उड़ते समय अपनी गर्दन तथा अपनी टांग खींचकर बिलकुल सीधी रखते हैं।

केसरमुखी (महाबक) Painted Stork

60. Mycteria leucocephala

कद : गिद्ध +, + पैर और चोंच, 100 सेमी.; आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : जंघिल, दांख, कठ सारंग, कांकरी; **बंग्ला :** जंघिल, राम झंकर, सोन जंघ; **कच्छ :** चित्रोड़ा; **तेलुगु :** येरु कल कोंगा; **तमिल :** चेंग नर्डि; **सिंधी :** लाम लंग, लुंगडुक; **संस्कृत :** काचाक्ष, काष्ठ सारंग बक, बृहद बक, पिंगलाक्ष।

पहचान : गाढ़े पिंग रंग की चोंच, पाटल चेहरा, केसरिया ग्रीवा, लाल लंबी टांगें, पूंछ के पास गुलाबी पर, सफेद वक्ष पर काला पट्ट, हरिताभ काली लहरों वाले गुलाबी आभा लिए सफेद पंख और शेष शरीर मुख्यतया सफेद—एक सुंदर महाबक। **नर-मादा** एक समान। ग्रहणकाल में इसके रंग थोड़ा दब जाते हैं।

हिंदी में इसका एक नाम है 'काठ सारंग'। सारंग अर्थात कई रंगों वाला, मोर तथा चीतल को भी सारंग कहते हैं। रंगीन सुंदरता के बल पर इसने भी 'सारंग' नाम ले तो लिया किंतु इसमें एक विशेषण 'काठ' लकड़ी के समान लगाना पड़ा। केसरमुखी महाबक अपने प्रणय में दोनों पंखों को फैलाकर, अपनी चोंच से 'कट-कट' स्वर निकालता है। यह नृत्य सुंदर है किंतु मोर के नृत्य की तुलना में नहीं ठहर पाएगा।

झीलों, दलदलों में जोड़ों या छोटे समूहों में शोभा बढ़ाते हैं। यह सागर तटों को भी आबाद करते हैं जहां इन्हें प्रिय 'पंक नटिनी' तथा केंकड़े मिलते हैं। **प्रजननकाल** (अगस्त से अक्तूबर) में, बगलाथानों में हजारों की संख्या में रहते हैं। अपने कुल के सदस्यों की तरह ये गर्मी की दोपहरी में उठती गरम हवा के सहारे आकाश में ऊंचाई पर पंख पसारकर 'परिडीन' उड़ने का आनंद लेते हैं।

नर-मादा के **संबंधों** में बहुत सौहार्द रहता है। जब एक वयस्क नीड़ में लौटता है तब वह सेने वाले साथी का अभिवादन करता है, धन्यवाद देता है। पहले सामने झुकता है, फिर गर्दन ऊपर तानकर, चोंच थोड़ी-सी खोलता है, नीड़ वाला साथी भी इसी तरह उसका धन्यवाद करता है। किंतु जब सेने वाला साथी, अपना काम सौंपना चाहता है तब नीड़ के किनारे खड़े होकर आने वाले साथी का स्वागत करता है, फिर दोनों अपनी लंबी टांगों को हिलाकर अपनी आकुलता दिखलाते हैं, दोनों

अपने सिर नीड़ की तरफ झुकाकर, टहनियों को जमाने की औपचारिकता करते हैं।

ये उथले पानी में अपनी गर्दन को नीचे झुकाकर अपनी चोंचों को थोड़ा-सा खोलकर, नीचे वाली चोंच को कीचड़ में धंसाकर उसमें जल जीवों की खोज करते हैं। अक्सर यह एक पैर पर खड़ा होकर, दूसरे पैर को पानी तथा कीचड़ में चलाकर अपने छिपे शिकार को जैसे डराना चाहता है। अपने इस काम के प्रभाव को बढ़ाने के लिए अपने घूमने वाले पैर की तरफ के पंखों को फड़फड़ाता भी है। **आहार** : मछलियां, मेंढक, सरीसृप, कवचधारी जीव तथा जलकीट आदि।

महाबक कुल के सशक्त सुंदर पंछियों को जैसे श्राप लगा है कि वे गा नहीं सकते। उनके स्वरतंतु में पेशियां (muscles) नहीं होतीं। इसलिए यह अपना काम साधुओं के चिमटों की तरह चोंचों को बजाकर तथा कुछ घर्र-घर्र-सी आवाज कर सकते हैं। जैसा सौहार्द तथा प्रेम और स्वस्थ औपचारिकताएं चित्रित महाबक में मिलती हैं, तदनुसार इनके जोड़े आमरण बनने चाहिए, यह खोज का विषय है।

चिमटा चंचु (शराटी) Spoonbill

72. Platalea leucorodia major

कद : घरेलू हंसक +, 60 सेमी.; आवासी तथा प्रवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : चम्मच बाजा, चमचा, दाबिल; **बंग्ला** : चिंटा, खुंटे बक; **असमिया** : खंटिया बग; **तेलुगु** : जेंटा मुकु कोंगा; **तमिल** : आखघ मुखन, करंडि मुख नारइ; **संस्कृत** : दर्विया, दर्वितुंड, खजाक, शराटी।

पहचान : लंबी काली टांगें, ग्रीवा परहीन, तथा लंबी काली-पीली चिमटे (चम्मच नहीं) के आकार की चोंच वाला—दूध के समान सफेद तथा काली पूंछ वाला दलदली जलग पक्षी। **प्रजनन** के समय ठोड़ी तथा कंठ पर केसर लगाकर, नर शृंगार के लिए सिर पर लंबी सफेद शिखा भी लगा लेता है। इस शिखा को तानकर वह अपना गुस्सा या प्रेम भी दिखलाता है। **नर-मादा** एक समान।

लगभग सारे महाद्वीप में पानी के साथ (दलदल, झील, नदी, ज्वार, खाड़ियां, गरान आदि) आवास करता हुआ ठंड में मध्य एशिया से आए अपने प्रवासी भाइयों का स्वागत करता है। इसे संगी साथी बहुत पसंद हैं जिसमें अपने कुल के अतिरिक्त बक कुल भी शामिल है। जलाशयों के उथले किनारों पर, इन जलग पक्षियों के झुंड तरतीब से भोजन की तलाश करते हैं। अपनी चोंचों को थोड़ा खोलकर पानी को काटते हुए चंद्राकार में घुमाते हैं। घुमाते समय निचली चोंच की नोक से तल की मिट्टी को हल्के से कुरेदता है ताकि उसमें छिपा आहार ऊपर चोंच में आ जाए।

इसके आहार में छोटी मछलियां, बैंगची, घोंघे, मृदुकवची, जलकीट तथा जलवनस्पति शामिल हैं। ये सुबह, शाम तथा कभी कभी रात में भी आहार खोजते हैं।

लगभग सभी भाषाओं में इनका नाम इनकी विशेष चपटी चम्मच या चिमटे की आकार की चोंच पर आधारित है। खज का अर्थ मथानी है, और आहार की खोज करने के लिए यह अपनी चोंच को चम्मच की तरह नहीं वरन मथानी की तरह चंद्राकार में घुमाता है। किंतु शिकार को पकड़ता चिमटे की तरह ही है।

प्रजनन कालोनियों में थोड़े घुर-घुर की-सी आवाज और चंचुओं से थोड़ी खटखट करता है। प्रजनन के समय (उत्तर भारत में जुलाई से अक्तूबर) छोटी या बड़ी कालोनियों में अपने झुंडों में रहना पसंद करता है।

शराटी कुल (Threskiornithidae) के पक्षियों की एक विशेषता उनकी चोंचों के आकार में है। इस कुल की केवल चार जातियां ही भारत में हैं और वे सभी अलग अलग वंशों की हैं। अन्य तीन वंशों के पक्षियों की चोंचें धनुषाकार-सी हैं।

नीड़न तथा सेने में नर-मादा दोनों मिलकर काम करते हैं।

उड़ान में महाबकों की तरह इस कुल के पक्षी भी अपनी गर्दन लंबी तथा सीधी और पैर भी पीछे की तरफ सीधे रखते हैं। उड़ान में यह आराम से पंख चलाता है। यात्रा के समय इनका झुंड एक नियमित 'कर्ण धोरण' में उड़ता है—एक-दूसरे के बीच वही कोण और वही समान दूरी। एक स्थान, अधिकतर जलाशय, के ऊपर इनके झुंड गोल गोल कुंडली के आकार में चक्कर लगाते हुए (परिडीन) ऊपर उड़ते हैं, पुराणों में यह पवन-देव को समर्पित है।

(ललचंचु) कथाली हंस (Eastern) Greylag Goose

81. Anser a. rubrirostris

कद : हंस, 81 से.मी.; प्रवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : सोना हंस, करिंया सोना, काज, राजहंस, मोगल, धितराज, करहंस, : काज : कल्लौक, खारहंस; **नेपाली** : मोगल; **कश्मीरी** : अंस, अंज **बंग्ला** : राज हंस; **मणिपुरी** : काङ झ; **असमिया** : राजहंस, धितराज; **कच्छी** : गज; **सिंधी** : हंज; **संस्कृत** : कलहंस, राजहंस, धृतराष्ट्र, कलकंठ हंस।

पहचान : चोंच, टांगें तथा पैर लाल, चोंच की नोक पर छोटी पीली बिंदिया, सित किनार काली पूंछ, पंखों पर आगे से पीछे की ओर अधिक बड़े और गाढ़े होते हुए **कत्थई** धब्बे, वक्ष सफेद, उदर तथा ग्रीवा में **कत्थई** तथा सफेद धारियां (कथाली); सिर कत्थई। शेष शरीर में हल्की-पीली धारियां (सोना हंस)। **नर-मादा** एक

समान—जैसा कि हंसों का एक विशेष गुण है। सभी हंसों की चोंचें आगे जाकर चौड़ी न रहकर, पतली हो जाती हैं तथा अंत में छोटी-सी कील होती है। इनकी चोंचों में, हंसकों की अपेक्षा, किनारों पर बड़े दांत होते हैं जिनसे इनको घास खाने में सहायता मिलती है।

यह मुख्यतया एशियाई पक्षी है। प्रजनन मध्य एशिया में तथा शीत ऋतु का प्रवास दक्षिण-पूर्वी एशिया में (15 उत्तरी अक्षांश के उत्तर में)। तब भी इसकी प्रवास यात्रा के विषय में कम जानकारी है। भारत में इनका प्रवेश अक्तूबर-नवंबर में, उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रों से (4270 मी. की ऊंचाइयों पर उड़ते देखे गए हैं) होता है। ये विशाल झुंडों में चोंच के आकार (>) वाले धोरण में लंबी उड़ाने भरते हैं। उड़ान के समय अग्र पंख-किनार तथा ऊपरी पूंछ की पीताभ इसकी अलग पहचान बनाते हैं। इस उड़ान में कभी कभी ये हवाई कलाबाजी करते हैं—एकदम गोता लगाना, बाजू में खिसकना, पूरी करवट बदलना, तथा अक्सर ये गाते भी हैं—यह सब संभवतया लंबी उड़ान की एकरसता में कुछ साहसिक तथा सहज आनंद लेने के लिए करते हैं। छोटी उड़ानों में ये फीते के ढीले धोरण में उड़ते हैं।

ये बहुत ही यूथप्रिय हैं, हजारों के झुंड विशाल झीलों में मिलते हैं, किंतु उन समृद्ध, अप्रदूषित झीलों में ही जिनमें खतरा बहुत कम होता है। दिन के समय झील के पानी पर या पास जमीन पर या तो अपना मुख अपने परों की गोद में रखकर या कभी एक टांग पर खड़े रहकर सूरज की उष्णता का आनंद लेते हुए आराम करते हैं। इन्हें ऊंघते हुए देखकर आप चाहें कि इनके पास (लगभग 30 मी.,) पहुंच जाएं तो लगभग असंभव है—कोई 'चौकीदार' इन्हें फौरन खबरदार कर देगा। ये हंस मुख्यतया शाकाहारी हैं। पानी में सिर को डुबोकर भी आहार की खोज करते हैं। शाम हुई कि अपने भोजन के लिए आसपास के जाने पहचाने दलदलों, खेतों में गेहूं, चना, चावल, जलवनस्पति तथा झीलों में सिंघाड़े जैसे जलकंद आदि खाने पहुंच जाते हैं और, अक्सर, लगभग रात भर इनका भोज चलता रहता है। और फिर सुबह वापस झीलों में 'आं-ग-अंग-अंग' शंख बजाते हुए पहुंच जाते हैं। जहां 'कथाली हंस' की आवाज मधुर है, वहीं दुपट्टी सितमुंड हंस अधिक शोभायुक्त है। ये दोनों हंस अलग अलग झुंडों में ही रहते हैं। नर हंस शावकों के पालन में पूरी मदद करते हैं। मनुस्मृति तथा याज्ञवल्क्य स्मृति में कुछ अपवादों सहित सभी महाहंसों, हंसों तथा अनेक हंसकों का भोजन करना निषिद्ध है।

महाहंस, हंस तथा हंसक एक ही कुल Anatidae हंस कुल के अलग अलग वंश के पक्षी हैं। भारत को महाहंसों के चार वंश, हंसों के नौ वंश तथा हंसकों के छत्तीस वंश आबाद करते हैं।

दुपट्टी (सितसिर) हंस Barheaded Goose

82. Anser indicus

कद : घरेलू हंस, 75 से.मी.; आवासी तथा प्रवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : हंस, करेई हंस, राज हंस, बिरवा, सवन या समन करहंस, मोग्ली; **बंग्ला :** बड़ा हंस; **नेपाली :** गिरवा, परिया; **लद्दाखी :** नांगपा; **कोयम्बटूर :** नीरवधू; **असमिया :** बॅड़नूरिया हंस, बॅगॅ राजहंस; **मणिपुरी :** कांग ङा; **संस्कृत :** कादंब हंस, नीलपृष्ठ हंस, सारंग हंस, विराविन हंस, कैरव हंस।

पहचान : भस्मी पीठ, बाजू पीताभ कत्थई, सफेद सिर पर एक आंख की कोर से दूसरे कोर तक पीछे सिर पर, दो काली पट्टियां तथा पीताभ कत्थ ग्रीवा के दोनों ओर एक एक सफेद पट्टी; चोंच तथा पैर पीले; अग्रचोंच काली; **नर-मादा समान।**

हंस शब्द वैदिक काल में अधिकतर (विशुद्ध) महाहंस (Swan) को इंगित करता था। पौराणिक काल में हंस शब्द Goose पक्षियों के लिए उपयोग में आ गया तथा आधुनिक काल में बत्तखों के लिए भी प्रयुक्त होता है। इसका एक कारण यह भी है कि वैदिक काल में ऋषिगण कश्मीर, कैलाश तथा मानसरोवर में अधिक आते जाते रहते थे जहां कि हंस (Swan) शीतकाल में प्रवास के लिए आते थे। किंतु सामान्य कवि और विद्वान हिमालय की तराई तथा गंगा कछार में ही अधिकतर रहते थे जहां उन्हें 'गूज़' (Goose) ही देखने को मिलते थे, हंस नहीं, इसलिए कादंब 'गूज़' की पदोन्नति कादंब हंस के रूप में हो गई। कादंब का अर्थ कुछ कालेपन से है अर्थात काला हंस। अब आजकल 'गूज़' भी बमुश्किल दिखते हैं इसलिए बत्तखें (हंसक) भी हंस हो गई हैं। विशुद्ध या महाहंस लगभग पूर्ण रूप से जलीय पक्षी है जबकि हंस (goose) जलतटीय लगभग भूपक्षी है।

जिस तरह 'मणिचंचु रेखी हंस' मुख्यतया एशियाई पक्षी है, दुपट्टी सितमुंड हंस तिब्बत-भारतीय पक्षी है। यह प्रजनन लद्दाख, तिब्बत तथा उनके निकटवर्ती क्षेत्रों में करता है और प्रवास उत्तरी भारत में (indicus) (कभी कभी कर्नाटक तक)। यह पतझड़ में आता है और बसंत समाप्त होते लौट जाता है, विशेषकर बसंत की बौछार आने पर। किंतु कवि लोग, भ्रम वश, वर्षा ऋतु के प्रारंभ में इसका तिब्बत लौटना मानते आए हैं।

ये, बड़ी झीलों तथा नदियों के तट पर, सैकड़ों की संख्या में धूप सेंकते हैं और रात्रि की सुरक्षा में आसपास के दलदलों, खेतों आदि में भोजन के लिए पहुंच जाते हैं। जहां इसे खतरे की आशंका होती है वहां बहुत चौकस, और जहां सुरक्षित महसूस करते हैं वहां (लद्दाख) स्नेही व्यवहार करते हैं। शावक को जमीन पर घुमाना हो या जल पर, नर-मादा उसे अपने बीच में रखते हैं।

कालिदास ने रघुवंश में गंगा यमुना संगम के लिए महाहंस तथा कादंब हंसों की कतारों के साथ साथ चलने वाली उपमा दी है, फिर रघुवंश में, इंदुमति जब स्वयंवर के लिए राजाओं के सामने चलती है, तब, उस सहज ऊर्जामय गतिमुद्रा को महाहंस की जलगत सुंदर चाल से उपमा दी है। और जब वे रानी बन गईं और गरिमा तथा भव्यता से चलने लगीं, तब 'ललचंचु कथाली हंस' की चाल की उपमा दी। महाहंस पूरी तरह से जलपक्षी है और पानी में तैरते समय उसकी गरिमामय शालीनता देखते ही बनती है। 'ललचंचु कथाली हंस' की चाल में बत्तखों (हंसकों) जैसा अटपटापन बिलकुल न होकर एक अलग गंभीर शालीनता है।

(कलकंठी) बदामी चकवा Ruddy Shelduck (Brahminy Duck)

90. Tadorna ferruginea

कद : हंसक, 66 सेमी.; आवासी तथा प्रवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : चकवा चकवी, लाल, सुरखाब; **बंग्ला :** बुग्री, *चाका*-चाकी; **असमिया :** *चाकोई* चाकुआ; **ओड़िया :** केशर पांडिया, पांड हंस; **मराठी :** सर्ज़ा, *चक्रवाक;* **तेलुगु :** बापना चिलुवा; **तमिल :** धारा; **लद्दखी :** सकब; **सिंधी :** मंग, लालो, क्वांचा, काठियन; **संस्कृत :** *चक्रवाक,* उपचक्र।

पहचान : बदामी बड़ा हंसक; सिर पिंग; चोंच, पंख, पैर तथा पूंछ कपिल, द्युति चमकदार हरित तथा सफेद। **प्रजननकाल** में, नर ग्रीवा तथा वक्ष को अलग करती एक पतली कलकंठी पहन लेता है। **मादा** के सिर का रंग और भी हल्का होता है, अन्यथा **नर** के समान उड़ते समय भी इनकी पहचान सरल होती है—शरीर का रंग बदामी, निचले पंख सफेद तथा पंख किनार काली।

चकवा भारत से लेकर मंगोलिया तक सम्मानित पक्षी है। चकवा का दांपत्य प्रेम सारस क्रौंच से भी तीव्र माना गया है। ऋग्वेद में इन्हें अश्विनों की तरह नित्यसहवर्ती माना है। वाज संहिता में इसीलिए इसे झाईं के देवता को समर्पित माना गया है। रात्रि में भोजन की खोज में जब नर और मादा अलग अलग हो जाते हैं तब वे अपने बोल से संपर्क बना कर रखते हैं। एक ने बोल दिया तब दूसरा उस बोल का उत्तर इतनी नियमितता से देता है कि मानो वे प्रथम बोल की झाईं हैं। ये नीति के देवता 'वरुण' को भी समर्पित हैं। संस्कृत साहित्य तथा लोक साहित्य इनकी सुंदरता और दांपत्य प्रेम के गुणगान करता है। ये विरही प्रेमी के प्रसिद्ध उपमान हैं। रात्रि चूंकि इनका भोज समय है इसलिए उस समय ये अलग अलग रहने के लिए शापित हैं। शास्त्रों में चकवा को पूज्य माना गया है और इनका वध

मना है।

चक्रवाक (चकवा सरल रूप) का अर्थ है बैलगाड़ी के (चक्के) चक्र के समान बोल—'आ उंग, आंग, आंग,। अधिकतर जोड़ों में तथा छोटे झुंडों में रहते हैं, कभी कभी हजारों की संख्या में भी नदियों तथा झीलों में देखे गए हैं। चकवा अनाज, कोमल जलवनस्पति, मृदु कवची, कवचधारी तथा अन्य जलकीट आदि खाता है तथा खान पान में **हंसों** के समान है। स्वयं चकवा का मांस बेस्वाद होता है। चकवा बहुत चौकन्ना पक्षी है शिकारी को दूर से ही देखकर सबसे पहले चेतावनी देता है।

प्रजनन मुख्यतया मई-जून में मध्य एशिया तथा भारत में (केवल लद्दाख) लगभग 4000 मीटर ऊंची झीलों तथा दलदलों में होता है। अक्तूबर-नवंबर में उत्तर भारत में प्रवास के लिए आगमन तथा अप्रैल तक प्रस्थान। पानी के बहुत ऊपर खड़ी चट्टानों के छिद्र अथवा दरार में चकवा अपने नरम 'रोमों' को बिछाकर घोंसला बनाते हैं। अंडे सेने का काम मादा ही करती है किंतु शावकों का पालन पोषण नर-मादा दोनों मिलकर करते हैं। सभी महाहंस, हंस तथा हंसक जीवन भर के लिए ही जोड़ा बनाते हैं किंतु चकवा और चकवी का एक दूसरे के प्रति आकर्षण तथा थोड़े से ही विरह में प्रेमी की-सी आकुलता ने इन्हें प्रेमियों का आदर्श तो बना ही दिया है, विवाहित युगल का भी आदर्श बना दिया है।

खतरा होने पर, विशेषकर शावकों को, यह 'घायल मुद्रा' का नाटक करते हैं जिसके फलस्वरूप आक्रामक इनके शावकों को छोड़कर, इनकी तरफ बढ़े। ऐसा नाटक बहुत-से पक्षी करते हैं।

सींकपर Pintail

93. *Anas acuta*

कद : घरेलू बत्तख; 56-57 सेंमी., प्रवासी;

स्थानीय नाम : हिंदी : सैंद, सान, *सींकपर,* दिघौंच, **(नेपाल)** दिगुंच; **कच्छ :** द्रिगुच्छ; **बंग्ला :** शलांच; **ओड़िआ :** नंद; **तमिल :** मरकलियन; **कश्मीरी :** साख पाछिन; **असमिया :** नेजल हंस, देघाल नेजि; **कछारी :** दौफ्लांतु लूबी; **मणिपुरी :** मेईतुंग; **सिंधी :** कोकरालि, द्रिगोश; **संस्कृत :** शंकुपत्र, दीर्घ पुच्छ, द्विगुच्छ, सूचिपुच्छ, शंकु हंस, शल्य हंस।

पहचान : कत्थई-काली पूंछ के केंद्रीय पर बहुत लंबे तथा कड़े; कान सफेद; कत्थई काला सिर तथा ठोड़ी; लंबा शरीर, अपेक्षाकृत लंबी तथा **पतली ग्रीवा,** वक्ष तथा उदर

सफेद, पीठ तथा बाजू की पक्षति मेघवर्णी जिसमें बारीक धारियां मानो किसी चित्रकार ने खींची हों, मरकती हरी द्युति। धारारेखी आकार; चोंच काली। इसके पूंछ के केंद्रीय 'पर', **प्रजननकाल में** (अप्रैल-अगस्त) लगभग 21 सेंमी., लंबे होते हैं, तब इन हंसकों की लंबाई 56 सेमी. से बढ़कर 74 सेमी. हो जाती है। **नर ग्रहणकाल में** : लगभग मादा के समान, कत्थई धब्बेदार भूरा; अयाल बारीक धूसर रेखाओं सहित मेघवर्णी; पूंछ छोटी, **मादा वयस्क** : छोटी सींक, द्युति का दबा कत्थई रंग। उड़ान में इन हंसकों के पीछे खिंचे दोनों पैर तथा नुकीली पूंछ **त्रिशूल** के समान इनकी अच्छी पहचान है। **नर शावक** : इसके पंखों के रंग तो लगभग वयस्क नर के समान, बाकी मादा के समान।

सुंदर सुगढ़ सींकपर यूरेशिया में हिमालय तथा आल्प्स के उत्तरी क्षेत्रों में (उत्तरी फ्रांस तथा दक्षिणी ब्रिटेन को छोड़कर), किंतु 70° अक्षांश के दक्षिण में, गर्मी में **प्रजनन** करते हैं और शीत ऋतु में शेष दक्षिण यूरेशिया में तथा उत्तर पूर्वी अफ्रीका में प्रवास करते हैं। सितंबर-अक्तूबर में सारे भारत में फैल जाते हैं, और मार्च तक वापिस होने लगते हैं। सबसे पहले भारत प्रवेश करने वाले झुंड अक्सर केवल नरों के होते हैं। अधिकतर 20-100 के झुंडों में पाए जाते हैं।

शिकारियों से बचने में बहुत कुशल हैं और शायद इसलिए एकदम चुप रहते हैं। शिकार की आहट पाते ही फौरन उस स्थान को छोड़कर भाग जाते हैं। भय होने पर अपनी सुरक्षा के लिए अधिकतर गोधूलि तथा रात में तालाबों, झीलों के उथले किनारों पर, पानी भरे खेतों में भोजन करते हैं। उथले किनारों पर अधिकतर यह **शीर्षासन** मुद्रा में अपना आहार खोजते नजर आते हैं। ऐसे समय इनके समूह की लंबी पूंछें एक आकर्षक दृश्य प्रस्तुत करती हैं। इनके भोजन में घास, जल के कंदमूल, अंकुर, जलपौधों के बीज, चावल, कीट, घोंघे, जल्ली आदि होते हैं।

लगभग 5,000 किमी. तक की दूरी से भी प्रवास करने आते हैं। ये सशक्त हवाबाज, और मौके पर लगभग 100 किमी. प्रति घंटे के वेग से उड़ सकते हैं। इनके झुंड की उड़ान के तेज फड़फड़ाने की आवाज नीचे जमीन तक सुनाई देती है। सत्रह वर्ष तक की आयु वाले 'सींकपर' भी मिले हैं। शिवपुराण में हिमालय की झीलों पर चकवा, कादंब हंसों तथा सींकपरों के जलविहार का वर्णन है।

पांगरसिर हरिताक्षी **Common Teal**

94. Anas crecca c.

कद : कबूतर, 38 सेमी.; प्रवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : छोटी मुर्गाबी, कैर्रा, लोहिया कैर्रा, चैती, चिक्कल, छोटा

सींकपर, पतारी, सुचुरुका, बैज्ला, **(नेपाल)** बैजला गैरी; **बंग्ला** : बाली हंस; **मराठी** : चकंग; **तमिल** : सिरवि, किलवइ; **मलयालम** : यरंड; **कन्नड़** : सोलरि हक्कि; **असमिया** : चिल हंस, पतारी हंस; **कश्मीरी** : क्युस, **कछारी** : दौफ्लांतु कशिबा; **मणिपुरी** : सुरित; **सिंधी** : कडों; **संस्कृत** : लोहित, रोहित, रोहिणिका, पत्राली।

पहचान : नर : पांगरसिर में आंखों से लेकर कंधर तक सुनहली किनार वाली मरकत समान चमकने वाली **हरी पट्टी;** बिंदुकित धूसर **वक्ष; द्युति**-पांडु, काली तथा हरी। **ग्रहणकाल** में सिर का रंग **मादा** के समान थोड़ा मलिन बदामी किंतु कपाल तथा घाटा कलौंछ भूरे। **मादा** : गाढ़े धब्बों सहित हल्की भूरी, काली-मरकत **द्युति**, निचला भाग मक्खनी।

इस हंसक का **प्रजनन** समस्त यूरेशिया के लगभग 45° उत्तरी अक्षांश के उत्तरी भागों में (टुंड्रा को छोड़कर) है जो विश्व के पक्षियों के विशालतम प्रजनन क्षेत्रों में से एक है। प्रवासी हंसकों में यह सबसे छोटा है। पतझड़ शुरू होते ही लगभग 10° से 45° उत्तरी अक्षांश के बीच के यूरेशिया तथा अफ्रीका के हिस्सों में प्रवास हेतु आ जाते हैं तथा बसंत के बाद अपने प्रजनन क्षेत्रों के लिए लौटने लगते हैं। 'अंगूठी' लगाने से पता चला कि भारत से वापिस जाने वाले हरिताक्षी कैस्पियन झील के उत्तरी क्षेत्र में जाते हैं, तथा इसका विपरीत भी होता है।

यह बड़ी संख्या में आकर झीलों, दलदलों, तालाबों की सुंदरता में, मानो चार चांद लगा देते हैं। ये उथले पानी तथा कीचड़ वाले स्थान अधिक पंसद करते हैं। ये लगभग शाकाहारी हैं। शिकारी इनका शिकार करना पसंद करते हैं और इन्हें शिकारियों को चकमा देना भी आता है। बंदूक की आवाज सुनते ही ये सभी एक साथ अपनी उड़ान एकदम रोक कर सीधा ऊपर की तरफ उड़ना शुरू कर देते हैं, तथा आवाज की उल्टी दिशा में मुड़कर उड़ान में तेजी लाते हैं।

अधिकांश प्रवासी पक्षियों की प्रजातियां प्रवास के पूर्व ही पुरानी वेशभूषा (पर) को उतार कर, जैसा कि यात्रा के लिए उचित है, नई वेशभूषा पहनकर प्रवास के लिए कूच करती हैं। किंतु अधिकांश हरितनेत्र हंसकों को भारत आने की इतनी तीव्र इच्छा होती है कि वे यहां मध्य अगस्त में पहुंचकर ही 'पर' निर्मोचन करते हैं और नए 'पर' आने तक जमीन से प्यार करते हैं और तब नई वेशभूषा के साथ उड़कर आगे आते हैं। और शायद भारत से प्यार के कारण, जबकि अन्य प्रवासी जातियां मार्च में लौट जाती हैं, कुछ हरितनेत्र मई तक रुक जाते हैं। वैसे तो हंसकों (बतखों) के रंग अद्भुत तथा आकर्षक होते हैं किंतु 'हरितनेत्र' ने जैसे अपने सारे मुख पर लाल (पांगर) पाउडर लगाया हो तथा आंख के चारों ओर मानो हरी आभा। इसलिए इसके विशेष नाम भी हैं जैसे संस्कृत में 'रोहिणिका'; ललामी आभा वाले चूर्णों से श्रृंगार करने वाली महिलाएं 'रोहिणिका' कहलाती हैं। 'लोहिया कैर्रा' नाम भी लोहिता

कैर्रा का अपभ्रंश है। इसका एक नाम पतारी (संस्कृत : पत्राली) है; पत्राली का अर्थ होता है चेहरे का सुगंधित चूर्णों द्वारा प्रसाधन। अधूरे इंद्रधनुष को रोहित कहते हैं, इसलिए इसका एक नाम रोहित है। यह पक्षी शीतकाल में बहुत ही सुलभ है।

वरमुखी (हंसक) Spotbilled Duck

97. Anas poecilorhyncha p.

कद : घरेलू बत्तख, 61 सेमी., आवासी तथा प्रवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : गर्म पई, घुघराल, *बरमुघी* हंस, लद्दिम; **नेपाल** : नद्दुम; **मणिपुरी** : कॅरॅ; **बंग्ला** तथा **असमिया** : *बॅरमुघी* हंस; **सिंधी** : हुंघुर (हिंगुल=इंगुर); **संस्कृत** : *वरमुखी* हंस, घर्घरक।

पहचान : चोंच की नोक चंद्रकला के समान पीली तथा चोंच-मूल पर तारों के समान दो सिंदूरी लाल बिंदु इसका पक्की पहचान बनाते हैं। इसका रूप मछली के समान शल्की; वक्ष, पीठ तथा उदर कत्थई, ऊपरी पक्षतियों की किनारें बारीक भूरी, नीचे की किनारें मोटी पांडु; द्युति सितकाली किनार लिए मरकती; प्राथमिक पंख सफेद; तरबूजी लाल पैर; **मादा** नर से थोड़ा छोटी, रंग भी थोड़े-से दबे हुए; तैरते समय इनके पंखों की सफेद किनार स्पष्ट दिखती है।

नर ने मानो विवाह के लिए श्रृंगार करवाया हो—आंखों में काजल, बाल संवरे, लाल टीका, चोंच सुनहली, चेहरा साफ पिंगल, पैरों में महावर। इसका यह सुंदर रूप वर्ष भर रहता है। इसका इसकी चोंच का अगला तिहाई हिस्सा दूज के चांद की तरह होता है, रंग में भी, और आकार में भी, तथा चोंच के मूल पर दो लाल सितारे भी होते हैं। वरमुखी का अर्थ होता है सुनहले तथा कुंकुम मुख वाला।

इसे नरकुल तथा वनस्पति वाली झीलें और तालाब पसंद हैं। यह उथले पानी में आधी डुबकी लगाए शीर्षासन मुद्रा में कीचड़ में से जलकीट, इल्ली, घोंघे आदि खोज कर खाता है किंतु है यह मुख्यतया शाकाहार, जल-वनस्पति के अंकुर, बीज, तथा चावल के दाने इसे प्रिय हैं। चावल के खेतों में एक तो यह धान मजे से खाता है किंतु दूसरी तरफ कीड़ों को भी खाकर उन्हें संतुलन में रखता है। यह लंबी उड़ानों की सामर्थ्य रखता है किंतु उपरितरण (Take off) करते समय सीधा ऊपर की ओर न उड़कर क्रमशः उठता है। भोजन के लिए यह डुबकी न लगाये किंतु सुरक्षा के लिए लंबी डुबकी साध सकता है।

इसके बोल फटेफटे से 'घर घर' होते (संस्कृत में एक नाम 'घर्घरक' तथा हिंदी में 'घुघराल' या गुगराल) हैं। नर का स्वर हल्का 'घर घर' किंतु मादा का स्वर

तेज 'कैं कैं कैं', विशेषकर खतरों पर। साधारणतया वरमुखी हंसक चुप ही रहते हैं क्योंकि शिकारी इन्हें बहुत पंसद करते हैं।

ऐसे पक्षी बहुत कम हैं जो **प्रजनन** तो भारत में करते हैं और प्रवास हजारों किमी. दूर। साधारणतया **वरमुखी** हंसक केवल भारत उपमहाद्वीप में बसने वाला है (पांच सुलभ आवासियों में से एक) किंतु इनमें से कुछ इतने उद्यमी तथा साहसी हैं कि कभी कभी प्रवास के लिए उत्तरी रूस तक जाते हैं। इसका प्रजननकाल उत्तर भारत में मुख्यतया जुलाई से सितंबर तथा दक्षिण भारत में नवंबर-दिसंबर है। अक्सर मादा दो खेपों में अंडे देती है। पानी के पास बनाए गए घास तथा पंखों के घोंसलों में मादा एक खेप में लगभग 7-9 अंडे देती है। अंतिम अंडा देने के बाद ही वह सेने का काम शुरू करती है जिसमें लगभग 24 दिन लगते हैं। इसी अवधि में नर और मादा अपने पुराने परों तथा पिच्छों का निर्मोचन कर, नया परिधान धारण करते हैं। नर सेने का काम तो नहीं करता किंतु शावकों की रक्षा तथा पोषण और उन्हें घुमाने आदि का काम अवश्य करता है। यह अकेले-दुकेले तथा झुंडों में देखा जा सकता है किंतु हमेशा पानी के पास।

खंतिया **Shoveller**

105. Anas clypeata

कद : घरेलू बत्तख, 51 सेमी.; प्रवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : तिदारी, पुनान, गहना, भनभना, टोकरवाला, घिरह, **खंतिया** हंस, संखर; **बंग्ला** : **खंतामुखी** खंतु हंस; **कश्मीनी** : हांक; **नेपाली** : धो बहार, संखर, खिखेड़िया संखर; **मराठी** : चें बदल; **गुजराती** : गैनो; **कच्छी** : फटफजी; **असमिया** : खंतिया हंस, नकडूंगर; **कन्नड़** : बातु; **तमिल** : मुट्टीमुख चिड़वी, तारा; मणिपुरी : खारा; **सिंधी** : अलिपत, गैनों, लांघों; **संस्कृत** : खजाक, *खात* हंसक।

पहचान : फावड़ा, खंता जैसी **काली चोंच,** मुंह पर आधार से अधिक चौड़ी स्वयं में यथेष्ट पहचान है; लाल पैर; सितवक्ष; मुंड तथा ग्रीवा चमकदार शमई हरे; प्रगाढ़ पांगर उदर, हरित द्युति। **ग्रहणकाल में** शमई हरा दब जाता है तथा नर-**मादा** के समान कत्थई धब्बों वाला भूरा हो जाता है, हां पंखों का रंग लगभग बना रहता है। **मादा** की चोंच आधार के पास नारंगी होती है।

लगभग 45° तथा 66° उत्तरी अक्षांशों के बीच यूरेशिया तथा उत्तरी अमेरिका (पूर्वी कनाडा को छोड़कर) इनका प्रजनन क्षेत्र है जो प्रवासी पक्षियों के विशालतम प्रजनन क्षेत्रों में से एक है। थोड़ा विलंब से, अक्तूबर तक हिमालय के 'हंसद्वारों'

से भारत में प्रवेश करते हैं। उत्तर पूर्वी अफ्रीका, ईरान की खाड़ी, श्रीलंका, बर्मा, दक्षिण चीन, जापान, कैलिफोर्निया, मैक्सिको इत्यादि में भी शीतकालीन प्रवास बिताते हैं। इन्हें भी भारत आने की इतनी आकुलता रहती है कि भारत पहुंच कर ही अपनी पोशाक बदलते हैं। भारत के लगभग सभी जलाशयों में, डबरों, तालाबों, या खाइयों में भी इन्हें जलक्रीड़ा करते देखा जा सकता है। और कुछ खंतिया हंसक मई या जून तक यहां रहते हैं। झीलों में जहां भी मज्जिक हंसक पानी में डुबकी लगाकर नीचे अपना भोजन ढूंढ़ते हैं विशेषकर वहीं, सतह पर ही, खंतिया हंसक अपनी खंता (फावड़ा) या खजाजिका (चोंच) पानी में गोलाकार घुमाकर 'खज' अर्थात पानी का मंथन-सा कर अपना भोजन ढूंढ़ते हैं, और इसीलिए इनका एक नाम खजाक हंसक है। मंथन करते समय इसकी निचली चोंच पानी को काटती रहती है और ऊपरी चोंच आधी डूबी रहती हुई सतह पर ही घूमती रहती है। इसकी चौड़ी चोंच किनारों पर कंघी के समान छोटे दांतों वाली होती है। इसकी कंघी की विशेष संरचना से अधिक बारीक छन्नी बनती है जिससे पानी में रहने वाले वे सूक्ष्म जीवाणु भी मंथन के समय चोंच में पानी के साथ आ जाते हैं जो अन्य हंसकों की चोंच में नहीं रुकते और इसकी चोंच के अंदर ही रह जाते हैं तथा पानी कंघी से बाहर निकल जाता है। यह डुबकी लगाकर भोजन नहीं खोजता और चकवा के समान घास भी खाता है, किंतु यह जल-जीवाणु अधिक पसंद करता है।

केवल महाहंस या अरुण क्रुंच ही 'क्षीर नीर विवेक' नहीं करते हैं, खंतिया हंसक (बत्तख) भी नीर में से अपना क्षीर निकालते हैं, और इसलिए कोई इन्हें हंस कह दे तो गलत नहीं होगा। वैसे इनके आहार में सूक्ष्म जलकीटाणुओं के अतिरिक्त कवचधारी जल जीव, मृदुकवची, कृमि, मछलियों के अंडे, जल वनस्पति, अंकुर तथा बीज इत्यादि भी शामिल हैं।

झाड़ियों के मैदानों में, पानी में नरकुलों के बीच या जमीन में छोटे-से गड्ढे में घास तथा 'पर' आदि बिछाकर घोंसले बनाते हैं। **मादा** एक खेप में 7-16 तक हरिताभ हल्के पीले अंडे देती है। इसकी उमर भी लंबी है, लगभग बीस वर्ष, संभवतया, अपने मांस के बेस्वाद होने की कृपा से यह शिकारियों का प्रिय पक्षी नहीं है।

कल/सित नकटा **Nakta or Comb Duck**

115. Sarkidiormis melanotos m.

कद : बत्तख+, 76 सेमी.; आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी, बंग्ला : *नकटा,* नकवा; **ओड़िआ** : ताकी हंस; **तेलुगु** : जुट्ट

चिलुवा; **कन्नड़** : डोड्डा सरले हविक; **तमिल** : मुख्खन तारा; **सिंध** : कारो हंज; **संस्कृत** : नासाच्छिन्ना, पूर्णिका, नंदीमुखी।

पहचान : नाक के मूल पर काला नग, सफेद मुंड तथा ग्रीवा पर कत्थई छींटे, **ऊपर** इंद्रधनुषी हल्की आभा लिए काला; **नीचे** वक्ष तथा उदर सफेद। कांस्य**द्युति**। **मादा** : थोड़ी छोटी, रंग दबे तथा नाक बिना नग की। **ग्रहणकाल** : नर की 'नाक' मानो कट जाती है किंतु, और कोई अंतर नहीं। **शावक** : ऊपर भूरे; सफेद गरदन में भूरे धब्बे तथा काली पट्टियां; नीचे मुख्यतया गेहुंए होते हैं।

वैसे तो इस अति सुंदर हंसक का नाम 'नाकवाला' होना चाहिए जैसे कि इसकी प्रजनन ऋतु में नाक ऊंची रहती है किंतु ग्रहणकाल में मानो इसे चिढ़ाने के लिए जैसी कोई 'नकटा' कहे क्योंकि तब इसकी नाक पर नग नहीं रहता है। **प्रजनन** ऋतु जुलाई से सितंबर। क्या आश्चर्य कि संस्कृत कवि भवभूति ने इसे, ग्रीष्म ऋतु के **परिपक्व दिनों** के मध्याह्न की उपमा देते हुए, 'पूर्णिका' नाम दिया (मालती माधव)। वैसे है तो यह हंसक किंतु रूप, आकार, कद, तथा उड़ान, भोजन आदि में हंसों की ही बराबरी करता है।

हंस कुल में **अपवाद** स्वरूप इस हंसक को आप वृक्षों पर भी बैठे देख सकते हैं, तथा पानी के किनारे किसी वृक्ष की कोटर में अपना घोंसला बनाते हुए भी क्योंकि इसके पंख तथा पंजे बहुत मजबूत होते हैं। इसकी उड़ान हंसों की शक्तिशाली उड़ान से मिलती-जुलती है। पंजों की बनावट अन्य बत्तखों की तरह झिल्लीदार होती है। मुख्यतया यह भारत, नेपाल तथा बांग्लादेश में आवास करता है किंतु मध्य तथा दक्षिण अफ्रीका, बर्मा और दक्षिण पूर्वी चीन में भी मिलता है। भारत में पानी की उपलब्धि के साथ यह भ्रमण करता है। पांच भारतीय सुलभ आवासी हंसकों में से यह एक प्रमुख हंसक है।

यह अधिकतर अपने 4 से 10 परिवारजनों में रहना पसंद करता है। यह हंस के समान भोजन 'चरना' ही पंसद करता है, गोता लगाकर खाना नहीं; इसका मुख्य भोजन जलवनस्पति, अंकुर, कंदमूल, दलदली तथा जलीय फलों के बीज, चावल के दाने आदि हैं और कभी कभी जलकीट, इल्लियां, मेंढक तथा मछली भी। अपने बचाव के लिए, भोजनार्थ न सही, सफलतापूर्वक गोता लगता है—विशेषकर निर्मोचन अवस्था में, घायल होने पर या डरने पर।

जैसे ही ग्रीष्म ऋतु के शुरू होने पर प्रवासी पक्षी अपने क्षेत्रों को लौट जाते हैं, ये झीलों में जोड़ा बना लेते हैं। **मादा** एक खेप में 7 से 15 अंडे देती है। कभी कभी एक घोंसले में 47 अंडे तक देखे गए हैं—स्पष्ट रूप से कुछ **मादाएं** अच्छा कोटर मिलने पर उसका सदुपयोग करती हैं। यह भी खोज का विषय है कि 15 अंडों से अधिक होने पर, शावकों के लालन-पालन में क्या अन्य नकटा नर या

मादाएं मदद करती हैं और करती हैं तो कितनी। ये अंडे चमकदार हाथीदांत के रंग के होते हैं। अंडों की लंबाई 6.2 तथा चौड़ाई 4.3 सेमी. के लगभग होती है। अंडे सेने का काम **मादा** ही करती देखी गई है और उन्हें ये काम लगभग 30 दिन करना पड़ता है।

सामान्यतया वह चुप रहना पसंद करता है। कभी कभार मद्धिम कर्कश टर्र-सी आवाज निकालता है। किंतु **प्रजननकाल** में शक्तिशाली शंख ध्वनि के समान बोल निकालता है।

दुशाखी (कत्थ) चील Paria Black Kite

133. Milvus migrans govinda

कद : 61 सेमी., आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी, बंग्ला : *चील;* संथाली : कुरित; **कश्मीरी :** गोंट; **असमिया** : *चिलन,* मुगचरनी; **मराठी** : घार; **गुजराती** : समड़ी; **तेलुगु** : मल्लगुड्ड; **तमिल** : परिया परंदु, कालू परंदु; **मलयालम** : चक्कि परंदु; **संस्कृत** : *चिल्लन,* चिरंभण, आतायिन, शकुनि।

पहचान : वातावरण की गंदगी के अनुसार हल्के या गाढ़े कत्थई शरीर पर चंपई धारियों वाला भूरा बड़ा **बाज;** चिबुक सफेद, इसकी हल्की **दुशाखी** पूंछ में गाढ़े कत्थई पट्टे। श्येनगण के पक्षियों के समान **मादा नर** से थोड़ी बड़ी।

कचरा घरों के पास कौओं, गिद्धों के साथ बड़ी संख्या में मिलती है। कसाई घरों, मछली बाजारों के पास भी खूब मिलती है। इसका निशाना बहुत तेज होता है, पिकनिक करने वालों के हाथ से कौर (निवाला) सफाई और तेजी से छुड़ा ले जाती है, वाजसनेयी संहिता में इसे धनुर्विद्या के देवता को समर्पित किया गया है।

चिल्लन या चील नाम इसके बोल पर आधारित है। तार स्वरों से सशक्त उतरते चढ़ते स्वरों में इसके लंबे बोल (**चिरंभण**)–चि...चि...ल्ल...ल्ल...ल्ल...और अक्सर यही 4-6 बार दुहराए जाते हैं। **प्रजननकाल** के आरंभ में, विशेष रूप से, नर 'गान' करता है। अपने घोंसलों तथा शावकों की रक्षा के लिए यही गान युद्ध-घोष में बदल जाता है। मैथुन के समय **मादा** चढ़ते स्वरों में 6-10 तानें उत्तेजना पूर्ण ध्वनि के साथ निकालती है और मैथुन समाप्ति के साथ उच्चतम तार स्वरों में बंद करती है।

इसका **प्रजननकाल** उत्तर में मार्च-मई तथा दक्षिण में सितंबर-अप्रैल है। घोंसला छोटी डंडियों का चबूतरा-सा होता है जो काफी ऊंची-दुशाखों पर बनाया जाता है। वृक्ष–आम, नीम, पीपल, बरगद, इमली, ताड़–इसे अपनी रिहाइश के लिए

पसंद हैं। गृहस्थी के कार्यों में नर और मादा मिलकर सहयोग करते हैं।

ये सर्वभक्षी हैं। कीड़े, मकोड़े, चूहे, छिपकलियां, मेंढक, केंचुए, मुर्गियां, टीड़ी, चिड्डे तथा रसोई का फेंका हुआ भोजन आदि सभी पसंद हैं। गुफा से निकलते हुए चमगादड़ों को कुशलता से पकड़कर, विसर्पी उड़ान में उसे पंजों से पकड़े हुए अपनी तेज तथा मजबूत चोंच से फाड़ती हुई खाती है। अपने शावकों के लिए यह मुर्गी के चूजों तथा अंडों को भी उठा लाती है।

भारत में पक्षी विमान दुर्घटनाओं में चील तथा गिद्ध जाति के पक्षी सर्वाधिक हैं, जबकि पाश्चात्य देशों में गंगचील हैं। अर्थात पक्षी-विमान दुर्घटनाओं का कारण विमानपत्तनों के आसपास फैली गंदगी है। भारत में जमीन पर अधिक गंदगी होती है तथा पश्चिम में सागर तटों पर। सफाई होनी चाहिए यदि हम अपने को सभ्य होने का दावा करते हैं; क्योंकि अपने द्वारा फैलाई गंदगी से विमानयात्रियों को दुर्घटना का शिकार बनाना कहां की सभ्यता है। बहुत से विमानपत्तन अधिकारी चीलों को भगाने के लिए विशेष पराध्वनि तरंगों का, कुछ चीलों को शिकार द्वारा कम करना तथा कुछ विमानपत्तनों पर विशेष झिलमिल करने वाली बत्तियों का उपयोग करते हैं। किंतु चीलों पर कुछ समय बाद कचरे के आकर्षण के चलते इन सब अधकचरी युक्तियों का प्रभाव पड़ना बंद हो जाता है। इसका सही हल है आसपास, विशेषकर विमानपत्तनों के आसपास, सफाई का होना, इसमें सभी नागरिकों का सहयोग आवश्यक है।

मेघ/केसर शिकरा Shikra *140. A.b. poliopsis* (बर्मी)
138. Accipiter badius dussumieri *139. A. badius b.* **(श्री लंकाई)**

कद : कौआ (घरेलू)-; लंबाई 31 सेमी.; मादा 36 सेमी. आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी, मराठी, मादा : *शिकरा;* **नर** : चिपका, चिप्पक; **हिंदी : मादा** : सिंचान, टोना, टुन्ना; **नर** : सिचान, सचान, चिचान; **बंग्ला** : *शिकरे;* **गुजराती** : बाज-*शिकरौ;* **नेपाल : मादा** : टुन्ना; **नर,** कुधिया; **लेप्चा** : टिंक्की; **सिक्किम** : ऊ-चाम; **कन्नड़** : गिड्डग; **तमिल** : बैरी; **संस्कृत** : कुलिंगक, **मादा** : संचान, **नर** : द्रोणक।

पहचान : चौड़े कंधे, भरा वक्ष, गोलाईदार पंख, लंबी पूंछवाला छोटा बाज; सशक्त पैर, **ऊपर** मेघ के समान; **नीचे** केसरी धारियों (विशेषकर वक्ष पर) सहित सफेद, कंठ पर मेघपट्टी; **मादा** लगभग नर के समान किंतु थोड़ी बड़ी, अधिक सशक्त, ऊपर सलेटी आभा लिए धूम्रितभूरी।

आमतौर पर पक्षियों तथा कई जानवरों में नर **मादा** की तुलना में अधिक सुंदर तथा सशक्त होता है किंतु 'बाज', (गिद्धों को छोड़कर) तथा श्येन कुलों में इसका उलटा होता है। **यौन द्विरूपता** जो पक्षी संसार में विशेषकर देखने को मिलती है, चाहे उसमें नर बड़ा हो या मादा, उसका एक लाभ यह भी हो सकता है कि उसमें दोनों के आहार में भी परिवर्तन आ सकता है जिससे इनकी, अपने ही क्षेत्र में, आपसी प्रतिद्वंद्विता कम हो जाती है। तथा दूसरा लाभ—दबे रंगों वाला पक्षी अधिक सुरक्षित रहता है।

जब **मादा** शिकरा अंडे सेने के लिए बैठती है तब नर उसे भोजन लाकर देता है, 'पर लगता है जैसे वह उसे (मादा को) देने में कुछ हिचकिचाता है या शायद नहीं भी देना चाहता है, तब बड़ी और सशक्त मादा को इससे भोजन छुड़ाने में कोई भय नहीं होता' (सालिम अली)। मुझे लगता है कि बात नर के हिचकिचाने या न देने की इच्छा की नहीं हो सकती क्योंकि वह भोजन लाया तो मादा के लिए ही है, और विशेषकर इसलिए भी कि इनका जोड़ा जीवन भर के लिए होता है। अधिक संभव यह हो सकता है कि नर मादा को खाना देते समय कुछ 'नखरा' इसलिए करता है कि उसकी मेहनत की प्रशंसा की जाए।

मादा शिकरा को लोग शिकार के लिए पालते हैं। **द्रोणक** अर्थात कौए के समान—यह नाम एक बाज के लिए अपमानजनक ही है। शिकरा तथा संचान का अर्थ है 'शिकार में कुशल'। सिखलाने पर यह अपने से बड़े पक्षियों का भी शिकार करता है : तीतर, बटेर, कौआ, छोटे मोर, मुर्गे आदि। इसकी उड़ान में ताकत और शालीनता है क्योंकि इसके आकार के अनुपात में इसके पंख तथा पूंछ दोनों बड़े होते हैं। वाजिवंश (Accipiter) के पक्षियों की तरह यह जंगल में किसी घने वृक्ष में से अचानक निकलकर अपने शिकार पर धावा करता है।

प्रजननकाल : मार्च-जून। श्येन कुल (Falconidae) के अधिकांश सदस्य अन्य पक्षियों के **घोसलों** को हथिया लेते हैं किंतु सुपर्ण (Acquila) तथा वाजिवंश के सदस्य अपना घोंसला बनाते हैं। उष्ण हवा की धारा में ऊपर चढ़ना इसे पसंद है। अक्सर, विशेषकर प्रणय-निवेदन में, इनके जोड़े कलाबाजी करते हैं—कुंडली पथ पर चढ़ना, फिर एकदम से नीचे गिरना, एक दूसरे पर झूमकर आना, आदि। इसे 'रंगण' या 'थरथर' (Hover) उड़ान में बड़ा आनंद आता है।

आहार : चूहे, गिलहरियां, छिपकलियां, मेंढक, टीड़ी, चिड्डे, उड़ते दीमक, छोटे पक्षी (गौरेया से लेकर भुजंगा तक)। **समरूपता** : शिकरा जैसे बाजों से अन्य छोटे पक्षी बहुत डरते हैं। 'कल/सित शिखी चातक' (Pied Cuckoo) नर का रूप रंग शिकरा से बहुत मिलता जुलता है। नर चातक अक्सर, अपने इस रूप के कारण उन्हें डरा कर भगा देता है, फिर मादा चातक, अधिकांशतः, उस घोंसले में से एक अंडा गिराकर, अपना एक अंडा दे देती है। **समरूपता** का यह अनोखा उदाहरण है।

सितकालर (श्याव) गिद्ध White backed Vulture

185. Gyps bengalensis

कद : मयूर (बिना पूंछ के) +; 90 सेमी.; आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : गिद्ध; **मराठी :** गिद्ध, गिद्धाड़; **गुजराती** : गीध; **बंग्ला** : शकुन; **कन्नड़** : रणहद्दू; **तमिल** : राजाली; **तेलुगु :** मट्टी पुदुम गाडु; **मलयालम** : कजुकन; **संस्कृत :** शितिकंक्षित, हिरण्यकक्ष, सुपार्श्व

पहचान : (भूरापन लिए कलौंछ) श्याव, परहीन पतली गर्दन, कंधर के नीचे चौड़ा **सफेद पट्टा या कालर,** सितकालर प्राथमिक पंखों की सफेद किनार वाला भारी गिद्ध। बैठते समय सिर लगभग कंधों पर (लंबी गर्दन मुड़ी हुई)। उड़ते समय नीचे से देखने पर काले निचले शरीर तथा काले उड़न परों के बीच सफेद-पंख पिच्छ अलग स्पष्ट दिखते हैं। ऊपर से देखने पर या मुड़ते समय सितकालर स्पष्ट दिखती है। **नर-मादा** एक समान।

पूरे भारत का सर्वसुलभ गिद्ध। गरुड़ पुत्र सम्पाति (जटायु का भाई) का बेटा सुपार्श्व भी सितकालर श्याव गिद्ध है। पहले राजस्थान में नहीं मिलता था किंतु अब नहरों के फैलने से मिलने लगा है। झाड़ों के ऊपर इसके झुंड अन्य गिद्धों के झुंडों के साथ देखने अक्सर मिलते हैं—विशेषकर कसाईघरों, नगरपालिका के कचराघरों आदि के पास। जिन वृक्षों पर ये अधिक बैठते हैं उनपर इनकी सफेद बदबूदार विष्ठा जमती जाती है और अधिक होने पर वृक्षों को मार डालती है और इस तरह ये आम, नारियल आदि के कुंजों का नुकसान कर सकते हैं। किंतु कुल मिलाकर ये हमारे **मित्र** हैं क्योंकि लाशों की सफाई बड़े वेग से करते हैं। कुछ ही गिद्ध एक बैल की लाश को 20-25 मिनट में साफ कर देते हैं। खाते समय कर्कश चीं चीं की आवाज भी करते हैं। इनकी सफाई एक छोटे क्षेत्र में न होकर विशाल क्षेत्र में होती है जिसे करने के लिए ये दूर दूर तक की 'टोह' लेते हैं। और अधिकतर, ऊंचाई पर जाकर गोलाकार में पंख फैलाए कुशल विसर्पण करते हुए विशाल क्षेत्र का सर्वेक्षण करते हैं। इनकी दृष्टि बड़ी तेज होती है, **गिद्ध दृष्टि** का मुहावरा ही प्रसिद्ध है, किंतु **इतनी तेज** नहीं कि वे इतनी ऊपर से किसी जानवर की लाश देख लें। एक लाश के पास तुरंत ही कुछ कौए, लोमड़ी, कुत्ते आदि पहुंच जाते हैं। इनकी गतिविधियां देखकर गिद्ध 'वायु-वेग' से वहां पहुंचते हैं। गिद्ध आपस में भी एक-दूसरे पर नजर रखते हैं, एक ने भोजन देखकर गोता लगाया तब एक के बाद एक गोता लगाते हैं। लाश खाने के लिए खींचातानी तो खूब होती है, यहां तक कि ये शेर के रहते हुए भी उससे कुछ मांस खसोट लेते हैं। जमीन से उड़ने के लिए गिद्धों को **विमान** की तरह 'दौड़' लगानी पड़ती है। यदि ये भरपेट मांस खा

लें तब वे तुरंत ही उड़ नहीं सकते और उन्हें काफी समय जमीन पर ही बिताना पड़ता है।

सितकालर श्याव की **मादा** गिद्ध एक खेप में एक ही अंडा देती है। अधिकांशतया इसके अंडों को कोई खतरा नहीं होता। अंडे से चूजे के निकलने की तथा उसके वयस्क होने की संभाव्यता बहुत अधिक होती है।

[नगरों के आसपास गिद्धों की अधिक संख्या अधिक गंदगी की द्योतक है, विमाऩपत्तनों के आसपास होने से विमान इनसे टकरा जाते हैं। क्या हम सभ्य लोग, इसके लिए जिम्मेदार नहीं हैं ?] गिद्ध ऊंचाई पर उड़ने की शक्ति अधिक रखते हैं। [सितमुंड भूरा गिद्ध (**Himalayan Griffon,** *Gyps himalayensis*) का चेचेरा भाई] **Ruppell's Griffon Vulture** *(Gyps rueppellii)* विश्व में सबसे ऊंचा (11, 274 मीटर) उड़ने वाला पक्षी है जो अफ्रीका के 'आइवरी कोस्ट' को आबाद करता है।

पांडु-सित शकुंत **Egyptian Vulture**

186. Neophron percnopterus p.

कद : चील +; 66 सेमी.; आवासी *187. N. p. ginginianus*

स्थानीय नाम : हिंदी : शकुंत, शकुन, सफेद गिद्ध या सफेद गीध, **कश्मीरी** : पटयाल; कल मुर्गाब, गोबर गिद्ध, दिआहमद, **(बिहारी)** गोट गिद्ध; **बंग्ला** : श्वेत **शकुन; कन्नड़** : रणहद्दू; **तेलुगु** : पीतिरि गुडु; **मलयालम** : तोट्टि कजुकन; **तमिल** : मंजलतिरुडि; **सिंधी** : हिल; **संस्कृत** : गोष्ट (घोष्ठ) कुक्कुट, गोष्ठचर, *शकुंत,* भास, भासक, शकटार, क्लीब शकुन।

पहचान : सामने का पीला या शहदी, तथा (पीछे का) सफेद; प्राथमिक पंखछोर काले; सिर, चेहरा तथा ऊपरी कंठ परहीन पीला, चोंच शहदी (इसके छोटे भाई ginginianus, Scavenger Vulture, की चोंच पीली); इसके पंख श्येन की तुलना में लंबे तथा सकरे तथा इसकी पूंछ टंकाकार। छोटी ग्रीवा वाला छोटा गिद्ध **नर-मादा** एक समान। इसकी चोंच भी श्येन, बाज, इत्यादि शिकारी पक्षियों की तरह भारी, मजबूत तथा गहरी अंकुड़ी वाली (hooked) होती है।

'पांडु...सित शकुंत' उत्तर पश्चिमी भारत को ही आबाद करता है, गर्मियों में 'हिल स्टेशन' जाना पसंद करता है। इसका छोटा भाई (61 सेमी.) ('छोटा पांडु ...सित शकुंत') (ginginianus) (Scavenger Vulture) शेष भारत को आबाद करता है। मादा एक खेप में दो हल्के ईंटी लाल अंडे देती है।

इसका आहार है—सड़ा गला मांस, गोबर, विष्ठा, मेंढक, बड़े झींगुर, पंखअवस्था में दीमक आदि। शायद इन्हीं गुणों को ध्यान में रखते हुए तथा जनसाधारण में इनके प्रति दुर्भावना को कम करने के लिए महाभारत में शकुंतला की कथा में इनके द्वारा महत्वपूर्ण भूमिका निभाई गई है। विश्वामित्र और मेनका द्वारा कुछ ही दिनों की आयु वाली परित्यक्त शिशु कन्या की रक्षा इन 'पांडुसित' गिद्ध—'शकुंतलों'—ने की थी। कण्व ऋषि ने इसीलिए उसका नाम शकुंतला रखा था। यह भी आदमियों की बस्ती के आसपास रहना पसंद करता है। इसे टीलों, चट्टानों, खंडहरों आदि पर बैठे देखा जा सकता है। यह इतना कम बोलता है कि इसके बोल का अभी तक किसी पंछी निहारक ने अभिलेखन नहीं किया है।

पक्षी तीर्थ, **तिरुक्कलुकुंदरम्** के मंदिर में प्रतिदिन एक जोड़ा 'पांडु...सित शकुंत' (छोटा) का 11 से 12 बजे प्रसाद खाने के लिए बनारस से आता है—पुजारियों की निश्चित मान्यता है कि वह दंपति, **ब्रह्ममुहूर्त्त** में शंकर भगवान के घर कैलाशपर्वत में ध्यान करते हैं, फिर काशी में जाकर गंगा स्नान करते हैं, तत्पश्चात प्रसाद के लिए **तिरुक्कलुकुंदरम्** के मंदिर में आते हैं, फिर सूर्यास्त का संध्या-पूजन रामेश्वरम में करते हैं। यह उदात्त मान्यता पारंपरिक भारतवासी का स्वप्न तो हो सकता है, लेकिन वैज्ञानिक दृष्टि से असंभव है। उस क्षेत्र में कई जोड़े इन पक्षियों के रहते होंगे, तब केवल एक ही जोड़ा क्यों आता है ? 'बांबे नेचुरल हिस्ट्री सोसायटी' का सुझाव कि इन पक्षियों का अवलोकन करने के लिए उनके पैरों में छल्ले पहनाए जाएं, मंदिर वालों ने नहीं स्वीकारा; तब भी अवलोकन तो किया जा सकता है।

'मानव-सम' (Hominids) ही उपकरणों का उपयोग करते हैं तथा अन्य जीव लगभग नहीं। पक्षियों की लगभग 30 जातियां उपकरणों का उपयोग करती हैं। 'पांडु...सित शकुंत' अफ्रीका के किन्हीं स्थानों पर शुतुमुर्ग के भारी मजबूत अंडों को तोड़ने के लिए उन पर पत्थर गिराते हैं।

सितगॉर्जेट (पट्टित) चकोर **Chukor Partridge**

236. Alectoris chukar c. *234. A.c. koroviakovi* (ईरानी)

कद : खरबूजी कंठ तीतर +, 38 सेमी.; आवासी *235. A. c. pallescens* (लद्दाखी)
स्थानीय नाम : हिंदी, मराठी, गुजराती, बंग्ला : चकोर; **कश्मीरी** : सकोर, कोकोव; **चंबा** : चकरू; **कन्नड़** : चक्रवाक; **तमिल** : *सकोरपच्छी;* **तेलुगु** : *चकोर* पक्षी; **मलयालम** : उप्पल; **संस्कृत** : चकोर, उपचक्र।

पहचान : ऊपर-नीलक आभा लिए भूरा; काले गोल (**गॉर्जेट**) की परिधि में कपोल

और कंठ **सफेद** होते हैं; सफेद बाजू पर काली **पट्टियां; नीचे**–भस्मी; मलिन कपिल पूंछ, चोंच तथा पैर शोणित। **नर-मादा** एक समान; मादा थोड़ी छोटी तथा उसके पैर में पादकंट (spur) नहीं होता। इसके अतिरिक्त तित्तिरों में केवल हिम तित्तिर की ही चोंच और पैर शोणित होते हैं। चकोर वंश की तीन जातियां हैं, एक ईरान में मिलती है, दूसरी अफगानिस्तान तथा कश्मीर में मिलती है। ये सभी मोटे, बड़े और स्निग्ध होते हैं। चकोर तथा अन्य तित्तिर एक ही विष्कर कुल के सदस्य हैं।

'सितगॉर्जेट (पट्टित) चकोर सारे' पश्चिमी हिमालय (1200-5000 मीटर की ऊंचाई में) तथा पंजाब के पहाड़ी हिस्सों की शोभा बढ़ाते हैं। इनके आहार में अनाज, कंद, हरी वनस्पति, कीड़े, दीमक तथा कंकड़ मुख्य हैं। अध्ययन के आधार पर अभी तक इनकी बोली के चौदह प्रकार पहचाने गए हैं। सर्वाधिक बोल-जोरदार काक-काक-काक, क्वाक-काक, क्वाक-काक...आदि हैं जो मुख्यतया प्रमुख नर तीतर अपने समूह को साथ रखने तथा प्रतिद्वंद्वी को आगाह करने के लिए बोलता है।

प्रजननकाल अप्रैल-जुलाई। घोंसला किसी चट्टान की छाया में, घास के झुरमुट में या झाड़ी में जमीन पर एक कप-सा गढ़ा होता है। कवियों की मान्यता है कि चकोर को चंद्र से एकनिष्ठ प्रेम है, जिसके सतत दर्शन करने के लिए वह खुले में घोंसला बनाने का खतरा लेता है। दूसरे, भारतीय कवियों की मान्यता है कि यह शीतल चंद्रकिरण का पान करता है, चंद्र की ओर एकटक देखता रहता है क्योंकि चंद्र को यह बहुत प्यार करता है, और इसी प्यार की शक्ति के बल पर यह आग भी खा सकता है। मुझे लगता है कि कवियों को एक ऐसे सशक्त उपमान की तलाश थी जो प्रेम की शक्ति से सांसारिक दुखों की आग भी पचा ले। चकोर गरम कंकड़ (जो कि धूप में रहने से गरम हो सकते हैं) तो पचा ही लेता है। इस तरह इसके लगभग खुली जमीन पर घोंसला बनाने का गुण और कंकड़ खाने के गुण को थोड़ी अतिशयोक्ति का सहारा देकर, कवियों ने कह दिया–'ज्यों शशि के संयोग ते पचवत आग चकोर।' किंतु श्री राजेश्वर प्रसाद नारायण सिंह ने अपनी पुस्तक 'भारत के पक्षी' में लिखा है, तथा जगदीश चतुर्वेदी ने मुझे बताया है कि उन्होंने स्वयं चकोर को अंगार खाते हुए देखा है और बी एन एच एस के निदेशक डा. असद रहमानी ने मुझे स्पष्ट बतलाया है कि यह असंभव है। मेरा अनुमान है कि किसी बिरले चातक पालने वाले ने किवदंती का आधार लेकर चकोर को बहुत ही छोटे अंगार खाना सिखला दिया हो, क्योंकि प्रकृति में चकोर को न तो अंगार खाने की आवश्यकता है और न उसे अंगार प्रकृति में मिल सकते हैं। लेकिन यह अनुसंधान का विषय तो है ही।

(कथ/पिंग) जाल तीतर North Indian Grey Partridge

245. Francolinus pondicerianus interpositus

कद : 33 सेमी.; आवासी *244. F. p. mecranensis* (बलूची)

246. F. pondicerianus p. (दक्षिणी)

स्थानीय : हिंदी : *तीतर,* राम तीतर, सफेद तीतर, गोरा तीतर; **पंजाबी** : तिरुफ्ती; **बंग्ला** : *तितिर* पाखी, खैर; **मराठी** : तीतर, चित्तुर; **तेलुगु** : कवंगा; **तमिल** : कांडारि, काड़ै, कोथारे; **मलयालम** : कोजी काट; **कन्नड़** : गौजल हक्कि; **सिंधी** : अच्छो *तीतर;* **संस्कृत** : गौर *तित्तिर,* कपिञ्जल, जांगल तित्तिर, कपिश तित्तिर।

पहचान : माथा तथा कपोल प्रगाढ़ पिंग; कंठ कालीकिनार के साथ खरबूजी, पीठ पर सफेद बारीक जाल रचना; निचली पीठ रेतीली; **ऊपरी पीठ** तथा बाजू कत्थई; कत्थई पूंछ पर सफेद आड़ी धारियां; कपिलवक्ष तथा पिंगउदर पर पतली पतली काली आड़ी धारियां, पुच्छ-किनार बदामीलाल, पुच्छमूल खरबूजीभूरा, पैर बदामीलाल, नाटे तथा मोटे। **नर-मादा** एक समान केवल **मादा** थोड़ी छोटी और केवल नर के पैरों में पदकंट (spur या उपांगुष्ठ) (कभी कभी दो)। अपने दक्खिनी भाई की अपेक्षा कम खरबूजी और अधिक धूमिल।

इसे सूखे घास वाले तथा झाड़ियों वाले जंगल अधिक पंसद हैं। यह मात्र ओस से पानी की जरूरत पूरी कर सकता है। अपना स्नान भी रेत से कर लेता है। जोड़ों अथवा पारिवारिक समूहों में शान से चलता हुआ अक्सर दिख जाता है। खाने के लिए अपने पैरों से जमीन कुरेदकर, पीछे हटता है और फिर आगे बढ़कर चोंच से कीड़े-मकोड़े खोज कर खाता है। सूखे मौसम वाले खेतों के पास, जैसे ज्वार, बाजरा, दालें आदि जो कम पानी लेते हैं, यह अक्सर देखा जा सकता है। इसके सुंदर बोल पर ही इसका नाम पड़ा है : क क क कतीतर, कतीतर; यह 'पटीला पटीला' भी बोलता है।

इसकी समरूप वेशभूषा इसे इनकी पृष्ठभूमि में बहुत ही कुशलता से मिला देती है। तीतर यह जानता है इसलिए अक्सर किसी भी खतरे को आते देखकर बस शिथिल बना रहता है और उस खतरे के लगभग 1 या 2 मीटर दूर पहुंचने पर अपने पंखों को तेजी से चलाता हुआ तेज भर्र की आवाज करता हुआ उड़कर थोड़ी दूर सुरक्षा में उतरकर, फिर तेजी से, भागकर, दूर किसी झाड़ी में फिर शिथिल हो जाता है। नर तीतर बहुत निडर तथा लड़ाकू भी होता है। इस परिवार के पक्षी अपने शावकों को शक्तिशाली बड़े घुसपैठियों से बचाने के लिए, लंगड़ाने का नाटक भी करते हैं।

यह अपने अंडे जमीन पर छोटा-सा कप खरोचकर रख देती है। इसलिए इसके

अंडों को कोटर या घोंसले में उपलब्ध सुरक्षा नहीं मिल पाती। दूसरे यह शिकारियों को अपने स्वादिष्ट मांस के लिए बहुत पसंद है; वैदिक काल से यह पक्षी अपने मांस के लिए लोकप्रिय रहा है, फलस्वरूप इसका जीवनकाल भी छोटा है। तब भी, इसकी इस सफल अतिजीविता के कारण हैं, पहला, उसकी बहुलता से अंडे देने की क्षमता। विश्व के सभी पक्षियों में एक खेप में सर्वाधिक अंडे देने वाला (15 से 16) पक्षी Perdix जाति का भूरा तीतर ही है। किंतु कथ/पिंग जाल तीतर एक खेप में 4 से 9 अंडे तक देती है। दूसरे, यह तीतर बीज तथा कीट दोनों ही खाते हैं, तीसरे, इनका **प्रजननकाल** लगभग पूरा वर्ष रहता है, यद्यपि एक वर्ष में एक ही शावक समूह पालते हैं। यदि किसी कारण से इनके अंडे नष्ट हो जाएं तब ये दूसरा खेप देते हैं। चौथा, इनका समरूप बहुत प्रभावी है।

मोर या मयूर Indian Peafowl

311. Pavo cristatus

कद : गिद्ध + पूंछ, 92-122 सेमी.; शृंगारिक परों के साथ 2- 2.5 मीटर
आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : मोर, मंजुर, मयूर, ताउस; **बंगला :** मयूर; **मराठी :** (नर) *मोर*, (मादा) लंदोर; **ओड़िया :** (नर) मंजा, (मादा) मनिया; **गुजराती :** (नर) *मोर*, (मादा) ढिल; **असमिया :** *मौइरा*; **मणिपुरी :** वाहंग; लेप्चा : मौंगयुंग; गोरो : डोड; **मलयालम तथा तमिल :** मयिल; **तेलुगु :** नेमलि; **कन्नड़ :** नविलु; **सिंधी :** *मुर*; **संस्कृत :** मयूर, सर्पारि, नीलकंठ, राजसारस, सितापांग, महामयूर, सारंग।

पहचान : नर : ग्रीवा तथा वक्ष चमकदार नील रंग का; सिर पर पंखेनुमा नीली कलगी, पीठ चित्तेदार हरी, पंख सिताली कत्थई; शृंगार पिच्छकः शरीर से डेढ़ गुने लंबे, ताम्र गोलकों में सैकड़ों जामुनी आंखों सहित कांस्य हरे; पूंछ, उदर बदामी, टांगें सफेद सशक्त। मादा मुख्यतः भूरी, सिर पर नीली पंखेनुमा कलगी, निचला कंठ चमकदार हरा, वक्ष भूरा और चमकदार हरा, उदर अरुणाई लिए सफेद। **शावक**–लगभग मादा के समान।

मोर अपनी सुंदरता, पालतूपन तथा सांपों और कीड़ों का दुश्मन होने के कारण न केवल अत्यंत लोकप्रिय है वरन हमारा राष्ट्रीय पक्षी भी है। यह लगभग सारे देश में वर्षा ऋतु में मेघों की छाया में प्रणय नृत्य के समय अपने सुंदर पंखों के प्रदर्शन से सभी का मन मोह लेता है। 'मोर मुकुट' तो बहुत ही प्रसिद्ध है।

मोर पानी पीने के लिए खुले में एक एक कदम चारों ओर नजर रखते हुए बढ़ते हैं। यद्यपि अपना बचाव वे दौड़कर ही करते हैं किंतु नर अपनी लंबी तथा

भारी पूंछ सहित भी तेजी से उड़ जाता है। तेज आंख वाली मादा खतरे में बड़ी कुशलता से अपने शावकों को किसी भी गड्ढे में दुबक कर छिपा लेती है।

मोर घोंसला नहीं बनाते, रात किसी बड़े वृक्ष पर बिताते हैं, मोरनी, अधिकतर, अंडे जमीन पर (घोंसले-सी जगह पर) देती है। सुबह, वृक्ष से उतरने से पहले और शाम वृक्ष पर चढ़ने के बाद मोर अपनी तेज आवाज में 'मे आव...मे आव...' चिल्लाते हैं। नर मोर शेर या तेंदुए के आने की चेतावनी भी देकर समाज की सेवा करते हैं।

मोर के लंबे लंबे पंख जो मात्र सुंदरता बढ़ाने के लिए होते हैं, उसकी चपलता में तथा उड़न शक्ति में अवरोध पैदा करते हैं। मानो वह मोरनी से कहता है, "देखो प्रिये, यह सुंदर लंबे पंख केवल तुम्हारे लिए लगाए हैं और इतने अतिरिक्त भार के रहते हुए भी मुझमें इतनी शक्ति है कि मैं न केवल अपनी रक्षा कर सकता हूं, वरन सांप जैसे चपल जीव को भी सरलतापूर्वक पकड़ सकता हूं।" उसकी सुंदरता, शक्ति तथा साहस पर मोहित होकर, तीन से पांच मोरनियां उसे अपना साथी चुन लेती हैं।

मोर सांप के अलावा, कनखजूरे, बिच्छू, छिपकलियां, इल्लियां, टिड्डियां और कीड़ें भी शौक से खाता है। मोर अनाज, बीज, फूल, फल, इत्यादि भी खाता है।

तकनीकी अर्थ में मोर की तथाकथित पूंछ 'पूंछ' न होकर, पूंछ के ऊपर वाले 'पर' अर्थात 'पूंछ पिच्छ' है। विश्व में सबसे लंबे पूंछ-पर वाला पक्षी मोर नहीं है, Crested Argus Pheasant है जिसकी पूंछ लगभग 170 सेमी. होती है जबकि मोर की पूंछ मात्र लगभग 45 सेमी. ही होती है। हां, मोर के पुच्छ-पिच्छ (Tail coverts, not feathers) लगभग 160 सेमी. होते हैं।

लोहितसिरी सारस (क्रौंच) Sarus Crane

323. Grus antigone a.

कद : 150 सेमी. आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : *सारस;* **असमिया :** कुरसंग; **तेलुगु :** कुलिंग; **मराठी :** *क्रौंच,* करॉकुल, सारस, करकोचा; **बंग्ला :** *सारस,* क्रौंच; **गुजराती :** *सारस, क्रौंच;* **मणिपुरी :** वॉइनु वॉइनुरैन; **कन्नड़ :** कोक्करे; **तमिल :** कोकु; **मलयालम :** कोक्क; **संस्कृत :** लक्ष्मण, रक्तमस्तक, मिथुनिन् मणितारक, गोनंद, कामिवल्लभ, क्रौंच।

पहचान : ऊंचा, बड़ा भस्मी क्रौंच; सिर (चांद को छोड़कर) तथा ऊपरी कंठ 'पर' हीन लोहित; जल प्रेमी **नर-मादा** एक समान किंतु मादा थोड़ी छोटी।

एक बहेलिए द्वारा सारस क्रौंच के रतिरत जोड़े में से एक को मारने के कारण

आदिकवि वाल्मीकि के मुख से करुण रस से ओतप्रोत जो वाणी सहसा प्रस्फुटित हुई वह विश्व की प्रथम कविता मानी जाती है। इस लोहित ग्रीवा आदमकद पंछी का शिकार बहुत आसानी से किया जा सकता है किंतु भारत (पूर्वांचल के अतिरिक्त) में नहीं किया गया। इसलिए भारत में यह अधिकांशतया निर्भय घूमते हैं जब कि पूर्वांचली सारस बहुत चौकन्ने रहते हैं। इनका जोड़ा जीवन भर के लिए बनता है। यदि जोड़े में से एक को मार दिया तब दूसरा भी वहीं खड़ा खड़ा रोता रहेगा और हो सकता है कि रोते रोते प्राण छोड़ दे अथवा फिर अकेला घूमता रहेगा। इसीलिए आदिकवि वाल्मीकि ने कहा था, ''मा निषाद प्रतिष्ठां त्वम..'' सारस मारने वाले को प्रतिष्ठा नहीं मिलेगी। हिंदू संस्कृति में विवाह के समय वर वधू को सारस के समान प्रेम से रहने का आशीर्वाद दिया जाता है। यह भारतीयों के प्रकृति प्रेम तथा दांपत्य निष्ठा के प्रति लगाव तो दर्शाता ही है, साथ में इन मूल्यों को हमारी संस्कृति किस प्रकार से समाज में रचाती, बसाती है यह भी दर्शाता है।

इस पक्षी के कुल का नाम क्रौंच है—अर्थात 'हाथी के चिंघाड़ने-सी आवाज करने वाला'। सारस का अर्थ होता है जल से संबंधित क्योंकि यह पक्षी झीलों, तालाबों, दलदलों के पास ही पाया जाता है जहां उनका **भोजन** मेंढक, मछलियां, घोंघे, तथा घास आदि आसानी से मिल जाता है। इसकी **प्रजनन** ऋतु वर्षा से बंधी है और वर्षा का पूर्वानुमान उसे अधिकतर सही ही होता है—नरकुल-डंडियों का बड़ा घोंसला, ये लोग, वर्षा पूर्व बनाते हैं और उपलब्ध जल की सतह से इतना ऊंचा बनाते हैं जितने में वह वर्षा ऋतु में न अधिक ऊपर रहे और न डूबे ही। प्रजनन ऋतु में सारस दंपति खूब नृत्य करते हैं जिसमें उनकी प्रेमभावना की बहुत मधुर तथा प्रभावी अभिव्यक्ति होती है। यह हमेशा जोड़े में घूमते हैं, रात में यदि भोजन की तलाश में थोड़े दूर हो जाएं तो बोल से संपर्क बना कर रखते हैं। संस्कृत में इनके तीन विशेष नाम हैं, एक, 'मिथुनिन' (संभोगी), दूसरा, 'कामिवल्लभ' (मैथुन प्रिय), और तीसरा, गोनंद (खुले में मैथुन करने वाले)। वाल्मीकि रामायण में, जब राम पंपा झील पहुंचते हैं तब उन्हें ऋषिगण बतलाते हैं कि वे सारस के अपवाद सहित क्रौंच कुल के अन्य सदस्यों तथा कुरी कुल के सदस्यों का आहार बना सकते हैं। आपस्तम्ब सूत्र के अनुसार क्रुंच (Flamingo), क्रौंच तथा धनेश भोज्य हैं किंतु सारस नहीं। और इस तरह के आदेश बहुत-सी स्मृतियों में मिलते हैं। पक्षी प्रेम की हमारी सांस्कृतिक परंपरा ऐसी है जिसने जनमानस में वन्यजीवों तथा वनस्पतियों के प्रति प्रेम को हमेशा उपजाया है, उसकी पुष्टि की है।

घोंसला निर्माण, अंडे सेने तथा शावक के पालन पोषण में नर और मादा मिलकर काम करते है, यद्यपि चौकीदारी तथा रक्षा के प्रति नर अधिक सजग रहता है।

कल/सित दवाक **Whitebreasted Waterhen**

343. Amaurornis phoenicurus p.

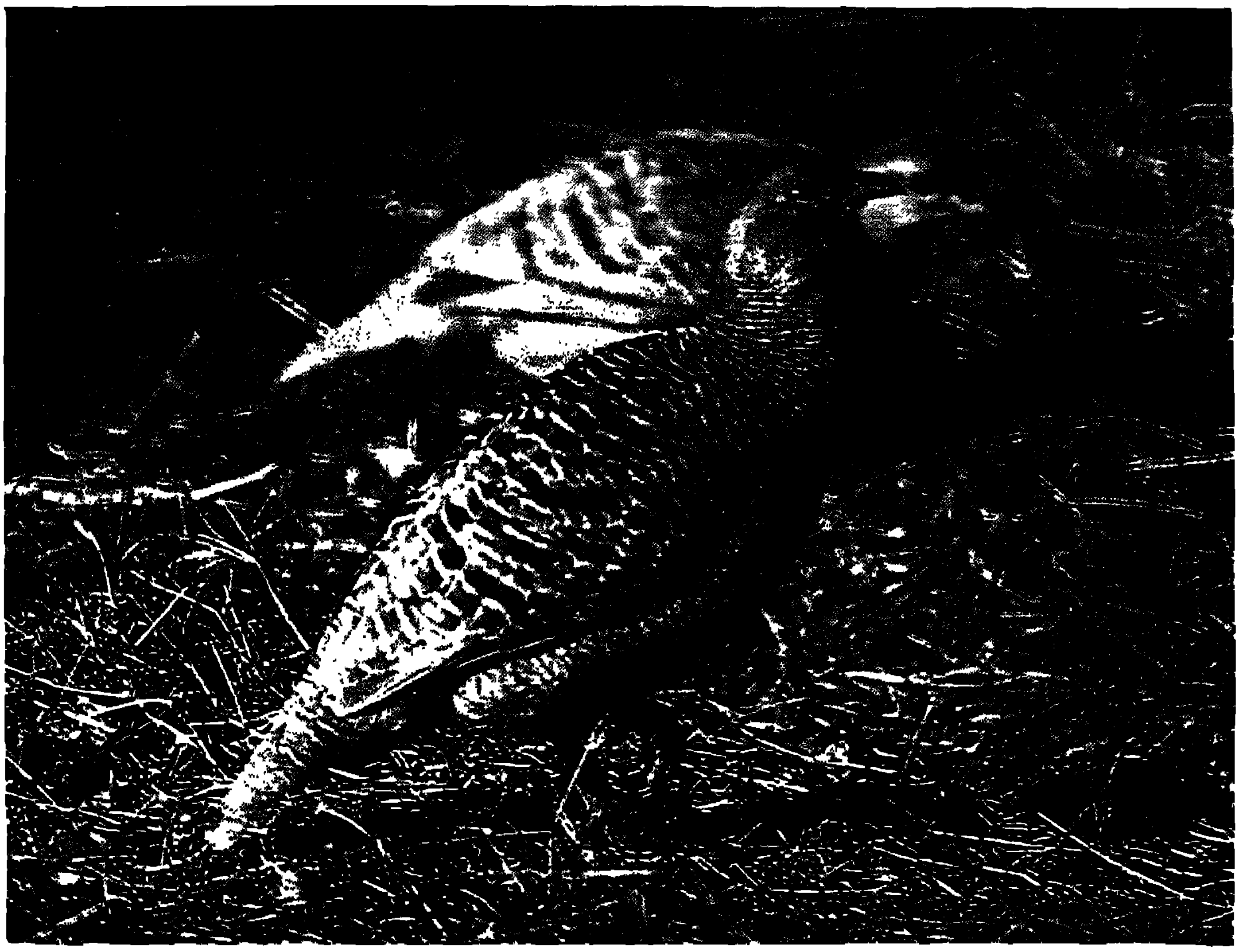
कद : कबूतर +, 32 सेमी; आवासी *345 A.p. insularis (अंदमानी)*

स्थानीय नाम : हिंदी : *दवाक,* दहाक, डौक, वंश, मुरगी, किनाटी, बनमुर्गी, जलमुर्गी; **बंग्ला** : पान पैरा; **मराठी** : कुकु कोम्डी; **गुजराती** : *दवाक;* **गोंडी** : कुरेन; **असमिया** : पानी डुबोई; **मणिपुरी** : उड़ेन कैंथु; **तेलुगु** : बूड़ा कोडि; **तमिल** : कानन कीजि, नीरकोली; **मलयालम** : कुला कोजि; **कन्नड़** : नीरुकोलि; **सिंधी** : कुड़कि; **अंदमानी** : जंगली मुर्गी; **कारनिकोबारी** : टकूर; **संस्कृत** : शुक्लकंठ दात्यूह, नत्यूह, मेघराव हुडुक्क दात्यूह, दात्यौह, शकटाविल।

पहचान : माथा, चेहरा, कंठ तथा वक्ष सफेद; सिर, गर्दन, पीठ, पंख तथा पूंछ काली; उदर और निचली पूंछ कपिल; निचले माथे पर लाल तिलक; पूंछ छोटी, शर्मीला दलदली पक्षी। **नर-मादा** एक समान; वर्षा ऋतु में जलाशयों, तलाबों, सड़क किनारे की खाइयों, डबरों, जलपूरित खेतों इत्यादि में आसानी से भागती छिपती देखी जा सकती है। भागते समय इसकी छोटी-सी खुंटही पूंछ ऊपर नीचे होती रहती है, मानो कि यह अपनी सुंदर कपिल पिछाड़ी दिखलाना चाहती है।

सारी वर्षा ऋतु इसका **प्रजननकाल** है इसलिए क्या आश्चर्य कि इसका नाम दात्यूह अर्थात 'बरसने वाला मेघ' है। प्रजननकाल में नर कल/सित दवाक अपने क्षेत्र में किसी ऊंचे स्थान पर चढ़कर, किंतु छिपते हुए, जोर से, अपने कद से भी अधिक जोर से, 'कर्र क्वाक क्वाक' आदि की **बांग** देता है (संस्कृत नाम मेघराव) और तुरंत नीचे आकर सुरक्षित स्थान में लुका छिपौवल करता नजर आता है।/इस समय नर लड़ने के लिए तैयार रहता है, यद्यपि इनकी लड़ाई औपचारिक होती है। सारी रात तथा मेघाच्छन्न दिनों में अपने बोल से सारे वातावरण को जगाता रहता है। इसके अन्य **बोल** हैं 'म्याऊं म्याऊं; किटर किटर; कुक कुक' आदि। 'कुक' आवाज 'सोनकंठ तम्हेरा' की आवाज से भी मिलती जुलती है किंतु स्वर कुछ बुलंद, भारी तथा गति थोड़ी अधिक तेज। यह शुष्क ऋतु में चुप रहता है। कीड़ों, इल्लियों, घुनों, घोंघों, केंचुओं और भुनगों आदि के अतिरिक्त ये जलपौधों के अंकुर तथा बीज भी खाते हैं।

ये अपना **घोंसला** पानी के पास झाड़ों पर, झाड़ियों के बीच, जमीन पर, बड़े कप के आकार का, सूखी टहनियों के बीच, बनाते हैं। मादा एक खेप में 6 से 7 अंडे तक देती है। अंडों का रंग हल्की गुलाबी आभा लिए सफेद होता है तथा उन पर पाटल रंग की धारियां भी होती हैं। अंडे औसतन 40:30 मिमी. होते हैं। **नर-मादा** दोनों मिलकर सेने तथा पालन पोषण आदि का काम करते हैं। अंडे फूटने के तुरंत बाद ही काले शावक काफी सक्रिय हो जाते हैं और थोड़ी ही देर में पानी



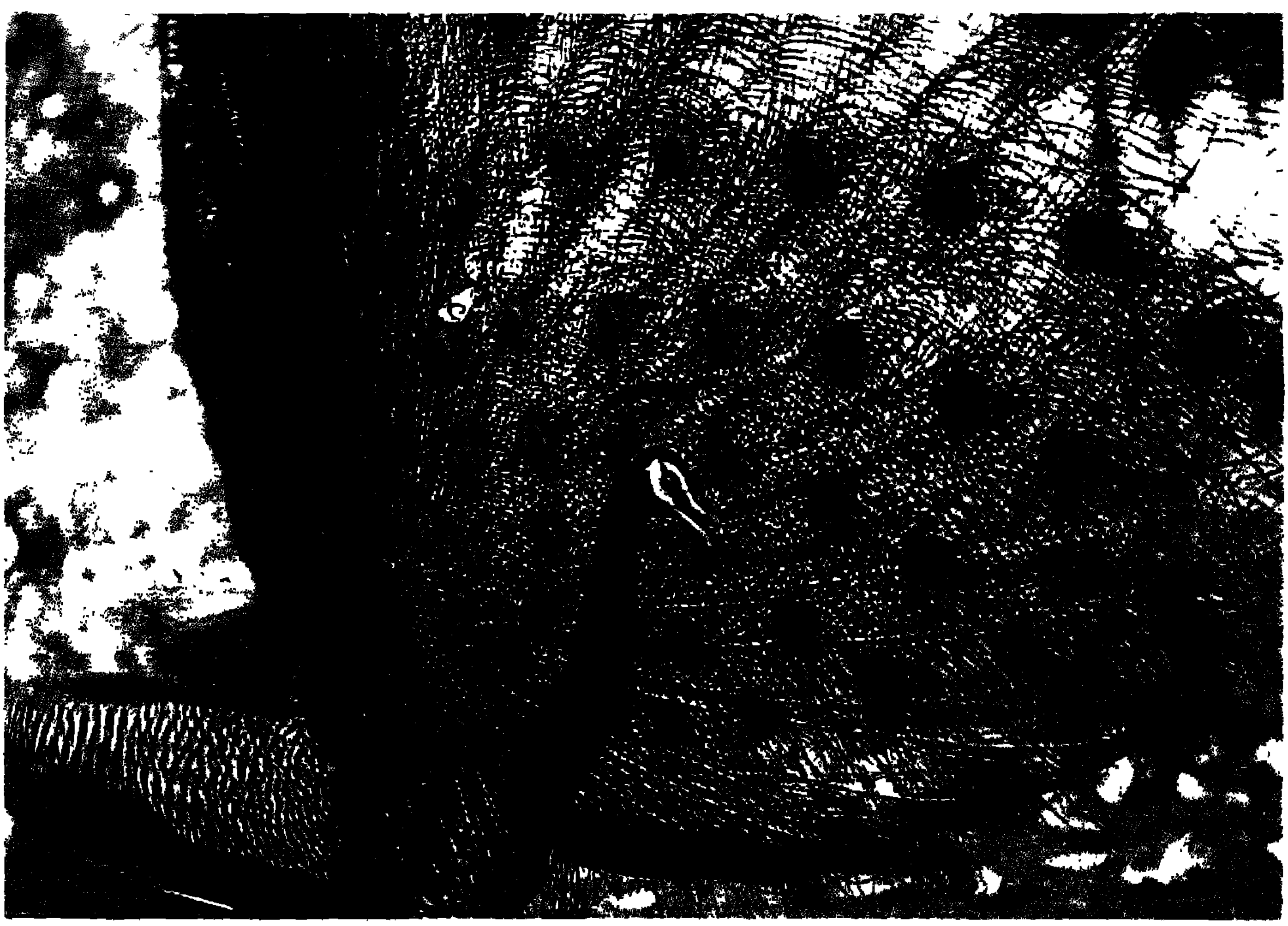
17 क – जाल तीतर (245)



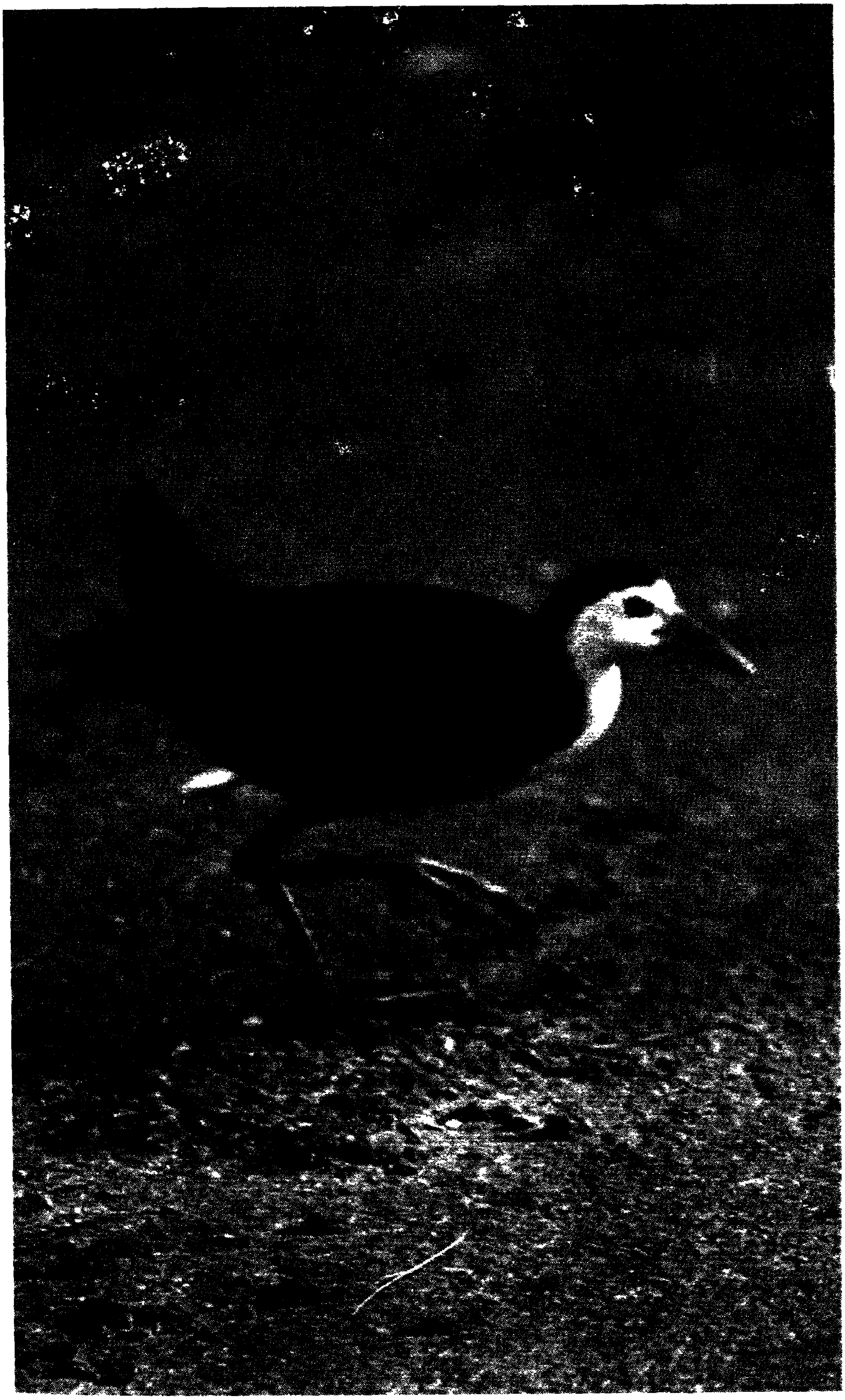
17 ख – पांडु-सित शकुंत (186)



18 क – लोहितसिरी सारस (323)



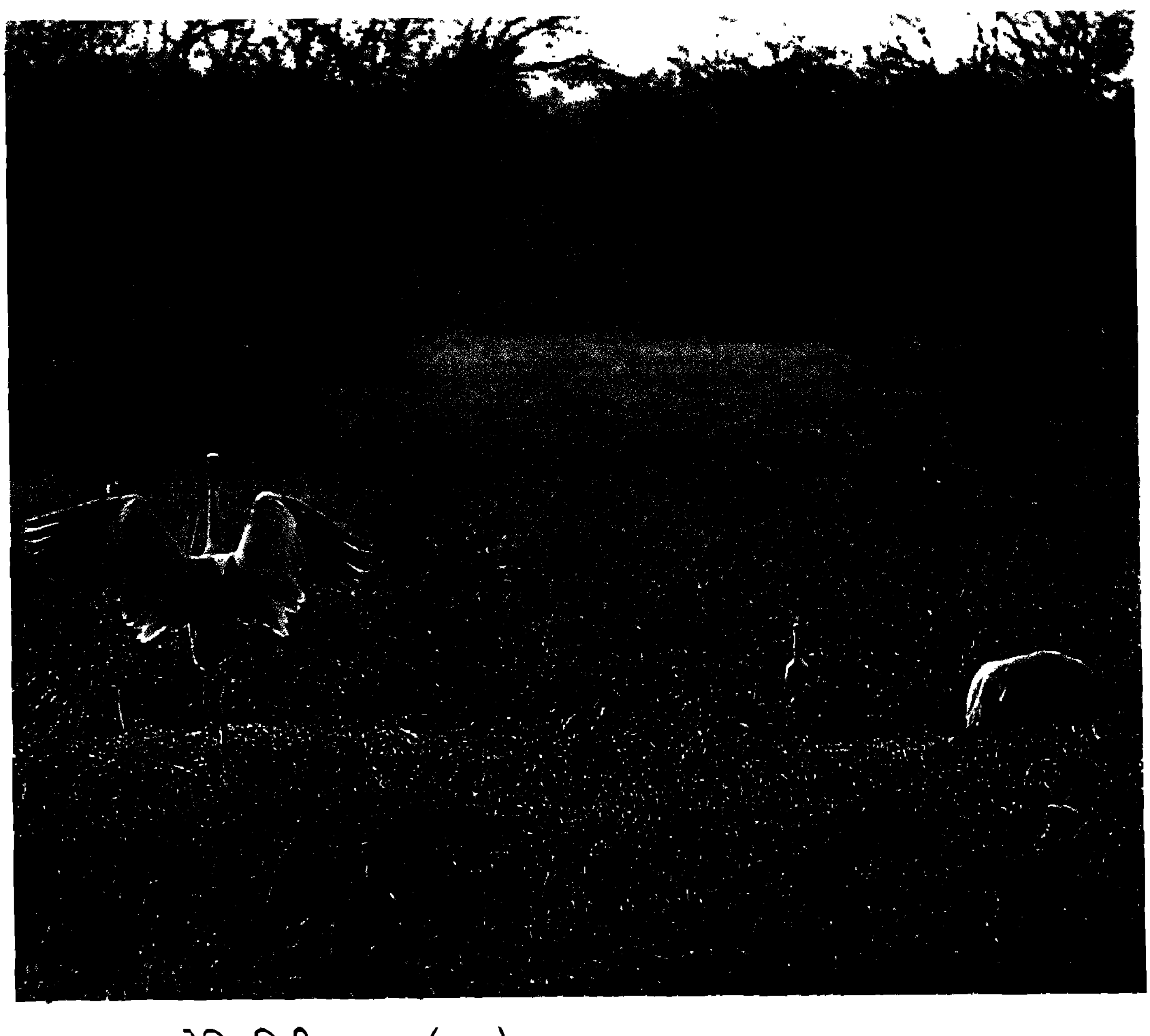
18 ख – मोर, या मयूर (311)



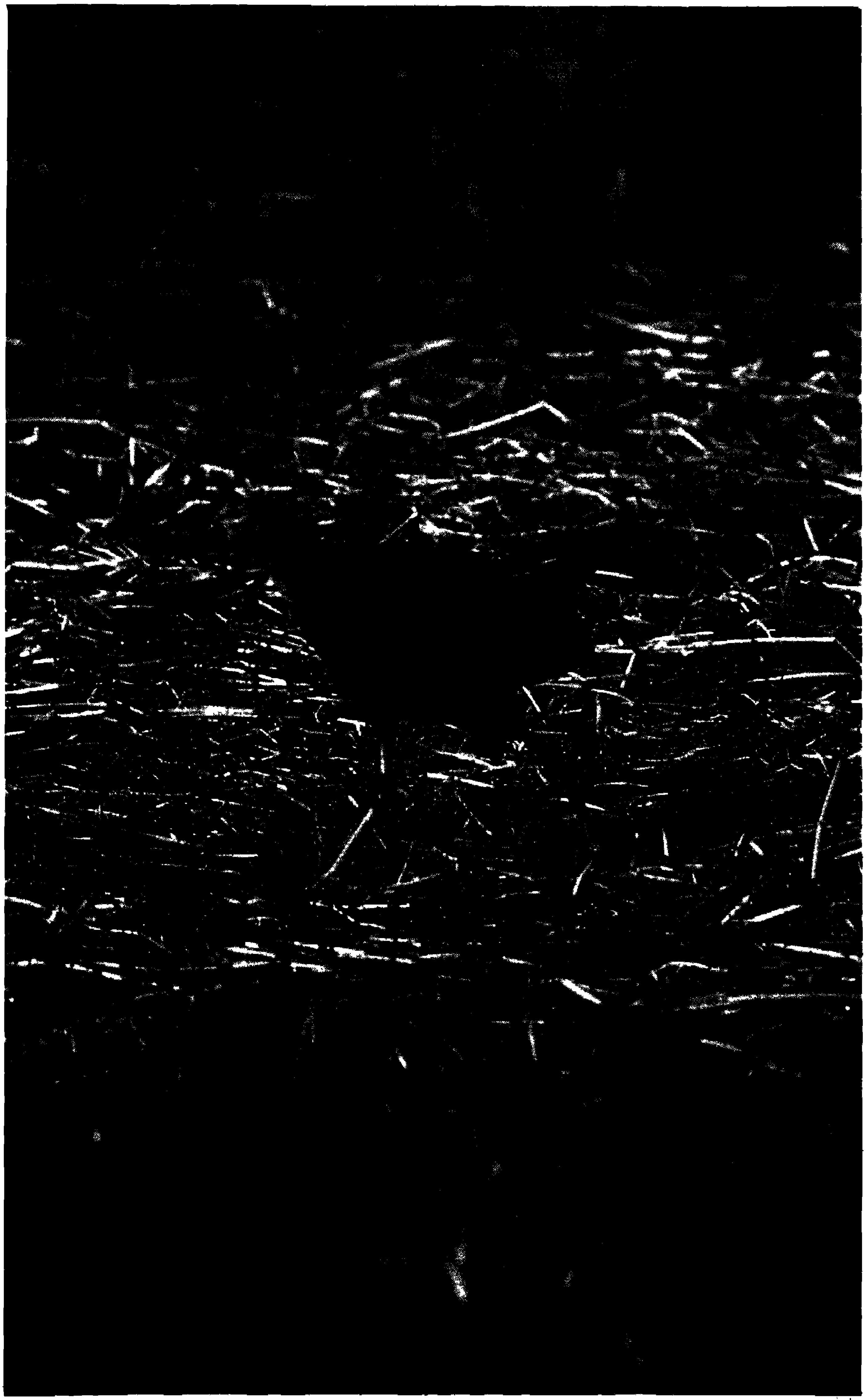
19 कल/सित दवाक (343)



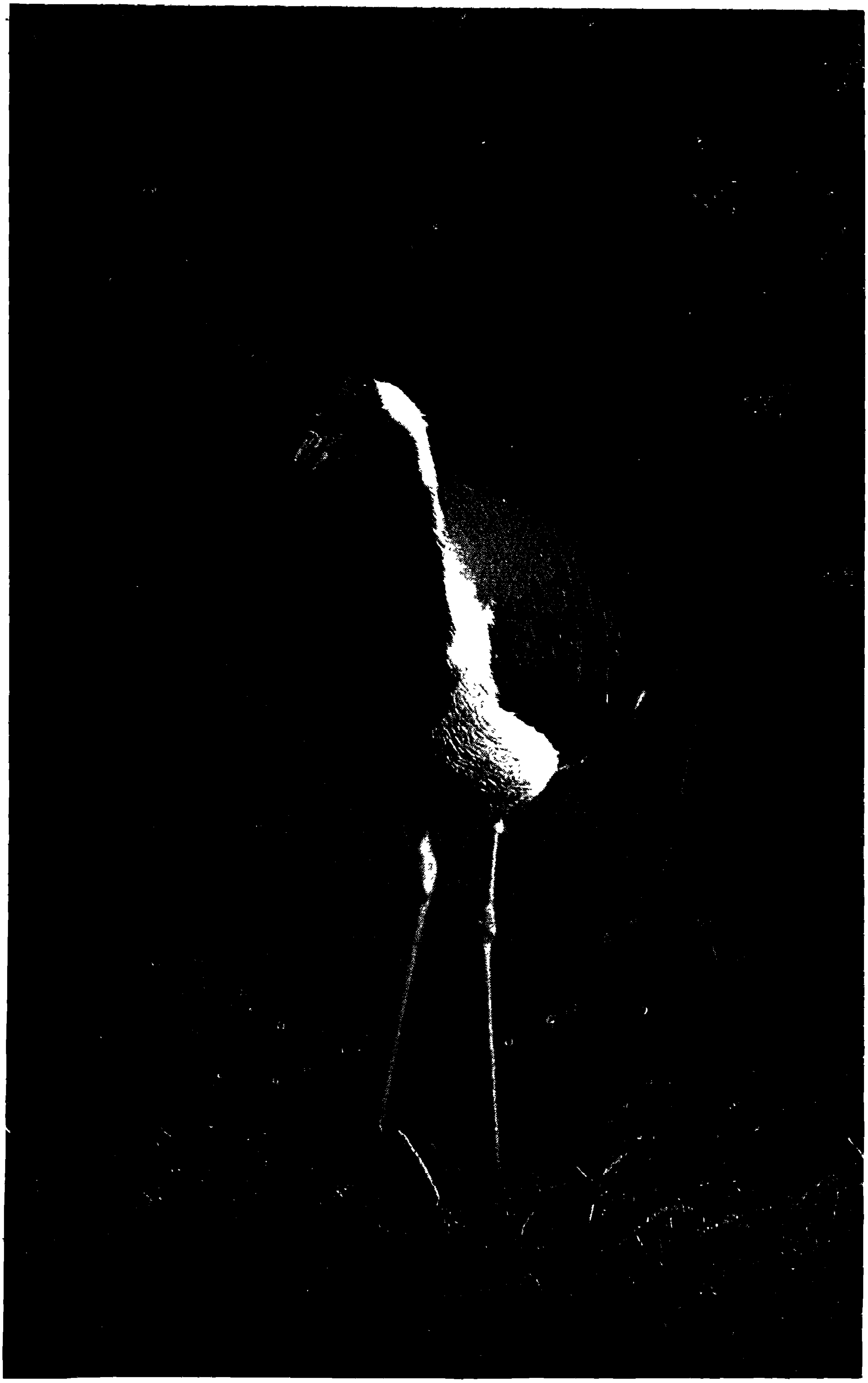
20 क – सितकिनार जलमुर्गी (347)



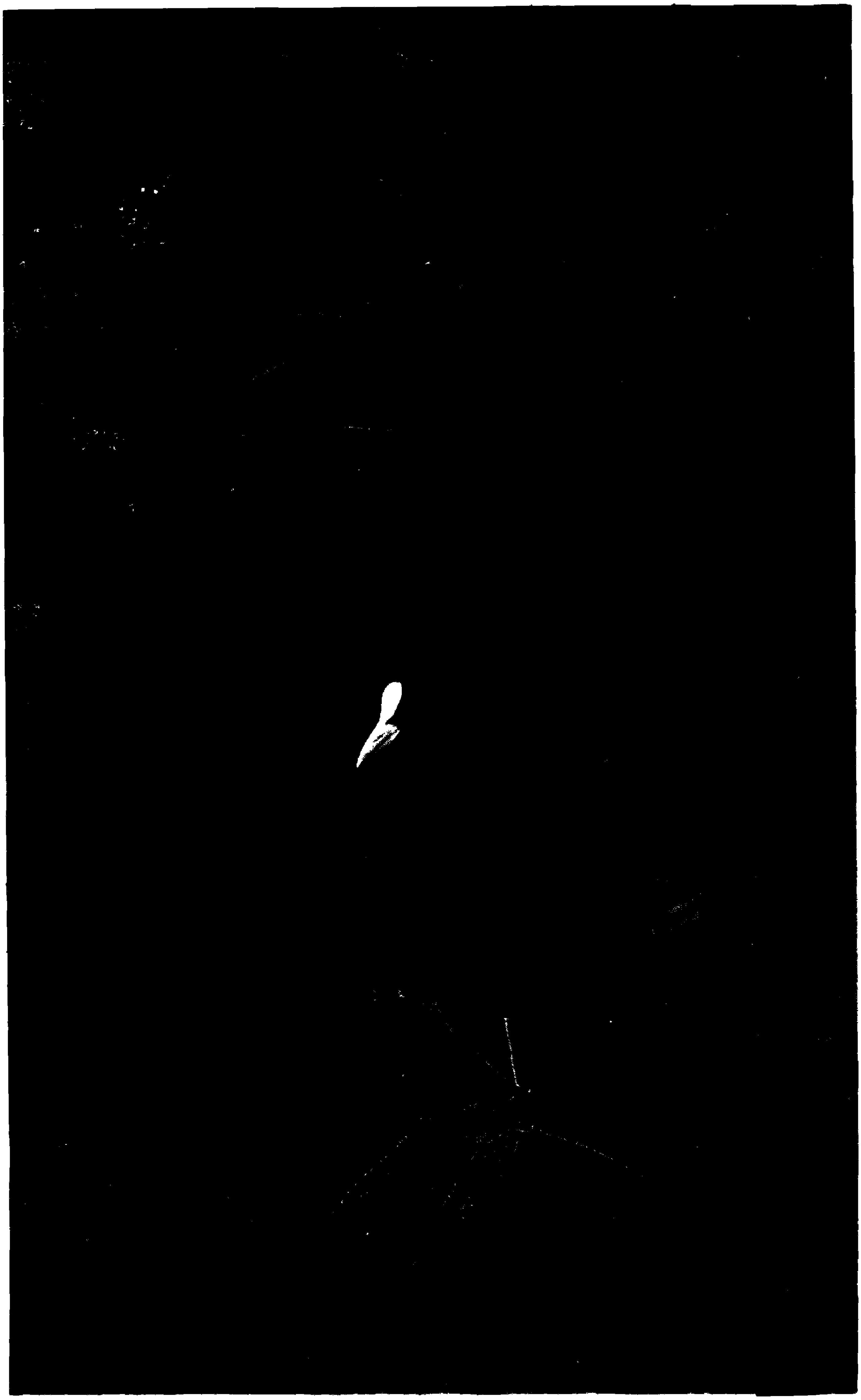
20 ख – लोहितसिरी सारस (323)



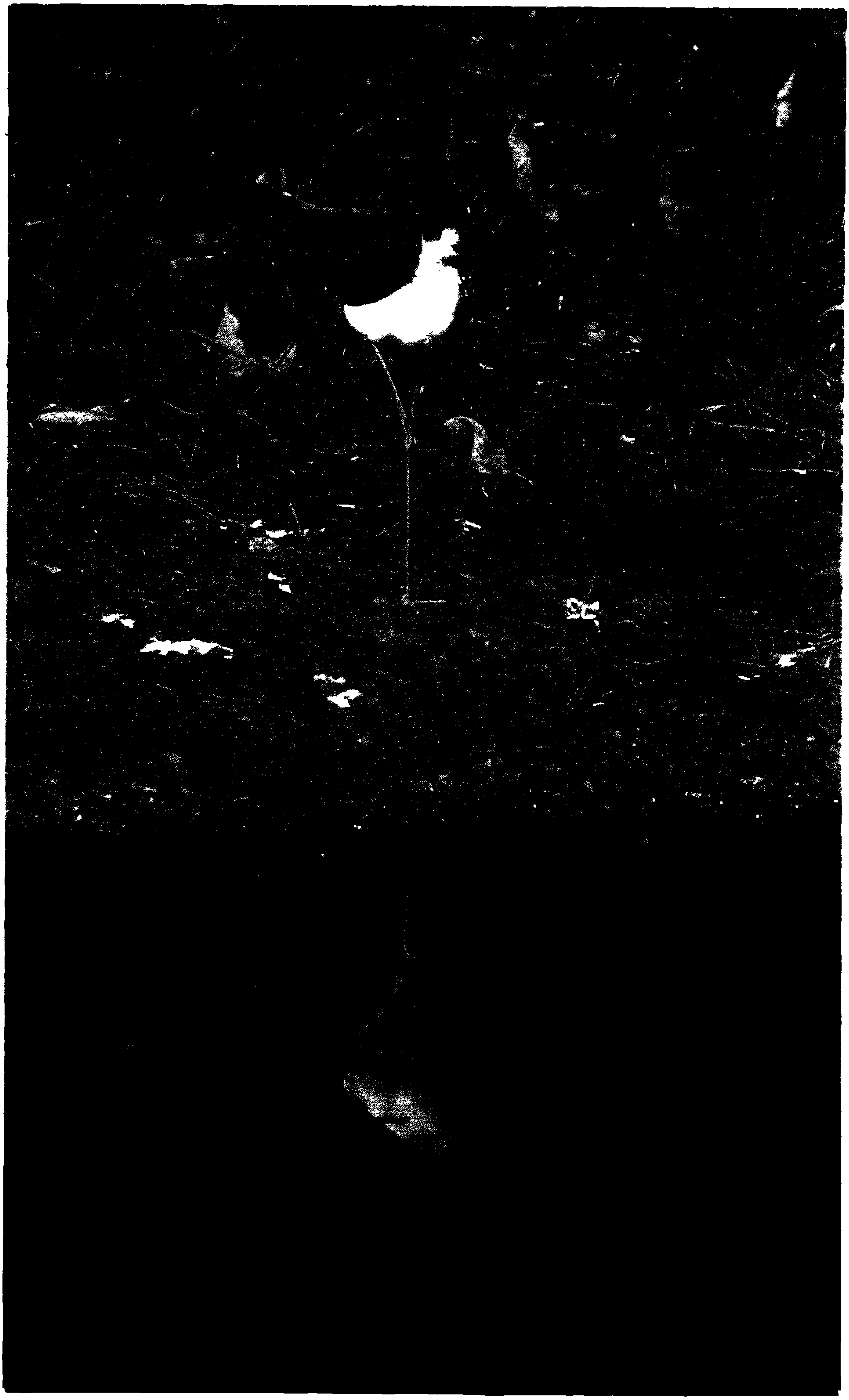
21 सितकिनार जलमुर्गी (347)



22 ललमुंही टिटिहरी (366)



23 तिलक दसरी (350)



24 कल/सित लमगोड़ा (430)

में डुबकी लगाने को तैयार हो जाते हैं। अक्सर मादा आगे चलती है तथा नर पीछे शावकों को समेटता चलता है। अपने परिवार के अन्य सदस्यों की तरह, किंतु उनसे थोड़ी कम शर्मीली कल/सित दवाक को यदि छेड़ा न जाए तब यह बाग बगीचों में भी पालतू पक्षी के समान घूमती रहती है।

यद्यपि इसकी उड़ान अपने जलकुक्कुट कुल के सदस्यों की तरह, पैर लटकते हुए, कमजोर-सी होती है तथापि घनी झाड़ियों, बांस के झुरमुटों आदि के बीच बड़ी कुशलता से चढ़ती, उतरती, भागती है। यह सारे भारतीय उपमहाद्वीप को आबाद करती है और साथ ही दक्षिण-पूर्वी एशिया को भी।

सितकिनार (श्याव) जलमुर्गी (Indian) Moorhen

347. Gallinula chloropus indica 347 क. *G. C. orientalis (मलायी)*

कद : कबूतर ± 32 सेमी.; आवासी तथा प्रवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : *जलमुर्गी,* बॅडॅर; **गुजराती :** जल कुक्कुडि; **मराठी :** पनकोम्डि; **कश्मीरी :** टेच; **बंग्ला :** *जलमुर्गी,* दकाब पैरा; **तेलुगु :** जुम्बु कोडि; **मणिपुरी :** पाट ऊरैन, पाट ऊरैल; **तमिल :** तन्नीर कौझी, कानन कोलि; **मलयालम :** पट्टाकोझी; **संस्कृत :** कृष्णा जलकुक्कुटी

पहचान : हरिताभ पीली चोंच के ऊपरी आधार से माथे तक लाल तिलक; नितंब पर दो सफेद अंडाकार गोलक, पंखकिनार सफेद; हरिताभ पीली टांगें, पादांगुल लंबे; ऊपर *श्याव* नीचे सलेटी, किंतु पेट का रंग हल्का। **नर-मादा** एक समान। इसकी मलायी बहन कभी कभार अंदमान द्वीपों में प्रवास करती है।

समस्त भारत की आवासी जाति, उत्तर-पश्चिमी पाकिस्तान तथा कश्मीर से प्रवासी जाति मिलकर हमारे कमल, कुमुदिनी, नरकुलों तथा अन्य जल वनस्पतियों से सुशोभित झीलों, तालाबों तथा दलदलों को जीवंत बनाती हैं।

सामान्यतया जोड़ों या छोटे समूहों में मिलती हैं, किंतु जब शीतकालीन प्रवासी बहनें आती हैं तब पचास पचास तक के झुंडों की शोभा निराली होती है। अपने पैरों से पानी में अपनी नाव को खेती हुई बड़े मजे से चलती हैं, अपना सिर मटकाते हुए तथा पूंछ को ऊपर फटकारते हुए (तब दोनों सफेद नितंब स्पष्ट दिखते हैं)। सुरक्षा के लिए नरकुल क्यारियों के पास ही रहती है। खतरा आने पर फौरन पैडल मारकर (कभी कभार उड़कर) नरकुलों में छिप जाती है और मौका पड़ने पर लंबा गोता भी लगाती है; जमीन पर भी यह अच्छी तरह भाग सकती है। जब यह भागती है तब इसकी पूंछ ऊपर उठी रहती है तथा सित नितंब स्पष्ट दिखते हैं। सुरक्षा के

लिए खतरे से भागते समय, इसका पूंछ उठाना तथा सित नितंबों का स्पष्ट दिखना छोटी मोटी खोज का विषय तो बनता है। सुरक्षा के लिए भागते समय तो उसे ऐसा भागना चाहिए कि पीछा करने वाले को बिलकुल न दिखाई दे। चूंकि ये छोटे समूहों में रहती हैं, इसलिए शायद, अपनी पूंछ ऊपर कर अपने साथियों को चेतावनी देती हुई उन्हें अपने साथ रखने का प्रयास करती हैं। ये वैसे तो प्रवास के लिए हजारों मील उड़कर आती हैं किंतु छोटी और तेज उड़ानें पसंद नहीं करतीं।

ये वर्षाकाल में **प्रजनन** करते हैं तथा घने नरकुल में चोई रख कर पानी से कुछ सेमी. ऊंचा घोंसला बनाते हैं। ये जंगली घास को भी मोड़कर घोंसला बनाते हैं। मादा एक खेप में 5-12 अंडे देती है और कभी कभी एक ऋतु में दो खेप भी। अंडे की औसत माप 41:30 मिमी. होती है। अंडों के पीले से रंग पर पिंगल छींटे होते हैं। यह **सर्वभक्षी** हैं—जल वनस्पति के बीज, अंकुर, फल तथा मृदुकवची जंतु, कीड़े तथा इल्लियां, छोटे मेंढक, मछली आदि सभी इनके आहार हैं। इनके पास विभिन्न स्थितियों के लिए विभिन्न **बोल** हैं। चेतावनी के बोल 'क्लाक क्लाक' शावक तथा अंडे स्थित चूजे भी समझ लेते हैं और जिन्हें सुनकर वह शांत हो जाते हैं। सामन्यतया ये चुप रहते हैं, किंतु **प्रजननकाल** में, सुबह तथा शाम हल्ला गुल्ला करते हैं—बुलंद, स्पष्ट, एकाएक निकलने वाली आवाजें—'किर्रिक-रैक-रैक'। इनके बोलों में कुछ मृदुल भी है। 'पांगर ग्रीव अपूंछी' के समान, किंतु थोड़े निचले स्वरों में, हंसने के-से बोल भी निकालते हैं। शावकों पर खतरा आने पर, उन पर से ध्यान हटाने के लिए, यह थोड़ी दूर जाकर पानी पर अपने पंख फटफटाते हैं। **नर-मादा** दोनों गृहस्थी के सारे काम मिलकर करते हैं।

तिलक दसरी Coot

350. Fulica atra a.

कद : घरेलू कौआ, 42 सेमी.; प्रवासी+आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : *तिलक, दसरी,* दसरनी, आरी, खुस्कुल, केसरार, सेरार, टिकरी' **बंग्ला :** कर्णडाब, जल कुक्कुट, बर्रा गोडर (पूर्णिया); **तेलुगु :** *दसरी,* बोल्लि कोडि; **मराठी :** काम, पूनार, पाणकोंबड़ी; **गुजराती :** आड, *दसड़ि;* **कश्मीरी :** कावपुट, कोलुर, कालरू; **कच्छ :** कोकड़ि; **मणिपुरी :** पॅरम, ङगानु पॅरम; **सिंधी :** आरि; **संस्कृत :** कारंडव, शकटाविल, जालपाद, सहस्त्रपाद, सहचारी, सुमुख, संघातचारी प्लव, पेटक, काकवस्त्र।

पहचान : तिलक के समान माथें पर कड़ा सफेद चपटा अंडाकार-सा कवच, हाथी-

दांत-सी पीली चोंच, पूंछ बहुत छोटी और हजारों के झुंड में रहने वाला मोटा-सा सलेटी काला आवासी तथा प्रवासी जल पक्षी जो **जल कुक्कुट** कुल का सदस्य है, न कि **हंसक कुल** का क्योंकि इसके पादांगुलों में पालि (lobe) होती है झिल्ली नहीं। **नर-मादा** एक समान।

शीत तथा उष्ण रेगिस्तानी हिस्सों को छोड़कर, यूरेशिया के 60° अक्षांश के समस्त दक्षिण में मिलता है। विशेषकर हिमालय तथा कश्मीर में 2,500 मीटर की ऊंचाई तक तथा भारत में अन्य स्थानों में भी प्रजनन करता है। जलवनस्पतियों, विशेषकर नरकुलों, शैवाल, आदि से भरी पूरी झीलें इसे पसंद हैं। चूंकि ये हजारों के झुंड में रहते हैं इसीलिए इसका नाम कारंडव है। कारंडव का अर्थ होता है मधुमक्खी का छत्ता, इसलिए लक्षण के रूप में कहें तो यह पक्षी मधुमक्खी के समान असंख्य झुंड में रहने वाला है, तथा इसी गुण के कारण इसके अन्य नाम हैं 'शकटाविल', जालपाद तथा सहस्रपाद। अक्सर यह हल्की आवाज करता है। जिस झील पर यह रहते हैं वह इनकी उपस्थिति के कारण कई हिस्सों में काली दिखती है तथा दूसरे, वहां मधुमक्खी के छत्तों-सी आवाज गूंजती रहती है। किंतु जब कोई शिकारी गोली दाग दे या वड़ा श्येन इन पर हमला करे तब यही आवाज समुद्र के शोर के समान हो जाती है। रात में ये अक्सर आवाजें करते हैं जो तुरही के समान तेज होती हैं।

उड़ान भरने के लिए इसे विमान के समान दौड़ लगानी पड़ती है। किंतु उपरितरण तथा चढ़ाई के बाद यह हजारों मील लंबी प्रवास यात्रा मजे से करते हैं, साथ ही काफी अधिक ऊंचाई पर उड़ सकते हैं। किंतु झीलों पर उड़ने के बजाय पानी में पैडल करना या दौड़ लगाना पसंद करते हैं।

अच्छे शिकारी इन मंदचारी का शिकार करना पसंद नहीं करते और बंदूक की आवाज सुनने के बाद भी ये हंसकों की तरह दूर न भागकर, आसपास ही उड़ते रहते हैं, मानो कि इन्हें मालूम है कि इनका शिकार नहीं होगा। आसपास के मछुए अपने सुस्वादु भोजन के लिए इनका शिकार करते हैं। शीतकाल में शिकारी-पक्षी भी इनका शिकार करते हैं। शायद इसीलिए, मादा एक खेप में 5 से 12 तक अंडे देती है। नर-मादा दोनों मिलकर नीड़ निर्माण, सेने तथा चूजों का पालन पोषण तथा रक्षण मुस्तैदी से करते हैं। दसरी झीलों इत्यादि में, विशेषकर शीत ऋतु में, बहुत ही सुलभ पक्षी है, इसीलिए इसके नाम भी बहुत हैं। कारंडव का एक और अर्थ है भूसा अर्थात जो भूसे के समान जल पर फैला हो। 'दसरी' तेलुगु में तिलक को बोलते हैं जो इसके माथे पर सफेद तिलक की ओर संकेत करता है। दसरी दर्शनीय का भी अपभ्रंश हो सकता है क्योंकि यह एक सुंदर पक्षी है। इसका शुभ्र तिलक इतना विशिष्ट है कि हिंदी में इसका एक नाम टिकरी है। तथा संस्कृत में एक नाम 'काकवस्त्र' इसके कौए के समान रंग के लिए दिया गया है।

पुच्छल जलमंजुर Pheasant-tailed Jacana

358. Hydrophasianus chirurgus 359. Metopidius indicus

कद : कबूतर +, 31 सेमी. (बिना पूंछ के); आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : पीहो, पिहूया, पिही, मीवा, ताल मकानी, *जलमंजुर;* **कश्मीरी :** गोइंद काव, गुंड काव, गैर कोव; **बंग्ला, बिहारी :** पिहि, सुरदल, सकदल, मीवा, *जल मंजोर,* जल मयूर, जल कोकड़ा, चित्र बिल्लई; **संथाली :** लोबो डाक; **कछारी :** रानी दिदाओ गोफिता (छोटी गोरी जलरानी); **मणिपुरी :** येम पाराबा; **तमिल :** मीवा, मानल पुरा; **मलयालम :** तामर कोझी; **संस्कृत :** जल कपोत, जलपारावत, जलमयूर, *जलमंजुर,* जल शिखंडिन, जीवज्जीवक, कार्मिजुल।

पहचान : सिर, वक्ष और कंठ सफेद; अनुकपाल तथा कंधर काली किनार लिए सुनहला; बाजू (पंख) सफेद, बाकी चाकलेटी; पंजे मकड़ी की तरह विशाल, पूंछ शरीर से भी लंबी और चंद्राकार; **नर-मादा** एक-सी वेशभूषा किंतु मादा बड़ी। ग्रहण में इनकी पूंछ छोटी हो जाती है। रंग भी भूरा और सफेद काले हार सहित अवश्य बचा रहता है। पूंछ 15-32 सेमी. लंबी।

जल (जीवन) ही जलमंजुर का पूर्ण जीवन है अर्थात **'जीवज्जीवक'** जल पर पूर्ण रूप से आश्रित है, यहां तक कि वह कमल, कुमुदिनी आदि के पत्तों पर चलता भी है। ('लिली ट्रॉटर') । विश्व के पक्षियों में इस वंश के पादांगुल (शरीर की लंबाई की तुलना में) सर्वाधिक लंबे होते हैं। इसका आहार-जलवनस्पति, जड़ें, बीज, जलकीड़े, बैंगची, इल्लियां, डिकपाटी (या सीपीय) तथा अन्य वल्कली जंतु आदि हैं। यह अपना **घोंसला** भी पानी में ही बनाता है जो घास तथा चोई का छोटा-सा तैरता हुआ बेड़ा रहता है और कभी कभी डूबी हुई चोई/वनस्पति से जुड़ा हुआ रहता है।

भारत में जलमंजुर तथा स्थल मोर दोनों का शिकार परंपरा से निषिद्ध है इसीलिए यह गांव के तालाबों में नहाते हुए आदमियों के पास भी निडर होकर अपना आहार ढूंढ़ता दिख जाता है। जब यह खतरा देखता है इसके बोल 'ट्यून, ट्यून' अनुनासिक स्वर में निकलते हैं। **प्रजननकाल** में तेज मधुर स्वर 'मी इ उ' या 'मी ओम्य' जो कि साथी द्वारा प्रतिध्वनित किए जाते हैं (नाम 'पीहो' तथा 'मीवा')।

मादा न केवल देखने में बड़ी होती है, वरन एक ही ऋतु में **बहुपतित्व** करती है। एक खेप में 3-4 अंडे देने के बाद अंडों को सेने और शावकों को पालने का काम उस नर पर छोड़कर, दूसरे नर की खोज में निकल पड़ती है। एक ऋतु में 5, 6, या 7 खेपों तक अंडे देती देखी गई है। नर बड़ी सावधानी और निष्ठापूर्वक सेने और पालने का काम करते हैं; यहां तक कि शावकों को शिकारी (पुरुष या अन्य) से बचाने के लिए 'टूटे पंख' का नाटक भी करता है। मादा के बहुपतित्व

का कारण इसका छिछोरापन नहीं है वरन खतरों के कारण, अंडे से लेकर वयस्क होने तक की संभावना के बहुत कम होने के कारण है। इस तरह यह एक ऋतु में भिन्न घोंसलों में 15-25 अंडे तक दे सकती है।

टिट्टिभगण में जलमंजुर कुल के दो ही वंश भारत में रहते हैं और इन वंशों की भी एक एक ही जाति है। दूसरा Bronzewinged *(Metopidius indicus)* सितभौंह कांस्य (पंख) जलमंजुर पुच्छल जलमंजुर से देखने में एकदम अलग है और उसे देखकर जलमुर्गियों से भ्रम हो सकता है। जहां पुच्छल निर्भय घूमता है, सितभौंह कांस्य बहुत डरकर रहता है क्योंकि इसके वध के लिए पुच्छल के समान हमारी संस्कृति में कोई निषेध नहीं है। सितभौंह कांस्य भी बहुपतित्व में विश्वास करती है।

लालमुंही टिटिहरी Redwatled Lapwing

366. Vanellus indicus i.   368. V.i. atronuchalis (पूर्वांचली)

कद : कबूतर +, 33 सेमी.;   आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : टिटीरी, टीटई, टिंटोरी, *टिटिहरी;* **कश्मीरी :** छोटा टुट, होटाटर्टु; **असमिया :** बलिघोंड़ा, टटाटआ; **कछारी :** दाओ दुयिप; **मणिपुरी :** सालंग काक; **मराठी :** *टिटवी;* **गुजराती :** *टिटोड़ी;* **तेलुगु :** येनपा चिटवा; **तमिल :** अल्कटि; **मलयालम :** चैकन्नि; **सिंधी :** टिटिंचर; **संस्कृत :** टिट्टिभ, कोयष्टि, कोयष्टिक, शिखरी, टिट्टिभक, शयांडक, अंडीरक, अंडुक, उत्पादशयन, सदालूता, कटुक्वाण।

पहचान : टिट्टिभ उपकुल का सर्वसुलभ लमगोड़ी पक्षी; ऊपर कांस्यभूरा; नीचे सफेद; वक्ष तथा सिर काला, (नेत्रवलय) चश्मा, चोंच, तथा कूर्चठाठर शोण; आंख से एक सफेद धारा गरदन की तरफ, पीले पैर ! बहुत चौकस–जरा से खतरे से तेज कर्कश स्वरों में 'टिट् टिट् टी टिट्' की लगातार चेतावनी। **नर-मादा** एक समान।

समस्त भारतीय महाद्वीप (ब्रह्मपुत्र के पश्चिम में) को (पहाड़ों पर लगभग 2,000 मीटर की ऊंचाई तक) **आबाद** करने वाला यह पक्षी ऊंचाइयों पर प्रवासी हो जाता है।

यह पक्षी अपने **घोंसले** खेत में, नदी किनारे, जंगली जमीन पर (पानी से अधिक दूर नहीं), शहरों में सभी जगह बनाता है। जमीन पर कपनुमा गड्ढे में बटैयों को या मिट्टी के धूप से पके टुकड़ों या बकरे की मेंगनियों को बिछाकर अपना घोंसला बना लेता है। अंडों को कोई भी खतरा आते देखकर (शिकारी पक्षियों और कौवे के अलावा) घोंसले से हटकर चीखने लगते हैं। अंडे सेने और लालन पालन का काम नर-मादा दोनों करते हैं। तेज गर्मी होने पर, अंडों को भीषण गर्मी से बचाने के लिए,

कुररी के समान, ये अपने उदर को गीला कर अंडों पर बैठते हैं। नर-मादा का एक-दूसरे को खतरे की चेतावनी का स्वर मात्र 'टिट टिट' होता है।

प्रजननकाल मार्च-सितंबर है। अंडे देने के बाद भी नर-मादा का प्रणय व्यवहार चलता रहता है जो कि पक्षी जगत में दुर्लभ है। नर-मादा सारे काम मिलकर करते हैं। अंडे या शावक यदि प्रजननकाल के भीतर, दुर्घटनाग्रस्त हो जाएं, तब मादा अंडों का दूसरा खेप देती है। घोंसले की असुरक्षा को देखते हुए, इनके अंडे और शावकों का समरूप बहुत ही प्रभावी होता है और सभी शावक माता या पिता का छोटा समरूप-सा चेतावनी स्वर (क्लक) सुनते ही तुरंत निकटतम उपलब्ध सुरक्षित स्थान में दुबक जाते हैं तथा 'सब ठीक' का स्वर (ऊंचे स्वर में क्लाक क्लाक क्लाक) सुनते ही सब एक साथ काम फिर शुरू कर देते हैं।

इसका एक नाम 'शयांडक' भी है (जो जमीन पर अंडे देने के बाद रोती रहती है)। इसका दूसरा नाम 'उत्पादशयन', कवि की कल्पना का द्योतक है। कवि मानता है कि टिटिहरी अपने पैर ऊपर की ओर करके सोती है, और वह इस भय से कि यदि आकाश ऊपर से गिर पड़े तो वह उसे अपने पैरों से रोककर अपना तथा शावकों का बचाव कर लेगी। इस रूपक का इशारा उनकी तरफ है जो एक तो काल्पनिक भयों से डरते हैं और साथ ही अपने आप को बहुत बहादुर समझते हैं।

शिकारी इस पक्षी को पसंद नहीं करते हैं क्योंकि उन्हें दूर से देखते ही यह सारे जंगल को चेतावनी दे देती है। इनकी एक और विशेषता है—वैसे तो यह सुबह शाम अपना भोजन करते हैं, किंतु शुक्ल पक्ष में, रात भर इनका भोज चलता रहता है। इनके भोज के 'मेन्यु' में चींटियां, भृंग, इल्लियां, कीड़े, मकोड़े, मृदुकवची, वनस्पतियां आदि हैं।

(कथ/सित) चंद्रकंधी सिकतार Common Sandpiper

401. Tringa hypoleucos

कद : मैना, 21 सेमी.; प्रवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : तुतवारी, चुपका, कुणाल; **बंग्ला :** गोन्ना; **मराठी :** तुतवार; **कश्मीरी :** टोंट कोन, कुला काविन, कोल बतीज; **गुजराती :** सामान्य तुतौरी; **तेलुगु :** पोल्टे उलंका; **तमिल :** कोट्टन; **मलयालम :** नीरकाट; **संस्कृत :** जलरंक, नीररंक।

पहचान : कंधे पर सफेद *चंद्राकार* पट्टी; ऊपर—हल्की जैतूनी आभा लिए *कत्थई*; नीचे—*सफेद*; कंठ तथा वक्ष पर स्पष्ट भूरी धारियों सहित श्याव; पानी के थोड़े ऊपर

उड़ते हुए सिकतार के पंखों पर एक सफेद पट्टी स्पष्ट नजर आती है। इसकी उड़ान बीच बीच में विसर्पी होती है तथा 'टी टी टी' तार स्वर में गान भी करता है। **ग्रहणकाल** में इसकी स्पष्ट सफेद भौंह मंद पड़ जाती है, ऊपर के भूरे रंग पर जैतूनी छाया आ जाती है। **नर-मादा** एक समान।

ये सिकतार **मध्य यूरेशिया** में गर्मी की सुहावनी ऋतु में प्रजनन करते हैं; कश्मीर, लद्दाख तथा गढ़वाल (लगभग 3,000 मी. की ऊंचाई तक) में भी **प्रजनन** करते हैं। इसे जलाशयों के किनारों पर आती लहरों से खेलते और भोजन प्राप्त करते हुए देखा जा सकता है। ये एक, दो या तीन की संख्या में ही नजर आते हैं। अपने क्षेत्र की रक्षा मुस्तैदी से करते हैं किंतु समुद्र तटों पर ज्वार द्वारा लाए भोजन की तलाश में चालीस पचास के झुंड में भी देखे जा सकते हैं। लहरों द्वारा लाए गए या तट पर पाए गए मृदुकवची (मोलस्क), परुप कवची (क्रस्टेशिआ) तथा कीड़े इत्यादि इसके मुख्य **आहार** हैं। जैसे लहरें तट पर वापिस जाती हैं यह उनके साथ आगे जाता है, तथा जब लहरें तट पर आगे बढ़ती हैं, तब यह भाग कर पीछे आता है क्योंकि यह तट की गीली रेत (सिकता) पर नाचता है तथा उस पर पाए गए आहार को भोजन बनाना पसंद करता है; कभी कभी अपनी चोंच कीचड़ या उथले पानी में डालकर आहार भी खोजकर निकालता है इसीलिए इसके वंश का नाम 'सिकतार'—सिकता से संबंधित—बनाया गया है; इसके रंग भी सिकता के रंग से मिलते जुलते हैं। यह पूंछ तथा सिर भी ऊपर नीचे मटकाता है। शिकारियों द्वारा घायल होने पर फ़ौरन ही यह पानी में गोता लगाकर सतह से 50-60 सेमी. नीचे अपने पंखों की सहायता से तैरकर अपने को बचाने की कोशिश करता है।

यह भी 'प्रादेशिक' पक्षी है; शुरू में अपना प्रदेश स्थापित करने के लिए, दो प्रतिद्वंद्वी उस क्षेत्र में समानांतर दौड़ते हैं, एक-दूसरे पर हमले का नाटक करते हैं। (साधारणतया इसके **बोल**) (तार) (पतले) स्वरों में टी-टी-टी, होते हैं। **प्रणयगान** मधुर बांसुरी से स्वरों का 'व्ही-इट-व्ही-इट या 'किट्टी व्ही-इट', होता है जिसे यह आराम से बैठकर कई बार दोहराता है जो कि 'लौटन' से थोड़े पहले या प्रवास आगमन के तुरंत बाद होता है। यह अपना घोंसला झरने या साफ नाले के किनारे के पत्थरों के बीच या बहती धार के बीच के द्वीपों की पथरीली जमीन पर, छोटे से गड्ढे में बनाते हैं, जिस पर ये पत्तियां बिछा देते हैं। मादा एक खेप में 3 या 4 अंडे देती है, अंडों का रंग पिंग होता है जिन पर कथाली (कत्थई धारियां) होती हैं।

इस 'सिकतार' का *वैज्ञानिक* परिचय : *गण*-टिट्टिभ *(Charadriiformes)*; *कुल*-शुक्तिनी *(Haematopodidae)*; *उपकुल*-आरामुखी *(Scolopacinae)*; *वंश*-सिकतार *(Tringa)* तथा *जाति* : (चंद्रकंधी) कथ/सित *(hypoleucos)*।

कल/सित लमगोड़ा (Indian) Blackwinged Stilt

430. Himantopus h. h. 431. H.h. ceylonensis (श्री लंकाई)

कद : तीतर +, तथा लंबे पैर

25 सेमी.; पैर 17.8 सेमी.; कुल = 38 सेमी.; आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : *लामगोड़ी,* लमटिगा, लाल पैरी, गजपांव, टिंगुड़, सरगैत या सरगाइन (**बिहार**); **बंग्ला :** *लमगोड़ा,* लालगोन, लाल ठेंगी; **तमिल :** पाविल्लिकाल उल्लान; **सिंधी :** गजलिंग; **संस्कृत :** कोयष्टि।

पहचान : चमकदार काली पीठ तथा पंखवाला सफेद जलपक्षी; सींक के समान लंबी लाल टांगें (कोयष्टि)। **नर** के सिर पर कलौंछ; पूंछ हल्की पीताभ श्याव। **मादा** के पंखों तथा पीठ का रंग कत्थई भूरा तथा सिर और गर्दन की सफेदी पर श्याव धब्बे। उड़ान के समय निचले काले पंख, फड़फड़दार-कमजोर उड़ान तथा पतंग के धागे की तरह लटकती लंबी टांगें इसकी विशिष्ट पहचान बनाती हैं।

पश्चिमी किनारे को छोड़कर लगभग सारे **भारत** में (1,500 मीटर की ऊंचाई तक) जलीय स्थानों पर बसेरा करता है। यह पक्षी पानी के अनुसार स्थानीय प्रवास भी करता है जैसे कि पतझड़ तथा शीतऋतु भरतपुर में बिताने के बाद बसंत उत्तर पश्चिम पाकिस्तान तथा उत्तरी अफगानिस्तान में मनाता पाया जाता है। अधिकतर अपनी ही जाति के झुंडों में मीठे पानी तथा खारे पानी की झीलों पर 'किप किप' गाता हुआ देखा जा सकता है। यह पानी में घुसकर घोंघे, केंचुए जलकीट तथा दलदली वनस्पति के बीज इत्यादि खोजकर खाता है। अक्सर खाते समय इसका पूरा सिर पानी के अंदर रहता है। जब ये उथले पानी में चलता है तब जैसे बहुत सावधानी से अपना पूरा पैर पानी के ऊपर उठाकर आगे रखता है। शरीर के अनुपात में इसकी टांगें पक्षी-संसार में सबसे अधिक लंबी हैं। जो इसकी, अपेक्षाकृत अधिक गहरे दलदल में, आहार खोजने में मदद करती है। कृमि, जलीय कीड़े, मृदुकवची, जल वनस्पति तथा मुस्ता घास के बीज इत्यादि इसके मुख्य **आहार** हैं।

इसका **प्रजननकाल** मुख्यतया अप्रैल-अगस्त है। झील के सूखे किनारे पर या नमक के खेत के ऊंचे हिस्से में ये अपना घोंसला बनाते हैं। घोंसला कप के बराबर गड्ढे में, रोड़ी बिछाकर उसके ऊपर सूखे घास की तह जमाकर बनाया जाता है। कभी कभी 40-50 घोंसलों की कालोनी भी देखने में आती है। नर-मादा मिलकर अंडे सेते हैं। खतरा आने पर ये पक्षी मिलकर बड़ा शोर मचाते हैं तथा ऊपर उड़कर शोर से आक्रामक को धमकाते हैं। घायल होने का नाटक भी करते हैं। मादा एक खेप में 3-5 अंडे देती है। गर्मियों में अपनी छाती गीलीकर अंडों को ठंडा रखने के

लिए उन पर बैठते हैं। अपने घोंसलों की तरफ जाते समय ये सीधे न जाकर, आड़े-तिरछे पथ से जाते हैं। अपनी लंबी टांगों के कारण अंडों पर बैठते समय, ऐसा लगता है कि, मानो उन पर गिर पड़े हों। खतरा होने पर ये अन्य पक्षियों की तरह थोड़ी देर पैरों पर न भाग, सीधा ऊपर की उड़ान भरते हैं।

यह कषिका कुल का पक्षी है, और कुल के सदस्यों के अनुकूल इसकी चोंच हल्की-सी ऊपर की ओर मुड़ी रहती है। कल/सित लमगोड़े भारत के अतिरिक्त, पाकिस्तान, हिमालय के उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र, कास्पियन झील, ब्लैक सी, भूमध्यसागरीय क्षेत्र, (सहारा के बाहर) मध्य तथा पूर्वी अफ्रीका तथा दक्षिण-पूर्वी एशिया में भी प्रजनन करते हैं।

चुटीला कुसिया Avocet

432. Recurvirostra avosetta

कद : खरबूज कंटी तीतर +, + चोंच, 46 सेमी.; प्रवासी तथा आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : *कुसिया* चाहा; **तमिल** : कुनि अरिचिचान; **प्राकृत** : हलमुखी; **संस्कृत** : काशिकानी, कशीका, कषिका कुषीतक।

पहचान : दूधिया सफेद पक्षी जिसके सिर पर लंबी काली चोटी-सी दिखती है और फिर पीठ पर चार मोटी लटों में बदल जाती है। ऊपर की तरफ वक्र होती (कषिका कुल), थोड़ी-सी लचीली, काली पतली चोंच तथा नीले पैरों वाला यह पक्षी दलदल तथा जलाशयों की शोभा बढ़ाता है। **नर-मादा** एक समान।

प्रमुखतया हिमालय के उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र से (55° उत्तरी अक्षांश के दक्षिण), ब्लैक सी तक ग्रीष्म ऋतु में प्रजनन करने वाला यह पक्षी शीतकालीन **प्रवास** के लिए उत्तर-पश्चिम भारत, पंजाब, दिल्ली, उत्तर प्रदेश, बिहार, उड़ीसा, असम, मणिपुर में आता है। शेष भारत में (केरल तथा अंडमान निकोबार को छोड़कर) अलग अलग भी कभी थोड़ी संख्या में दिख जाते हैं। इसके प्रजनन क्षेत्र का वितरण अजीब है, क्योंकि यह यूरोप के अन्य क्षेत्रों की तुलना में मात्र स्पेन, डेनमार्क, आस्ट्रिया में ही प्रजनन करता है। यह भी एक शोध का विषय बन सकता है।

यह अधिकतर जोड़ों या छोटे समूहों में रहता है किंतु कभी कभी सौ के झुंडों में भी मिलता है। दलदलों के उथले पानी में यह अपनी हलमुखी (कुसिया) चोंच से दलदली सतह को हल्के-से मथ देता है। इससे सूक्ष्म जीवाणु भी दलदल से पानी में आ जाते हैं जिनको यह **आहार** बनाता है। दलदली मिट्टी में से यह कृमि निकालकर भी खाता है। मृदुकवची, वल्कली जलजीव तथा जलीय कीड़े भी इसके

आहार हैं। यह गहरे पानी में भी अपनी जीवन नैया झिल्लीदार पंजों से मजे से खेता है, और हंसकों (बत्तख) की तरह शीर्षासन मुद्रा में, अपनी पिछाड़ी पानी के ऊपर रखता हुआ, अगाड़ी को पानी में डुबोकर अपनी चोंच से आहार खोजता रहता है। हल के फल के समान वक्र चोंच के कारण इसका नाम हलमुखी, कशिकानी, कशीका, कषिका तथा *कुसिया* हैं। कुषीतक का अर्थ होता है खींचकर निकालने वाला जो इसके आहार निकालने की शैली की ओर भी संकेत करता है।

1945 में भारत में पहली बार इनकी (लगभग एक हजार पक्षियों की) कालोनी मय घोंसलों के, सालिम अली ने कच्छ के दलदल में देखी थी। यह कालोनियां शेष भारत से इतनी दूर हैं (शायद इसीलिए बची भी हैं) कि इनका समुचित अध्ययन अभी तक नहीं हो पाया है। यह भी निश्चित नहीं मालूम कि ये लमगोड़े नियमित रूप से इन्हें आबाद करते हैं, तथा इसके आसपास और भी इसी तरह की कालोनियां हैं या नहीं। इनके प्रवास की जानकारी भी बहुत कम है। इनके **घोंसले** जमीन पर कपनुमा गड्ढे में कंकड़ों के बिस्तर होते हैं। मादा एक खेप में लगभग चार अंडे देती है। अंडों का **परिमाण** 50×35 मि. मी. । नर मादा दोनों ही अंडे सेने का काम करते हैं जो लगभग 23 दिन चलता है। खतरा आने पर 'टूटे पंख' इनकी एक सुरक्षा चाल रहती है। खतरे की चेतावनी देने के लिए 'क्लीक, क्लीक' **बोल** लगातार निकालते हैं। अक्सर उड़ते समय ऊंचे स्वर में स्पष्ट और तेज बोल 'क्लू इट' देते हैं।

यह आकर्षक पक्षी झीलों, दलदलों के अलावा सकरी खाड़ियों (निवेशिकाओं) तथा सागर तटों की भी शोभा बढ़ाता है। 'चुटीला कुसिया', 'कल/सित लमगोड़ा' तथा 'श्याव/सित कलकंठा' *(Ibidorhyncha struthersaii)* ये तीन जातियां **'कषिका कुल'** *(Recurvirostridae)* का भारत में प्रतिनिधित्व करती हैं।

कथसिरी गंगचील Brownheaded Gull

454. Larus brunnicephalus

कद : जंगली कौआ +, 46 सेमी.; प्रवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : ढोमरा, ढामरा; *गंगाचिल्ली;* **बंग्ला :** *गांगचिल,* ढॉमरा; **मराठी :** कुख; **मलयालम :** कडलपट्ट; **तमिल :** कलकपरुदु, कडल काकई; **मलयालम :** कडलकाक; **संस्कृत :** कुरर, उत्क्रोश-कुरर, *गंगाचिल्ली,* देवट्टी, वीचीकाक, समुद्रकाक।

पहचान : मझोली गंगचील, *कत्थई* सिर; चोंच, टांग और पंजे तरबूजी लाल; ऊपर भस्मी, नीचे सफेद, प्राथमिक पंख काले जिनमें सफेद टुकड़े (इसकी सफेद द्युति तथा

अधिक लंबाई इसे कलसिरी से अलग करने वाली पहचान है); ग्रहण में मुंड भस्मी सफेद तथा कान के पीछे काला चंद्र किंतु मार्च में 'लौटन' के पूर्व इसका सिर कत्थई हो जाता है। **नर-मादा** एक समान। सभी गंगचीलों के पंख थोड़े चौड़े होते हैं, पूंछ लगभग वर्गाकार तथा पैरों में झिल्ली होती है; चोंच लंबी, सशक्त तथा नुकीली होती है, ऊपरी चोंच अंत में थोड़ी-सी अंकुड़ित होती है।

उत्तरी लद्दाख तथा पश्चिमी हिमालय के झीलों भरे ऊंचे क्षेत्र में ग्रीष्मकाल में **प्रजनन** करती है। मादा एक खेप में 2-3 अंडे देती है। नर-मादा सेने का काम मिलकर करते हैं। अगस्त-सितंबर में शीतकालीन प्रवास के लिए पूर्वांचल, पूर्वी समुद्रीतटों तथा राजस्थान की सांभर झील में आते हैं। मध्य एशिया तथा साइबेरिया में प्रजनन करने वाले सभी पक्षी लगभग हमेशा शीतकालीन प्रवास के लिए दक्षिणी देशांशों में ही जाते हैं किंतु 'कथसिरी' शीतकालीन प्रवास के लिए प्रजनन क्षेत्रों के उत्तरी प्रदेशों में भी जाती है। दक्षिण-पूर्व में यह अक्सर श्याम की खाड़ी तक जाती है किंतु अंडमान निकोबार द्वीपों में नहीं जाती।

संस्कृत 'देवट्टी', के दो अर्थ होते हैं, एक, भव्य उड़ान वाली तथा दूसरा देवलोक (हिमालय के उत्तर) से आने वाली। 'कुरर' का अर्थ हल्ला करने वाला होता है। इसके **बोल** तेज तथा लंबे 'क्री ई ई अक'।

यह अन्य गंगचीलों की तरह यूथ प्रिय हैं तथा कलसिरी गंगचील, दुशाखी कत्थई चील, ब्राह्मणी चील के साथ बंदरगाहों पर सफाई करते देखी जा सकती है। जहाजों में से फेंके गए रसोई-कचरों पर इनके झुंड काम करते हैं। बाहर जाते तथा प्रवेश करते जहाजों व नावों के आगे पीछे होती रहती है।

अपमार्जन का जो कार्य जमीन पर चील कौए आदि करते हैं वही समुद्रतटों, नदियों, झीलों आदि में गंगचील (समुद्रकाक या वीचिकाक) करती हैं। कुररी (Terns) या कुररिका (Ternletto) तो मछली का शिकार करके ही खाती है। हां शालीन कुररिकाओं से उनका शिकार हवा में छुड़ाने का प्रयत्न ये लुटेरी गंगचील अक्सर करती हैं। गंगचील तो मछली, झींगा मछली (बिहार में जाल मायछ), पानी में तैरते कीड़े, मृत मछलियां, या अन्य जलजंतुओं को, तो खाती ही हैं, जमीन पर पाए जाने वाले कीटों, केंचुओं, सूंडियों, कम्बुओं, कुछ पौधों के अंकुर आदि भी खाती हैं। तटों के पास के खेतों में हल चलाते समय गोपिंगला की तरह कीड़े भी खाती हैं। इन्हें उड़नशील दीमकों का मुस्तैदी से शिकार करते भी देखा गया है। ऊटा (सं. रा. अमेरिका) के 'साल्टलेक सिटी' के नागरिकों ने वहां की गंगचीलों के सम्मान में उनकी कांस्य प्रतिमाओं के स्मारक बनवाए हैं। 1848-50 में काले झींगुरों ने लाखों की संख्या में वहां की उपज पर हमला किया था किंतु कैलिफोर्निया की गंगचीलों ने मुस्तैदी से उन्हें खा डाला था और इस तरह उस प्रदेश में अकाल को रोक दिया था।

कलसिरी गंगचील **Blackheaded Gull**

455. Larus ridibundus r.

कद : घरेलू कौआ +, 43 सेमी.; प्रवासी

स्थानीय नाम : गंगचीलों के नाम 'कथसिरी' में दिये अनुसार ही हैं।

पहचान : ऊपर भस्मी, नीचे सफेद, मझोली गंगचील। सिर प्रगाढ़ कत्थई-काला सा। अपेक्षाकृत छोटी होने के साथ 'कथसिरी' के पंखों के समान इसमें धवलद्युति न होकर, इसके पंखों की अग्रिम किनार सफेद होती है। **नर-मादा** एक समान। ग्रहणकाल में इसका सिर भी 'कथसिरी गंगचील' की तरह भस्मी सफेद हो जाता है। तब इन दोनों की पहचान पंखों के रंग के आधार तथा कद के आधार पर होती है। इन दोनों का रहन-सहन, आदतें, व्यवहार, प्रजनन क्रियाएं लगभग एक सी हैं।

हिमालय के उत्तर में एक छोटे से क्षेत्र में प्रजनन करने वाली कलसिरी, 'कथसिरी' की अपेक्षा यूरेशिया के लगभग समस्त 45°-65° अक्षांशों के क्षेत्र में प्रजनन करती है। प्रवास यात्रा के दौरान यह उत्तर भारत के लगभग सभी स्थानों पर पड़ाव डाले देखी जा सकती है। हुगली नदी के मुख से लेकर कलकत्ते तक यह बहुतायत में मिलती है जब कि 'कथसिरी' नहीं मिलती।

गंगचील तैरना भी पसंद करती हैं, इन्हें लहरों पर खेलते हुए देखा जा सकता है, इसलिए इनका एक नाम वीचिकाक है। गंगचीलें उड़ने में सशक्त और कुशल होती हैं। समुद्री तटों पर अक्सर लोग मांस आदि के टुकड़े आसमान में इनकी तरफ फेंकते हैं, जिन्हें ये आसानी से अपने पंजों में पकड़ लेती हैं। कौओं की तरह गंगचील भी छोटे पक्षियों के अंडे तथा चूजों को चुराने की कोशिश करती है। गंगचील शोर मचाने वाले जलपक्षी हैं, इनके चेतावनी के बोल सशक्त 'क्री आ' या 'क्री आक' तथा जोर का क्रंदन-सा बोल 'का येक का येक' होते हैं। ये प्रजनन क्षेत्र में अधिक शोर मचाते हैं। (नाम : ढामरा, डमरू से संबंधित)

प्रजननकाल मुख्यतया जून-जुलाई होता है। ये अपने घोंसले दलदलों, झील तटों या तैरते जलवनस्पति के छोटे द्वीपों पर, पानी की सतह के ऊपर उठाए गए घास के टीलों पर, कालोनी के रूप में बनाते हैं। मैथुन के लिए नर जब मादा को आमंत्रित करता है तब आकाश में अपने हवाई करतब दिखलाता हुआ मानो नृत्य करता है। स्वीकार होने पर वह जोड़ा, उस ऋतु के लिए बन जाता है। (कुररियों, गंगचीलों में नर या मादा कोई भी मैथुन के लिए आमंत्रित कर सकता है।) अधिकांश पक्षियों की अपेक्षा, गंगचील तथा कुररी, अंडों से चूजे निकलने के बाद तक मैथुन करते रहते हैं। मादा एक खेप में 2 या 3 अंडे देती है। सेने का काम नर-मादा दोनों करते हैं।

पश्चिमी देशों में विमान की जो पक्षी-दुर्घटनाएं होती हैं उनमें सर्वाधिक जाति 'कलसिरी गंगचीलों' की ही होती है। बहुत से विमानपत्तन सागर तटों पर होते हैं। पाश्चात्य संसार में उन्होंने जमीन पर अपेक्षाकृत अधिक सफाई कर ली है, इसलिए गिद्ध यह खतरा पैदा नहीं करते। किंतु सागरतट वहां अपेक्षाकृत गंदे हैं, इसलिए गंगचीलें विमान दुर्घटनाओं का कारण (निर्दोष होते हुए भी) बन जाती हैं।

'कलसिरी गंगचील' अपना विस्तार करने में 'कथसिरी गंगचील' की तुलना में बहुत अधिक सफल हुई है। यह एक खोज का विषय बनता है। इन लोगों का आहार, नीड़न, प्रजनन तथा प्रतिखेप अंडों के देने की दर, सामान्य आदतें, बोल तथा आवाजें (जोरों से चिल्लाना), इनके शावक सभी कुछ एक सा है। एक संभावना मुझे नजर आती है—यूरोपीय समुद्रतटों पर अधिक गतिविधियां तथा फलस्वरूप भारतीय तटों की अपेक्षा अधिक 'उच्छिष्ट-कचड़ा' उपलब्ध होता है। 'कथसिरी गंगचील' मुख्यतया भारत-तिब्बती पक्षी है जब कि 'कलसिरी' यूरोपीय। किंतु यह क्षेत्रीय सीमाएं भी क्यों ?

कुंदन (चोंच)/लाल (पैर) कुररी River Tern

463. Sterna aurantia

कद : घरेलू कौआ +, छरहरी, 38-46 सेमी.; आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : टिहारी, गंगचील, मच्छलुका, *कुररी;* **मराठी** : नदी सुरय; **गौंड** : किवि; **कश्मीरी** : क्रिंद, क्रेउ; **तेलुगु** : रामदासु, समुद्रपु काकि; **मलयालम** : काडल काक्क; **सिंधी** : किनई; **संस्कृत** : गंगाचिल्ली, *कुररी,* **उत्क्रोशी**-कुररी।

पहचान : छरहरी, कुशल उड़ाकू तथा सुंदर नद-पक्षी, ऊपर हल्का भस्मी तथा नीचे सफेद; सशक्त नुकीली पीली (कुंदन), **चोंच,** छोटे **लाल पैर** लंबे नुकीले पंख, गहरी द्विभाजित पूंछ; सिर, माथा और गरदन काले। आंख के नीचे चंद्राकार सफेद। शीतकाल में सिर तथा गर्दन पर काली धारियां ही बचती हैं। **नर-मादा** एक समान। कुररी कुल के पक्षियों की पहचान मुख्यतया चोंच तथा टांगों के आधार पर ही सरल होती है, इसलिए 'चोंच' और 'पैर' शब्द नाम में से हटाए जा सकते हैं। 'कुंदनलाल कुररी' का अर्थ ही होगा पीली चोंच तथा लाल पैर वाली कुररी।

समस्त भारत की नदियों और जलाशयों में यह आकर्षक पक्षी सुलभ है। जल के ऊपर लालित्यपूर्ण उड़ानें भरती हुई अपना **आहार**—मछलियां, वल्कली तथा जलकीड़े खोजती हैं। सामान्यतया एक क्षेत्र में एक, दो या तीन ही रहती हैं किंतु प्रजनन के समय ये कालोनियों में रहती हैं। इनके **घोंसले** रेत में कपनुमा गड्ढे होते

हैं जिनमें घास की चादर बिछाई जाती है। यह ललित पक्षी बहुत ही निडर एवं साहसी है। चील, श्येन या कौओं को, प्रजननकाल में अपने क्षेत्र के पास आते देखते ही, उत्क्रोश करती हुई उन पर सीधे हमलाकर उन्हें खदेड़ देती हैं। कौए फिर भी चोरी से कभी कभी इनके अंडे ले जाते हैं। चूंकि इनके घोंसले नदी तट या नदी द्वीपों की बालू पर होते हैं, बाढ़ के समय नदी भी इनके अंडे बहाकर ले जाती है, ऐसे समय पर, या कोई बड़ा खतरा आते देखकर, ये आवाजें भी खूब करती हैं। इसलिए संस्कृत साहित्य में दुख से रोती हुई महिलाओं को 'कुररी' की उपमा भी दी जाती है। यदि रोने का समय दिन का है तो उपमा वाली कुररी 'नद कुररी' होती है और रात का समय है तो 'निशा कुररी' (Curlew) होती है।

इसका **प्रजननकाल** सामान्यतया मार्च-मई होता है। इस समय भी, ये बहुत शोर मचाती हैं, किंतु साथ ही प्रणयकाल में इनके हवाई करतब देखने के काबिल होते हैं। इस समय नर मादा को मछली लाकर, बड़े प्यार से खिलाता है। इनका मैथुन चूजों के निकलने के बाद भी चलता रहता है। रेत तो जल्द ही और खूब गरम हो जाती है इसलिए तेज गर्मी पड़ने पर यह अपने निचले हिस्से को गीला करने के बाद अंडों पर बैठते हैं। शावक निकलने पर, उन्हें अपने गीले पंखों की छाया में रखते हैं। यह काम नर-मादा दोनों करते हैं। यहां तक कि शावक को जो मछली खिलाते हैं उसे भी अच्छे से गीला कर देते हैं, ये उन्हें तब करना पड़ता है जब वे मछली 10-12 कि.मी. दूर से पकड़कर लाते हैं। यदि अंडों की पहली खेप किसी कारण से नष्ट हो जाती है, तब ये दूसरी खेप भी देती हैं। एक खेप में सामान्यतया तीन अंडे देती हैं।

नद कुररी शायद ही कभी गंगचीलों या हंसकों के समान पानी पर बैठती हैं। किंतु मछलियों का शिकार उमंग तथा उत्साह से करती हैं।

(भस्मोदर) सोनकंठा हरियल **Bengal Green Pigeon**

503. Treron phoenicoptera p.

कद : कबूतर (33 सेमी.); आवासी; 504 *T.p. chlorigaster* (दक्षिणी)

स्थानीय नाम : हिंदी, बंग्ला : हरितालक, *हरियल;* **असमिया** : हैथा, बॅड़ हैथा; **नगा** : हन्रुहगु; **कछारी** : दाओरप गडेबा; **गुजराती** : *हरिल;* **मराठी** : पिसावा; **कन्नड़** : हसुरू पारिवाल; **तेलुगु** : पच्छ पोल्का, पच्छ गुव्वा, आकुपच्चनि पिच्चुक; **तमिल** : पच्छइपुरा; **संस्कृत** : हारिद्रक, *हरिताल,* हारीत, रुचक।

पहचान : कंठ, पैर तथा ऊपरी पीठ सुनहली; लाल कंधा, पीठ, चित्रित पंख, धानी

माथा, भस्मी वक्ष, उदर तथा पीठ। इसके दक्षिणी भाई भस्मी/सोनल हरियल (Chlorigaster) का वक्ष तथा उदर भी सुनहला होता है, और कंधे पर नीलम रंग होता है। 'भस्मोदर सोनकंठा हरियल' सतपुड़ा (22° उ. अक्षांश) के उत्तरी भारत में तथा 'भस्मी/सोनल हरियल' चंबल (28° अक्षांश) के दक्षिणी भारत के हिस्सों को आबाद करता है। **नर-मादा** लगभग एक समान, (मादा के रंग कुछ दबे हुए)। अन्य हरियलों की लाल टांगों की अपेक्षा इनकी पीली होती हैं।

ऋग्वेद काल में कपोत मांगल्यसूचक पक्षी माना जाता था। किंतु कुछ ही शताब्दियों पश्चात कपोत की एक जाति (सितभाल मरकत कपोत Indian Emeraid Dove) अमंगलसूचक मानी जाने लगी थी। किंतु फिर वाजसनेयीसंहिता के काल तक आते आते, पारावत (Pigeon)(कपोतों की वे जातियां जो हिमालय पर्वत से आती हैं) मंगलसूचक माने जाने लगे थे, और कपोत (Dove जातियां) धार्मिक आचारों के संरक्षक मित्र वरुण का सहचर माना जाता था। बुद्ध के जन्म की उद्घोषणा करने वाला एक 'हरितपीठ नीलक हरियल' (Green Imperial Pigeon) था, जो अन्य भाईयों की तुलना में शांतिप्रिय होता है।

अन्य कबूतरों की तुलना में हरियलों का गान बहुत मधुर है। सभी हरियल कोमल रंगों के बहुत सुंदर पक्षी हैं जो वृक्षों के बीच उनमें घुलमिल जाते हैं। ये बहुत शर्मीले होते हैं और आदमी के पास आते ही मूर्तिवत हो जाते हैं और तब इनका दिखना बहुत कठिन हो जाता है। ये पांच-दस के यूथ में रहते हैं, और गहन वनों की अपेक्षा विरल वन तथा बाग पसंद करते हैं।

ये लगभग पूर्णतः वृक्षी हैं, पानी पीने, नमकीन मिट्टी खाने और कभी कभार फसल खाने जमीन पर आते हैं। हिंदी साहित्य में इन पक्षियों के वृक्षी होने की बहुत प्रशंसा की गई है। सूरदास ने कहा है : "हरि मेरे, हारिल की लकरी..." अर्थात हारिल जिस निष्ठा से लकड़ी से प्रेम करता है उतनी ही निष्ठा से मैं हरि से प्रेम करूं। हरियल टहनियों को पकड़ने में बहुत कुशल है, वह टहनी पकड़े पकड़े उल्टे होकर भी अंजीर (बरगद, पीपल, गूलर आदि के फल), बेर तथा अष्टफल जामुन (विशेष प्रिय) आदि फल मजे से खाता है। सभी हरियल मुख्यतः फलाहारी होते हैं। यदि हरियल किसी कमजोर टहनी पर बैठा हो और (उसे कोई मारे तब,) हरियल जब गिरेगा तब उसके पंजों में उस टहनी का टुकड़ा फंसा मिलेगा, ऐसा लोग मानते हैं।

प्रजननकाल मार्च से जून। घोंसला टहनियों का बेतरतीब छोटा-सा चबूतरा, वृक्षों की शाखाओं पर हरीतिमा में छिपा हुआ—विशेषकर भुजंगा के घोंसलों के पास (कौए आदि से बचने के लिए) अंडे, कुल के अनुरूप, दो चमकदार सफेद। नर-मादा दोनों गृहस्थी का काम करते हैं।

(दुपट्टी) धूमिल पारावत Blue Rock Pigeon

517. Columba livia intermedia 516. C.l. neglecta (पश्चिमोत्तरी)

कद : कबूतर (33 सेमी.), आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : कबूतर, कत्रेतर, *पारावा,* खौदा; **बंग्ला** : गोला पायरा; **कश्मीरी** : वन कोटुर; **मराठी** : *पारवा;* **गुजराती** : *पारेवुन;* **कन्नड़** : *पारीवाल;* **तेलुगु** : गुडि पावरइ; **कछार** : नोनी दाओतु; **तमिल** : माड पुरा, मालइ पुरा; **मलयालम** : कुट्टु *प्रावु;* **संस्कृत** : *पारावत,* नीलांगक, भस्मांग, नील कपोत, भूमिशय

पहचान : ऊपरी वक्ष तथा कंधरा इंद्रधनुषी तथा शरीर मुख्यतः धुएं-सा नीला; पंखों पर दो काले पट्टे। **नर-मादा** एक समान।

वाल्मीकि रामायण में इनकी सुंदरता का वर्णन है : 'इनके शरीर का रंग धुएं के समान है और इसके वक्ष में तथा ग्रीवा में चमकदार हरे, पीले तथा महावरी रंग वैसे ही छिपते दिखते हैं जैसे आग की लपटें। लगता है कि 'यज्ञ की अग्नि के समान है यह पक्षी'। संभवतः इसीलिए इस पक्षी को सामाजिक संरक्षण प्राप्त है।

यह सारे भारत में चट्टानों, पहाड़ियों (3,000 मीटर से नीचे), तंग घाटियों, खंडहरों, किलों, फैक्ट्रियों, इमारतों, रेलवे स्टेशनों, मंदिरों आदि सभी स्थानों पर सुलभ है। भारत के बाहर बर्मा तथा श्याम (थाईलैंड), तुर्किस्तान, ईरान आदि प्रदेशों में मिलते हैं। Columba या पारावत वंश के कबूतरों का मुख्य भोजन 'बीज' हैं। सभी पालतू कबूतरों का स्रोत धूमिल पारावत है। भारत की तरह अन्य प्राचीन सभ्यताओं में भी यह कबूतर सम्मानित था।

इसका **प्रजननकाल** साल भर चलता है। अक्सर नर अपने क्षेत्र में ही रहता है और उसमें मादा के प्रवेश करते ही अपना प्रणय गान (सुंदर हूं... !) गुटर गूं... तथा प्रणयनृत्य शुरू कर देता है। अपनी इंद्रधनुषी ग्रीवा फुलाकर, अपनी पूंछ को फैलाकर और नीचे दबाकर, बार बार नमन करते हुए उसके चारों ओर नृत्य करता है। यदि मादा चलती जाती है तब यह चक्कर कुंडलीकार हो जाते हैं और यदि उस स्थान में चक्कर के लिए स्थान नहीं है तब मादा के लगभग सामने रहते हुए, डमरू-सा पथ बनाते हुए नृत्य करता है, किंतु जब भी मुड़ता है तब अपना मुख मादा की तरफ रखता है। यदि मादा प्रणय नृत्य से मोहित हो जाती है तब वह पास आकर अपनी चोंच नर की चोंच के अंदर डालती है तथा वे उत्तेजित अवस्था में, चोंचें पकड़े हुए उन्हें ऊपर नीचे करते हैं और फिर अक्सर मैथुन होता है। मादा एक खेप में दो सफेद अंडे देती है। नर-मादा दोनों नीड़ निर्माण, सेने तथा पालन में मिलकर काम करते हैं।

कपोत कुल के सात वंश भारत को आबाद करते हैं। यद्यपि इन्हें दो विभागों

में बांटा जाता है, किंतु इनमें भेद करने वाले स्पष्ट गुण नहीं मिलते हैं: Pigeon(कबूतर) तथा Dove (पंडुक)। कबूतर समूह में चार वंश हैं यथा Caloenas (कंठकेश वंश), Treron (हरितालक वंश), Ducula (दुकूल) तथा Columba (पारावत वंश)। तथा Dove (पंडुक) समूह में तीन वंश हैं यथा : Chalcophaps (हारीत), Macropygia (दीर्घपर) तथा Streptopelia(पांडुक) वंश। 'कबूतर' समूह के पक्षियों का रंग मुख्यतया गाढ़ा भस्मी या गाढ़ा भूरा होता है, तधा पंडुक का रंग मुख्यतया भूरा या बैंजनी या दोनों रंग लिए होता है। किंतु इन दोनों समूहों में कुछ वंशों के कपोतों में हरा रंग प्रमुख हो जाता है। शिकारी पंडुकों का शिकार नहीं करते, कबूतरों का करते हैं क्योंकि पंडुकों में मांस बहुत कम होता है।

धूमिल जाति के पारावत में दो अद्भुत विशेषताएं होती हैं। एक तो ये अपना घोंसला दूर से सूंघ लेते हैं। दूसरे, इनमें 'अवध्वनि' (Infrasounds) (वे निचली ध्वनियां जिन्हें हम नहीं सुन सकते) सुनने की तीव्र संवेदनशीलता होती है जिसके फलस्वरूप भूकंप आदि का ज्ञान इन्हें हमसे पहले हो जाता है।

कलकंधर नीलक पंडुक (Indian) Ring Dove

534. Streptopelia decaocto d.

कद : कबूतर, 32 सेमी.; आवासी

स्थानीय नाम : **हिंदी** : धौला *पंडुक,* पड़की, घुघ्घी, ढोर फाख्ता, चित्ररोख, धवलो, धूला; **कश्मीरी** : कुकिल; **बंग्ला** : पार घुघ्घु; **मराठी** : पिठ होला, कव्डा; **गुजराती** : धोल; **तेलुगु** : पैड्डा बैल्ला गुवा; **तमिल** : कल्लिपुरा, संबलपुरा; **मलयालम** : पौत्तनचैंगलि; **कछार** : दैओता गंफु; **असमिया** : सितकंपु; **सिंधी** : घेरो; **संस्कृत** : विपांडुर, आपांडुर, सूत्रकंठ कपोत, धवल *पांडु*।

पहचान : गुलाबी आभा लिए हल्के जांबुकी रंग (नीलक) का कलरेखी कंधर वाला कपोत; इसके नीलक (लाइलैक) रंग सामने से पीछे की ओर धीरे धीरे प्रगाढ़ होते जाते हैं; प्राथमिक पंख तथा पूंछ श्याव; निम्नकटि तथा पूंछ-किनार सफेद जो कि उड़ान में, विशेषकर उतरते समय, स्पष्ट दिखती है। **नर-मादा** एक समान।

अग्निपुराण, बृहत्संहिता आदि में 'सुकिनार नीलक पंडुक' (Little Brown Dove), 'कत्थई/भूरा चिट्टा पंडुक' (Spotted Dove) तथा 'कलकंधर नीलक पंडुक' 'कपोतत्रय' कहलाते हैं और अशुभ 'शकुन' सूचक माने जाते थे। इस परिवार के शावक मां द्वारा लाए कीड़ों को खाने के अलावा उसकी चोंच में चोंच डाले 'दूध' पीते हैं। यह दूध एक प्रकार का पौष्टिक रस तथा अधपचा भोजन होता है।

यह सूखी पतझड़ी जलवायु पसंद करता है। यह ऐसी जलवायु के क्षेत्र में, 2,400 मी. की ऊंचाई तक सारे भारत को आबाद करता है। खेती वाले क्षेत्रों के बढ़ने, उनकी मंडियां, गोदाम, तथा यातायात के बढ़ने से तथा इस पक्षी की अनुकूलनशीलता के फलस्वरूप इस पक्षी के क्षेत्र-विस्तार में इस शती में अद्वितीय वृद्धि हुई है। इसने भारत से ही **उत्प्रवास** सोलहवीं शती से प्रारंभ किया था। अब यह सारे भारत, यूरोप, मध्य और दक्षिण एशिया, चीन तथा जापान में बहुतायत से मिलता है लेकिन सिक्किम, भूटान तथा अंडमान निकोबार में नहीं मिलता। आवासी है, किंतु स्थानीय प्रवासी भी—ऋतु तथा ऊंचाई के अनुसार। कबूतर तथा पंडुकों में एक अद्वितीय गुण होता है जो अन्य पक्षियों में नहीं होता—वे चोंच से सीधा पानी पी सकते हैं जैसे हम 'स्ट्रा' (Straw) से रस वगैरह पी लेते हैं। अन्य पक्षियों को पानी चोंच में भरकर, अपनी चोंच ऊपर की ओर करनी पड़ती है।

प्रजननकाल तथा प्रणय नृत्य 'धूमिल पारावत' के समान ही है किंतु यह अपनी प्रिया को हवाई करतब भी दिखलता है—ऊंचे स्थान से, ऊपर की तरफ फड़-फड़ की आवाज के साथ उड़ान भरता है फिर कूं कूं कूं के तेज आक्रामक स्वरों के साथ विसर्पण करता हुआ बड़ी शालीनता से या तो सीधा या कुंडलीकार उतरता है। अपने *क्षेत्र* की रक्षा के लिए जमकर लड़ाई करता है, लड़ते समय एक दूसरे पर बराबर प्रहार करते हैं—मात्र शक्ति प्रदर्शन नहीं। इतना साहसी है कि यह अपने से बड़े कौओं का भी पीछाकर उन्हें भगाता है और उनके अंडे तथा शावकों को भी चुरा लेता है। इसके **बोल** आक्रमण तथा क्षेत्रीय प्रदर्शन के समय कर्कश तथा तेज कूं कूं कूं; प्रणय गान मधुर कुक्कु... कूक...। इसी मधुर गान के कारण संस्कृत में इसे 'स्फुटध्वनि कपोत' नाम दिया गया है। इसका **घोंसला** झाड़ियों या बबूल सरीखे छोटे वृक्षों, या गोशालाओं आदि में, सूखी टहनियों का पतला-सा चबूतरा होता है। मादा एक खेप में 2-3 सफेद चिकने अंडे देती है। इनकी प्रजनन ऋतु कड़ी सर्द ऋतु को छोड़कर लगभग पूरे वर्ष रहती है। मादा एक ऋतु में पांच खेप तक देती है (क्षेत्र विस्तार का एक रहस्य)। नर-मादा गृहस्थी का काम मिलकर करते हैं।

सुकिनार नीलक पंडुक **Little Brown or Senegal Dove**

541. Streptopelia senegalensis cambayensis

कद : मैना + (27 **सेमी.**); **आवासी**

स्थानीय नाम : हिंदी : छोटा फाख्ता, छोटी पड़की, तोर्त्रा फाख्ता, टुटरू, घुघूती *पंडुक;* **तेलुगु :** चित्ती बेला गुब्बा, सोबत गुब्बा; **तमिल :** तुत पुरा; **मलयालम :** अरिप्रावु; **असमिया :** राम केपु; **सिंधी :** तूतन घेरी; **संस्कृत :** कुंकुम धूम्र कपोत।

पहचान : उत्तमांग **नीलक।** कालर शतरंजी; **प्राथमिक** पंख काले, द्वितीयक तथा तृतीयक पंख भस्मी। पीठ, कटि तथा पूंछ भस्मी नीलक; उदर सफेद; पूंछ सफेद किनार के साथ श्याव क्रमांकित। **नर-मादा** एक समान। इस पंडुक के पूंछ की **सफेद किनार** तथा पंखों की **भस्मी किनार** पहचान-चिह्न हैं।

सुकिनार नीलक पंडुक का **गान** धीमा किंतु मधुर होता है–"कुक कुक कू कू कू"। दोपहर की नीरवता में इसे सुनकर ऐसा लगता है मानो वह अपनी पड़ोसन या पड़ोसी से पूछ रही है–"ए ए का कर रहे" इसके स्वरों में करुणा होती है गढ़वाल में इसे घुघूती कहते हैं और इनके बोल से वे समझते हैं मानो कोई नन्हीं बालिका कह रही है "ए ए मां सोती है"–उस नन्हीं बालिका की विमाता ने उसे मार डाला था अब दूसरे जन्म में वह घुघूती बनी और इन बोलों से वह अपनी मां की मृत्यु का दुख व्यक्त करती है। कथा करुण है और विमाता के व्यवहार पर करारा व्यंग्य भी, यह दर्शाता है कि पक्षियों को वे लोग कितना प्यार करते हैं।

बाइबिल की पुरानी संहिता में प्रलय के उतरने की पहचान के लिए नूह एक कपोत को पता लगाने भेजते हैं। दूसरे अवलोकन में वह जैतून की छोटी-सी टहनी लिए वापिस आता है अर्थात प्रलय लगभग उतर चुका था। पाश्चात्य संस्कृति में इसी घटना से पंडुक या कपोत के शांति दूत होने का समारंभ होता है तथा जैतून की टहनी को भी शांति प्रस्ताव के रूप में मानना। बाइबिल की नवसंहिता में ईसा भगवद्शक्ति को एक कपोत के रूप में उतरते हुए देखते हैं। यह कहना कठिन है कि वह कबूतर किस जाति का था, किंतु चित्रकार उसे अधिकांशतः धवल चित्रित करते हैं। सामान्यतया पंडुक बहुत ही आक्रामक पक्षी होते हैं।

आवासीय के साथ साथ स्थानीय प्रवासी (ऊंचाइयों पर, ऋतु के अनुसार) भी है। नेपाल, सिक्किम, भूटान, असम, तथा श्रीलंका को छोड़कर समस्त उपमहाद्वीप में मिलते हैं। जोड़े में तथा छोटे यूथों में गांवों और शहरों के घरों के आसपास बहुत रहते हैं। कटाई के बाद खेतों में झुंड के झुंड उतरते हैं। घास के बीज भी निकालकर खाते हैं। सभी पंडुक मुख्यतया बीज खाते हैं, सभी पंडुक (dove) जोड़ा जीवन भर के लिए बनाते हैं, यद्यपि पारावत (pigeon) व्यवहार में यौन मुक्त हैं। प्रणय नृत्य में इसका (नीलक पंडुक) नर खूब उड़ान दिखलाता है। किसी खुले अड्डे से फड़ फड़ की आवाज के साथ ऊपर उड़कर बिना पंख हिलाए कुंडली पथ बनाता पास के दूसरे अड्डे पर उतरता है। मादा दिखने पर, बड़ी शान से कंठ फुलाकर, कटि को तान कर, पूंछ नीचे दबाकर और उसे ऊपर मटकाकर, सिर को मैत्री मुद्रा में नम्रतापूर्वक झुकाकर फुदकते तथा चलते हुए, गाना गाते हुए उसके पास जाता है। इनका **प्रजननकाल** लगभग साल भर चलता है। वर्ष में दो से पांच बार दो सफेद अंडे देती है। अपने घोंसले सूखी टहनियों तथा घास से झाड़ियों पर, खजूर के वृक्षों

पर, एक छोटे-से चबूतरे की तरह बनाते हैं। घर के छप्परों तथा कंगूरों पर भी घोंसले बनाते हैं। यद्यपि यह अक्सर अकेले दिखते हैं, नर तथा मादा गृहस्थी का कार्य मिलकर करते हैं।

ललकलकंठी तोता Northern Roseringed Parakeet

549. Psittacula krameri borealis 550. P.k. manillensis (दक्षिणी)

कद : मैना + पूंछ, 42 सेमी.; आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : *तोता,* लबार, कंठी तोता, कउल सुआ, *(मध्य प्रदेश)* सुआ; **कश्मीरी :** *तोतो,* शोगा; **बंग्ला :** टिया *तोता;* **असमिया :** *तोता* सोरई; **कछारी :** दाओबातुर; **गुजराती :** पोपट, सूदो; **मराठी :** पोपट कीर; **कन्नड़ :** गिलि; **तेलुगु :** चिलुक; **तमिल :** किलि, **मलयालम :** *तत्ता,* मोदिरतत्ता; **सिंधी :** चाटन; **संस्कृत :** बाहुज शुक, काष्ठ शुक।

पहचान : दोनों चोंचें सेंदुरी तथा तेज अंकुड़ी वाली; नर के गले में काली तथा गुलाबी दो कंठियां नर के गले में, सुआपंखी रंग का मंझोला पक्षी। मादा के गले में केवल हल्की पन्नईकंठी।

बागों तथा जंगलों में इन तोतों के झुंड आप वृक्षों पर उतरते या उनसे उड़कर जाते हुए अक्सर देख सकते हैं। यूथप्रिय होने के साथ साथ जंगलों में ये बहुतायत में पाये जाते हैं। इसलिए संस्कृत में इनका एक नाम 'काष्ठ शुक' अर्थात जंगली तोता जो हिंदी में 'कउल सुआ' हो गया। संख्या में बहुल होने के कारण 'बाहुज शुक' दूसरा नाम है।

कुछ लोगों में ऐसी गलत धारणा है कि तोते घोंसले नहीं बनाते। यह ठीक है कि तोते घास, पंख आदि का न तो घोंसला बनाते हैं और न आरामदेह बिस्तर। किंतु वृक्षों के कोटरों का मुख तथा कद आवश्यकतानुसार बड़ा करते हैं। यदि कोई सांप या अन्य पक्षी जैसे मैना इनके घोंसले के आसपास आ जाए तब इनका झुंड इनके चारों तरफ टें टें का शोर करते हुए मंडराएगा। लोक साहित्य में तोता मैना को मित्रों का जोड़ा मानते हैं क्योंकि ये दोनों हमारी आवाज की नकल कर लेते हैं।

इसका **प्रजननकाल** जनवरी से अप्रैल तक होता है। नर तोते का प्रणय नृत्य भी भावनापूर्ण होता है। नर पहले थोड़ी दूर पर उतरकर, सीटी बजाता है फिर मादा के पास जाकर अपने पूरे कद में खड़ा होता है ताकि मादा उसके शरीर को आंक सके फिर अपने पैर एक एक कर उठा कर और पास जाता है, फिर चुंबन करता

है। स्वीकृति पाने पर वह मादा को जुगाली किया भोजन खिलाता है तथा उसे प्यार से स्पर्श करता है। दो तीन बार वे दोनों चोंच से चोंच को मिलाकर उत्तेजना में खींचते हैं। फिर नर विशेष ढंग से पीछे जाकर अपना सिर पीछे कर मादा को बड़े प्यार से देखता है और नृत्य के कुछ कदम आगे पीछे रखता है तथा अपने पंख थोड़े से खोलता है मानो आनंद का प्रदर्शन कर रहा हो। फिर मादा की ओर वाले पंजे को उठाकर अदा से घुमाता है। फिर इसी तरह का नृत्य वह मादा के दूसरे बाजू जाकर करता है और तब तक करता है जब तक मादा उस पर रीझ न जाए। कभी कभी मादा बिना प्रत्युत्तर के उड़ भी जाती है।

यह बिलकुल शाकाहारी पक्षी है, इसलिए फसलों को नुकसान भी पहुंचाता है किंतु पालतू होने के कारण यह लोकप्रिय है और बच्चों तथा बूढ़ों को सुख देता है। ये अपने घरवालों से संवाद करते हैं, मालिक के कंधे पर बैठकर सवारी करते हैं। अपनी मित्रता द्वारा लोगों का तनाव दूर करते हैं। इनकी चोंच छोटी तथा शंकु आकार की होती है जिससे कि बीजों को चोंच के दबाव से तोड़ सकें।

कल/सित (शिखी) चातक **Pied Crested Cuckoo**

570. Clamator jacobinus serratus 569, C. coromandus (हिमालयी)
571. C.j. j. (दक्षिणी)

कद : मैना, किंतु लंबी पूंछ, 33 सेमी.; (प्रजनन) प्रवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : पपीहा, काला पपीहा, *चातक;* **बंग्ला :** शाह बुलबुल, काला बुलबुल; **कश्मीरी :** होर कुक; **मराठी :** *चातक;* **तेलुगु :** तंगड गोरंका, गोल कोकिल; **तमिल :** कोंडे कुयलि; **मलयालम :** एरतट्टलचि कुयिल; **संस्कृत :** सारस, *चातक,* वर्षाहू, दिवौकस् त्रिशंकु, वापीह, वर्षाप्रिय, अन्यवाप, परभृत, परपुष्ट।

पहचान : ऊपर काला, **नीचे** सफेद; कनेरा बुलबुल के समान शिखा, सितद्युति, लंबी पंखाकार सितकिनारी पूंछ। **नर-मादा** एक समान।

कालिदास को जानकारी थी कि यह कल/सित (सारंग) चातक मेघों का दूत है और **मानसून** के साथ दक्षिण से उत्तर की ओर आता है (संस्कृत नाम 'वर्षाहू')। इसके **बोल**—'पी क हॉ पी क हॉ' (एक नाम 'पपीहा') हैं। कवि रूढ़ि है कि चातक केवल वर्षा का जल सीधा ही पीते हैं और एक कि चातक केवल स्वाति नक्षत्र की वर्षा का जल ही पीता है, और एक यह भी कि चातकों के गले में एक छेद है जिसमें से अधिकांश पानी निकल भी जाता है। इसलिए इनका नाम 'वर्षाप्रिय' भी है। तथ्य यह है कि चातक के भोजन में अधिकतर रसदार कीड़े, इल्लियां, घोंघे

इत्यादि होते हैं इसलिए, तथा वैसे भी, वर्षाऋतु में प्यास कम लगती है और यह ताजी हरी पत्तियां भी खाता है इसलिए इसे पानी की आवश्यकता नहीं के बराबर रहती है। यह हिमालय पर 4,000 मीटर की ऊंचाइयों तक यात्रा करता है। (एक नाम 'दिवौकस' तथा दूसरा नाम 'त्रिशंकु')।

ये उन प्रवासी पक्षियों में से हैं जिनका वास्तविक घर भारत ही मानना चाहिए क्योंकि ये (जून) वर्षा के साथ भारत में प्रजनन हेतु आते हैं तथा सितंबर-अक्तूबर तक वापिस लौट जाते हैं। (वैसे इनके प्रवासी-आवासी जीवन के पर्याप्त वैज्ञानिक आंकड़े अभी तक प्राप्त नहीं हैं।) यह दूसरी बात है कि कविप्रिय यह पक्षी परजीवी है। अधिकतर यह अंडे मैदानी भागों में पैंगा (Babbler) पक्षियों के घोंसले में, उसके अंडों को निकालकर देती है, निचले हिमालयी भागों में कस्तूरी वंश के पक्षियों के घोंसलों में, कश्मीर में बदामी पीठ लटोरों के घोंसलों में देती है। अधिकतर मादा एक ही अंडा देती है।

कोकिल कुल के चातक या पपीहा ऋतु में एक जोड़ा बांधकर रहते हैं या नहीं, इसकी वैज्ञानिक जानकारी अभी तक नहीं है। किंतु संस्कृत साहित्य में, इन्हें सहवास के संबंध में, निर्बंध ही माना जाता है। **शाव-परजीवी** पक्षियों में सफलता प्राप्त करने के लिए कई विशेषताएं आवश्यक हो जाती हैं। या तो मादा चातक बाज के समान दिखती हो जिससे कि घोंसले के मालिक डरकर भाग जाएं; या चोरी से दूसरे के घोंसले में अंडा देना है तो वह भी आनन-फानन में होना चाहिए। जहां अधिकांश पक्षी अंडा देने के लिए एक से तीन मिनट लेते हैं वहां यह पक्षी कुछ सैकिंड ही लेते हैं। चूंकि ऐसे अंडे असली अंडों के बाद ही दिए जा सकते हैं और चोर अंडों में से चूजा असली अंडों से पहले निकलना चाहिए, इसलिए इन अंडों को सेने की अवधि भी कम होनी चाहिए। भारत कोकिल कुल (Cuculidae) की कुल 35 जातियों में से लगभग 22 जातियां शाव-परजीवी हैं और वे सब मिलकर लगभग 20 अन्य वंशों की 50 जातियों के पक्षियों से अपने 'शाव' का पालन करवाती हैं।

काली कोयल Indian Koel

590. Eudynamys scolopacea s. 591.E.s.malayana (मलायी)

कद : कौआ +, तथा लंबी पूंछ; 43 सेमी.; आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : *कोयल;* **हिंदी, बंग्ला, मराठी :** *कोकील,* कोकिला; **कन्नड़ :** *कोगिल;* **तेलुगु :** नर-नल्ल *कोविला,* मादा-पोड कोविला; **मलयालम :** *कुयिल,* पुल्लिकुयिल, कक्क *कुयिल;* **तमिल :** *कुयिल;* **मालदीव :** कर्लु *कोयल* (नर), डिन्डिन कोयल (मादा); **संस्कृत :** अन्यवापू, परभृत *पुंस्कोकिल।*

पहचान : इस्पात-सा चमकीला काला रंग, प्रगाढ़ लाल आंख, पीताभ हरी चोंच तथा पंजे, 'कुऊ कुऊ' नर कोयल की आकुलता प्रकट करते आरोह में चढ़ते मधुर तार स्वर। **मादा**—कत्थई/भूरी-चीतल।

कोयल की मद भरी तान सुनते ही बसंत, आम, अमराई और प्रेम यह सब मन में मस्ती भरते हुए कौंध जाते हैं और हम ग्रीष्म का स्वागत करने के लिए तैयार हो जाते हैं। लोक-जीवन, लोक-साहित्य, लोक-गीत, तथा साहित्य में कोयल उसी तरह छाई हुई है जिस तरह बसंत में कोयल की कूक। किंतु न तो कोयल काली होती है और न ही वह पंचम स्वर में गाती है, हां कोयल (नर) काला होता है और वही मधुर तानें लगाता है।

सारे भारतीय प्रायःद्वीप को, असम तथा बंग्लादेश को छोड़कर, **आबाद** करने वाले ये आवासी पंछी ठंड में दक्षिण भारत में रहना अधिक पसंद करते हैं और शांत रहते हैं। गर्मी में उत्तर भारत में प्रजनन के लिए आते हैं और प्रेमियों सी आकुलता वाले मधुर स्वर अलापते हैं। इसलिए मुझे अचरज हुआ जब मैंने सालिम अली की 'हैंड बुक ऑव बर्ड्स ऑफ इंडिया एंड पाकिस्तान' में कोयल गान पर उनका लिखा वर्णन पढ़ा, "इसका गान तेज, कर्कश चीखते से 'कुऊ कुऊ' स्वरों में, और दुहराते समय आरोही स्वरों में चढ़ते हुए सात या आठवीं बार लगभग विक्षिप्त स्वरों में पहुंचकर एकाएक रुक जाता है, तथा फिर से सारे स्वरों को इतना दुहराता है कि वितृष्णा होने लगती है।"

यह मधुर गायक शाव-परजीवी हैं और अधिकतर कौओं (घरेलू तथा जंगली) से अपने अंडों को सेने तथा शावकों को पालने का काम कराते हैं। इसीलिए संस्कृत में इनके नाम हैं अन्यवाप, परभृत, परापुष्ट, काकपुष्ट। **नर-मादा** प्रजनन ऋतु में भी जोड़ा नहीं बांधते हैं।

कोकिल (क्यूक्यूलिदी) कुल के अधिकांश परभृत वंशी अपने लिए एक विशेष जाति के पक्षी को ही अपना यजमान बनाते हैं। उनके अंडों के लिए यजमानी अंडों से समरूपता रखना नितांत आवश्यक है। कोयल के अंडों का रंग वंशानुगत होता है। कोयल वैसे ही 'घोंसलों' तथा आवास (जाति) को अंडा देने के लिए चुनती है जिसमें उसका लालन-पालन हुआ था। अर्थात जब वह अंडा रूप में थी तब धाय मां द्वारा पाली गई थी, इसलिए उसका अंडा-रूप तथा धाय मां के अंडा-रूप में यथेष्ट समानता होगी ही। इसलिए इसमें क्या आश्चर्य कि, काली कोयल के अंडों का रंगरूप पीताभ कत्थई धब्बों सहित धाय मां के अंडों के ही समान हरित-धूमिल रंग पर होता है। कोयल के अंडे अपने यजमान के अंडों की अपेक्षा दो तीन दिन पहले ही तैयार हो जाते हैं। 'काली कोयल', कुछ अन्य परभृत कुल के पक्षियों की तरह, अंडों को यजमान के घोंसले में रखने के लिए, उसके अंडों को बाहर नहीं फेंकती।

पांगरपंख (कल) कुक्कुभ Common Crow-Pheasant or Coucal

600. Centropus sinensis s. *601. C.s. intermedius (पूर्वांचली)*

कद : कौआ +, 48 सेमी.; आवासी *602. C.s. parroti (दक्षिणी)*

603. C.s. andamanensis (अंडमानी)

स्थानीय नाम : हिंदी : महोक; **बंग्ला :** तवरा, कूका; **असमिया :** कुकू सॅरइ, *कुकुह;* **कच्छ :** हूका; **मणिपुरी :** नांग कुबि; **तेलुगु :** जेमुदु काकी, चेमर काकी; **तमिल :** कल्लि काक, चेम्पकम; **मलयालम :** उप्पन चेंबथ; **मराठी :** कुंभार काओला, *कुंभार* कुकड़ी; **गुजराती :** हॅक्को, घोयारो; **संस्कृत :** कुलाल, *कुक्कुभ,* कुंभ।

पहचान : लंबी चौड़ी क्रमांकित पूंछ वाला, पांगर रंग के पंख वाला, शेष शरीर जामुनी आभा लिए चमकदार काले रंग का, उड़न दृष्टि से कुछ बेडौल-सा दिखने वाला पंछी। **नर-मादा** एक समान, किंतु मादा नर से थोड़ी बड़ी।

यह पक्षी अपने प्रचलित अंग्रेजी नाम के समान न तो काक कुल (Corvidae) का और न तीतर (Phasianidae) कुल का है। यह **कोकिल कुल** का पक्षी है किंतु कोयल के समान 'परजीवी' नहीं हैं। यह उत्तर भारत के झाड़ीदार पतझड़ी जंगलों में तथा ऊंचे घास के जंगलों में, खेतों और बस्तियों के पास की झाड़ियों में रहता है, तथ कुंजों, बागों और बगीचों में तेजी से विचरता दिखता है। नदी किनारे के झाड़, सिंचित गन्ने के खेत तथा बांसों के झुरमुट भी इसे पसंद हैं। चिड्डे, अंडे, सांप, मेंढक, छिपकलियां, कीड़े-मकोड़े, चूहे आदि इसके प्रिय **भोजन** हैं। यह गगनचारी कम थलचारी अधिक है। चूंकि अपने शावकों का लालन पालन यह जमीन पर ही करता है इसलिए इसे 'कुलाल' भी कहते हैं। इसकी कुछ गूंजती-सी **आवाज** लगभग सारे दिन सुनी जा सकती है यद्यपि सुबह शाम कुछ अधिक। ये आपस में बहुत बतियाते रहते हैं। गूंजती आवाज के कारण इसे 'कुंभ' या 'कुंभकार कुक्कुट' भी कहते हैं। और इसकी 'कुप कुप'-सी आवाज के कारण इसे 'कुकभ', 'कुक्कुभ' या 'कुक्कुह' भी कहते हैं। महोक संभवतया मधुक (मीठा बोलने वाला) का अपभ्रंश है। पंखों की तुलना में पूंछ बड़ी होने के कारण, मोर की तरह, इसकी उड़ान भारी तथा फड़फड़ाहट वाली होती है।

प्रणय नृत्य में नर इतराते हुए रौबदार मुद्रा में मादा के पीछे पीछे, झाड़ियों के बीच, चलता है, मादा अपनी पूंछ नीचे दबाए, पंख भी नीचे कर यहां वहां भागती-सी रहती है तथा अपने मधुर स्वर में बीच बीच में 'ची आ' या 'स्की ई-ई-ई-आ' के बोल या गान देती है तथा इच्छा होने पर अपने पंखों में उत्तेजनात्मक कंपन पैदा करती है। **गान :** कुंभ के समान गूंजती-सी आवाज में, छह या सात कूप या हूप-सी ध्वनियां; गुस्से में कर्कश, तेज 'कुड़'-सी ध्वनियां।

इसका **घोंसला** टहनियों और पत्तियों का अंडाकार घर होता है। ऊपर की छत अक्सर झाड़ियों या बांस की टहनियों को गूंथकर बनाई जाती है; तथा घर जमीन से कुछ ऊंचाई पर छिपे स्थान में होता है। **प्रजनन** ऋतु जून से सितंबर तक। नीड़ निर्माण तथा अंडे सेने का काम **नर-मादा** दोनों करते हैं।

एक तो, घटते जंगलों से इसे खतरा बढ़ता जा रहा है और दूसरे, बहुत से हकीमों को यह गलतफहमी है कि इसका मांस फेफड़े की बीमारियों की दवा है। इसका मांस खाने से फेफड़े की बीमारी तो ठीक नहीं होगी, किंतु इस निर्दोष पक्षी की जान जरूर चली जाएगी।

इसके तीन सगे भाई हैं, किंतु अंडमानी भाई का रंग इसके काले के स्थान पर पिंग है (अन्य दो इस के समान), और इसका चचेरा भाई (C. toulou) बिलकुल इसके समान है, केवल इसकी (C.s.s.) 48 सेमी. की लंबाई की अपेक्षा इसकी 33 सेमी. ही है।

चीतल सितकंठी पैंचा (Northern) Spotted Owlet

650. Athene brama indica 651 A.b. ultra (पूर्वांचली)

कद : मैना +, लंबाई 21 सेमी.; आवासी *652 A. brama b.* (दक्षिणी)

स्थानीय नाम : हिंदी : उल्लू, खकूसट, चुगद, खूसट, *पैंचा;* **मराठी :** पिंगला; **गुजराती :** चित्रि; **तेलुगु :** पगडि गंटे; **तमिल :** पुल्लि अंडई; **सिंधी :** चिविरु; **लेप्चा :** डॉग टॉग पुम; **संस्कृत :** पिंग, पिंगला, पिंगेक्षण, पिंगचक्षु, पिंगलिका, खर्गला, कृकालिका।

पहचान : छोटा नाटा, पीताभ भूरा, ऊपर सफेद चित्ते तथा नीचे सफेद रंग पर भस्मी भूरे चित्ते; लाक्षणिक बड़ा गोल सिर तथा पीली, गोल, बड़ी आंखें (पिंगला)। इस वंश की जातियों में भेद करना कठिन है। **रिहाइश :** भूरे उल्लुओं को पेचक (पैंचा) कहते हैं। यह लगभग सारे उत्तर भारत में पाया जाता है। घने वनों की अपेक्षा इसे गांव तथा शहर पड़ोस के पुराने वृक्ष, आम, पीपल, बरगद, इमली आदि पुराने मकान, खंडहर आदि रिहाइश के लिए पसंद हैं। **व्यवहार :** लगभग सभी उल्लुओं की उड़ान 'नीरव' होती है जो कि उनके बचाव तथा शिकार करने में सहायक होती है। इनके नीरव उड़ने की क्षमता का एक कारण इनके 'परों' का मृदुरोमिलों (down) से घनाच्छादित होना भी है, जो इन्हें रात की भीषण ठंड से बचाते भी हैं। पैंचा की उड़ान लहरियादार होती है। यह रात्रिचर दिन में भी अपना आहार ढूंढ़ सकता है। अधिकतर 'जोड़ों' में या पारिवारिक 3-4 के समूह में रहता है। इनकी **श्रवण** शक्ति

भी तेज होती है। कुछ उल्लू नितांत अंधेरे में भी कानों की मदद से शिकार कर लेते हैं। उड़नशक्ति का एक मापदंड धीमे उड़ने से भी नापा जाता है (विमानों के लिए यह एक महत्वपूर्ण गुण है)। इस वंश तथा कुल के कुछ पक्षी धीमी उड़ान में भी कुशल हैं। इसके कोटरस्थ वृक्ष की पींड़ पर यदि आप खटखटाएं, तो मुमकिन है कि यह जिज्ञासु कोटर से झांक कर देखे कि कौन दरवाजा खटखटा रहा है। तोतों की तरह आवश्यकता होने पर एक पंजे से कौर मुंह में लाता है। इसका मुख्य **आहार** गुबरैले, पतंगे, टिड्डी, केंचुए, चिड्डे, छिपकलियां, चूहे तथा छोटे पक्षी आदि हैं। श्येन गण के पक्षियों की तुलना में इसकी चोंच कमजोर होती है तथा उससे यह मांस की चीरा फाड़ी नहीं कर सकता, इसलिए अपना शिकार, अक्सर, यह पूरा गटक जाता है। **प्रजनन** : फरवरी से अप्रैल तक। अपने घोंसले को ये नरम घास, पंख आदि से आरामदेह भी बनाते हैं। इस कुल के अधिकांश पक्षी बने बनाए कोटरों या घाटियों की रेतीली दीवारों में छेद कर बने बिलों को ही घोंसला बनाते हैं। एक खेप में मादा 3-5 सफेद अंडे देती है। [सभी श्येन गण (falconiformes) तथा उलूकगण (Strigiformes) के पक्षी अंडे के बीच के सामान्य अंतराल (कुछ घंटे) की अपेक्षा तीन दिन के अंतराल से अंडे देते हैं।] गृहस्थी के सारे काम **नर-मादा** दोनों मिलकर करते हैं। प्रजननकाल में ये ज्यादा ही 'हल्ला' करते हैं—'चिरुई-चिरुई ...चीवक-चीवक...तथा और भी आवाजों का मिश्रण—इनके बोल हैं। **तमभेदक** : उल्लू किसानों का हितैषी है, अपने शिकार में कुशल है किंतु फिर भी 'निंदित' है। क्योंकि तम से संबंधित है। हमें तो इस अंधेरे में भी देखने वाले को 'तमभेदक' मानना चाहिए। चूंकि इसकी आंखें इसके सिर की तुलना में बहुत अधिक बड़ी तथा बेलनाकार होती हैं, इसलिए उल्लू अपनी आंखें ज्यादा नहीं घुमा सकते और उस क्षतिपूर्त्ति के लिए वे अपना सिर लगभग 360° घुमा सकते हैं।

(सितकटिकंठ) वर्गपूंछ बतासी (Indian) House Swift

703. Apus affinis a. *702. A. a. galilejensis (पश्चिमोत्तरी)*
704. A. a.singalensis (कैराली)
कद : गौरैया, 15 सेमी.; आवासी *705 A.a. nipalensis (नेपाली)*
706 A.a. subfurcatus (पूर्वांचल)

स्थानीय नाम : हिंदी : अबाबील, *बतासी,* बबीला, बैंगनकुटी; **मराठी** : पाकोली; **गुजराती** : अबाबीलो; **नेपाली** : *बतासी;* **कछारी** : दाओ हदि; **मलयालम** : सरप्पक्षी, **मालद्वीपी** : फोरिका; **सिंधी** : चमरो; **संस्कृत** : कृश, दुर्बलिका, देवकुल, चटक, कृशा गृहाः, व्यंगित कुटी, *वाताशिन्,* अलिल, चीरल्लि, जीर्विः चटक, पिंडीक।

पहचान : धूम्र-काला छोटा पक्षी, सितकटि, सितकंठी, छोटी वर्गाकार पूंछ तथा हंसिये के समान लंबे पतले वक्र पंख। अक्सर बिखरे झुंडों में सारे दिन, विशेषकर गोधूलि में, गांवों तथा नगरों के ऊपर आकाश में (अक्सर अबाबीलों के साथ भी) कीड़ों का शिकार करते उड़ते हुए देखी जा सकती हैं। गुल्फास्थि छोटी तथा पराच्छादित। **नर-मादा** एक समान।

इन छोटे पक्षियों की बहुत ही कुशल सरकसी उड़ान तथा चपलता हमारे मन को मोह लेती है। इसके पंख लंबे, संकरे तथा नुकीले से, चटी (Martin) तथा अबाबीलों (Swallows) के पंखों के समान होते हैं। **प्रणय** नृत्य में जोड़ा (कभी कभी तीन) गाना गाते हुए तेजी से उड़ान भरता है—लड़ाकू विमानों के 'व्यूह विरचन' की तरह बिलकुल पास पास, पुल के नीचे, बरांडों के बीच, घोंसलों के पास। फिर अंत में तितलियों की तरह पंखों को 'V' के आकार में रखते हुए, मात्र उनके छोरों के कंपन से उड़ते रहते हैं। तिकड़ियों में उड़ने का कारण अभी पूरी तरह नहीं समझा जा सकता है। मेरा अनुमान है कि जोड़ा बनाने के लिए बेहतर उड़ाकू नर का चुनाव होता है।

इस **कुल** (दुर्बलपदकुल-Apodidae) के अधिकांश पक्षियों के पद बहुत कमजोर होते हैं (नाम दुर्बलिका या कृश), किंतु पंजे बहुत मजबूत। इस वंश के पक्षियों की चोंच विश्व में **सबसे छोटी** (कुछ मि. मी.) होती है। भोजन की कमी होने पर अपना तापक्रम कम कर 'हाइबरनेट' कर सकती है, या कुछ दिनों के लिए दूर जा कर वापिस लौटती है किंतु इसके अंडे फिर भी जीवित बचे रहते हैं।

यदि पक्षियों की उड़ान को सर्वप्रमुख गुण मानें तब बतासी का वंश भूमि पक्षियों में सर्वोत्तम पक्षीवंश है यद्यपि इस पक्षी का सामान्य वेग 20 से 40 किमी. प्रति घंटा है। इसके लंबे, संकरे, नुकीले पंख पश्चकर्षण (Drag) कम करने तथा कम वेग पर अधिक उड़नशक्ति देने के लिए उपयुक्त हैं। इस कुल के लगभग सभी पक्षी आकाश में ही सारा भोजन प्राप्त करते हैं, (एक नाम 'वाताशिन'—वायु का भोजन करने वाला है और 'बतासी', उसका अपभ्रंश)। इनका (अबाबील का भी) मुंह उड़ते कीड़ों को सरलतापूर्वक पकड़ने के लिए चौड़ा होता है। 'ऑक्सफोर्ड बतासी' तो उड़ते उड़ते निद्रा तथा मैथुन कर लेते हैं। बतासी के चारों पादांगुल आगे की तरफ रहते हैं और पीछे की तरफ एक भी नहीं, इसीलिए यह शाखा या जमीन पर नहीं बैठ सकती। कुछ बतासियां अंडे सेने का काम भी लटककर करती हैं।

इसके घोंसले बस्तियों में विशेषकर मंदिर और मस्जिद में खूब मिलते हैं, (एक नाम देवकुल चटक)। बतासी अपने घोंसले घास तथा पंखों (हवा में पकड़े गए) को अपनी लार से चिपका कर छोटे गोलाकार में छतों, पुलों आदि की निचली

सतहों पर जोड़कर बनाते हैं। अपने घोंसलों की मरम्मत भी करते हैं और यदि उन्हें तोड़ा न जाए तब वे पुश्तैनी बन जाते हैं और लगभग 80 वर्ष तक उन्हें आबाद पाया गया है। चीनी लोग इसके भाई 'श्यावकटि बतासी' के घोंसलों का 'सूप' बहुत पसंद करते हैं। श्यावकटि बतासी घोंसले केवल अपनी लार से बनाती है। न तो यह सूप पौष्टिक होता है और न स्वादिष्ट, किंतु गलतफहमी से चीनी लोग इसे कामोद्दीपक मानते हैं और इसके घर नष्ट हो जाते हैं।

सितभ्रू कौड़ियाला Indian Pied or Lesser Pied Kingfisher

719. Ceryle rudis leucomelanura 720. C.r. travencoreensis (कैराली)

कद : मैना +, 31 सेमी.; आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : मछरंगा, *कौड़ियाला,* कौड़िल्ला, कड़ोना, टिटिहा, चितला किलकिला; **कच्छ** : किड़किड़िया; **गुजराती** : कबरों कलकलियो; **बंग्ला** : फटका मछरंगा, करिकट; **कश्मीरी** : होड़ कोला टोंच, सुफेद टोंट, डुडू; **काचा नागा** : इन्स्ड ग्ना; **तमिल** : मीनकोट्टि; **मलयालम** : पुल्लि पोंन्मान; **कछारी** : दाओनातु मेबेरांग; **मणिपुरी** : डारक्पी वाक्रेक; **सिंधी** : किंगर; **संस्कृत** : कपर्दिक, मत्स्यरंग, क्षत्रक, झम्पाशी।

पहचान : सफेद-काली कौड़ी के समान चित्रित पीठ, पीछे की तरफ जाती चितकबरी शिखाएं, सफेद भौंहें, **नीचे** : वक्ष पर दो काली मालाएं (किंतु मादा एक ही माला पहनती है), बाकी सफेद; लंबी सशक्त छुरे के समान नुकीली काली चोंच, सित किनार काली पूंछ, काले पैर। ('कैराली' इससे अधिक काला)।

यदि आप पानी के आठ-दस मीटर ऊपर किसी लंबी चोंच वाले, कौड़ी के समान चितकबरे पक्षी को एक ही स्थान पर उड़ते हुए (रंगण या थरथर करता हुआ) पानी पर नजर गड़ाए देखें तो आप समझ जाइए कि वह पक्षी सितभौंह कौड़ियाला है। कौड़ियाला की कलगीदार जाति (C. lugubris) हिमालय (सफेद गरदनी इसकी विशेष पहचान है) में पाई जाती है और कौए के बराबर होती है जबकि मैना के कद वाली 'सितभ्रू' (leucomelanura उपजाति) केरल छोड़कर सारे उपमहाद्वीप में पाई जाती है। इसका संस्कृत में एक नाम है 'मत्स्यरंग'—मछली के लिए नाचने वाला। कपर्दिक माने कौड़िया। तथा 'क्षत्रक' माने छाते की तरह आसमान में लटका हुआ। 'सितभ्रू' ही छत्रक है। जब इसे अपने शिकार लायक मछली दिख जाती है तब अपने पंख समेट सीधा गोता लागाकर (झम्पाशी) चोंच में मछली दबाए बाहर निकलता है। मछली को यह पटककर मार कर खाता है।

मत्स्यरंग वंश (Alcedo) तथा कपर्दिक (कौड़िया) (Ceryle) वंश के पक्षी **प्रणय** निवेदन के समय मादा को भोजन भेंट करते हैं। अधिकतर जोड़े में दिखता है। पानी के पास चट्टान या शाखा पर बैठा कभी कभी अपनी पूंछ ऊपर की ओर झटकता हुआ तथा सिर को ऊपर नीचे मटकाता हुआ देखा जा सकता है। इसका घोंसला (बिल) भी सितवक्षी कत्थई किलकिले के समान नदी या नहर के किनारे, खड़ी मिट्टी में एक डेढ़ मीटर लंबी, सात-आठ सेमी. व्यास की सुरंग के अंत में छोटा-सा कक्ष होता है। इसमें यह कोई बिस्तर नहीं बिछाता। ये घोंसले गंदगी के लिए बदनाम हैं। **बोल** : अक्सर उड़ान में, 'चिर्रूक चिर्रूक', तेज तथा ऊंचे स्वरों में होते हैं। **प्रजनन** : इसका प्रजननकाल, घोर वर्षाकाल को छोड़कर लगभग सारा वर्ष है, वैसे मुख्यतया फरवरी-अप्रैल होता है। मादा एक खेप में 5-6 धवल चमकदार, लगभग गोल अंडे देती है। अंडों का औसत परिमाण 29.9 × 21.4 मि. मी. होता है, किंतु कश्मीरी अंडे थोड़े बड़े होते हैं।

मत्स्यरंगों या कपर्दिकों की उपस्थिति प्रमाण है कि आसपास के जल स्रोतों का जल जीवंत है। दोनों कुल के **आहार** मछली, बैंगची, जलकीट, छोटे मेंढक आदि हैं। **नर-मादा** गृहस्थी का सारा काम मिलकर करते हैं। इन्हें एक बुद्धिमान पक्षी मानना चाहिए क्योंकि यह अक्सर मछली को चारा देकर भी पकड़ते हैं।

नील/केसर मछरंगा Indian Small Blue Kingfisher

723. Alcedo atthis bengalensis *722. A. a. pallasii (मध्य एशियाई)*
कद : गौरैया +, मछरंगा, **18 सेमी.; आवासी** *724. A.a. taprobana* (दक्षिणी)

स्थानीय नाम : **हिंदी** : *मछरंगा,* छोटा किलकिला, नीका किलकिला, नीटा *मछराला;* शरीफन; **कश्मीरी** : कोला टोंच, छोटा टोंट, टुंटु; **मराठी** : खंड्या; **गुजराती** : लगोथी; **बंग्ला** : छोटा *मछरंगा;* **लेप्चा** : उंग चिन; **कछारी** : दाओ नातु कशीबा; **तमिल** : मीन कोट्टि; **तेलुगु** : नीला बुचेगदु; **मलयालम** : पोडि पॉन्म; **संस्कृत** : मणीचक, सुचित्रक, मत्स्यरंक, मीनरंक, मत्स्यरंग।

पहचान : ऊपर हल्की फीरोजी आभा लिए चटकीले नीले के बीच केसरी कनपटी, प्रगाढ़ नीली चोंच, तथा लाल पैर, पंखों पर सफेद किनार; नीचे केसरिया; अत्यंत सुंदर, चुस्त तथा आकर्षक पक्षी। **नर-मादा** एक समान।

एक **पाश्चात्य** प्रचलित कथा के अनुसार नूह की नाव में 'धूसर किलकिला' भी था, पूर उतरने पर जब वह पश्चिम दिशा के डूबते सूरज की तरफ उड़ा तो उमंग में उड़ता ही चला गया जिससे उसके सामने के पंख जलकर केसरी रंग के

हो गए, तथा पीछे सांध्य आकाश के नीले रंग उसे मिल गए। **ग्रीक** कथा के अनुसार किलकिले खुले समुद्र में अपना नीड़ बनाते थे। समुद्र देवता उनके प्रजननकाल में (मकर सक्रांति) दया कर समुद्र को पंद्रह दिन के लिए शांत कर देते थे। इसीलिए ग्रीक में इनका नाम hals (समुद्र) तथा kyon (गर्भधारण)—halkyons है; लेटिन में यह halcyon हो जाता है जिसका अर्थ होता है शांति तथा व्यवस्था के दिन।

संस्कृत में इसे 'मणिचक्र' तथा 'मणिचक्रं प्रसूनं' मणि अथवा पुष्प के समान कांतिमान कहा गया है, वैसे नीले किलकिलों को मत्स्यरंक अथवा मीनरंक (जिसे मछली बहुत पसंद हो) कहा गया है। **प्रजननकाल** मार्च-जून। मादा एक खेप में 5-7 धवल चमकदार (21.2 : 17.6 मि.मी.) अंडे देती है।

किसी वृक्ष की डाली पर बहुत ही चौकन्ना बैठा यह मछरंगा अचानक गोता लगाता हुआ, पानी के भीतर जाकर, एक मछली को आड़ा मुंह में दबाए बाहर निकल आता है और किसी सुरक्षित टहनी पर बैठ जाता है। यदि मछली बड़ी है तब उसे पटककर ठंडा कर देता है। मछरंगे या किलकिले चोंच में किस ढंग से कैसी मछली पकड़ते हैं, उसे देखकर काफी कुछ बतलाया जा सकता है। यदि मछली बड़ी है तथा उसका मुंह गले की तरफ है तब वह उसे स्वयं खाने वाला है। यदि मछली का मुंह चोंच के बाहर की तरफ है, तब वह उसके जीवन साथी के लिए है, और यदि मछली बहुत छोटी है, तब वह शावकों के लिए है। अक्सर यह भी पानी से 2-3 मीटर ऊपर रंगण करता है, इसीलिए इसका नाम 'मछरंगा' है।

इस जाति की तीन उपजातियां भारत की शोभा बढ़ाती हैं—'pallasii' उत्तर पश्चिम से मध्य भारत तक, जो कश्मीर में प्रजनन करती है; (pallasii मध्य एशिया में भी मिलता है); 'taprobana' जो 20° अक्षांश के दक्षिणी भारत में विचरण करती है; नील/केसर bengalensis (उत्तरी) जो 20° अक्षांश के उत्तरी भारत को तथा दक्षिण-पूर्वी एशिया को भी आबाद करते हैं। इसका एक चचेरा भाई *(A. hercules)* नील/केसर बिंदुकित मछरंगा है जो इससे बड़ा होता है किंतु उसकी कनपटी नीली होती है तथा वह उत्तर-पूर्व भारत में मिलता है। दूसरा चचेरा भाई *(A. meninting)* (Blueeared king fisher) जामुनी/केसर सिताली किलकिला है जो पूर्वी भारत तथा श्रीलंका में मिलता है। इन सगे तथा चचेरे भाइयों की अलग पहचान एक कुशल निहारक ही कर सकता है।

खंड्या कथ-किलकिला (Indian) Whitebreasted Kingfisher

736. Halcyon smyrnensis fusca *735. H. s. s.* (*पश्चिमी*)

कद : मैना +, 28 से.मी.; आवासी *737. H. s. perpulchra* (*पुरबिया*)

738. H. s. saturatior (*अंडमानी*)

स्थानीय नाम : हिंदी : *किलकिला,* कौड़िल्ला, टंकी; **बंग्ला :** शंदाबुक मछरंगा; **असमिया :** लाली माछ सोरई; **गुजराती :** *कलकलियो;* **मराठी :** खंड्या; **तेलुगु :** लकमुका, बुचेगडु; **तमिल :** विचुलि, मीनकोट्टि; **मलयालम :** पान्यन; **सिंधी :** दलेल; **कश्मीरी :** पारिम कोला टोंच; **संस्कृत :** मणीचक, चंद्रकांत, मत्स्यरंक, खंडेंदु।

पहचान : चमकदार फिरोजी पीठ, पंख, तथा पूंछ। ठोड़ी, कंठ और वक्ष, कांतिमान सफेद; कूब, सिर, गरदन तथा उदर कत्थई; पैर तथा लंबी सशक्त नुकीली चोंच मूंगई लाल। **नर-मादा** एक समान। लगभग सारे भारत में सुलभतम।

यह पक्षी भी इतना सुंदर है कि मात्र 'खंड्या कथ-किलकिला' कहने से उसका आभास नहीं होता है जितना संस्कृत के नामों—'चंद्रकांत' तथा खंडेंदु (चंद्र का खंड) में। अधिकतर उसे झीलों, तालाबों, झरनों के किनारे किसी वृक्ष पर मछली की ताक में बैठा पाएंगे। इन स्थानों से भी दूर इसे आप पा सकते हैं क्योंकि यह चिड्डे, कीड़े-मकोड़े, झींगुर, टिड्डे, उड़ती दीमक, छोटे पक्षी आदि भी बड़े चाव से **खाता** है। इसके रंग में अन्य मछरंगों तथा किलकिलों की अपेक्षा नीला रंग कम होता है तथा कत्थई रंग अतिरिक्त होता है जो यह दर्शाता है कि यह पानी से दूर भी जाता है। इसीलिए यह भारत में अन्य किलकिलों की तुलना में सर्वाधिक क्षेत्रों को अपनी सुंदरता देता है। यह आवासी वर्षा के साथ स्थानीय प्रवास करता है। यह 'प्रादेशिक' पक्षी अपने क्षेत्र की रखवाली करता है। अन्य किलकिलों की अपेक्षा यह लटोरों की तरह अपनी डाल से उड़ते कीड़ों को चोंच में पकड़ता है।

प्रजनन ऋतु आने पर, क्षेत्र के ऊंचे वृक्ष पर बैठकर खूब गाना गाता है—वह चाहता है कि इसका गान न केवल कोई मादा सुने, वरन पास पड़ोस के नर भी सावधानी से सुनें। गाने के साथ साथ यह पंख खोलकर अपने चमकदार रंग भी बहुत दिखलाता है। इसके बोल 'किललिल' की लहरों के समान होते हैं, शायद यह किलकारी के समान हंसकर अपना सुख दर्शाता है; प्रत्येक 'किललिल' के पश्चात एक हल्का कठोर स्वर भी होता है। मादा भी जब आकर्षित होकर पास आती है तब वह उत्तेजित अवस्था में अपने पंखों को थोड़ा-सा खोल थिर थिर कंपित होती है और 'किट किट किट किट' गान हल्के स्वर में सुनाती है। इसका **प्रजननकाल** स्थान के अनुसार जनवरी से अगस्त तक होता है। मादा एक खेप में 4 से 7 अंडे तक देती है। अंडे सफेद, गोल से अंडाकार (29 गुणा 26 मि.मी.) होते हैं।(सुरंग बनाने,

अंडे सेने तथा पालन पोषण में 'कुल'-प्रथानुसार नर-मादा मिलकर काम करते हैं। इनका प्रणय व्यवहार अभी ठीक से ज्ञात नहीं है तथा प्रणय गान या प्रणय नृत्य भी।

ये चार भाई हैं। इसका नाम देने वाली (नामांकितक) उपजाति (735) smyrnensis मुख्यतया उत्तर-पश्चिम भारत में मिलती है। तीसरी, (737) perpulchra पूर्वी मध्य प्रदेश, उत्तरी आंध्र प्रदेश से लेकर पूर्वांचल तक मिलती है। चौथी (738) saturatior अंडमान के घने जंगलों और द्वीपों को आबाद करती है, fusca मुख्यतया तीनों के क्षेत्र के अतिरिक्त भारत को आबाद करती है; इसके अन्य भाई इससे अवश्य पूछ सकते हैं कि इसका कत्थई रंग उनके कत्थई रंग से तेज क्यों ? हमेशा की तरह चारों में सुनिश्चित भेद करना कठिन काम है।

पिंग/तूतिया पत्रिंगा **Small Green Bee-eater**

750. Merops orientalis o.

कद : बुलबुल पूंछ; 21 सेमी.; आवासी

749 M .o. beludschicus (सिंध)

751. M.o.bimanus (पूर्वांचली)

752. M.o. ceylonicus (श्रीलंकाई)

स्थानीय नाम : हिंदी : *पत्रिंगा,* पतैना, हरियल; **मराठी** : वेदराधू, पतुर, *पतेरी,* दिव्यक, ताईलिंगी; **कश्मीरी** : टुलरी खाव; **गुजराती** : नानो *पत्रंगियो;* **बंगला** : बनस्पति; **असमिया** : हरियल सोराई; **कच्छ** : छोटा हजमदा; **तेलुगु** : चिन्ना पज़ेरिकी; **मलयालम** : वेलि तट्टा; **तमिल** : कट्टलन कुरुवि, पंचांकम; **सिंधी** : नांदो वन्नाक्लो, अटेडन; **संस्कृत** : शार्ग, कीर्शा, पिप्पिका, कुलाली शकुनिका, शब्दवेधी, स्तम्बमित्र, ब्रह्मवादिनः।

पहचान : पीताभ हरित पंख, पिंग कपाल; लंबी काली वक्र चोंच की रेखा में काला काजल; तूतिया कल्ला; कंठ पर काली रेख, बाण-सी लंबी पूंछ, एकदम छरहरा पक्षी। हवा में उड़ते हुए कीड़ों को अपनी सरकसी उड़ान से पकड़ने में कुशल। **नर-मादा** एक समान। (अधिकांश पत्रिंगों में हरा रंग होता ही है, इसलिए यहां नाम में 'हरा' शब्द अतिरिक्त ही होता)।

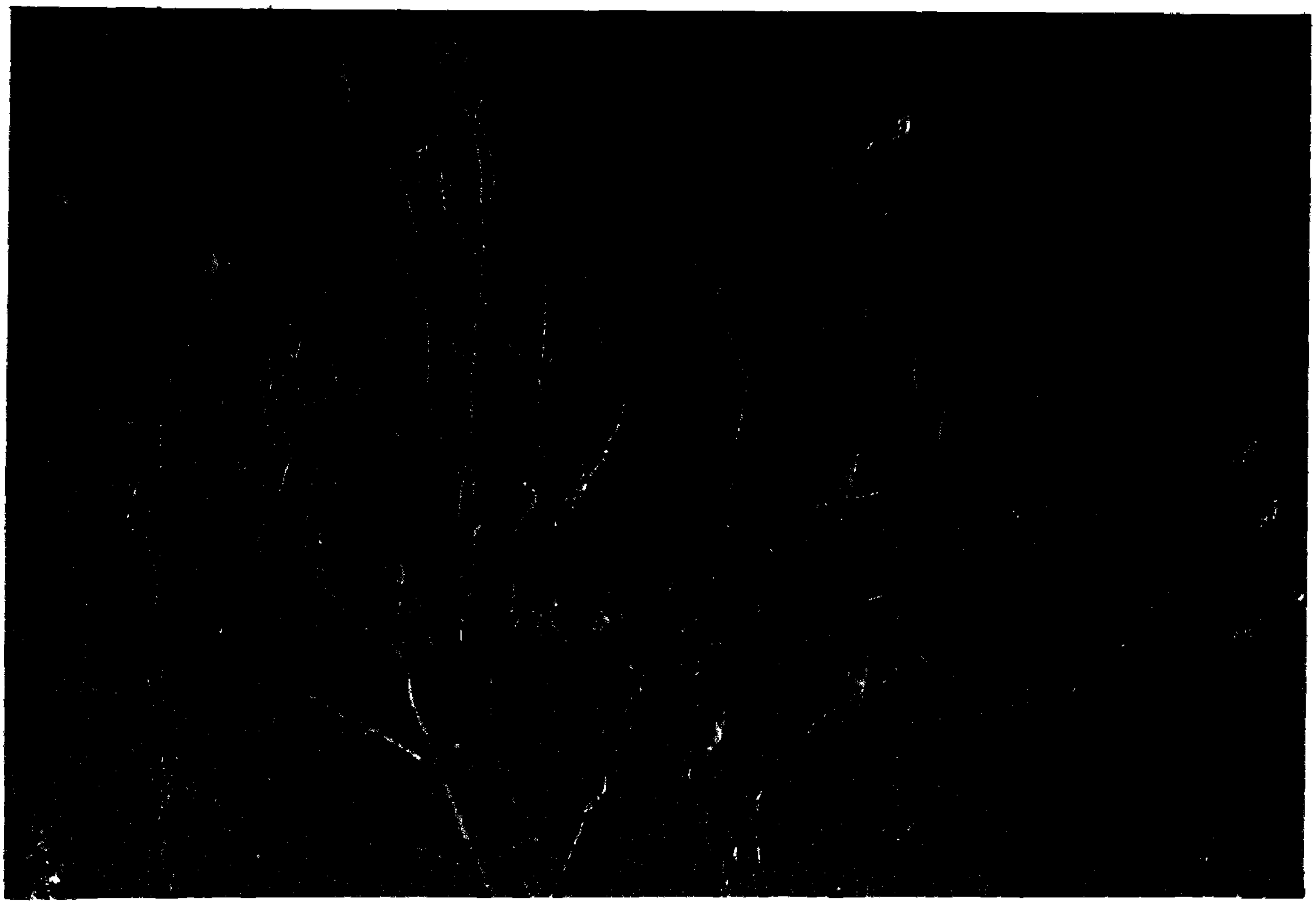
पत्रिंगा-पक्षियों की शारीरिक रचना और बाण की रचना में थोड़ी समानता है और दूसरे, अपनी कुशल कलाबाजी के साथ से बाण की तेजी-सा हमला भी कीड़ों पर करते हैं। इस (कुल *meropidae*) के पक्षियों के रंग तो बहुत सुंदर होते ही हैं, इनमें से अधिकांश जातियों के गान भी बहुत मधुर होते हैं। इसलिए संस्कृत में इन्हें 'ब्रह्मवादिनः' भी कहते हैं और मराठी में 'वेदराघू' (वेद तोता)। करंज वृक्ष (Pongamia glabra) को 'शर्गेष्ट' भी कहते हैं क्योंकि करंज जब फूलता है तब



25 क — कथसिरी गंगचील+कलसिरी गंगचील (454+455)



25 ख — चंद्रकंधी सिकतार (401)



26 क – सोनकंठा हरियल (503)



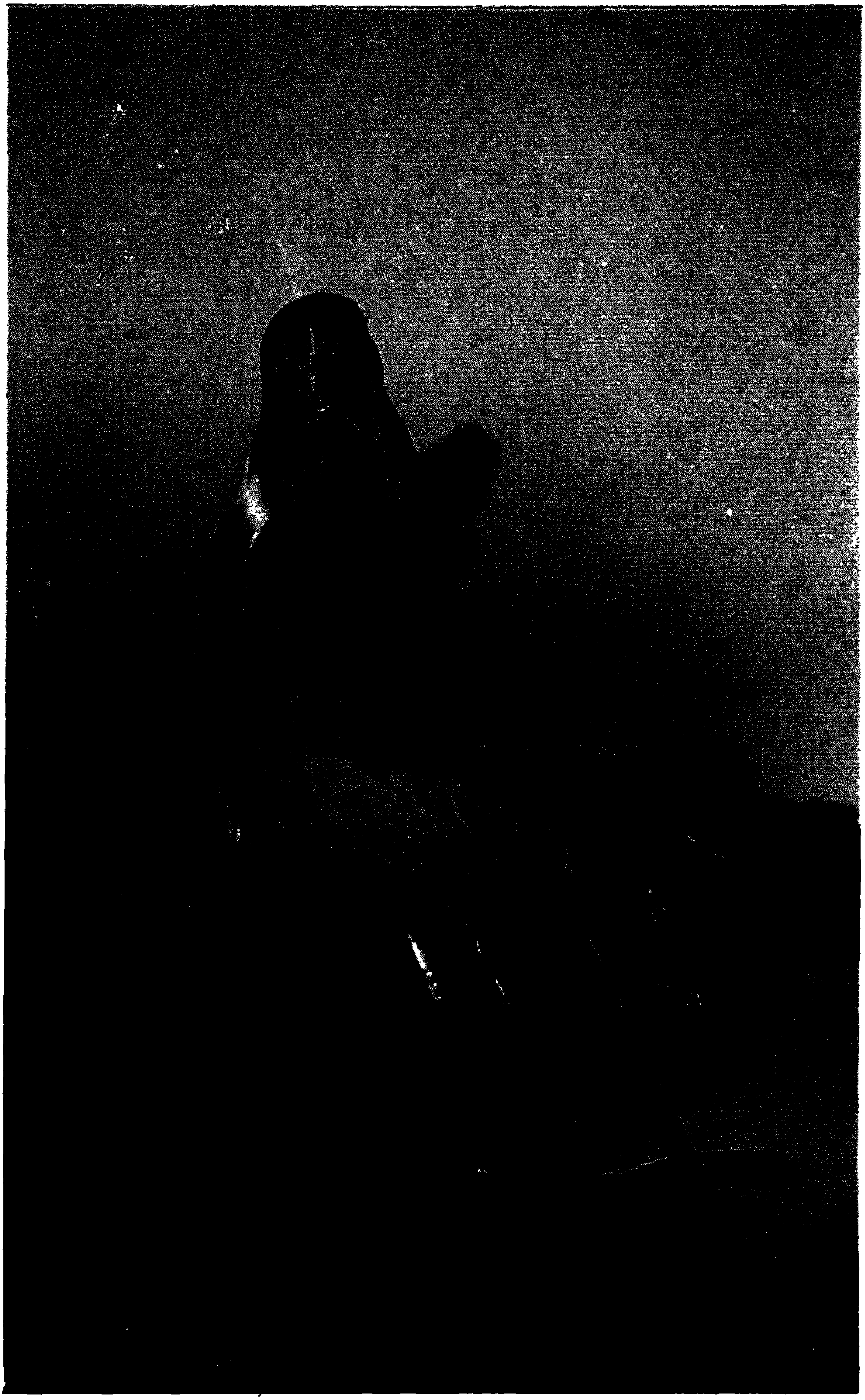
26 ख – धूमिल पारावत (517)



27 क — कलकंधर नीलक पंडुक (534)



27 ख — सुकिनार नीलक पंडुक (541)



28 ललकलकंठी तोता (549)



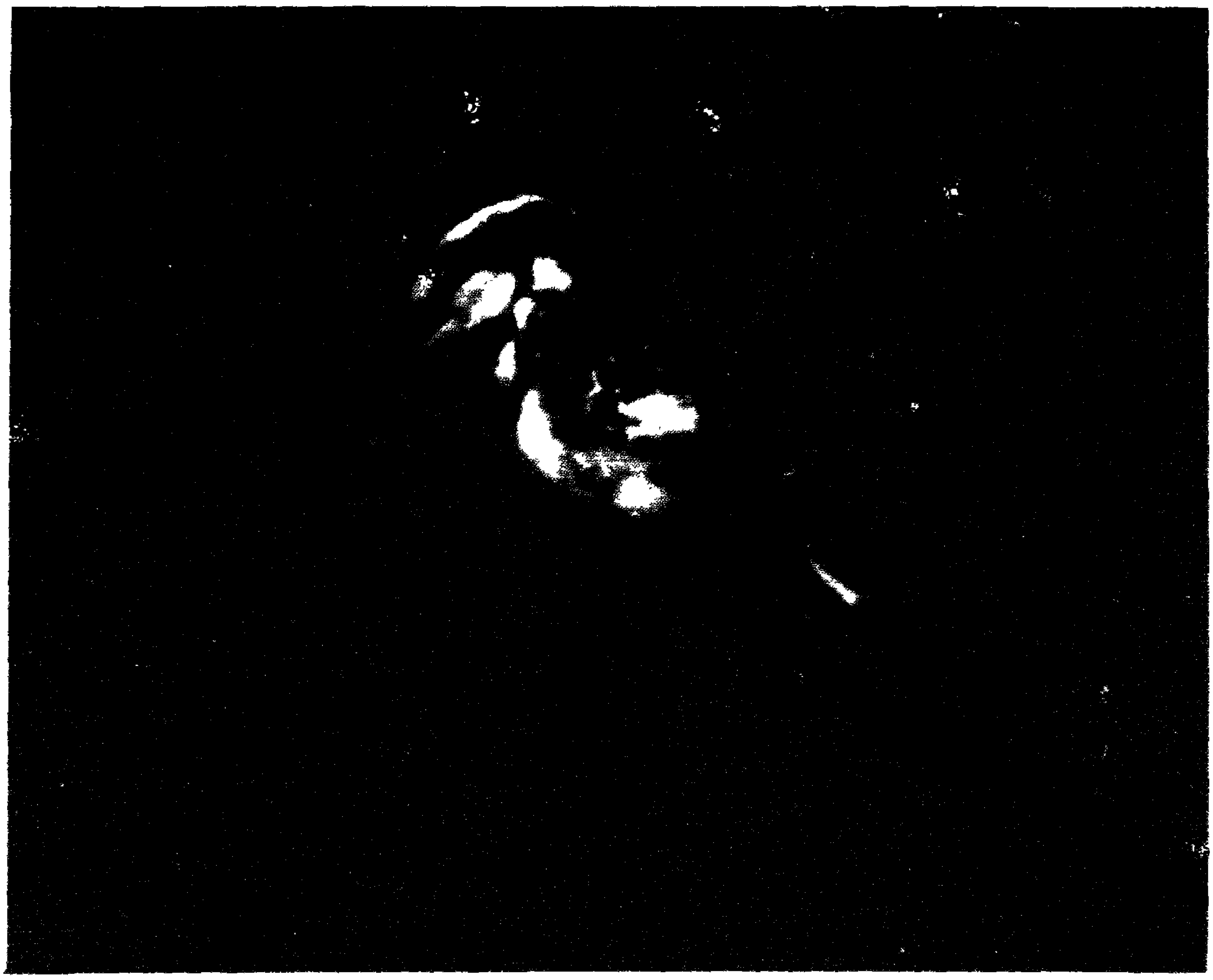
29 कल/सित चातक (570)



30 क — पांगरपंख कुक्कुभ (600)



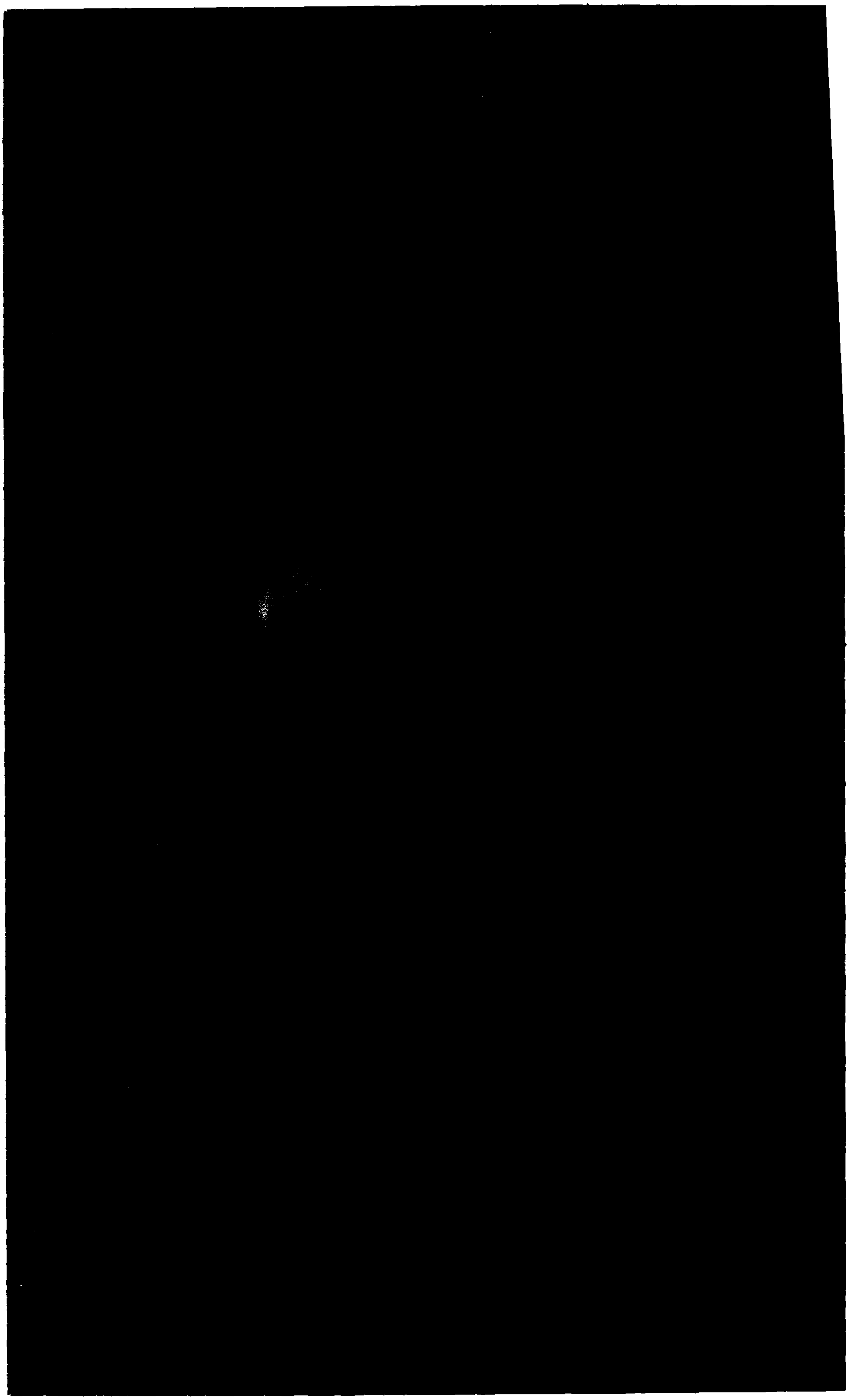
30 ख — चीतल पैंचा (650)



31 क – सितभ्रू कौड़ियाला (719)



31 ख – नील/केसर मछरंगा (723)



32 खंड्या कथ-किलकिला (736)

असंख्य मधुमक्खियों को आकर्षित करता है जिसके फलस्वरूप शार्ग (पत्रिंगा) को भी यह वृक्ष प्रिय है।

फरवरी से जून तक **प्रजननकाल** में मादा एक खेप में 4 से 7 अंडे तक देती है। मादा अंडे 24 घंटे से अधिक अंतराल में देती है। नर-मादा सेने का काम तथा शावकों का लालन-पालन मिलकर करते हैं। महाभारत में एक वर्णन है—जंगल में आग लगने पर, मादा पत्रिंगा अपने शावकों से चूहे के बिल में छिपने के लिए कहती है। पत्रिंगा अपना घोंसला (बिल ?) किलकिले के समान खड़ी रेतीली दीवार पर लगभग चार सेमी. व्यास की डेढ़ मीटर लंबी सुरंग के अंत में गोलाकार-सा बनाते हैं। कभी कभी जमीन पर भी ऐसी गहरी सुरंग बनाते हैं। हरे पत्रिंगे का एक नाम है 'कुलाली शकुनिका'—जमीन पर या उसके भीतर लालन-पालन करने वाला छोटा पक्षी। अधिकतर ये अपने शावकों के लिए नरम बिछौना बनाकर उनकी आदतें नहीं बिगाड़ते।

पत्रिंगे चींटियां, मधुमक्खियां और बर्र को अपने **आहार** के लिए पसंद करते हैं, किंतु दीमक, व्याध पतंग (ड्रेगन फ्लाई) और अन्य उड़न कीड़ों को भी खाते हैं। पुराणों के अनुसार झूठे आरोप लगाने वाला व्यक्ति दूसरे जन्म में हरा पत्रिंगा होता है और दंड स्वरूप उसे तेज डंक वाली बर्र या मधुमक्खी को खाना पड़ता है—यह काव्यात्मक दंड है !

इसका सिंधी भाई (749) beludschicus उत्तर-पश्चिमी भारत को आबाद करता है। इसके सिर तथा 'घाटा' के 'पिंग' पर सुनहली आभा, कंठ पर भी हल्की पीली आभा। इसके दक्खिनी भाई (751) Ceylonieus का सिर भी अधिक स्वर्णिम आभा लिए रहता है तथा वक्ष की काली रेखा एक पट्ट में बदल जाती है।

'Early bird catches the worm' के खिलाफ यह सूरज निकलने के काफी बाद शिकार के लिए निकलता है। अपने कौशल से आपसी प्रतियोगिता को कम करने का एक तरीका यह भी है।

पाटलग्रीव नीलकंठ Indian Roller (Blue Jay)

755. Coracias benghalensis b. *756. C.b. indica (दक्षिणी)*
कद : कबूतर, 31 सेमी.; आवासी *757. C.b. affinis (पूर्वांचली)*

स्थानीय नाम : हिंदी : *नीलकंठ,* नीलयी, सब्ज़क; **बंग्ला :** *नीलकंठ;* **मराठी :** तास, चाष; **गुजराती :** देशी *नीलकंठ,* **कश्मीरी :** नीलक्राष; **तेलुगु :** पाला पिट्टा; **तमिल :** काट्टु कादेई, पाल कुरुवि; **मलयालम :** पनकक्का; **सिंधी :** चारी; **संस्कृत :** चाष, महायोगी, *नीलकंठ,* नीलांग चाष, पुण्यदर्शन, चित्रवाज, मणिकंठ, स्वस्तिक, अपराजित, किकिदीवि (कि कि बोल के आधार पर), राजविहंगम,

चलपुच्छ, माजल।

पहचान : मुख्यतया विभिन्न नीली तथा भूरी आभा वाले रंगों का पक्षी, फिरोजी शिखर, चोंच कौए के समान भारी; किंतु छोटी; कपोल, ग्रीवा तथा वक्ष सफेद धारियों सहित नीलक-भूरा; वक्ष की तुलना में कंठ प्रगाढ़; पीठ हरिताभ भूरी; पंख और पूंछ फिरोजी तथा उनके किनारे नीलित; **नर-मादा** एक समान।

पाटल या भूरे कंठ वाले पक्षी का नाम 'नीलकंठ' क्यों ? क्या वैदिक कालीन आर्य लोगों ने **कश्मीरी नीलकंठ** *(C. garrulus)* के नीले कंठ को देखकर उसका जो नाम 'नीलकंठ' रखा था वही कालांतर में शेष भारत में पाए जाने वाले 'पाटलग्रीव नीलकंठ' पर भी लागू हो गया ? इसका मणिकंठ नाम पाटल कंठी के लिए अधिक सटीक है। अक्सर यह अपनी पूंछ हिलाता है ('चल पुच्छ')। इसे सूखे क्षेत्र पसंद हैं ('माजल')।

यह पक्षी नुकसान पहुंचाने वाले कीड़े-मकोड़ों, टिड्डी, गुबरैलों, चूहों, मेंढकों, छोटे सांपों आदि को विशेष रूप से **आहार** बनाता है। और दूसरे, नीलकंठ नाम से इसे भगवान शंकर (नीलकंठ, 'महायोगी') का विशेष स्नेह प्राप्त हुआ है। दशहरे के दिन इसके दर्शन शुभ ('स्वस्तिक') माने जाते हैं। इसलिए लोग दूर दूर तक इसके दर्शन करने जाते हैं ('पुण्यदर्शन')। भारतीय प्रकृति **संरक्षण** की पद्धति ऐसे ही चुपचाप काम करती है। यद्यपि इसके लिए 'नीलपंख' नाम सटीक होता किंतु 'नीलकंठ' नाम में भारतीय संस्कृति की आकर्षक तथा उपयोगी ध्वनियां हैं।

बेतार के तारों पर इसे अक्सर बैठा हुआ देखा जा सकता है कभी अकेले और कभी जोड़े के साथ; और खेतों में भी। ये कीड़ों का शिकार सरलता से करता है (पकड़ने के बाद उसे पटककर मारता भी है) जो इसकी तेज दृष्टि तथा उड़न कौशल का परिचायक है। इसकी सामान्य उड़ान भी मस्त लहरियेदार होती है। आधुनिक लड़ाकू वैमानिक जितने भी करतब कर सकते हैं उन सभी का ये सुंदर 'नीलकंठ' अपने प्रणय नृत्य में प्रदर्शन करता है। पहले तो ये सीधे ऊपर चढ़ता है–मिग 29 के समान, फिर वहां लहरें बनाता है, फिर बेलन की तरह घूमता है (roll) (इसीलिए नाम Roller), पंख समेट उलटे मुंह गोता लगाता है (Hammer-slide), फिर ऊपर चढ़ता है, वृत्त (loop) बनाता है, गोता (dive) लगाता है और साथ साथ विमान की तरह जोर से आवाज भी लगाता है। उसके इस अद्‌भुत करतब के समय उसके नीले रंग पूरी भव्यता में चमकते हैं। अक्सर इस प्रणय नृत्य में **मादा** भी रीझकर जुड़ जाती है और बराबरी से नृत्य करती है। इसका *(Coraciidae)* नीलकंठ कुल अपने **हवाई करतबों** के लिए विख्यात है। इस कुल के पक्षियों के दो पिछले पादांगुल लगभग जुड़े रहते हैं, इसलिए ये जमीन पर चलने के बजाय अटपटे फुदकते हैं। नर-मादा गृहस्थी के कार्य मिलकर करते हैं।

बदामी शेखर पुत्रप्रिय (Eurasian) Hoopoe

763. Upupa epops e. *764 U.e. saturata (उत्तरी)*
कद : कबूतर, 31 सेमी.; आवासी तथा प्रवासी; *765 U.e. ceylonensis (भारतीय)*
766 U.e. longirostris (पूर्वांचली)

स्थानीय नाम : हिंदी : खुट बढ़ई, पत्थर फोड़, दुप्चरा, हुदहुद : खटोला, नावा; खाती; **(हिमाचल)** सुकड्डु; **बस्तर** : सीन कोर्का; **बंग्ला** : हुपो; **मराठी** : हुद्हुदए सुतार; **कश्मीरी** : सतूत; **गुजराती** : हुदहुद, घंटी टांकनो; **तेलुगु** : किरीटम पिट्टा, कूकुड्डु गुव्वा; **तमिल** : उकुम कुरुवि, चावल कुरुवि; **मलयालम** : उप्पुप्पन; **मणिपुरी** : सांगरब; सेगिरब; **कछारी** : दाओहुडुप; **सिंधी** : कटकटो; **संस्कृत** : *पुत्रप्रिय* कठाकु, कठारु, कुकुट्टक।

पहचान : बदामी अगाड़ी, सीपिया पंख और पूंछ; तथा सीपिया निचली पीठ पर सफेद पट्टियां; बदामी पंखाकार भव्य किरीट पर काले और सफेद नग (उड़ान में पंखाकार शिखा बंद होकर लंबी शिखा बन जाती है)। लंबी पतली अधोवक्र पतली चोंच कठफोड़वा की मोटी नुकीली चोंच तथा फूलचुही की नाजुक चोंच के बीच में है। (अधिकतर यह कीड़े मकोड़े वृक्ष पर नहीं (कुछ कठफोड़े तो जमीन पर उतरते ही नहीं) जमीन पर खोजता है। 'बदामी शेखर', 'पुत्रप्रिय कुल' तथा 'मत्स्यरंग गण' का पक्षी है और इसी गण में एक कुल है–'प्रियात्मज' कुल *(Bucerotidae)* जिसके वंश के धनेश पक्षी और 'पुत्रप्रिय' कुल *(upupidae)* के 'बदामी शेखर' के **गुणों में बहुत समानता है** : दोनों ही कीट भोजक हैं जिन्हें वे अधिकतर जमीन पर ढूंढ़ते हैं। दोनों की मादाएं अंडे सेने से लेकर उनके उड़ान योग्य होने तक अपने शावकों को एक क्षण के लिए भी नहीं छोड़तीं। दोनों के नर इस अवस्था में अपनी मादाओं का पूरा भरण पोषण तथा रक्षा करते हैं। भारत में 'पुत्रप्रिय कुल' की एक ही जाति (चार उपजातियां) है।

हुदहुद यूरोपी लोगों के अनुसार 'उप उप' बोलता है (लातिनी नाम 'upupa'); फारसियों के अनुसार 'हुद हुद' बोलता है। आर्यों के अनुसार 'पुह पुह' या 'पुत्र पुत्र' बोलता है, संस्कृत नाम *'पुत्रप्रिय'* संतान प्रिय होने से सटीक तथा काव्यमय नाम है। बोलते समय यह अपना सिर हिलाता है तथा इसकी चोटी भी बार बार खुलती और बंद होती है। संस्कृत नाम : 'कठाकु' खूंटियों से जमीन की माप जोख करने वाला या हिंदी में खुट बढ़ई (मराठी में 'सुतार')। हिंदी नाम 'पत्थर फोड़' (संस्कृत 'कुकुट्टक') एक तो, अपनी लंबी चोंच जमीन में बार बार डालता है और दूसरे, लंबी चोंच तथा पीछे लंबी चोटी (जो खोजते समय नुकीली रहती है) मिलकर इसे **'कुदाली'** का रूप देते हैं। जमीन पर उतरते समय इसकी शिखा फैल जाती

है, पुराणों, महाभारत आदि में इस पुत्रप्रिय के प्रति बहुत प्रेम मिलता है।

इन्हें हिमालय पार से आते हुए 6,400 मीटर की ऊंचाई पर देखा गया है। गर्मियों में यह हिमालयी तथा उत्तरी क्षेत्रों में ही रहता है और शीतकाल में भारत के दक्षिणी प्रायःद्वीप तक **प्रवास** करता है। यह 'प्रादेशिक' पक्षी है। **प्रजननकाल** (मार्च-जून) में अपने क्षेत्र की रक्षा करने के लिए अन्य नर हुदहुद से लड़ने के लिए तैयार रहता है। दोनों नर, अपनी शिखा को पूरी ताने हुए, अपनी चोंच को लगभग जमीन से छूते हुए, आक्रामक रूप से एक-दूसरे की तरफ बढ़ते हैं। तथा पास पहुंचने पर, एकाएक एक दूसरे की चोंच पकड़कर, हिलाते हैं और दूसरे को गिराने की कोशिश करते हैं, अपनी चोंच से एक दूसरे पर प्रहार करते हैं जब तक कि उनमें से एक भाग न जाए। यह अपने घोंसले वृक्ष के कोटरों, मिट्टी या पत्थर की दीवारों (गांव में) के छेदों में बनाते हैं जिसमें ये घास, पत्तियां, ऊन, पंख इत्यादि भी बिछाते हैं।

कलनक श्याव धनेश Grey Hornbill

767. Tocks birostris

कद : चील 61 सेमी.; आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : धन्मार, थॉड, थनेल, शिंगचोंचा, लमदार, चलात्रा, *धनेश,* सैलगिल्ली, सिरखिली; **बंग्ला** : पुटियल *धनेश;* **मराठी** : भिनास; **गुजराती** : चिलोत्रो; **तेलुगु** : रुडु मुक्कुल, हिवांग; **संस्कृत** : वार्ध्रीणस, मातृनिंदक, प्रियात्मज, खट्वांग।

पहचान : भारी काली-सी वक्र चोंच जिसके ऊपर नासिका के समान **काली** (नाम कलनक) बनावट; छोर पर सफेद काली पट्टी सहित लंबी क्रमांकित पूंछ; छरहरा श्याव पक्षी। इसकी चोंच में आरे के समान दांते बने रहते हैं। आंखों में बरौनियां। **नर-मादा** एक समान किंतु मादा की नासिका थोड़ी छोटी (यह तथाकथित नासिका नाक का काम नहीं करती)।

राजस्थान, गुजरात के सूखे क्षेत्रों को तथा अत्यधिक वर्षा वाले केरल, असम को छोड़कर सारे **भारत** में पाया जाता है। इसे जंगली स्थान विशेषकर बरगद समान वृक्षों वाले जंगल पसंद हैं। क्योंकि इसके **आहार** में बरगद या पीपल सरीखे फल प्रमुख हैं, वैसे कीड़े-मकोड़े, छिपकलियां, चूहे आदि भी शामिल हैं। बुलबुल, हरियल, मैना आदि फलखोरों के साथ जमीन पर उतरकर मजे से गिरे हुए गूलर खाते हैं।

धनेश झुंडों में रहना पसंद करते हैं। एक वृक्ष से दूसरे वृक्ष पर भी झुंडों में उड़ते हुए तथा बोलते हुए जाते हैं। ये थोड़ी देर पंख चलाकर उड़ते हैं तथा थोड़ी

देर पंखों को ऊपर रखकर विसर्पन में उड़ते हैं। लंबी नासिका के समान चोंच पर बनावट होने के कारण इसका नाम वार्ध्रीणस (बड़ी नासिका) (संस्कृत में) है जिसका अपभ्रंश व्याग्धीनस और फिर **धनेश** हुआ। इसकी चोंच बड़ी अवश्य होती है किंतु भारी नहीं होती। इसकी बनावट शहद के छत्तों के समान षटकोणी खोखले 'सैंडविच' के समान होती है। ध्यान देने योग्य है कि इस तरह की 'सैंडविच' संरचना आधुनिक उन्नत लड़ाकू विमानों के निर्माण में की जाती है।

न केवल यह पक्षी देखने में विचित्र है वरन इसके द्वारा **शावकों** का लालन-पालन उससे अधिक मार्मिक, अनोखा और अद्‌भुत है। अंडा देने से पूर्व वृक्ष की पींड़ के एक कोटर में मादा बैठ जाती है तथा द्वार मिट्टी गारे से बंद कर दिया जाता है, केवल चोंच के प्रवेश के लिए पतली-सी खिड़की खुली छोड़ दी जाती है। और इसके बाद वह जब तक अंडा देती है, फिर सेती है और फिर शावक जब एक-दो सप्ताह का हो जाता है तब तक नर ही मादा तथा शावक को खाना खिलाता है। मादा के अंतःपुर में इस तरह बंद रहने की अवधि जाति के ऊपर निर्भर करती हुई 50-90 दिन तक हो सकती है। इस अवधि के बाद दरवाजे को तोड़कर मां बाहर निकलती है तथा नर-मादा फिर दरवाजे को बंद कर पतली-सी खिड़की छोड़ देते हैं तथा दोनों मिलकर उसे उड़ने योग्य होने तक खिलाते हैं और दरवाजा फिर मिलकर तोड़ा जाता है। इसका **प्रजननकाल** मार्च से जून होता है। एक खेप में दो या तीन अंडे देती है। नर द्वारा शावक और मादा दोनों का इतनी निष्ठा से लालन-पालन करने के कारण इसका नाम **'मातृनिंदक'** रखा गया है। अर्थात इनके उत्तम पालन की तुलना में अन्य माताएं (निंदनीय हैं) कहीं नहीं ठहरतीं।

विडंबना देखिए कि इसी संतानप्रिय गुण के कारण इसके गोश्त को जच्चा मांओं को विशेषकर दवा समझ खिलाया जाता है। जंगलों के कम होने के कारण इस प्रियात्मज की अतिजीविता खतरे में पड़ रही है।

ललौंछ–हरा कुटुरुं (बसंता) (Northern) Green Barbet

780. Megalaima zeylanica caniceps *781. M.z. inornata (पश्चिमी)*

कद : मैना +, 27 सेमी.; आवासी *782. M.z. z. (दक्षिणी)*

स्थानीय नाम : हिंदी : *हरा बसंता,* बड़ा *बसंता,* बुकरम, कुडुंगा, गुम्मा, *कोटुर,* सुंटेरर; **बंग्ला :** बड़ा बसंता, जोकरे पाखी; **हैदराबाद :** *कुटुम्रा;* **मराठी :** *कुटुर्गा;* **कन्नड़ :** *कुटुर* हक्की; **तेलुगु :** गंडु कर्णम; **मलयालम :** *कुटुरू* वन; **तमिल :** *कुटुर* कुक्कुरूवन; **संस्कृत :** *कुटरु।*

पहचान : वृक्षीय पक्षी, *अगाड़ी* सितरेखी हल्की भूरी ललौंछ। पिछाड़ी चमकीली सुआपंखी हरी; लाल चोंच मोटी मजबूत; परहीन चक्षुवृत्त नारंगी। पैर हल्के पीले। लहरिया उड़ान। **नर-मादा** एक समान। समय समय पर लगातार 'कुटुरुं' **बोल**। सभी बसंते रंगीन, मोटे ताजे, छोटी ग्रीवा, बड़े सिर तथा बड़ी और भारी चोंच वाले होते हैं। इनकी मूंछों को प्रारंभ में दाढ़ी समझकर Barbet नाम दिया गया था। पंख छोटे तथा गोलाई लिए होते हैं इसलिए उड़ान में ये कमजोर होते हैं।

गर्मी की तपती दोपहरी में भी यह 'कुटुरुं कुटुरुं' गाता रहता है। वाज संहिता (24, 39) में इसी शोर करने वाले गुण के कारण इसे (बिंदुकित श्वेतोलूक, Barn Owl तथा कल/सित दवाक को घुड़दौड़ के देवता को समर्पित किया गया है। (घुड़दौड़ उस पुरातन काल में!)। गर्मी की नीरव दोपहरी में जब एक ललौंछ—हरा कुटुरुं बसंता बोलना शुरू करता है तब पास-पड़ोस के सभी ललौंछ—हरे कुटुरुं बोलने लगते हैं। संभवतया दोपहर को विश्राम कर रहे किसी पंडित ने इसी कारण इन्हें अग्नि को समर्पण का श्राप दे दिया होगा ('अग्नये कुटरुन'—वाज सं. 24,23) अथवा, इसकी चोंच तथा आंखों की आग की लपटों के समान निराली सुंदरता को देखकर इसे अग्नि देव को समर्पण का वरदान मिला होगा !

यह निचले **हिमालय** से लेकर **गोदावरी** तक मिलता है। सूखे तथा गीले दोनों पतझड़ी वन इसे प्रिय हैं और पीपल, बरगद जैसे वृक्षों के फल, सेमल फूलों का मकरंद, कचनार के फूल; तथा कीड़े-मकोड़े आदि इसका **भोजन** हैं। शहर के वृक्ष वाले बागों में भी यह आ जाता है। इसका **प्रजननकाल** फरवरी से जून तक है। इनकी चोंच कठफोड़ों के समान मजबूत नहीं है। पुराने, विशेषकर सड़ रहे पेड़ों में या नरम लकड़ी के वृक्षों में नर-मादा जोड़े सहित कोटर बनाकर रहते हैं। कोटर बनाते समय जो लकड़ी का बुरादा कोटर में गिरता है वही बिछौने का काम करता है। इनका कोटर वृक्ष पर जमीन से ज्यादा ऊंचाई पर नहीं होता। सामान्यतया मादा एक खेप में 2 से 4 अंडे देती है। नीड़ निर्माण तथा अंडों को सेने तथा पालन-पोषण का काम नर-मादा मिलकर करते हैं।

बसंते अपना नीड़ बहुत साफ रखते हैं। नर-मादा दोनों साल भर रात्रि में घोंसले में ही **सोते** हैं। बसंतों की विश्व की कुल 72 जातियों में से 16 भारतीय हैं। अधिकांशतः बसंते मुख्यतः फलाहारी होते हैं किंतु कुछ जातियां कठफोड़वों के समान पींड़ों पर चढ़ती हुई कीड़े खोजती हैं और कुछ केवल कीट भक्षी होती हैं। अपने शावकों को सभी कीट ही खिलाते हैं। ये अमेरिका (12 जातियां), अफ्रीका (37 जातियां) तथा एशिया (23 जातियां) के भूमध्यरैखिक जलवायु क्षेत्रों में मिलते हैं। विभिन्न जातियों के कद 9. सेमी. से 30 सेमी. तक होते हैं। कुछ बसंते किलकिलों के समान रेत की दीवार में भी घोंसले बनाते हैं, और कभी कभी दीमकों के वल्मीकों के नीचे जमीन में भी।

सोनकंठ तम्हेरा (बसंता) Coppersmith

792. Megalaima haemacephala indica

कद : गौरैया +, 17 सेमी.; आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : कठफोड़ा, तांबायत, बसंत लिसोड़ा, छोटा *बसंत,* गुलबदना, *तम्हेरा,* फुक *बसंत;* **बंग्ला :** छोटा *बसंता* गौरी, भागीरथ; **असमिया :** *बसंत* सोरई; (नवगांव असम) हेतुलुक; **मराठी :** जुकटुक, *सोनार, तांबत;* **गुजराती :** टुकटुकियो; **तेलुगु :** टोकोजी, कम्सलि पिट्टा; **मलयालम :** चेम्पु कोट्टि; **तमिल :** सिन्ना कुकुरुवन; **संस्कृत :** डिंडिमाणवक, डिंडिमानक, हेमकर्तृ, हेमक, दंडिमाणव।

पहचान : नाटा मोटा; जैतूनी हरे रंग की पीठ; माथा चमकदार शोणित लाल तथा बाकी सिर काला। सुनहली ठोड़ी तथा सुनहले कंठ के नीचे शोण कंठा। आंखों पर सुनहला चश्मा। पांवों में चमकदार लाल महावर। पेट धारीदार हल्का हरा। **नर-मादा** एक समान। **व्यवहार :** बाग बगीचों में रहता है। सारे भारत में सूखे तथा नम वनों में **आवास**। नवंबर से जून (मुख्यतः फरवरी-अप्रैल) के **प्रजननकाल** में ये वृक्षों, विशेषकर पीपल सरीखे फलदार वृक्षों पर झुंड में पाए जाते हैं, तदुपरांत ये अकेले ही रहते हैं। अपने क्षेत्र की रक्षा के लिए अथवा मादा के लिए दो नर लड़ते हुए भी देखे जा सकते हैं, और प्रिया के लिए ये गाना गाते हैं, उसे फल भी खिलाते हैं। यह मुख्यतया शाकाहारी है। उड़ते हुए कीड़ों को पकड़ते समय इसकी उड़ान थोड़ी अटपटी लगती है। यह सारे भारत उपमहाद्वीप को तथा दक्षिण-पूर्व एशिया को **आबाद** करता है। बिना उपजातियों के अति विशाल क्षेत्रों को आबाद करने का अर्थ होता है इसकी उच्च अनुकूलनशीलता।

तपती और नीरव दुपहरी में पीपल, बरगद सरीखे वृक्षों की टहनियों से लगातार टुक टुक या पुप पुप **आवाज** सुनाई दे रही हो तो समझ जाइए कि 'टुकटुकिया' या तम्हेरा 'बसंता' अपना डंका पीट रहा है। इनका गान बसंत ऋतु आते ही सुनने को मिलता है, इसीलिए इन्हें **बसंता** कहते हैं और शायद इसलिए भी कि इनमें सुंदर बसंती रंग होता है। सर्दियों में यह बिलकुल नहीं बोलता, वरन आषाढ़ की पहली वर्षा ही इन्हें चुप (तृप्त !) कर देती है। ग्रहणकाल में निर्मोचन कर प्रजननकाल में ही नई पोशाक पहनते हैं और जैसे जैसे यह पोशाक पुरानी होती है, रंग बदलते जाते हैं। प्रजननकाल में इनका गान तो सुनाई पड़ता है किंतु हरी भरी टहनियों में एकरूप होने के कारण यह दिखाई मुश्किल से पड़ता है। **गान** के समय इसकी चोंच बंद रहती है, कंठ के बाजुओं में त्वचा फूलती है, और प्रत्येक पुप के साथ पिचकती है और पूंछ भी हिलती है, तथा सिर भी दाएं बाएं हिलता है। यदि गौर से देखें तो यह हिलते हुए अपने लाल पीले रंग के कारण नजर में

आ जाता है। लगता है कि कोई बालक ढोलक या मृदंग बजा रहा है (संस्कृत नाम ! 'डिंडिमाणवक')। माणवक माने छोटा लड़का जो इसके छोटे कद की तरफ भी इशारा करता है, डिंडि माने ढोलक। प्राकृत में डिंडिम का अर्थ होता है कांसे का बर्तन; हिंदी तथा मराठी में इसे 'तम्हेरा' कहते हैं मानो वह तांबे के बर्तन पर टुक टुक करता है (अंग्रेजी नाम Coppersmith) किंतु मनुस्मृति तथा मराठी में इसे सुनार (हिमकर्तृ) की सटीक उपाधि दी गई है। एक तो इसके गले में सुंदर सुनहला और मणियों का हार तथा दूसरे सुनार की हथौड़ी की तरह हल्की हल्की टुक टुक।

तम्हेरा बसंता अपना **घोंसला** वृक्ष में, स्वयं या किसी अन्य पक्षी द्वारा, बनाए गए कोटर में बना लेता है, वहां कुछ घास-फूस भी नहीं बिछाता। मादा एक खेप में आमतौर पर 2-4 अंडे देती है और एक वर्ष में दो खेप। नर-मादा गृहस्थी के सारे कार्य मिलकर करते हैं।

चीतलकंधी सोन–कठफोड़ (Northern) Goldenbacked Woodpecker

819. Dinopium benghalense b.

कद : मैना +; 29 सेमी., आवासी

818 D.b. dilutum (उत्तर पश्चिमी)
820 D.b. puncticol (दक्षिणी)
821, D.b. tehminae (कैराली)

स्थानीय नाम : हिंदी : *कठफोड़ा,* जशरथ, खिड्री, सोना ककटोला; **बंग्ला :** काठ टोकरा; **मराठी :** *सोनापाटी* सुतार; **गुजराती :** *लक्कड़खोर;* **कन्नड़ :** तरमुटिक; **तेलुगु :** बदरंगी पिट्टा; **तमिल :** मरमकोट्टि, तच्छन कुरुवि, मनु पोट्टुकु; **मलयालम :** मरमकोट्टि; **सिंधी :** दाखन; **संस्कृत :** काष्ठकुट्ट, कर्बुरांग, दार्वाघाट।

पहचान : सफेद सिर पर तरबूजी फांक-सी टोपी; कंधे के पास पीठ काली और बाकी **सुनहली**; कटि तथा पूंछ काले, काले कंधे तथा **बाजू में सफेद बूंदें**; काले नकाब, ठोड़ी तथा निचले शरीर पर सफेद धारियां। **मादा** की तरबूजी टोपी छोटी।

कर्बुर का एक अर्थ होता है 'चितकबरा' तथा दूसरा 'सोना'। **कर्बुरांग** नाम ही इन जातियों के दो गुणों को दर्शाता है। ऊंचे स्वर वाले तेज 'कि कि कि' से **बोल** (हंसी समान) जो सितवक्षी किलकिले के बोल से मिलते जुलते हैं किंतु तुलना में कम तेज और अधिक ऊंचा स्वर। संस्कृत में इनका एक नाम है **दार्वाघाट**—वह जो वृक्षों, बांसों पर आघात कर संगीत पैदा करता है; इतना सुंदर और सटीक नाम वही दे सकता है जो पक्षियों से प्रेम करता है।

भारतीय कठफोड़ों में 'चीतलकंधी सोन कठफोड़' अपनी अनुकूलन शक्ति की सहायता से सर्वाधिक संख्या में पाया जाता है। गोदावरी के उत्तर में यह हल्के, घने,

सूखे, गीले पतझड़ी वनों में, गांवों शहरों के बागों आदि में सभी जगह रहता है। जंगलों के कटने से इसके कुल को अत्यधिक खतरा है। यह वृक्ष के तनों पर व्यर्थ ही अपनी चोंच से 'कट कट' नहीं करता जैसा कि राजेश्वर प्रसाद नारायण सिंह ने अपनी पुस्तक में लिखा है। यह 'कट कट' आघात कर एक तो तने की दरारों तथा सूराखों में छिपे कीड़ों में भगदड़ मचाता है तथा आवाज से प्रडिम्भ कोषों का पता लगता है। यह गलतफहमी है कि कठफोड़े वृक्षों की लकड़ी को नुकसान पहुंचाते हैं, वरन वे लकड़ी को खाने वाले कीड़ों तथा घुनों को निकाल-निकालकर खाते हैं। उनकी लंबी चोंच से तीन चार गुनी अधिक लंबी कंटीली जीभ इस काम में मदद करती है। कीड़े खोजने में ये पक्षी वृक्ष के तने पर नीचे से चढ़ना प्रारंभ कर ऊपर जाते हैं। इनके मजबूत पंजों को इनकी कड़ी पूंछ भी चढ़ाई तथा कुटकुटाई में मदद करती है। यह वृक्षीय पक्षी चींटे, कीड़े आदि **खाने** के लिए जमीन पर उतरने में विशेष एतराज नहीं करता। फल भी खाता है और फूलों से मरकंद भी लेता है; इसकी उड़ान लहरियेदार होती है जिसके दौरान यह अक्सर कर्कश बोल भी देता है।

जिस तीव्रता से लकड़ी पर कठफोड़े चोंच से आघात करते हैं, उसे सहने के लिए उनकी चोंच को बहुत मजबूत होना चाहिए, और उनके मस्तिष्क को भी। अमेरिका के 'लालसिर कठफोड़ा' (Melanerpes erythrocephalus) पर अध्ययन के पश्चात वैज्ञानिकों ने गणना की है कि उनके सिर पर ऐसे 'टुक टुक' करते समय दस 'G' (गुरुत्वाकर्षण बल का दस गुना) का बल काम करता है। दस G के बल पर स्वस्थ मानव की आंखों के आगे भी अंधेरा छा जाएगा। इनका मस्तिष्क खोपड़ी के भीतर एक विशेष लचकदार फर्मे में कुशलतापूर्वक स्थित रहता है।

मादा एक खेप में सामान्तया 3 सफेद चमकीले अंडे देती है। आवश्यकता होने पर एक ऋतु में दो खेप भी देती है। नर-मादा गृहस्थी के सारे काम मिलकर करते हैं।

(पीतभाल) चीतलपुच्छ कठफोड़

Yellow fronted Pied or Mahratta Woodpecker

Ricoides mahrattensis m.

कद : बुलबुल -, 18 सेमी.; आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : *कठफोड़ा,* छोटा जशरथ, *चितला* कटकोला; **मराठी :** *कौड़िया सुतार;* **तेलुगु :** बदरंगी पिट्टा; **मलयालम :** मरमकोट्टि; **संस्कृत :** *दार्वाघाट;* वृक्ष कुटुक।

पहचान : ऊपर तथा पूंछ सितबिंदुकित काली; माथा तथा शिखराग्र मटमैला पीला,

पिछले सिर पर छोटी-सी तरबूजी शिखा। ठोढ़ी, कंठ तथा गर्दन सफेद; वक्ष कत्थई रेखित गेहुंआ तथा उदर तरबूजी। **मादा नर** के ही समान, केवल शिखा तरबूजी के स्थान पर पीली।

अंग्रेजी में इसे 'मराठा कठफोड़ा' बोलते हैं किंतु यह सारे भारत को आबाद करता है। यह अर्ध मरुस्थलीय से लेकर गीले, पतझड़ी, हल्के तथा घने वनों में रह सकता है, हां सदाबहार वन इसे पसंद नहीं। यह अधिकतर जोड़ों या अक्सर तीन-चार के पारिवारिक समूह में घूमता है तथा अन्य कीटभक्षी पक्षियों के झुंड में भी साथ देता है। कीड़े समेटने के लिए इस कुल के पक्षियों की जीभ लंबी तथा कांटेदार होती है। इसके चौड़े तथा गोल से पंख इसे सशक्त उड़ान देते हैं। वृक्ष ही कठफोड़ों का जीवन है।

इसके **बोल** प्रजननकाल में क्षेत्रीय घोषणा करने के लिए 'डर्र...डर्र...'; अपने घोंसले की तरफ कोई खतरा जाता देखने पर तीक्ष्ण तथा कई बार 'क्लिक क्लिक, या क्लिकर्र...सी आवाज; और जब नर तथा मादा अलग वृक्षों पर हों तब एक 'चक' आवाज से थोड़ी थोड़ी देर में संपर्क करते हैं।

लगभग सभी पक्षियों के तीन या चार पादांगुल होते हैं; और चार पादांगुलों में से तीन सामने की ओर तथा एक पीछे की ओर रहता है, इससे वे टहनियां, इत्यादि पकड़कर उनपर बैठ सकते हैं। काष्ठकुट्ट उपकुल तथा उलूक कुल के चार पादांगुलि पक्षियों में एक निराला गुण है कि उनके दो **पादांगुल** आगे तथा दो पीछे की ओर रहते हैं। यह उन्हें वृक्षों की पीड़ों पर चढ़ने तथा कुट कुट करने के लिए अच्छी पकड़ देते हैं, साथ ही छोटे पैर तथा सशक्त पूंछ भी मदद करते हैं।

फरवरी से मई तक **प्रजननकाल** होता है जो स्थानीय रूप से अलग होता है। अपनी सशक्त चोंचों से आम, बबूल, बेर आदि वृक्षों में भी अपना **कोटर** बनाते हैं। वृक्षों पर कोटरों की ऊंचाई औसतन तीन-चार मीटर होती है। कोटर के छेद का व्यास लगभग चार सेमी. होता है। यह कोटर वृक्ष में पहले पांच-छह सेमी. सीधे जाता है तत्पश्चात पंद्रह से चालीस सेमी. तक नीचे जाता है जहां अंडों के लिए थोड़ी अधिक जगह बनाई जाती है। मादा सामान्यतया तीन सफेद अंडे देती है। इसके अंडों में अंडाकारिता कम होती है, गृहस्थी के सारे कार्य नर-मादा मिलकर करते हैं।

इस कठफोड़े के उपकुल Picinae का Blackcrowned Pied Woodpecker (Ricoides major) दुनिया के उन छह सात निराले पक्षियों में से है जिसके अंडे दस-ग्यारह दिन में ही 'से' जाते हैं। अमरीकी (Melanerpes lewis) Lewis's Woodpecker भी कुछ उन निराले पक्षियों में से है जो वृक्षों पर लगभग 30 मीटर की ऊंचाई तक अपने घोंसले बनाते हैं।

बलुइ चंडूल भरत Crested Lark

899. Galerida cristata chandoola

कद : गौरैया +, 18 सेमी.; आवासी *898 : G.c. magna (बलूचिस्तानी)*

स्थानीय नाम : हिंदी : *चंडूल;* **गुजराती :** घाघस *चंडूल,* लवरी; **बंग्ला :** *भरत* पारवी; **मराठी :** *चंडोल, भरद्वाज;* **कन्नड़ :** पुरले; **तमिल :** वानमपाडि; **तेलुगु :** *भरत* पक्षी; **संस्कृत :** तिलक कंटक, *चूडाल,* भूमिशय, कुज।

पहचान : माथे से निकली विशिष्ट तनी हुई शिखा, ऊपर श्याव धारियों सहित बलुइ भूरा, नीचे भूरी आभा लिए सफेद; पिंग वक्ष पर प्रगाढ़ कत्थई रेखाएं। **नर-मादा** एक समान। बलुइ या कम घास वाली जमीन पर सफल समावरण के कारण कठिनाई से नजर आते हैं।

वैसे तो (Alauda) भरद्वाज वंश अपने **गायन** के लिए प्रसिद्ध है किंतु चंडूल भरत (Galerida चंडूल वंश) भी न तो ऊंची उड़ान में और न गायन में उनसे कम है। यह अपने गायन के साथ अपने पड़ोसी पक्षियों के गाने की नकल भी करता है। किंतु अपने प्रणय गान के लिए 'भरद्वाजों' की तरह आकाश में ऊंचे चढ़कर नहीं गाता वरन अपने क्षेत्र में जमीन से कुछ मीटर ही ऊपर उड़ता हुआ गाता है।

अधिकांश धूसर रंग के छोटे पक्षी कुशल गायक होते हैं जिसका उपयोग वे प्रजननकाल में एक-दूसरे को आकर्षित करने के लिए करते हैं, जैसे भरत या भरद्वाज अपने गायन तथा नृत्य से; उड़ान में भी निपुण जो ठहरा : जमीन से कुछ ही मीटर ऊपर फड़फड़ करता, अपने क्षेत्र में शान से गरिमापूर्वक धीमी या रंगण करती उड़ानें भरता है। फिर पथरीली जमीन पर उतरकर अपने पंखों को खोलकर कड़ा करते हुए कंपन करता है।

इसके **आहार** में बीज, अनाज तथा कीड़े-टिड्डियां, चिड्डे, चींटे, केंचुए आदि हैं। शान से दौड़-दौड़कर इन्हें खोजता है। उत्तर भारत के खुले रेतीले मैदान, नमक जमे रेतीले विस्तार, नदी के रेतीले मैदानी किनारे, समुद्रतट के ज्वाररचित समतल इसके प्रिय स्थान हैं। कश्मीर की घाटियों, हरियाणा, दिल्ली, उत्तर प्रदेश, नेपाल, बिहार, दक्षिणी राजस्थान, उत्तरी मध्य प्रदेश तथा गुजरात को **आबाद** करते हैं।

इसका **प्रजननकाल** मार्च से अगस्त है। ग्रहणकाल में झुंडों में रहते हैं। जमीन पर प्याले के बराबर गड्ढा खरोंचकर (खुर निशान में भी) घास आदि से अपना घोंसला बनाता है। इसलिए संस्कृत साहित्य में अधिकांश भरत तथा भारद्वाजों के नाम 'भूमिशय' तथा 'कुज' (भूमि प्रेमी) मिलते हैं। अधिकतर अपने **घोंसले** को छिपाने के लिए उसे किसी छोटे पौधे के पास या घास के गुच्छे के पास ही बनाता है।

अपने घोंसले के चारों ओर धूप से पकी मिट्टी या गोबर लगा देता है। मादा एक खेप में तीन या चार अंडे देती है तथा दो खेप प्रतिवर्ष। अंडों का रंग मटैला या हल्का हरा होता है। जिस पर भूरे तथा बैंगनी धब्बे होते हैं। घोंसला बनाने से लेकर शावक पालन तक के कार्यों को नर मादा मिलकर करते हैं।

कुल : यह (अलोदिदी) भरद्वाज कुल का पक्षी है। इस कुल के पक्षी सहारा, नगीब जैसे गर्म मरुस्थल (44°-45° वायु तापमान) से लेकर सिक्किम जैसे गीले तथा तिब्बत जैसे ठंडे तथा सूखे क्षेत्रों को आबाद करते हैं। इनका पिछला पादांगुल सीधा तथा लंबा होता है (चर्चरी तथा खंजनों की तरह)। इनकी अधिकांश जातियां प्रवासी हैं। अधिकांश जातियों में, नीड़ निर्माण तथा सेने का काम मुख्यतया मादा करती है, हां नर उस समय उसका मन अपने मधुर गाने से रंजित करता है, और 11-12 दिन सेने की अवधि में नर मादा को भोजन लाकर खिलाता है, तथा शावकों को भी पंख आने तक। इसके दो चचेरे भारतीय भाई भी हैं—*G. malabarica (901) (पश्चिम तटीय) तथा G. deva (902) (मध्य दक्षिणी)।*

कत्थ/अगिन भरद्वाज Indian Small Skylark

907. Alauda gulgula g. *904. A.g. inconspicua (पश्चिमोत्तरी)*

कद : गौरैया, 15 सेमी.; आवासी

905. A.g. lhamarum (कश्मीरी)
906. A.g. inopinata (हिमालयी)
908. A.g. australis (दक्षिणी)
909. A.g. verayi (पूर्वांचली)

स्थानीय नाम : **हिंदी** : *अगिन* जित्ता, *भरत,* दबक चिड़ी; **बंग्ला** : झुंटी *भरत;* **गुजराती** : लवरी; **मराठी** : *भरद्वाज;* **कन्नड़** : पुरले; **कश्मीरी** : दिदर, दिदू; **तेलुगु** : *भरत* पिट्टास; **तमिल** : वानम्पाडि कुरुवि; **संस्कृत** : *अग्निकंठ, भरद्वाज,* ब्राह्मी चटी, व्योम लासिका, भारती, कुब्ज चटक।

पहचान : कंठ तथा वक्ष लाल, नारंगी तथा पीला—तीनों **आग** की लपट के रंग। सिर, पंख तथा पूंछ प्रगाढ़ कत्थई। पंख के कत्थई परों की किनार पिंगल। उदर ललौंछ; भूरी आभा लिए मक्खनी सिर पर छोटा-सा परों का गुच्छा। कंधे चौड़े, कुछ मोटा-सा पक्षी। **नर-मादा** एक समान।

नेपाल, बिहार, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, बंग्लादेश, असम, आंध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, तमिलनाडु और श्रीलंका को मुख्यतया **आबाद** करता है।

इनमें खुले गीले मैदान, विशेषकर तालाब तथा झील के किनारे, समुद्र तट पर ज्वाररचित समतल जमीनें इसे पसंद हैं।

भरद्वाज का एक अर्थ है पंखों की विशेष ताकत वाला तथा दूसरा अर्थ, उड़ान में गाने वाला है। इन दोनों अर्थों में कत्थ/अगिन भरद्वाज प्रवीण है। [इसलिए भरद्वाज (Alaudidae) कुल के केवल Skylarks (वंश Alauda) को ही **भरद्वाज** नाम दिया गिया है।] विशेषकर **प्रजननकाल** में, यह कंपायमान परों को तेजी से चलाता हुआ सीधी उड़ान से ऊपर आकाश में चढ़ता है और साथ ही साथ मधुर तथा तेज स्वर में गाना गाता है। कंपायमान स्वरों के आरोही-अवरोही गानों में अपने पड़ोसी पक्षियों के गानों की नकल भी करता है मानो उन्हें सिखा रहा हो कि प्रेमगान किस तरह गाना चाहिए। इस तरह गाते गाते यह ऊपर चढ़ता जाता है और फिर अदृश्य हो जाता है किंतु इसका गान सुनाई देता रहता है। लगभग दस मिनट तक लगातार गाने के बाद यह अपने पंख समेट लेता है और सीधा गोता लगाता हुआ उतरता है फिर एकाएक बीच में ही अपने पंख खोलकर थोड़ी देर एक ही स्थान पर रंगण (थरथर) करता है और पंख समेटकर फिर थोड़ी दूर गोता मारता है इस तरह दो, तीन या चार 'स्टेशनों' पर रंगणकर वापिस अपने स्थान पर आ जाता है। कभी कभी तीन या चार नर एक ही क्षेत्र में अपना प्रणय नृत्य तथा गान करते हैं, (श्रेष्ठता सिद्ध करने की सभ्य शैली !) **प्रजननकाल** मार्च से अगस्त।

जमीन पर बैठा हो तो यह जमीन से इतना **एकरूप** हो जाता है कि नजर नहीं आता इसलिए आदमियों को अपने बहुत पास आने देता है और अंत में अचानक फर्र से लहरियादार उड़ान भरता है। जमीन पर जब चलता है तब अपनी सुरक्षा के लिए अपने को दबाकर चलता है (इस कुल की विशेषता) ताकि यह आसानी से दिखाई न दे। इसलिए इसे 'कुब्ज चटक' तथा 'दबक चिड़ी' भी बोलते हैं।

इसके **आहार** में मुख्यतया बीज, छोटी जड़ों के गुल्म, कीड़े तथा कभी कभी कंकड़। मादा एक खेप में, अधिकतर, 3 अंडे देती है। अंडों का आमाप लगभग 20:15 मिमी. होता है तथा रंग अधिकतर मक्खनी या भस्मी होता है जिनपर भूरे से घने बिंदु होते हैं। नर-मादा गृहस्थी मिलकर चलाते हैं। इसके दो चचेरे भाई (903) West Siberian तथा (903 ए) Caucasian Skylarks *(A. arvensis dulcivox* तथा *A.a. cantarella)* **प्रवासी** हैं जो शीतकालीन प्रवास के लिए पश्चिमोत्तर भारत में आते हैं।

दुग्धोधर कॉफी चटी

912. Riparia paludicola chinensis
कद : गौरैया., 12 सेमी. आवासी;

Plain Sand Martin
910. R r. diluta (साइबेरियाई)
911. R r. ijimae (पूर्वी)

स्थानीय नाम : हिंदी अबलि, अबाबील; **बंग्ला** : न कुटि; **संस्कृत** : नहिंः कुटि।

पहचान : ऊपर **कॉफी; सितोदर;** कंठ, कटि तथा वक्ष क्रीमकॉफी; **खांचेदार पूंछ,** पंख प्रगाढ़ कॉफी। **नर-मादा** समान।

यह अपना **घोंसला** घास या मिट्टी से न बनाकर, नदी आदि के रेतीले खड़े तटों पर क्षैतिज सुरंग (1 या 2 मीटर गहरी) के छोर पर सूखी घास, पंख आदि बिछाकर बनाती है; अपना घोंसला मकानों दीवारों आदि के साथ नहीं बनाती (संस्कृत नाम : 'नहिंः कुटिः')। चटी तथा पांडीक एक ही कुल किंतु अलग वंशों के पक्षी हैं। यद्यपि चटी, भांडीक तथा बतासियों के रूप तथा व्यवहार में बहुत समानता है। किंतु 1000 वर्ष पूर्व वराहमिहिर ने यह पहचान लिया था कि समानता **जातीय** नहीं है (धनवन्तरि निघंटु)। बतासी के चारों पादांगुलों में से एक भी पीछे की ओर नहीं रहता, जबकि चटी तथा भांडीक का एक पादांगुल पीछे रहता है, जिससे ये तारों इत्यादि पर बैठ सकती हैं।

समस्त मध्य तथा उत्तर भारत में नदियों के खड़े रेतीले तटों पर, विशाल समूहों (50-100) में पास पास 25-50 सुरंग द्वारों पर, ये बार बार अंदर बाहर होते अद्भुत दृश्य प्रस्तुत करती हैं। यूथप्रिय हैं, किंतु शिकार अकेले दुकेले ही करती हैं—जलाशयों, दलदल आदि के पानी के ऊपर, ऊपर हवा में, प्रज्वलित घास के मैदानों पर भागते हुए। दो 'पर' वाले कीटों (जैसे मक्खी, मच्छर आदि) तथा भृंगों को तथा उड़ते हुए कीड़ों को ये बड़ी कुशलता से पकड़ती हैं। दुग्धोदर कॉफी चटी बस्तियों से दूर, नदी किनारों में रहना पसंद करती है। इनका जीवन पानी के साथ बंधा है तथा उसके लिए **स्थानीय प्रवास** भी करती हैं जिस पर अध्ययन की आवश्यकता है।

इनके साथ इनकी चचेरी बहन धूम्रकंठी माटी चटी *(R.r. diluta)* (साइबेरियाई) भी देखी जा सकती है जो कि साइबेरिया, ईरान, चीन, बलूचिस्तान आदि से **शीतकाल प्रवास** में भारत आकर अपने कुल की शोभा बढ़ाती हैं। इन दोनों जातियों में, देखने में तथा व्यवहार में, बहुत समानताएं हैं—भोजन, घोंसले, गान तथा शिकार में। घोंसलों के पास उड़ते समय इनके **बोल** कर्कश 'ब्रिर्रट' होते हैं तथा गान 'ट्टि वट ट्टि वट' होते हैं। दुग्धोदर चटी का **प्रजननकाल** मुख्यतया अक्तूबर से फरवरी है जबकि धूम्रकंठी *(Riparia diluta)* का नवंबर से मई है। घोंसले को आरामदेह बनाने के लिए उसमें 'पर' बिछाती हैं। ये एक खेप में दो से चार सफेद अंडे देती

हैं, धूम्रकंठी (साइबेरियाई, diluta) की सगी बहन पुरबिया धूम्रकंठी (ijimae) बंग्लादेश, असम, मणिपुर के क्षेत्रों को ठंड में आबाद करती है; जबकि साइबेरियाई धूम्रकंठी उत्तरपूर्वी, उत्तर तथा उत्तर पश्चिमी भारत को। इन सभी जातियों में नर और मादा गृहस्थी के सारे कार्य मिलकर करते हैं।

मार्टिन नाम के कुछ पक्षी 'चटी' के समान सुरंगों में घोंसला बनाते हैं तथा कुछ भांडीक के समान मिट्टी से, यथा Crag Martin फलस्वरूप 'मार्टिन' नाम से पक्षी का वंश (Hirundo या Riparia) नहीं पता लगता, इसलिए हिंदी में विभिन्न Martins का नाम वैज्ञानिक आधार पर क्रमशः भांडीक या चटी रखा गया है।

(पिंगोदर) जमुनकंठ भांडीक Common (Western) Swallow

916. Hirundo rustica r. *917 Hirundo rustica gutturalis (पुरबिया)*
918 Hirundo rustica tylleri (पूर्वांचली)

कद : गौरैया +, लंबी द्विविभाजित पूंछ, 18 सेमी.; प्रवासी तथा आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी, बंग्ला : अबाबील (तीनों वंशों के लिए यथा अबाबील, बतासी तथा चटी); **मराठी** : पाकोली; **कश्मीरी** : कलीज; **तमिल** : तालई, इल्लथ कुरुवि, आदइ कल्लन कुरुवि, तम पदि; **तेलुगु** : वन कोवेला; **गौंड** : पारस पिट्टा; **मलयालम** : वयलकोटि; **संस्कृत** : *भांडीक,* चटी, देवकुल चटक।

पहचान : ऊपर से जामुनी काला, भाल तथा ठोड़ी मोरचई; कंठ जामुनी; उदर पिंगल; पूंछ लंबी द्विविभाजित और पूंछ के पिच्छकों में सफेद पट्टियां जो उड़ते समय स्पष्ट दिखती हैं। **नर-मादा** एक समान।

यह पक्षी उड़ते उड़ते न केवल अपना **भोजन** कर लेते हैं, वरन पानी भी पी लेते हैं। **मिट्टी से** अपना मकान बनाने वाले केवल भांडीक वंश के ही पक्षी हैं। संस्कृत में इनके वंश का नाम भांडीक, अर्थात कुम्हार है। ये (नर तथा मादा) पक्षी गीली मिट्टी में अपनी लार मिलाकर प्याले के आकार का अद्भुत **घोंसला** बनाते हैं तथा उसमें घास फूल मिलाकर मजबूत करते हैं। इनका घोंसला वृक्षों पर नहीं वरन मकानों, किलों, खंडहरों आदि की दीवारों से जुड़ा रहता है और कई वर्ष चलता है। अलग कुल तथा गण के पक्षी होने पर भी भांडीक (स्वेलो) तथा बतासी (स्विफ्ट) के पहचान में भ्रम होना आसान है, शारीरिक बनावट में तथा उड़ान में बहुत समानता होना विकास की **अभिसारी** (convergent) प्रक्रिया के उदाहरण हैं जिसमें एक ही प्रकार का जीवनयापन करने वाले असंबंधित (भिन्न कुल, गण) जीवों का रंग, रूप व्यवहार भी लगभग एक-सा हो जाता है।

मादा पहले खेप में 3-6 अंडे देती है (दूसरे खेप तथा कभी तीसरे खेप में 2-4)। सेने का काम केवल मादा करती है क्योंकि नर के वक्ष में उष्णता प्रदान करने वाला ऊष्मायन वृत्त नहीं होता। सेने की अवधि में 14-16 दिन तथा पर-उगने की अवधि 20-24 दिन होती है। शेष कार्य नर-मादा मिलकर करते हैं।

आहार न्यूनता होने पर यह वंश शरीर की क्रियाओं को मंद कर सकता है। ठंडे देशों से शीतऋतु में कुछ जातियों की भांडीक प्रवास पर निकल पड़ती हैं। भारत में ये उत्तर-पश्चिमी भाग में **प्रजनन** करती हैं और शेष भारत में प्रवास करती हैं। ये आबादी के साथ एकरस होकर रह सकती हैं। पानी के साथ इनका जीवन तो सामान्य बात है किंतु ये बाजार के बीचों बीच भी जानवरों की लीद के पास कीड़ों को सरकसी कमाल के साथ पकड़ते हुए देखी जा सकती है। पिंगोदर जमुनकंठ भांडीक जाति (3 उपजातियां) का पक्षी विश्व में यष्टिसादियों (Passeriformes) में सर्वाधिक सुविस्तृत पक्षी है। इनमें अनुकूलता की इतनी सामर्थ्य है कि अंटार्कटिका तथा कुछ अतिसुदूर द्वीपों को छोड़कर सारे विश्व में इनकी पहुंच है। अबाबील कुल में 20 वंश तथा 78 जातियां (अनेक उपजातियां) हैं। यह जब प्रवास के लिए चलती हैं तब लाखों के झुंड में चलती हैं। यूरोपी सामान्य भांडीक ध्रुव निकटीय क्षेत्रों से शीतकाल प्रवास के लिए भूमध्यरेखा के दक्षिणी क्षेत्रों में जाती हैं। और आश्चर्य की बात है कि जब वे वापिस लौटती हैं तब न केवल अपने विशिष्ट क्षेत्र में, वरन अक्सर अपने पुराने नीड़ में लौटती हैं। भांडीक का पाश्चात्य संस्कृति में भी विशेष स्थान है क्योंकि वे इसे बसंत का दूत मानते हैं। जापान में भी इसे शुभ मानते हैं। यद्यपि ये उड़ान में बतासियों का मुकाबला नहीं कर सकते किंतु ये अत्यंत कुशल तथा मनोहर उड़ने वाले पक्षी हैं।

(सिद्युति लल) कथपीट लटोरा **Baybacked Shrike**

कद : बुलबुल, 18 सेमी.; आवासी *940. Lanius vittatus v.*

स्थानीय नाम : हिंदी : पचनक, हजार दास्तान, *लटोरा;* **गुजराती :** पचनक *लटोरो;* **मराठी** : खाटिक; **बंग्ला :** छोटो *किलटोरा,* खायेरी कर्कट; **तेलुगु :** चिन्ना बिलिंकी, वैले डेगा; **तमिल :** किसान कुरुवि; **मलयालम :** असुरक्किली; **सिंधी :** बोरो; **संस्कृत :** लटूषक।

पहचान : माथे तथा आंखों पर लंबी चौड़ी काली नकाब; शिखर भस्मी; घाटा मेघवर्णी; प्राथमिक पंख काले; **ललकत्थई पीठ;** बाजू काले; पिंग वक्ष; कटि, कल्ला, उदर सफेद। काले पंखों पर **सफेद द्युति** जो उड़ान में स्पष्ट दिखती है। **मादा** थोड़ी

छोटी, पीठ पांगर; कटि थोड़ी श्याव, नकाब पतली, शेष **नर** के समान।

बुलबुल के कद के बड़े सिर, सशक्त अंकुड़ी चोंच, सितकिनारी काली लंबी पूंछ, आंखों पर मोटा लंबा काजल लगाए बने-ठने बैठे पक्षी आसानी से देखे जा सकते हैं। यह 'लटोरा' पक्षी है जिसे अंग्रेजी में 'कसाई पक्षी' बोलते हैं और इसके हिंदी में एक नाम 'पचनक' का अर्थ पापी है। लटोरा अपने शिकार को बबूल जैसे कांटेदार वृक्षों पर बने अपने घोंसले के पास कांटों में फंसाकर रख लेता है। पक्षियों में अपवाद लटोरे शौकिया या लालचवश भी **शिकार** करते हैं। मुश्किल के समय में वे इस भंडारित भोजन को खाते हैं। इस कुल के पक्षी, **प्रादेशिक** होते हैं। वैसे तो इसके बोल कर्कश चुर्र या ची उर्र होते हैं किंतु **प्रणय** निवेदन करते समय यह अक्सर अन्य पक्षियों के मधुर गानों की नकल करता है जैसे आज के युवा वर्ग भी अपना प्रेम कोई फिल्मी गाना गाकर दर्शाते हैं। प्रणय निवेदन के समय यह मादा के करीब जाकर शरीर तो उसकी तरफ रखता है किंतु अपना मुंह दूसरी तरफ रखता है और प्रसन्नता की उत्तेजनापूर्ण आवाज निकालता है। कभी कभी दो नर एक मादा से प्रणय निवेदन करते हैं, बीच में, एक-दूसरे पर वार भी करते हैं। अधिकांश लटोरे, ग्रहणकाल में अकेले ही रहते हैं, किंतु यह लटोरा मित्र प्रिय है।

हवा में गोता लगाकर कुशलतापूर्वक कीड़ों को पकड़ता है, बैठे हुए अपनी पूंछ बाएं दाएं हिलाता रहता है। यह शावक-पक्षियों, भृंगों, इल्लियों, चींटियों, कीड़ों, टिड्डों, छिपकलियों, चूहों आदि के **शिकार** के लिए नर्तक के समान कुशल उड़ान भरते हैं, इस तरह सुबह तथा शाम दोनों 'उषा' कालों में नृत्य (शिकार) करते हैं इसलिए संस्कृत में इनका नाम लटव (नृत्य) + उषस् +क से मिलकर लटूषक बनता है। माखीखोरों तथा लटोरों में, शरीर भिन्न होते हुए भी काफी **समानता** है। शायद लटोरे किसी प्राचीन माखीखोर से उत्पन्न होकर विकसित हुए हैं।

यह बाहरी हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक तथा सिंध से पश्चिम बंगाल तक सारे भारत को **आबाद** करता है, (असम तथा पूर्वांचली बहुत गीले क्षेत्र इसे पसंद नहीं हैं) स्थान के अनुसार इनका **प्रजननकाल** फरवरी से सितंबर होता है, दक्षिणी भारत में फरवरी-अप्रैल तथा अन्यत्र मई-जुलाई होता है। इसका घोंसला साफ-सुथरा छोटा-सा 'कप' रहता है। यह उसे बांधने के लिए मकड़ीजालों के तंतुओं (बहुत सशक्त पदार्थ) का खूब उपयोग करता है, तथा अंदर भी ऊन, पंख, घास, कपड़े आदि का उपयोग करता है। घोंसले अधिकतर बबूल तथा बेर जैसे कांटेदार वृक्षों पर बनाता है। मादा एक खेप में तीन से पांच अंडे देती है। गृहस्थी के सारे काम नर-मादा मिलकर करते हैं। इसका एक चचेरा भाई (भस्मकटि) कथपीठ लटोरा *(L. collurio c.)* इससे रंगरूप में जुड़वां भाई के समान मिलता है किंतु इसकी द्युति सफेद नहीं होती और न पूंछ पर सफेद किनार; तथा यह पतझड़ में पश्चिमोत्तर भारत में यात्रा-प्रवास करता है।

केसरिया लटोरा **Rufousbacked Shrike**

946. Lanius schach erithronotus *947. L.s. caniceps (दक्षिणी)*
कद : मैना +, 25 सेमी.; प्रवासी, आवासी; *948. L.s. tricolour (हिमालयी)*

स्थानीय नाम : हिंदी : माटिया *लटोरा,* कजला लटोरा, मझला लटोरा **कश्मीरी :** हरा वातज (जल्लाद); **तेलुगु :** येरा लिलिंची; **तमिल :** कटु कुरुवि, पेकुरुवि; **लेप्चा : सक्रिक फो; संस्कृत :** लटूषकः।

पहचान : कपाल, गरदन तथा ऊपरी पीठ (कूब) भस्मी; उत्कटि तथा कटि केसरिया; ठोड़ी तथा कंठ सफेद; वक्षोदर केसरिया; लंबी पूंछ सितकिनारी काली; पंख सफेद धारियों सहित काले। उड़ान में सितद्युति स्पष्ट; लटोरों की तरह इसका सिर बड़ा, आंखों पर नकाब मोटी; चौड़ी, छोटी तथा आंकुड़ीदार चोंच। **नर-मादा** एक समान।

'केसरिया लटोरा' न केवल 'ललकथ पीठ लटोरे' से बड़ा होता है वरन उससे अधिक लड़ाकू भी होता है। अन्य पक्षियों से उनका शिकार उन्हें धक्का देकर, छुड़ाकर भाग जाता है। कीड़ों, चूहों, छिपकलियों, और कोई भी छोटे जीव (बैठने वाले या उड़ने वाले) आदि के अतिरिक्त छोटे पक्षियों का भी **शिकार** करता है। और कांटों पर लटकाकर उनका भंडारण भी। सामान्यतया इसके **बोल** तेज और कर्कश होते हैं—'जुलैक-जुलैक-यॉउ यॉउ', किंतु **प्रणय निवेदन** के समय हल्के तथा मधुर होते हैं और अक्सर शायद पुकारने की धुन में, अकेला, दस पंद्रह मिनट तक गाता रहता है। अपने गाने में अन्य पक्षियों के गानों का समावेश कर लेता है। यह इतने किस्म के पक्षियों के **गानों** की नकल करता है कि आश्चर्य होता है, यथाः कत्थई चील, पीताक्षी मैना, कल मैना, गौरैयाएं, टिटहरियां, चंद्रकंधी सिकतिल, सतभाई, सित तीतर, बड़े तथा लघु पत्रिंगे, बया, सांवला छिप्पक तथा सितोदर काला अश्वक, कोयलें, शिखीचातक आदि। न केवल गानों की अच्छी नकल़ करता है, वरन उसे ऐसे गाने बहुत काल तक याद भी रहते हैं। गिलहरी आदि के बोल की भी अच्छी नकल करता है।

प्रजनन : इसका प्रजनन क्षेत्र कुमाऊं से लेकर पाकिस्तानी व पश्चिमी हिमालय क्षेत्र है। इन क्षेत्रों में अप्रैल में आता है और सितंबर में लौट जाता है वैसे यह मध्य कर्नाटक क्षेत्र के उत्तर में भी **प्रजनन** करता है। मध्य कर्नाटक से लेकर दक्षिण भारत को इसका भाई 'भस्मी पीठ केसरिया' *(L.s. caniceps)* **आबाद** करता है तथा दूसरा भाई 'कल शिखर केसरिया' (Tricolour) गढ़वाल के पूर्वी हिमालय क्षेत्र में प्रजनन करता है और उत्तर प्रदेश से लेकर पूर्वोतर भारत को आबाद करता है। प्रजननकाल में लटोरे प्रणय गान के अलावा शांत ही रहते हैं। किंतु अन्य पक्षियों की अपेक्षा ग्रहणकाल में अधिक (प्रादेशिक) चिल्लाते हैं (अंग्रेजी नाम Shriek से बना है)।

अपने चचेरे भाई 'मेघीपीठ' *945. (L. tephronotus t.)* से रंगरूप में बहुत समानता है, बस केसरिया लटोरा की कूब का रंग 'मेघी पीठ' की प्रगाढ़ भस्मी के स्थान पर हल्का तथा उसके पतले काले भाल के स्थान पर इसका काला चौड़ा भाल है। **घोंसला** : कंटीली टहनियों, ऊन, बाल, कतरन, जड़ें आदि का लगभग 20 सेमी. व्यास का किसी कंटीली झाड़ी या वृक्ष पर कोई 3 से 4 मीटर की ऊंचाई पर होता है। मादा एक खेप में 3 से 6 अंडे तक देती है, और एक ऋतु में अक्सर दो खेप देती है। गृहस्थी के सारे काम नर-मादा मिलकर करते हैं।

कलपंखी पीलक (Indian) Golden Oriole

953. Oriolus oriolus kundoo 952. O. oriolus o. (यूरोपी)

कद : मैना, 25 से.मी.; आवासी/प्रवासी

स्थानीय नाम : हिंदी, गुजराती, मराठी : *पीलक;* **कश्मीरी :** पोशनुल; **बंग्ला :** सोना बाउ; **तेलुगु :** वंगा पांडु; **मलयालम :** पंजीक्किलि; **संस्कृत :** सुपर्ण, *पिपीलक,* अंबाकपिलक, अंबक मद्दरी, जृम्भ, चामीकर, कंचन।

पहचान : नर के पंख तथा पूंछ काले और बाकी सुनहला; इसकी आंखों में लंबी काजल की रेखा; चोंच पीताभ लाल। किशोर **नर** तथा **मादा** का पीला रंग मलिन हरिताभ और मादा के नीचे का रंग बहुत हलका पीला तथा उसमें भूरी धारियां। कुछ वयस्क मादा बिलकुल नर के समान रूप रखती हैं। अमेरिका में जिस पक्षी को Oriole बोलते हैं, वह इसके कुल का संबंधी नहीं है।

अमराई से कोयल के अतिरिक्त एक और पक्षी का मधुर गान सुनाई पड़ता है, पि...पी-लं,। इसलिए इसका नाम वैदिक काल में 'पिपीलक' रखा गया। चूंकि इसका मुख्य रंग सुनहला होता है, इसलिए बाद के साहित्यकारों ने उस नाम में से 'पि' को व्यर्थ समझ काट दिया और उसका नाम बन गया पीलक। उत्तरी बलूचिस्तान, गिलगिट, पश्चिमोत्तर भारत में अधिकांश कलपंखी पीलक **प्रजनन** के लिए दक्षिण भारत से बसंत ऋतु में आते हैं और शरद ऋतु में वापिस लौट जाते हैं। यद्यपि यह कीड़े भी खाता है, किंतु मुख्यतया फलाहारी है। इसे वन बहुत प्रिय है । ऐसा विश्वास था कि पीलिया की बीमारी के समय इस पक्षी को देखने से पीलिया दूर हो जाता है और आश्चर्य कि ऐसा ही विश्वास यूनान में भी था। यह विश्वास तो गलत है किंतु यदि पक्षी न हों तो हम मानव अनगिनत बीमारियों से घिरे रहें।

इसके और नाम हैं 'अंबक मद्दरी' (आम की ढोलक) तथा आम्रपक्षी क्योंकि

गर्मियों में यह आम के वृक्ष पर 'पके आम' की तरह बैठकर तेज आवाज में पि-पीलकं गान, सुनाता है। शर्मीला होने के कारण घनी आबादी के पास उतना सर्व सुलभ नहीं है जितनी कोयल, यद्यपि शहरों के बीच यदि विशाल बाग हों तब यह वहां भी आ जाता है। अपना **क्षेत्र** घोषित करते समय 'ची-आ' भी गाता है। पीलकों की उड़ान शक्तिशाली, लहरियेदार और तेज होती है।

प्रजननकाल स्थानानुसार अप्रैल-अगस्त है। यह कौए तथा मेघ/केसर शिकरा आदि से बचाव के लिए अपना सुगठित घोंसला कोतवाल भुजंगा, स्वर्ण सुपर्ण आदि पक्षियों के **घोंसलों** के पास एक ही वृक्ष पर, लगभग 12 मीटर की ऊंचाई पर या तो दुशाखियों पर बांधकर रखता है या सुंदर झूले की तरह बनाता है। यह घोंसला घास या पींड़ों के लचीले रेशों आदि से गहरे कप की आकृति में बुनता है। घोंसले को बाहर से मकड़ी के जाले के तंतुओं आदि से बांधता है। घोंसला 9 से.मी. व्यास का 6 सेमी. गहरा कप होता है इसकी मादा एक खेप में दो-चार अंडे देती है। गृहस्थी के सारे कार्य नर-मादा मिलकर करते हैं।

इसका सगा भाई यूरोपी कलपंखी पीलक (O. o. o) यूरोप में प्रजनन करता है और प्रवास पश्चिमोत्तर पाकिस्तान तथा मध्य अमेरिका में। एक चचेरा भाई *O. xanthornus x.*, Blackheaded Oriole कलसिरी पीलक भी उत्तरी भारत में सर्व सुलभ है; एक चचेरा भाई *O. chinensis diffusus* (Eastern Blacknaped Oriole) 'पूर्वांचली कलकंधर पीलक' पूर्वांचल तथा पूर्वी चीन में प्रजनन करता है तथा उत्तर पश्चिमी भारत (कलपंखी का प्रजनन क्षेत्र) को छोड़कर शेष भारत में प्रवास करता है।

दुशाखी काला भुजंगा (North Indian) Black Drongo or King Crow

962. *Dicrurus adsimilis albirictus* 963. *D.a. macrocercus (दक्षिणी)*

कद : बुलबुल +, पूंछ सहित लंबाई 31 सेमी.; आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : *भुजंगा,* भुंचगा, कोतवाल, कोलसा, कालकलछी, ठाकुर जी, करंजुआ; **पंजाबी :** जपल कालचिट; **बंग्ला :** फिंगा; **गुजराती :** कालोकोषी; **मणिपुरी :** चरोई, चेरोई; **असमिया :** फैंचु; **कच्छी :** कांछ, कलकांछ; **तेलुगु :** पस्सल पोलि गडु; **तमिल :** कारीचन, कारी करुमन, करुवटु वलि; **मलयालम :** काक्क तम्पुरट्टि, अनारंछि; **सिंधी :** कुणिक; **संस्कृत :** भृंग, *भुजंग,* गोप्रेरक, धनसू, धूम्याट, कलिकार, कलिंग, कुलिंग कलकलची, अंगारक, कालका, जल्पक काल चटक।

पहचान : द्विभाजित पूंछ, चमकदार काला स्याह छरहरा, **नर-मादा** समान।

हवा में काले सांप जैसी चाल (भुजंग) तथा सरकसी उड़ान भरकर कीड़ों को पकड़ने वाला यह कोयले (अंगारक) सा काला पंछी नगर के बाहर निकलते ही देखा जा सकता है। अपना आहार जमीन पर दौड़कर नहीं पकड़ता यह पूर्णतया वृक्षवासी और कीट भक्षी है। जानवरों की पीठ पर भी बैठकर यह 'गोप्रेरक' कीड़ों का शिकार करता है। यह बहुत साहसी है और अपने घोंसले के पास किसी भी घुसपैठिये जैसे कौए, चील, बाज, श्येन, आदि को ठहरने नहीं देता (कोतवाल)। इसलिए पीलक, कपोत, हरियल आदि इसके पड़ोस में अपने घोंसले बनाते हैं। उड़ते हुए अन्य पक्षियों की चोंच से डाकू की तरह उनका शिकार छुड़ा लेता है। छोटे पक्षियों का भी शिकार करता है, नाम 'कलिंग' (लड़ाकू) तथा 'कुलिंग' (दुर्गुणी)। जंगलों में आग लगने पर भागते हुए कीटों को खाने में भुजंगा सबसे तेज है क्योंकि यह आग के धुएं (धूम्याट) में भी उड़ता है। यह गोता मारकर नहाता है। छोटी छिपकलियां, चमगादड़, पतंगे, तितलियां, टिड्डी, दीमक, मधुमक्खियां आदि भी इसके प्रिय आहार हैं। यह 'धनसू' किसान का धन बढ़ाता है।

प्रजननकाल अप्रैल-अगस्त है। अपने घास के घोंसले को मकड़ी के जाले आदि से वृक्ष की टहनियों के लगभग छोर पर बांध देता है। घोंसला बनाने के लिए इसे खुली जगह में आम, शीशम, बबूल, कांडि आदि के अकेले वृक्ष अधिक पसंद हैं किंतु इस साहसी भुजंगे के घोंसले में भी नील/श्याव कोकिल (Drongo Cuckoo) तथा काली कोयल (Eudynamis scolopacia) अपने अंडे दे जाती हैं। दोनों नर-मादा नीड़ निर्माण तथा शावक के पालन में काम करते हैं। अगस्त सितंबर में इसकी पूंछ के परों का 'निर्मोचन' (moulting) होता है तब दुशाखी-पूंछ गायब होने पर यह देखने में अजीब लगता है। यह ('ठाकुर जी') सुबह जल्दी उठता है और अपने मधुर गान से मानो उषा की स्तुति करता है।

इसके शावकों के शरीर की पक्षति मुख्यतया नरमतर तथा अधिक होती है और धातुई चमक केवल ऊपरी पक्षति में ही होती है तथा दूसरे, शीतकाल में ही वयस्क पक्षति आती है।

'उत्तरी दुशाखी काला भुजंगा राजस्थान, उत्तर प्रदेश, बिहार, असम, नागालैंड, मणिपुर सहित उत्तर में, तथा 'दक्षिणी दुशाखी' (macrocercus) सौराष्ट्र, मध्यप्रदेश, उड़ीसा सहित दक्षिण में मिलते हैं। 'दुकूल काला भुजंगा' (Crowbilled Drongo. *D. annectans*) तथा इसमें बहुत कम अंतर है, 'दुकूल' 3-4 सेमी. छोटा है, पूंछ द्विभाजित है किंतु हवा में उड़ते दुपट्टे के समान लहरित है (इसीलिए नाम दुकूल) और चोंच अपेक्षाकृत भारी (25 मि. मी. की तुलना में 30 मि. मी.) है। अन्य भुजंगों के या तो रंग अलग हैं या पूंछ।

ब्राह्मणी मैना Brahminy or Blackheaded Myna

994. Sturnus pagodarum

कद : मैना, 22 सेमी.; आवासी (स्थानीय प्रवासी)

स्थानीय नाम : हिंदी : पोपोया मैना, *ब्राह्मणी* मैना, पुहाया मैना, हरबोला, काला सिर मैना, पबई, पावी; **बंग्ला :** मुंगेर पावी, *बामनी* मैना, हरबोला; **तेलुगु :** पपद, गोरिंकी; **तमिल :** पपट पड़िकी, पप्पांथि नहनबई, रावणाति; **मलयालम :** करिमतलई चिंकिली; **संस्कृत :** गौरिका, कवरी, परिव्राजिका, शंकरा।

पहचान : पीठ भूरी; पंख और पूंछ कत्थई; पूंछ की किनार सफेद; बदन गेरुआ, चोटी काली, पैर तथा चोंच पीले। उतरते समय जब यह पूंछ के पर खोलती है तब कत्थई पूंछ की सफेद किनार स्पष्ट दिखती है। मादा नर के समान किंतु शिखा थोड़ी छोटी।

इसके भगवा वस्त्र तथा काली खुली चोटी से ब्राह्मणी का रूप सामने आता है, साध्वी का या परिव्राजिका का [नाम ब्राह्मणी मैना, परिव्राजिका, पब्बाइया (प्राकृत में) या पबई भी]। इसका गान 'पीताक्षी भूरी' तथा केसराक्षी गंग मैनाओं की तुलना में अधिक मधुर होता है। यह घरों, बाजारों में न घुसकर बाग, बगीचों, खेतों में जाना पसंद करती है। मैनाओं की तरह यह भी यूथचर है और अन्य पक्षियों के साथ **आहार** की खोज में जाती है। महुआ और सेमल के रस का पान भी खूब करती हैं, सर्वभक्षी है। खेतों में हल चलते समय बैलों के साथ साथ उड़ते या उभरते कीड़ों को पकड़ने में कुशल है। बैलों और भैसों के कान पर बैठकर उनके कान के कीड़े भी निकालती है।

प्रजननकाल में (फरवरी-सितंबर) नर अपना वक्ष फुलाकर मधुर **गान** करता है। इसके गाने कुछ हमारे सड़क छाप रोमियों सरीखे होते हैं क्योंकि जैसे रोमियो फिल्मी गानों की एक एक या दो दो पंक्तियां गुनगुनाते हैं, नर ब्राह्मणी मैना उसी तरह बुलबुल, भृंगराज या अन्य पक्षियों के गानों की थोड़ी थोड़ी नकल करता है। इसे अन्य मैनाओं की अपेक्षा शुभ पक्षी मानते हैं। अपने घोंसले वृक्ष के संकरे मुंह वाले कोटरों में सूखी पत्तियों, पंखों, घास आदि बिछाकर बनाते हैं और अक्सर यह रामगंगरा, कठफोड़ा, बसंता आदि से जबरदस्ती उनके कोटर ले लेते हैं। मादा एक खेप में 3-4 हल्के नीले अंडे देती है और ऋतु में दो या तीन खेप देती है। गृहस्थी के सारे कार्य **नर-मादा** मिलकर करते हैं।

सूखे मरुस्थली क्षेत्रों, सिक्किम, भूटान तथा नेपाल को छोड़कर सारे भारत को आबाद करती है। स्टर्नस (सारिक) वंश के पक्षी मरुस्थलीय तथा ध्रुवीय क्षेत्रों को छोड़कर सारे यूरेशिया, अफ्रीका, आस्ट्रेलिया और उत्तरी अमेरिका में मिलते हैं। मूलतः पुराने विश्व का पक्षी, मनुष्य की सहायता से द. अमेरिका को छोड़कर सारे

महाद्वीपों में पहुंच चुका है। इस कुल के पक्षियों की चोंच सीधी या हल्की-सी चक्र होती है, इसके पैर तथा पंजे मजबूत होते हैं। इनकी चाल कुछ कुछ बत्तखों सरीखी मटककर किंतु अकड़कर चलने वाली होती है। इसकी उड़ान सशक्त तथा सीधी होती है। ये बहुत शोर करने वाला कुल है। किंतु इसी कुल की 'पहाड़ी मैना' (Gracula religiosa) (स्वर्णकर्ण कलमैना) जो जंगल में तो शोर करती हैं या सीटी बजाती हैं किंतु सिखाने पर साफ साफ मनुष्यों के बोलों की ठीक नकल करती हैं। सारक कुल के पक्षी अपनी आबादी बहुत अधिक बढ़ाते हैं किंतु ब्राह्मणी मैना, ऐसा लगता है कि परिवार नियोजन करती है। गुलाबी मैना टिड्डी दल को आहार बनाती है। जैव विकास क्रम में पक्षी यदि 20 नहीं तो 12-13 करोड़ वर्ष पुराने हैं, उनमें यष्टिसादि गण *(Passeri formes)* लगभग 6 करोड़ वर्ष। अनुमानतः सारिका कुल *(Sturnidae)* तथा कस्तूरा उप कुल *(Turdinae)* के पूर्वज एक ही थे, Laurillardia, जिनके जीवाश्म (आदि नूतनकाल) फ्रांस में 5 करोड़ वर्ष पूर्व के जमाव में मिले हैं।

(तारक) तेलन मैना **Common (Indian) Starling**

997. Sturnus vulgaris poltaratskyi
कद : 20 सेमी.; प्रवासी

998. S. v. nobilior (पश्चिमोत्तरी)
999. S.v. porphyronotus (हिमालयी)
1001. S.v. indicus (कश्मीरी)

स्थानीय नाम : हिंदी : *तेलिया* मैना, तिलोरी, कुसने, नक्शी तिलयर, *तेलन;* **बंग्ला :** *तिली* मैना; **कश्मीरी :** *तिलगिरी,* त्सिनीहंगुर; **सिंधी :** कारो वाहियो; **संस्कृत :** पारुष्ण, तैलपक, *तैलपायी,* शारि।

पहचान : छरहरी, यूथचर, चमकदार, काली, सित बिंदुकित मैना जिसमें चमकदार हरे और बैंगनी रंग की आभा झिलमिल करती है। **नर** की अपेक्षा **मादा** के रंग थोड़े दबे रहते हैं। इसके रंग पानी पर पड़े **तेल** की सतह के रंगों के समान, तथा काले शरीर पर सफेद बिंदु तारे के समान चमकते हैं।

ग्रीष्म में यह मध्य यूरेशिया में **प्रजनन** करती है और प्रवास के लिए पंजाब, दिल्ली, नेपाल तराई, गंगा का कछार, राजस्थान, सौराष्ट्र, उत्तर तथा पश्चिमी म. प्र. तक आती है। कभी कभी बिहार, और मद्रास तक भी पहुंचती है। इसे नम घास के मैदान, झील तथा दलदलों के पास की जमीन, फसली खेत तथा आबादी के आसपास झुंडों में रहना पसंद है। हल चल रहे खेतों में निकलते हुए कीड़ों को खाने के लिए इनके झुंड मिल जाते हैं। बेंतों के कुंजों, शीशम के उपवनों में, झील किनारे

नरकुलों में ये सैकड़ों की संख्या में **बसेरा** करती हैं, और वह जगह लगभग काली दिखती है क्योंकि ये वृक्षों की ऊपरी टहनियों पर बैठना पसंद करती हैं। **आहार** : अनाज, फल, बेरियां, कीड़े, छोटी छिपकलियां, मकड़ियां, चिड्डे, टिड्डी, इल्लियां, गुबरैले, कोशित कीट, सूंडी, घुन, टिड्डी आदि।

प्रणय गान : आकाश की तरफ चोंच करके, आवेश में पंख कंपायमान करते हुए नर जोश से गाना गाता है। इसके गाने में चहचहाना, चटराना और संगीतमय स्वरों का मिश्रण होता है जिसमें पड़ोसी पक्षियों के गान भी मिले होते हैं।

कृष्णपक्ष की रात्रि के प्रगाढ़ नीले आकाश में जैसे तारों की सुंदरता मन को हर लेती है, कुछ वैसी ही सुंदरता इस तारक तेलन मैना की होती है। तारक मैना बड़ी संख्या में जमीन पर कीड़े चुगती हुई चलती जाती हैं, अक्सर पीछे की पंक्तियों की मैनाएं उड़कर आगे हो जाती हैं। वैदिक काल में इनका विशेष स्थान था और अश्वमेध यज्ञ में इन्हें अग्नि को समर्पित किया जाता था। मनु के विधान में तेल की चोरी करने वालों को दंडस्वरूप अगले जन्म में तारक मैना (तैलपायी) के रूप में जन्म लेना पड़ता है, उन्हें मानव जन्म नहीं मिलता।

इस कुल (सारिका, *Sturnidae)* के अधिकांश पक्षी प्रजनन पश्चात, एक बार परों का निर्मोचन करते हैं। अधिकांश जातियां अत्यधिक यूथचर होती हैं। तारक तेलन मैना प्रजनन क्षेत्र में समूहों में या इकेले दुकेले घोंसले बनाती हैं। इसका घोंसला सूखी टहनियों तथा घास का ढीला ढाला पीढ़ा-सा होता है तथा काफी गंदा व बदबूदार होता है। सामान्यतया मादा एक खेप में चार-पांच नीले अंडे देती है जिसे नर-मादा 12-14 दिन तक सेते हैं। मादा एक साल में 2-3 खेप भी देती है। पर आने में लगभग 21 दिन लगते हैं और तभी वे सशक्त होकर उड़ते हैं जिससे शावक की मृत्यु-दर कम रहती है। ऐसे केवल **चार कशेरुकी जानवर** हैं (तारक) तेलन मैना, गौरैया, भूरा जंगली चूहा तथा घरेलू चूहा जो मूलतः यूरोप के निवासी हैं और आज मनुष्य की ऐच्छिक या अनैच्छिक मदद से सारे विश्व में पनप रहे हैं। यह 1930 में आइसलैंड पहुंचीं और पनप रही हैं। इसकी सगी बहन कश्मीरी *(S.v. indicus)* कश्मीर में प्रजनन करती है तथा शीतकाल प्रवास उत्तरी भारत में।

केसराक्षी गंगमैना **Bank Myna**

1008. Acridotheres ginginianus.

कद : मैना; 21 सेमी.; आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : *गंगा मैना,* दरियाई मैना, किलनहियां, बरद मैना, **बंगला :** गंग सारिक; **नेपाल** : बरदी मैना; **सिंधी** : लाली; **संस्कृत** : सारिका, *गांग* सारिक।

पहचान : सिर काला, चोंच तथा **नेत्रतट केसरिया,** पैर पीले; शरीर कलौंछ लिए नीलक; द्युति तथा पुच्छ-छोर गुलाबी, पंख तथा पूंछ काली, माथे पर छोटे काले पर। **नर-मादा** एक समान।

अपने वंश के अनुकूल बहुत चटर-पटर करती है इसलिए इसके वंश का नाम 'सारिका' कहानी सुनाने वालों से संबद्ध हो गया है। सारिका कुल में यही मैना है जो नदियों की कगारों पर, कच्चे कुओं की दीवारों पर अपना **घोंसला** बनाती है। इसलिए इसके सभी नामों में दरिया, गंगा, तट आदि विशेषण लगे मिलते हैं किंतु मात्र इस विशेषण से पहचानने वाले को यथेष्ट मदद नहीं मिलती क्योंकि पीताक्षी भूरी मैना तथा सितकर्णी मैना की तरह यह भी रेलवे स्टेशनों, कचराघरों, बस्तियों आदि में सुलभ है। 'सितकर्णी मैना' (Pied Myna) की आंखें लोहित तो होती हैं, किंतु कान सफेद तथा पीठ पर सफेद V आकार की पट्टी होती है।

संस्कृत साहित्य में बहुत कम पक्षी हैं जिन्हें हेय दृष्टि से देखा जाता हो। किंतु कौए से भी अधिक तिरस्कृत सारिका कुल (गुलाबी, ब्राह्मणी तथा पहाड़ी मैना के अपवाद सहित) है। यह भावना इसके लिए प्रयुक्त विशेषणों से स्पष्ट हो जाती है यथा कलहप्रिया, कलहाकुला, वाचाला, मुखरा। 'पीताक्षी भूरी मैना' को 'कुणपी' (दुर्गंधित) कहा है जो इसके कुल का भी लक्षण है। कौए से भी अधिक यह 'धृष्ट' (साहसी ?) तथा चोर प्रवृत्ति की है और रसोई में, दुकानों में, मंदिरों में घुसकर कुछ भोजन निकाल लेती है। सारिका कुल के सदस्यों की तरह ये शोर बहुत करती है। तथा ज्वार बाजरा आदि की फसल को भी खूब **खाती** है (और कीड़े भी उतने ही)।

भारत में यह मैना सिंधु, गंगा, ब्रह्मपुत्र तथा ताप्ती एवम महानदी की घाटियों द्वारा बनाई गई सीमा के भीतर तथा 800 मी. की ऊंचाई से नीचे मिलती है। यह सारे समय झुंडों में रहती है। कुछ बात है कि यह भारत उपमहाद्वीप के बाहर नहीं मिलती। चरते जानवरों के कान पर बैठकर उनके कीड़े खाती है (उनके कान हिलाने पर भी संतुलन बनाए रखती है) उनकी हलचल से उड़ते कीड़े भी। पानी भरे खेत इसे पसंद हैं। *Ophinsa melicerte* नामक पतंगे की विनाशकारी इल्ली इसका प्रिय भोजन है। **प्रजननकाल** मार्च से अगस्त। अक्सर एक ऋतु में यह दो खेप और एक खेप में (27.5 : 20.3 मिमी. आमाप के) हल्के नीले चमकदार 3-5 अंडे देती है। गृहस्थी नर-मादा मिलकर संभालते हैं।

पानी के पास खड़ी मिट्टी की दीवार में करीब एक मीटर लंबी तथा सात सेंटीमीटर व्यास की ऊपर की ओर चढ़ती हुई सुरंग बनाकर **घोंसला** (**नाम** : गंगमैना) बनाती है, सुरंग के अंत में एक यथेष्ट बड़ी गोल जगह में घास, पंख, केंचुली इत्यादि जमाती है। कभी कभी यह गहरे कुओं की दीवार पर गहराई में जाकर भी घोंसला बनाती है जिसमें से पहली उड़ान भरने वाले सशक्त शावक ही सफल होते होंगे।

कपिल पुच्छलकाक (Northeastern) Tree Pie

1032. Dendrocitta vagabunda v.

कद : कबूतर+पूंछ, 30+20 से.मी.; आवासी

1030क. D.v. bristoli (पश्चिमोत्तरी)
1031. D.v. pallida (पश्चिमी)
1033. D.v. parvula (कैराली)
1034. D.v. vernayi (दक्षिणी)

स्थानीय नाम : हिंदी : महालत, महालाठ, मुटरी, मार, लमडोर, कोकैया, महताब, छोटा महूका; **बंग्ला :** टाकाचोर; हंडी चाचा; **गुजराती :** खाखेड़ों; **असमिया :** कॅला खॅआ; **तेलुगु :** गोकुरायि, कोंडा काटि गाडु; **तमिल :** वाल काकई; **मलयालम :** ओले नाली, कनक्कन; **सिंधी :** महताब, मोटो, मलंग, चांद; **संस्कृत :** कृशकूट, करायिका, भष, कुखक, कुरुकुंचिता, चौरिकाकु।

पहचान : भस्मी लंबी पूंछ जिसका छोर काला; वक्ष, उदर, पीठ और कटि कपिल रंग के; सम्मुख काला; चोंच कौए के समान, प्राथमिक पंख काले, द्वितीयक और तृतीयक पंख नीले; पंख पिच्छ (तीनों) सफेद। **नर-मादा** एक समान।

एक चोर में हिम्मत, मैत्री करने का कौशल और लड़ने की योग्यता होनी चाहिए और देखने में सज्जन दिखना चाहिए। बदामी काक, (चौरिकाकु), संभवतया, इसीलिए बहुत कुशल चोर है विशेषकर अन्य पक्षियों के अंडों का। काक परिवार के अन्य सदस्यों की तरह बहुत उत्सुक। वैसे तो अपने पड़ोस में किसी अन्य पक्षी को घोंसला नहीं बनाने देता किंतु कीट भोजन के लिए अक्सर अपने परिवार के 4-5 सदस्यों को लेकर अन्य कीट भक्षियों जैसे पताका भृंगराज, कठफोड़े आदि के साथ घूमता रहता है। इसे पतंगे, उड़ते दीमक या अन्य बड़े कीट पसंद हैं। घास या जंगल में आग लगने पर वहां पहुंचकर भागते कीड़ों को पकड़ता है। दूसरी तरफ बरगद पीपल आदि के वृक्षों पर भी बसंता, हरियल आदि फलाहारी पंछियों के साथ पंगत में रहता है। नीम की निंबोरियां और कुछ जहरीले फल भी इसका **आहार** हैं। साहसी इतना कि कीड़े-मकोड़े, छिपकली, छोटे सांप को, पक्षियों के अंडे तथा छोटे पक्षी जैसे शकरखोरा, दर्जन, सिताक्षी, श्यामा आदि को भी मौका पाते ही पकड़कर खा लेता है। आपके हाथ से भी, आमंत्रण पर, आहार ले सकता है।

मौके के मुताबिक मधुर गान या कर्कश गुस्सैल आवाज निकालता है। यह **स्वरों** का धनी है। **प्रणय** नृत्य के समय नर-मादा कुछ सेमी. की दूरी पर बैठकर गर्दन एक-दूसरे की तरफ बार बार मोड़ते हैं और एक-दूसरे की चोंच छूकर जैसे चुंबन करते हैं तथा साथ साथ ('को-कि-ला') मधुर आवाजें निकालते हैं। नर-मादा न केवल दिखने में एक समान है, वरन नीड़ निर्माण, सेने तथा शावक के लालन-पालन में भी एक समान हैं। मादा एक ऋतु में एक खेप में 4-5 अंडे (30x20

मिमी.) देती है।

भारत में कपिल पुच्छलकाक की पांच उपजातियां विभिन्न क्षेत्रों में रहती हैं (केवल थारमरुस्थल में नहीं पाया जाता)। यदि आप अपने बाग में अन्य पक्षियों को रहता देखना चाहते हैं या फल खाना चाहते हैं तो इसे अपने बाग में घोंसला न बनाने दें। अधिकांश लोग इस पक्षी को शुभ नहीं मानते। विश्व के, शरीर के अनुपात में, सबसे लंबी पूंछ वाले पक्षियों में यह प्रथम दस में से एक है।

कलौंछी काक या घरेलू कौआ (Indian) House Crow

1049. Corvus splendens s.

कद : 43 सेमी.; आवासी 1048. *C.s. zugmayeri*

1050 *C.s. protegatus*

1051 *C.s. maledivicns*

स्थानीय नाम : हिंदी : *कागा, कौआ,* देशी कौआ; **मराठी :** *काओला;* **बंग्ला :** *काग,* काक; **असमिया :** *पाटकाओरी;* **कश्मीरी :** *काव;* **गुजराती :** *कागड़ो;* **तेलुगु :** *मंचीकाकी;* **तमिल :** *तल्लकाक,* मणियनकाकई; **सिंधी :** *काग;* **संस्कृत :** वायस, *काक*।

पहचान : ग्रीवा, ऊपरी पीठ और वक्ष कलौंछी; अन्य अंग चमकदार काले; बड़ी तथा मजबूत चोंच, पूंछ गोलाई लिए। **नर-मादा** एक समान।

विश्व में केवल भारतीय साहित्य, विशेषकर लोक गीतों, में काक या काग अत्यधिक लोकप्रिय है। वर्ष में श्राद्ध दिवस को उसे खिलाया जाता है। हमारे पूर्वजों ने समाज में उसकी उपयोगिता देखी। सारे **भारत** में (दक्षिण केरल अपवाद) यह काक मिलता है। यह काक अपनी चतुराई, एकता तथा उपयोगिता के बल पर ही मानव सहजीवी तथा इतना सर्वसुलभ है। काक की अधिकता गंदगी की अधिकता के कारण भी है। काक कुल विश्व में दस सर्वाधिक सुविस्तृत पक्षीकुलों में से एक है। इसका एक कारण उसका सर्वभक्षी होना है और उसकी चोंच का विशिष्ट न होकर बहुमुखी या अविशिष्ट होना है।

धारणा प्रचलित है कि काक के नेत्र कोटर दो और आंख एक ही होती है, जो बाएं दाएं कोटरों में जा सकती है; गलत है। उनका तर्क है : 'यह काक चूंकि बाएं तथा दाहिने देखने के लिए अपना सिर अधिक घुमाता है, अतएव उसकी एक ही आंख होगी।' वास्तव में वह **चौकस** है और पास आने वालों की दूरी भी देखता है।

भारत में काक वंश *(Corvus)* की छह **जातियां** हैं। **सिताक्षी काक** (Jackdaw, *C. monedula*) के रंग लगभग 'कलौंछी काक' के समान होते हैं किंतु

छोटा होता है—33 सेमी, तथा इसकी पूरी पीठ सलेटी, आंख सफेद तथा कंठ सलेटी होता है। **काला काकोल** (Carrion Crow; *C. corone*) के वक्ष, उदर तथा पीठ कलौंछी होती है **काला जंगली काक** (Jungle Crow. *C. macrorhynchos*) बिलकुल काले तथा बड़े होते है। **'दढ़ियल द्रोण काक'** (Raven, *C. corox*) सबसे बड़ा (70 सेमी.) तथा एकदम काला होता है, इसे काले जंगली काक का बड़ा भाई मान सकते हैं। 'बभ्रुमुखी काक' (Rook, *C. frugilegus*) का मुंह तथा ठोड़ी परहीन तथा भस्मी भूरे, अन्यथा जंगली काक के समान।

कलौंछी काक भी सारस के समान जीवन भर के लिए जोड़ा बनाता है और वे प्यार से एक-दूसरे के परों की सफाई करते हैं। कलौंछी काक उन विरल पक्षियों में से है जो अपने जनक, सहोदरों तथा मित्रों की पूरी सहायता करते हैं। **प्रजननकाल** में (मार्च-अगस्त) मादा के लिए, नर भोजन लाकर छोटा-सा 'का' बोलकर उसे आमंत्रित कर खिलाता है, और मादा अपने पंख थोड़े-से खोलकर, कंपायमान शरीर के साथ हल्के स्वरों में 'किर्र किर्र' गाती हुई, इस प्रणय भेंट को स्वीकार करती है। ये खुले में मैथुन नहीं करते हैं, शायद इसीलिए मान्यता है कि 'काक-संभोग' का दिखना मृत्यु सूचक अपशकुन है। **नीड़ निर्माण,** 'सेने' तथा शावकों का लालन-पालन नर-मादा मिलकर करते हैं।

'काक' गर्मियों में उठती हवा की सहायता लेकर हवाबाजी करता है। सशक्त श्येन तथा बाज भी काक को नहीं पकड़ सकते। काक के पास अपनी भावनाओं यथा—शंका, चेतावनी, गुस्सा, प्रणय आमंत्रण, भोजन प्राप्ति का उद्घोष, संतोष, दुख आदि व्यक्त करने के लिए विशाल 'शब्दकोश' है। कलौंछी काक में एक और दुर्लभ विशेषता है छेड़खानी करना, अन्य पक्षियों की खेल में पूंछ पकड़ना, सोती गायों या कुत्तों के कान पकड़ना आदि। यह संगठित है, इसीलिए एक कौए को मारने पर वहां सैकड़ों कौए इकट्ठे होकर पूरे शोर के साथ शिकायत करते हैं। तिस पर भी कोयल इससे अपने शावकों का पालन करवा लेती है।

काला जंगली काक (Indian) Jungle Crow

1057. Corvus macrorhynchos culminatus

कद : घरेलू कौआ +, 58 सेमी.; आवासी *1055. C.m. levaillantii (पूरबिया)*
1056. C.m. tibetosinensis (तिब्बती)

स्थानीय नाम : हिंदी : *काला कौआ,* पहाड़ी कौआ, काग; **कश्मीरी :** काब, दिवा काब, पंटसोल काव; **बंग्ला :** दांड काक, *जंगली कौआ;* **असमिया :** काक सोरई, *जंग्ला काक* सोरई, धोरा काउरी; **मराठी :** डोम काओला; **गुजराती :** गिरनारी कागड़ो;

कछारी : हग्रनी दाओ काक; **कचनागा** : इन्सई *काक;* ***कुकी*** : बो काक; **मणिपुरी** : क्वाक; **लेप्चा** : उलकफो; **तेलुगु** : माला *काकी;* **तमिल** : अंडन *काकई,* कारून काकई; **मलयालम** : तोन्नन *काका,* वेलि काका; **संस्कृत** : *वन काक,* अरण्य काक, पर्वत काक, कृष्ण काक, ध्वांक्ष, काकनीला, काक जम्बू, ध्वांक्षु जम्बू।

पहचान : चमकदार काला, भारी काली चोंच वाला मझोले कद का कौआ। **नर-मादा** एक समान, मादा हमउम्र नर से छोटी।

पहले जंगलों तथा गांव के बाहर ही मिलता था किंतु अब शहरों के आसपास मिलने लगा है। यद्यपि यह घरेलू कौए के समान बुद्धिमान, संगठित तथा चतुर नहीं हैं किंतु अपने पारिवारिक गुण के अनुसार खोजी तथा निडर है। वैसे अकेले दुकेले रहता है किंतु **घोंसलों** के लिए किसी बड़े वृक्ष पर अन्य कौओं, तोता, मैना आदि के साथ बसेरा करता है। कलौंछी काक के समान ये भी काक हत्या होने पर सामूहिक रूप से शिकायत करते हैं। छेड़खानी करते हैं; 'हवाबाजी' में इन्हें बहुत मजा आता है; **सर्वभक्षी** हैं, अर्थात फल, फूल, अनाज, बीज, कीड़े, मकोड़े, अंडे, छोटे पक्षी से लेकर मुर्दा तक सभी कुछ पचाने की ताकत इनमें है। अन्य पक्षियों के घोंसलों की **लूटपाट** का काम घरेलू कौओं से अधिक करते हैं, यहां तक कि मुर्गीखानों से अंडे तथा चूजे चुराने का काम भी।

इनकी आवाज घरेलू कौओं की **आवाज** की तुलना में मोटी होती है किंतु अपने भाईयों (हिमालयी तथा तिब्बती) की तुलना में कम कर्कश। इनके पास विभिन्न मनस्थितियों को व्यक्त करने के लिए दस से अधिक **बोलियां** हैं। **प्रजनन** ऋतु में (फरवरी से जून) अक्सर अपनी प्रिया के पास बैठकर, सिर थोड़ा झुकाकर, गर्दन तानकर, चोंच खोलकर अपने गले के परों को फुलाकर, अपने पंखों को पीछे कमर तक खींचकर, पूंछ ऊपर नीचे करते हुए कां....कां...कां... **गान** करता है और इसकी जीवन संगिनी भी कुछ इसी तरह की मुद्रा बनाकर हल्के कां...कां...स्वरों में अपनी प्रसन्नता तथा प्रेम प्रकट करती है।

नीड़–जहां कलौंछी काक अपना नीड़ वृक्षों के दुशाख पर जमीन से 3-4 मीटर की ऊंचाई पर बनाता है, काला जंगली काक कोई 7-10 मीटर की ऊंचाई पर। मादा एक खेप में 3-4 अंडे देती है (38-28 मि.मी.)। नर-मादा सारी गृहस्थी का काम मिलकर करते हैं। सेने की अवधि लगभग 18 दिन तथा शावकों को घोंसले से उड़ने में 3-4 सप्ताह लगते हैं। **कोयल** इनसे भी अपने अंडों का पालन-पोषण करवा लेती है।

समस्त यष्टिसादि गण *(Passeriformes)* में काक वंश के पक्षियों का शरीर (बिना पूंछ के) अधिक बड़ा होता है और दढ़ियल द्रोण काक का सर्वाधिक बड़ा (पूरी लंबाई 70 सेमी.)। काक कुल समस्त विश्व को (सिवाय अंटार्कटिका,

न्यूजीलैंड तथा दक्षिणी-अमेरिका के) **आबाद** करता है। ढाई करोड़ वर्ष पूर्व के जमावों में काक कुल के जीवाश्म मिले हैं, अर्थात इतने समय में भी 'का' ने 'निर्विशेषता' और 'व्यापकता' नहीं छोड़ी।

हल्दी कुमकुम (विस्फुलिंग) (Southern) Small Minivet

1093. Pericrocotus cinnamomeus c.

कद : 15 सेमी.; आवासी *1090. P.c. pallidus (पश्चिमोत्तरी)*
1091. P.c. peregrinus (उत्तरी)
1092, 95. P.c. vividus (पुरबिया)
1094. P. c. malabaricus (मालाबारी)

स्थानीय नाम : हिंदी : बुलाल चश्म, राजा लाल, सजनी, सहेली; **बंग्ला :** छोटो सात सायली; **कचा नागा :** *इंगुरी;* **कछारी :** वाओ रिबी, गाजओ-इ-अबा; **तेलुगु :** *कुमकुम्पु* जित्ता; **मलयालम :** तीचिन्नन; **संस्कृत :** *विस्फुलिंगक*।

पहचान : नर : सिर, ग्रीवा और पीठ मेघी; वक्ष और कटि—**कुमकुम**; उदर *हल्दी;* पंख—**हल्दी कुमकुम** टीके सहित काले; पूंछ लंबी, ऊपर काली, नीचे *हल्दी-कुमकुम* टीके सहित काले; पूंछ लंबी, ऊपर काली, नीचे *हल्दी-कुमकुम।* **मादा** तथा **किशोर नर** : पीठ और सिर भस्मी; नीचे पीताभ सफेद; पंख *हल्दी-कुमकुम* के छोटे टीके सहित काले; पूंछ—नर के समान।

ऋषियों ने जब इन्हें उड़ते देखा तो लगा कि जैसे आग की चिनगारियां छूट रही हों, इसीलिए ऋग्वेद में (1,191,12) इन्हें **विस्फुलिंग** कहा गया। हिंदी में इन्हें सहेली कहते हैं क्योंकि अ-प्रजननकाल में ये 7 या 8 के झुंड (एक या दो नर तथा छह सात मादाएं) में उड़ते रहते हैं। भारत में विस्फुलिंग वंश *(Pericrocotus)* की कुल दस में से छह **जातियां** आवास करती हैं तथा एक प्रवासी है। इन्हें मुख्यतया दो भागों में बांट सकते हैं—पहली में सिर तथा पीठ चमकदार काले होते हैं; तथा दूसरी में भस्मी धूमिल होते हैं। पहले वाली जातियों *P. flammeus, P. erythrophygius, P. ethologus* (प्रवासी) तथा *P. brevirostris* में लाल या लोहित रंग मुख्य होता है तथा *brevirostris* में चोंच छोटी होती है। दूसरे, धूमिल सिर वाले, भाग की जातियों *P. solaris, P. roseus* तथा *P. cinnamomeus* में कुमकुम (scarlet) लाल मुख्य होता है। निचला हिमालय भाग्यवान है क्योंकि उसमें इस सुंदर पक्षी की पांच जातियां सहभागी हैं। वृक्ष के ऊपरी हिस्सों में कुछ पक्षी एक दूसरे पर लाल पीला गुलाल फेंकते हुए होली खेलते नजर आएं तो समझ जाइए

कि विस्फुलिंग का परिवार उत्सव मना रहा है। cinnamomeus जाति की पांच उपजातियां मिलकर सारे भारत (थार अपवाद है) को **आबाद** करती हैं, और यह (1093) स्वयं भारत में लगभग 25° अक्षांश के दक्षिण को।

प्रजनन : क्षेत्रों के अनुसार फरवरी से सितंबर। **घोंसला** वृक्षों की डालियों द्विशाखियों पर हल्का, मजबूत और 'समरूप' किया हुआ जिसमें वह आसानी से नहीं दिखता; लगभग 5 सेमी. व्यास के गहरे कप के समान; एक खेप में औसत 3 अंडे, एक ऋतु में अक्सर दो खेप। **नीड़** निर्माण में **नर-मादा** की मदद करता है। मादा सेने का काम करती है और नर मादा का पोषण करता है, शावक का पालन-पोषण मिलकर करते हैं। इनका **आहार** इल्लियां, पतंगे तथा अन्य कीड़े हैं। ये वृक्ष की शाखाओं पर तथा जमीन पर पत्तों आदि के नीचे, अपना आहार खोजते हैं, किंतु पतंगों तथा कीड़ों को भी उड़ान में पकड़ते हैं।

बोल : उड़ान तथा भोजन के समय तार स्वरों में हल्की मधुर स्वी...स्वी ध्वनि, एक कोरस के से स्वरों में लगातार आती है। इसके गान का आनंद लेने के लिए इसके पास जाना पड़ता है और सौभाग्य यह कि अधिक शर्मीली नहीं है।

विस्फुलिंग वंश *Campephagidae* (इल्लीखोर) कुल का इतना विशिष्ट सुंदर वंश है कि पक्षी-विज्ञानी इसे विस्फुलिंग उपकुल की संज्ञा देना चाहते हैं।

सोनकालर शोबिगी Marshall's Iora

कद : गौरैया +, 14 सेमी.; आवासी *1102. Aegithina nigrolutea*

स्थानीय नाम : **हिंदी** : शोबिगा, *शोबिगी,* महुओ; **बंग्ला** : फटिक जल; **असमिया** : बरसात सोरई; **कचा नगा** : इंगा रुइना; **कछारी** : दाओतिशा गमों गडेबा; **मिकिर** : वोजोंग पोंग; **संस्कृत** : शुकिका, मधुक, सूकरिका।

पहचान : प्रजनन ऋतु (मई-सितंबर) : नर का निचला शरीर सुनहला, सिर तथा निचली पीठ काली, पंख दो सितपट्टों सहित काले तथा पूंछ सफेद छोर के साथ काली। ऋतु के बाद **नर** भी **मादा** के ही समान नीचे सुनहला, ऊपर (पंख तथा पूंछ छोड़कर) पूरा धानी हो जाता है।

व्याप्ति : मुख्यतया पश्चिमोत्तर, सतपुड़ा के उत्तर तथा यमुना के दक्षिणी भाग को **आबाद** करती है। इस शोबिगी *(Aegithina)* वंश के सुंदर पक्षी पाकिस्तान के बहुत

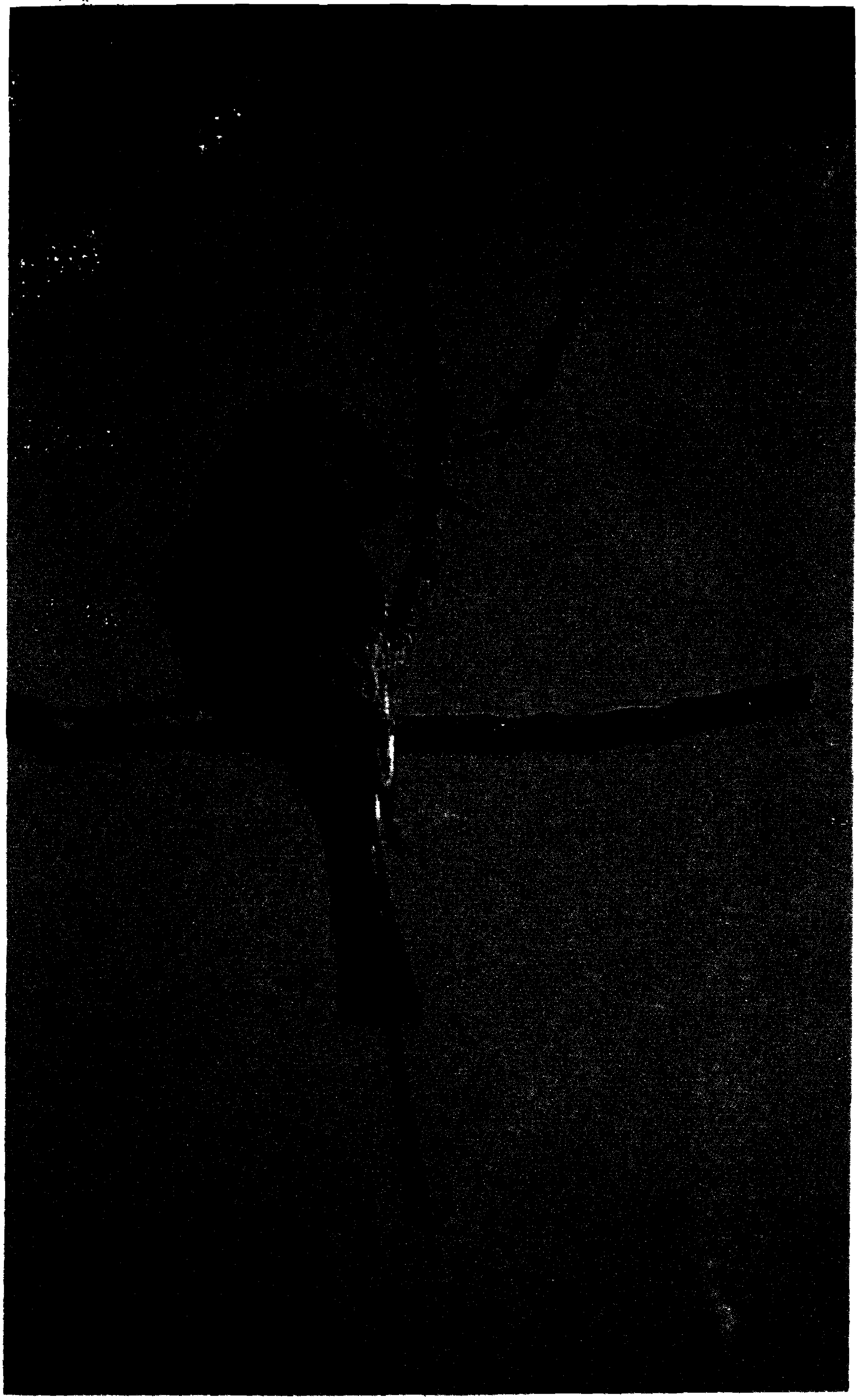
संकरे क्षेत्र में मिलते हैं, जबकि ये सारे भारत को **आबाद** करते हैं। **सोन** कालर शोबिगी की चचेरी बहन (*A. tiphia;* Common Iora), 'कल/पीत शोबिगी', सारे उपमहाद्वीप को आबाद करती है।

वर्षा ऋतु में आकाश में जब काले बादल घिरे हों तब नर शोबिगी मादा से प्रणय निवेदन करता, उसके चारों ओर फुदकता है, बीच बीच में रुककर गर्व से अपना सोन शरीर फुलाता है, काली पूंछ जोश के साथ खड़ी करता है, शबल पंखों को नम्रतापूर्वक नीचे करता है तथा कल/पीत सिर आकाश की तरफ करता है और सुनहले कंठ फुलाकर मधुर वंशी स्वर निकालता है। फिर एकाएक उत्तेजित हो, एक टहनी से दूसरी पर फुदकता है और आकाश की तरफ सीधे ऊपर उड़ान भरता है, ऊपर कुछ क्षणों के लिए थरथर (hovering) कर, अपने शरीर को फुलाकर छतरी की तरह नीचे उतरता है। यह नृत्य, मादा को रिझाने के लिए, कई बार करता है। बंगाल में यह मान्यता है कि ऐसा नृत्य वह मेघों से जल पीने के लिए करता है इसलिए वे इसे 'फटिक जल' या 'चातक' भी कहते हैं।

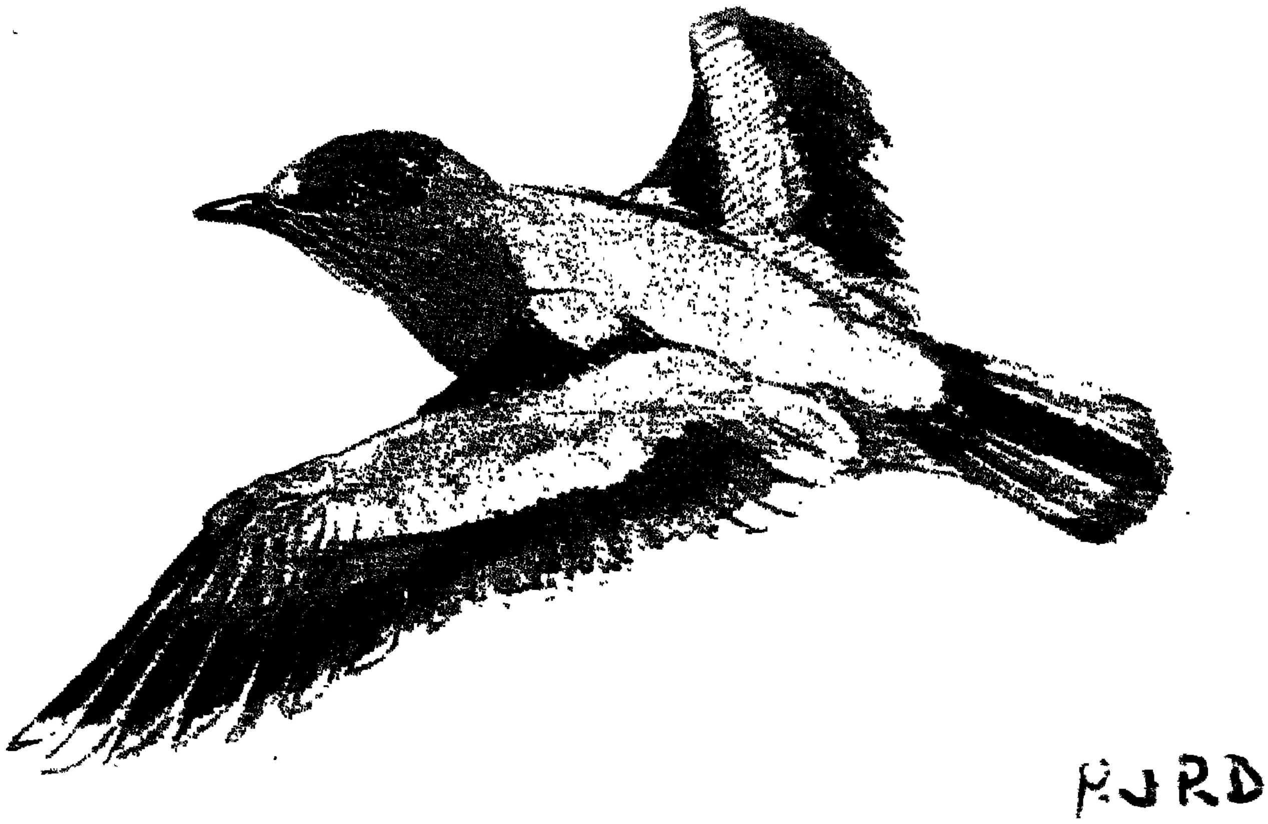
प्रजननकाल : जून से अगस्त तक है। ये साफ-सुथरा सुघड़ **घोंसला** द्विशाखा पर मजबूती से बनाते हैं। विभिन्न जाति के पक्षियों के घोंसले वृक्षों पर या झाड़ियों पर विभिन्न ऊंचाइयों पर होते हैं क्योंकि पक्षी वर्ग प्रकृति के समस्त संसाधनों को आपस में इस तरह बांटते हैं कि आपस में कम से कम प्रतियोगिता या झगड़ा हो। सोन कालर शोबिगी के नर तथा मादा अपने घोंसले अधिकतर 2 से 4 मीटर की ऊंचाई पर मिलकर बनाते हैं। मादा एक खेप में 2-3 अंडे देती है। नर-मादा अंडे सेते हैं तथा शावकों का पालन-पोषण करते हैं।

सोन कालर की बांसुरी-सी आवाज 'व्हीटि व्हीटि', कल/पीत शोबिगी *(A. tiphia)* की आवाज से अलग होती है। शोबिगी वंश के पक्षी कई धुनों में गाते हैं, उनमें से एक धुन जिसमें तीन स्वर होते हैं—सी-ई-ई-ई-ई-उ (या शोगि-गी) 'शोबिगी' पुकारती लगती है। नर-मादा दूर होने पर अक्सर बात करते से लगते हैं। बोल के आधार पर संस्कृत में इनका एक नाम **'सूकरिका'** है। इस मधुर गायक का एक नाम 'मधुक' है (महुओ)। इसके पास गानों की विविधिता भी है।

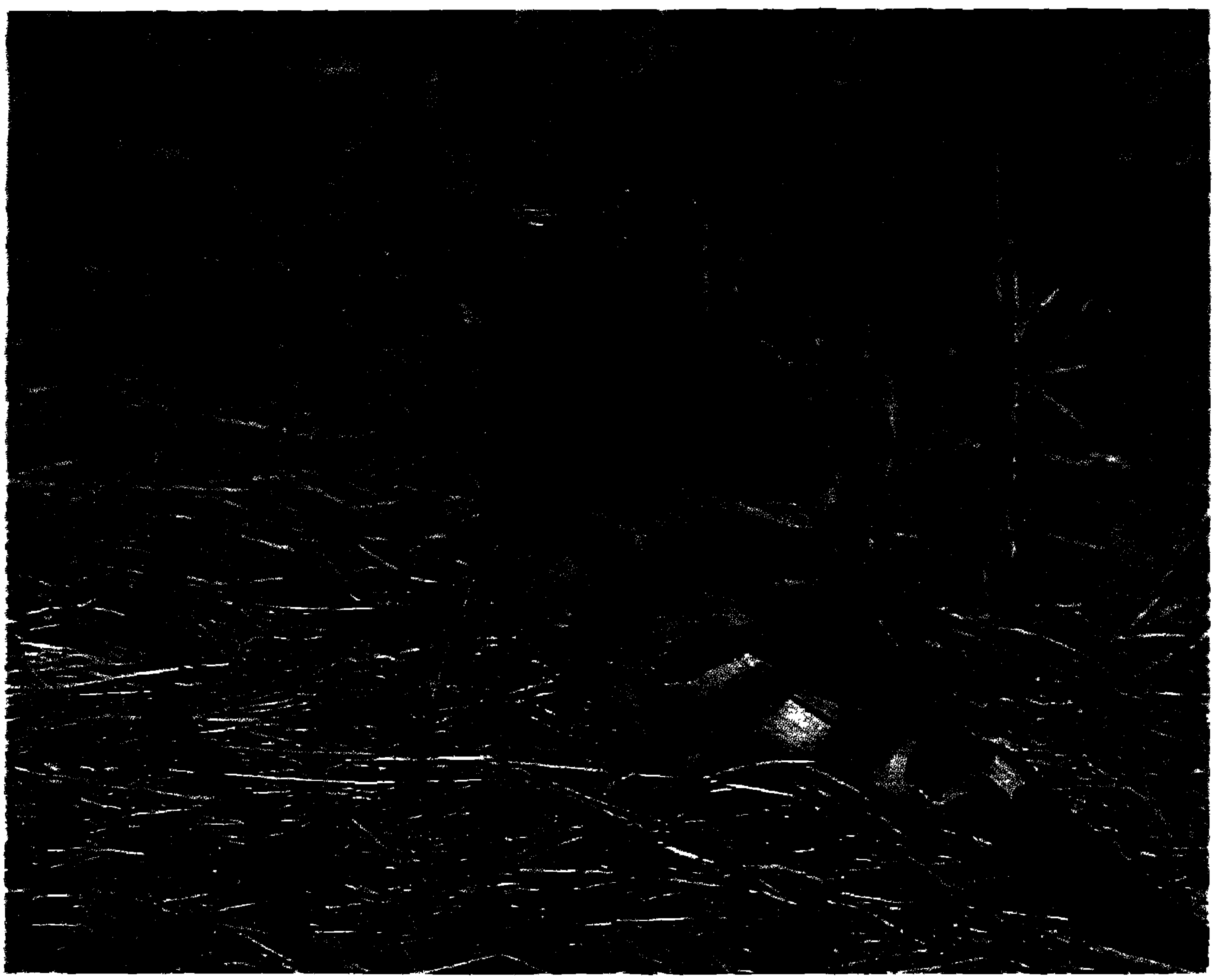
विश्व की चार शोबिगी जातियों में से दो भारत को आबाद करती हैं। नीलच्छवि कुल *(Irendea)* में शोबिगी *(Aeqithina)*, नीलच्छवि *(Irena)* तथा हरीतिमा *Chloropsis* वंश के पक्षी शामिल हैं। शोबिगी वंश के पक्षी अकेले दुकेले रहना पसंद करते हैं, तथा कुल के अनुरूप वृक्षीय हैं। **आहार** : कीड़े, डिंभ, मकड़ी आदि। इन्हें जंगल के किनारे अधिक पसंद हैं।



33 पिंग/तूतिया पत्रिंगा (750)



34 क – पाटलग्रीव नीलकंठ (755)



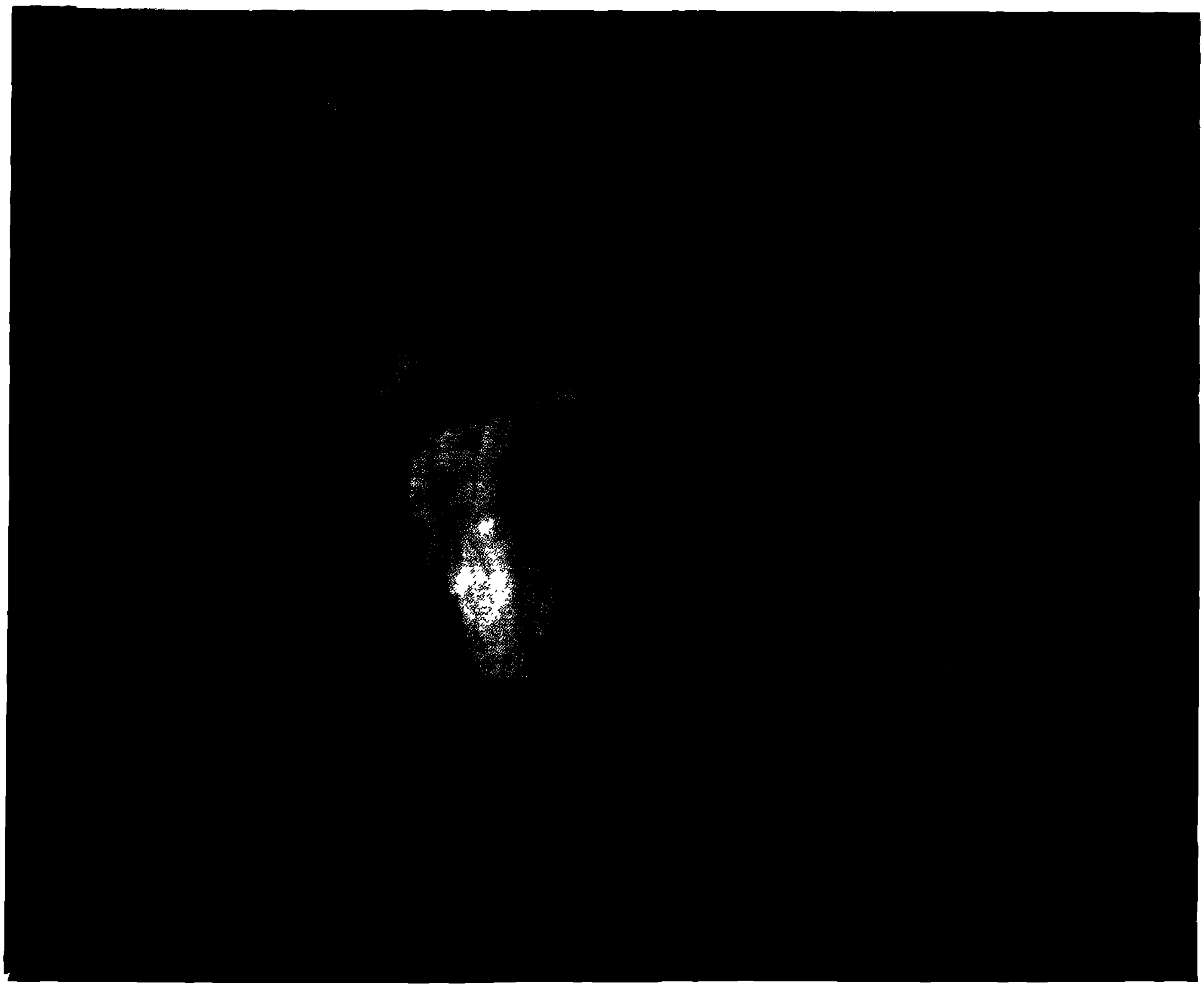
34 ख – बदामी शेखर पुत्रप्रिय (763)



35 कलनक श्याव धनेश (767)



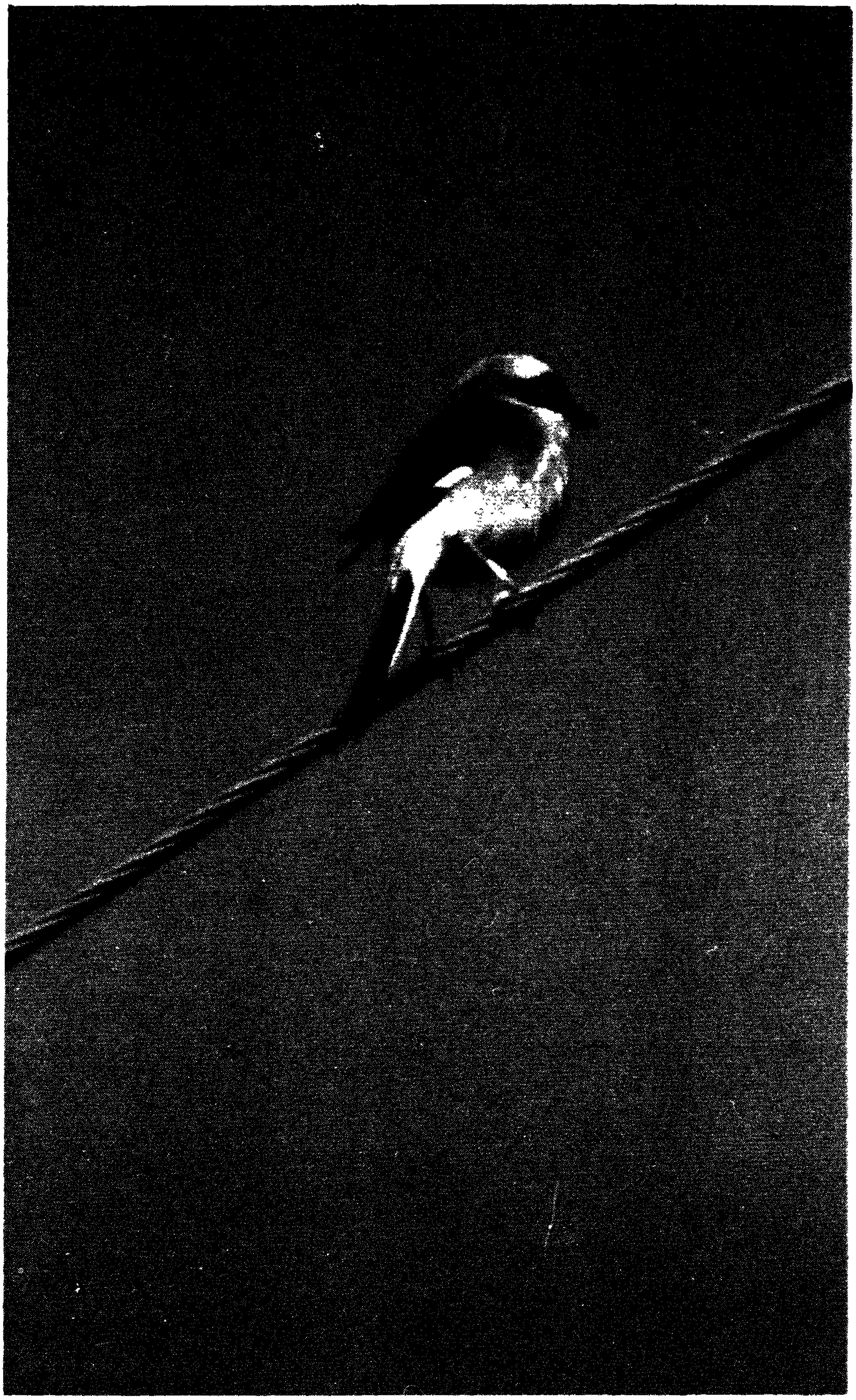
36 क – चीतलकंधी सोन-कठफोड़ (819)



36 ख – सोनकंठ तम्हेरा (792)



37 केसरिया लटोरा (946)



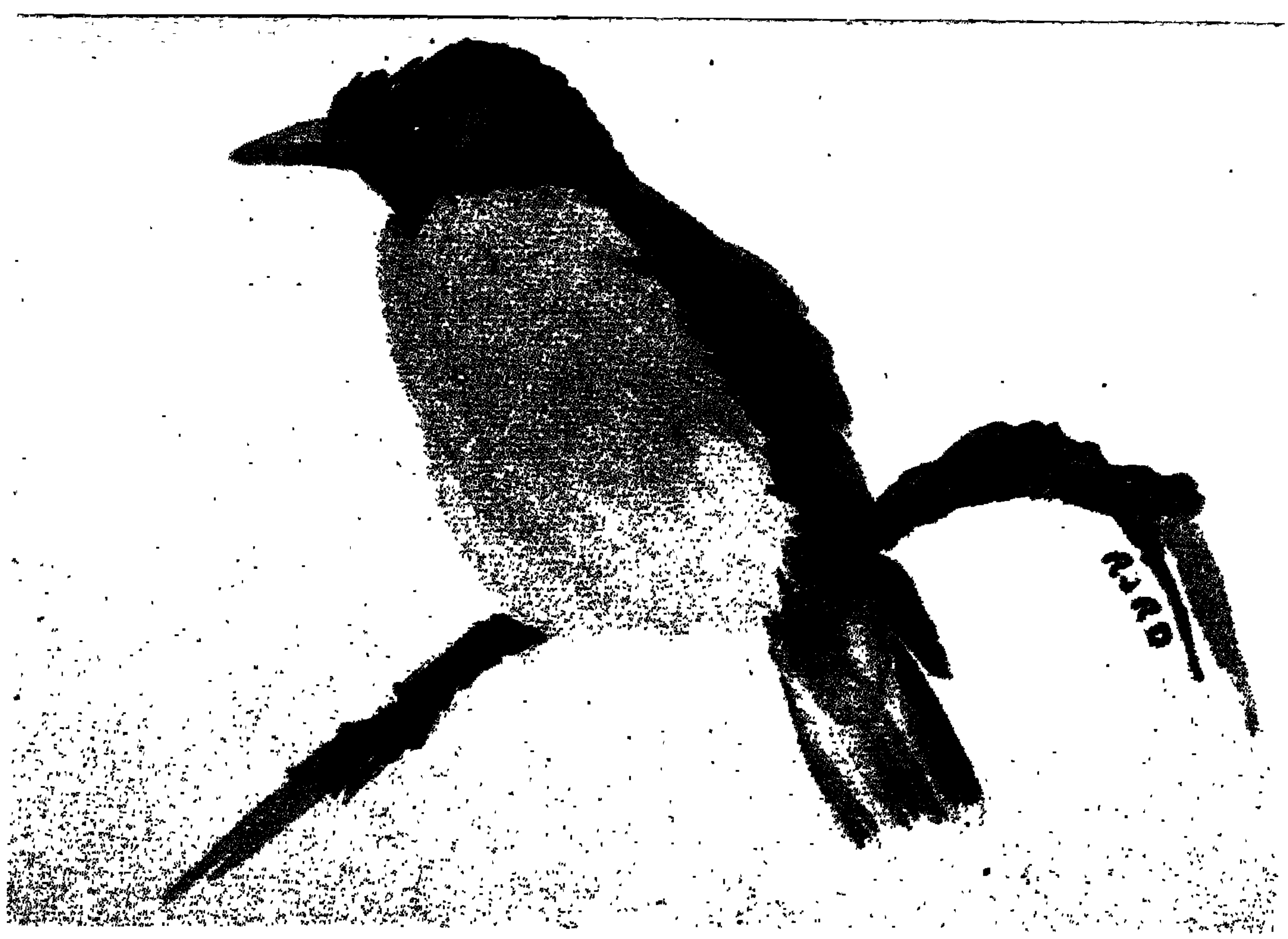
38 कथपीठ लटोरा (940)



39 दुशाखी काला भुजंगा (962)



40 क — ब्राह्मणी मैना (994)



40 ख — केसराक्षी गंगमैना (1008)

कनेरा बुलबुल (Rajasthan) Redwhiskered Bulbul

कद : 20 सेमी.; आवासी *1119. Pycnonotus jocosus abuensis*

1118. P. j. pyrrhotis (कुमायूंनी)

1120. P. j. fuscicodatus (मध्यपश्चिमी)

1121. P. j. emeria (बंग्ला)

1121 क. P. j. monticola (पूर्वांचली)

1122. P. j. whistleri (अंडमान)

स्थानीय नाम : हिंदी : *कनेरा* बुलबुल, सिपहिया बुलबुल, बुलबुल, पहाड़ी कांगड़ा बुलबुल, कनधरा; **गुजराती तथा बंग्ला :** सिपाही बुलबुल; **तेलुगु :** तुर्क पिगली पिट्टा; **तमिल :** कोन्डा क्लोटि-कुरुवि; **मलयालम :** इरात्तलाची; **मणिपुरी :** खौइनिंग; **कछारी :** दाओ बुलिप-गजाओ-बी; **मिश्मी :** जांगो; **संस्कृत :** कर्पिकार, *श्रीकर्ण,* पुष्पावतंसक, गोवत्सक।

पहचान : पीठ भूरी, पंख कत्थई, सिर पर शानदार नुकीली कत्थ कलगी, कपोल, ठोड़ी, कंठ तथा वक्ष सफेद, कत्थई गरदनी; पायु तथा कान शोणित लाल इसकी विशिष्ट पहचान हैं। **नर-मादा** एक समान।

कनेर वृक्ष का फूल सफेद और लाल होता है और अति सुलभ है। 'कनधरा' का अर्थ होता है कर्णफूल या कर्ण शृंगार जिसमें यह सभी बुलबुलों में सर्वाधिक सुंदर तथा चुस्त दिखती है। इस **कनेरा बुलबुल** के कानों में मानो कनेर के सुंदर लाल फूलों का शृंगार है। संस्कृत में इसका एक नाम है श्रीकर्ण जिनके कान सुंदर हों या जो कानों को प्रिय लगे। एक और नाम है कर्णिकार और कनेरा उसका हिंदी रूप है। 'कनेरा' गरिमावान कलगी लगाए स्फूर्तवान (सिपहिया) पंछी है। संस्कृत में इसका एक नाम **गोवत्सक** है। एक प्रसिद्ध वैदिक गायक हो गए हैं 'वत्स' इनके समान गाने वाली **गोवत्सक**। वत्स को अपना ब्राह्मणत्व सिद्ध करने के लिए अग्नि परीक्षा देनी पड़ी थी। इस बुलबुल के नीचे दुम में मानो लाल अग्नि है और उसके ऊपर बैठकर वह वत्स के समान मधुर गाती है। जैसे आज के हो हल्ले से भरे शहरों के बीच रहकर मुस्कुराते रहना भी मानो अग्नि परीक्षा है और कनेरा 'सिपाही', उस परीक्षा में उत्तीर्ण होता है। इसका **प्रणय** नृत्य बहुत ही विनम्र है, उसमें नर पूंछ फैलाता है, अपने पंख खोलकर नीचे करता है, सिर झुकाता है और पंखों का आवेगपूर्ण कंपन करता है।

भारत में कनेरा बुलबुल की छह **उपजातियां** हैं। उत्तर गुजरात तथा दक्षिण-पश्चिम राजस्थान के एक छोटे से क्षेत्र को छोड़कर, गंगा के पश्चिम में, नर्मदा के उत्तरी क्षेत्र में कनेरा की कोई भी उपजाति सुलभ नहीं है। यह एक शोध का विषय

बन सकता है, 'क्या सितकर्ण बुलबुलें इसे वहां बसने नहीं देतीं ?'

इसका गान मधुर होता है और गाती भी खूब है, स्वरों की विभिन्नता है तथा अपेक्षाकृत लंबे गान हैं। लगता है सुबह गाती है 'अहा उगा रे सूरज' या 'सिंधू' या 'टिन टन्टू', सूर्यास्त के समय घोंसले में जाने से पहले अक्सर कर्कश चेतावनी देने वाला स्वर 'ले र्र र्र' थोड़ी देर तक बोलती है।

इसका **प्रजननकाल** उत्तर में मार्च-जुलाई तथा दक्षिण में दिसंबर-जून है। अक्सर यह अंडों की, एक ऋतु में दो खेप देती है, दूसरी खेप बरसात के बाद। **घोंसले** पत्तियों तथा टहनियों के कपनुमा होते हैं और ज्यादातर झाड़ियों में, फूस के छप्परों में या बेलों में (3 मीटर से नीचे) बनाये जाते हैं। नर-मादा मिलकर अपना घोंसला 3-4 दिन में बना लेते हैं, तत्पश्चात मादा एक या दो दिन में पहला अंडा देती है। वह औसतन तीन अंडे, सुबह, एक एक दिन के अंतर से देती है। इनके घोंसलों की स्थिति आक्रमणीय होने के कारण कौए, बिल्लियां, गिद्ध, वेदार (monitor lizard) आदि इनके अंडे अक्सर खा जाते हैं। नर-मादा गृहस्थी का काम मिलकर करते हैं। **आहार** : कीड़े, फल, अंजीर, बीज (लैंटाना), मकोड़े। शावकों को प्रारंभ में कीड़े ही खिलाती हैं।

गुलदुम बुलबुल (Central Indian) Redvented Bulbul

1127. Pycnonotus cafer humayuni 1126 P. c. intermedius (पं. हिमालयी)

कद : मैना -, 20 सेमी0; आवासी *1128 P. c. cafer (दक्षिणी)*

1130 P. c. wetmorei (ओडेशी)

1131 P. c. bengalensis (उत्तरी)

1132 P. c. stanfordi (पूर्वांचली)

स्थानीय नाम : हिंदी : *बुलबुल,* बुलबुली, कलसिरी, काला बुलबुल; उर्दू : थार बुलबुल, टोंकी बुलबुल, *गुलदुम;* **गुजराती, कन्नड़, बंगला :** *बुलबुल;* **कच्छ** : भिलभिल; **भीली** : पीत्रोल्यों; **चम्बा** : काला पैंजू; **तेलुगु** : *बुलबुल,* पिगली पिट्टा; **तमिल** : कोंडा लाटी, कोंडई, कुरुवि; **मलयालम** : नट्ट *बुलबुल;* **लेप्चा** : मंक्लेफ फो; **असमिया** : *बुलबुल* सोरई; **कछार** : दाओ बुलिप; **नगा** : इन्रुइ बुलिप; **संस्कृत** : पेच, फेंच, फेंचाक, फेंजातक।

पहचान : ऊपर प्रगाढ़ कत्थई, नीचे मटमैला सफेद; जूड़ेदार काला सिर, गुदार या पायु शोण, पीठ पर मछली की-सी धारियां, सितछोर काली पूंछ, सितकटि। **नर-मादा** एक समान।

जब पहली बार मैंने इस बुलबुल को देखा तो बहुत खुशी हुई क्योंकि शेख सादी तथा हाफिज जैसे प्रसिद्ध फारसी कवियों तथा अन्य उर्दू शायरों की रचनाओं में इसके व्यवहार की तथा गाने की बहुत प्रशंसा सुन चुका था। किंतु जब इसका गान सुना तो निराशा हुई और लगा कि कवि लोग संभवतया कुछ अधिक संवेदनशीलता में ऐसा लिख गए होंगे। इसमें कोई संदेह नहीं कि इस बुलबुल का कंठ बहुत मधुर है, स्वरों में चांदी-सी खनक है। किंतु इसके पास धुनें नहीं हैं। बाद में पता चला कि यह बुलबुल फारस की बुलबुल की जाति या वंश की नहीं है। मुगल, जब भारत आये तब उन्होंने, संभवतः पंछी निहारक हुमायूं ने, वतन की याद ताजा रखने के लिए फारसी बुलबुल से मिलती इस (गुलदुम) 'फेंच' या 'कृष्ण चूड़' का नाम बुलबुल रख दिया।

व्यवहार में यह जिंदादिल है, हमेशा जैसे खुशी के स्वर झरते हैं। किंतु ये लड़ाकू भी हैं, विरोधी के सामने खड़े होकर पायु के शोणित पिच्छ खड़े करते हैं, चुनौती भरे बोल चिल्लाते हैं, फिर लड़ाई शुरू करते हैं। मुगलकाल में मुर्गों के समान बुलबुलों को भी लड़ाया जाता था। नर बुलबुल का **प्रणय** नृत्य भी सुंदर होता है। नर अपनी पूंछ फैलाकर परों को नीचे दबाता है तथा अपने दोनों पंखों को सिर से ऊपर फैलाकर उनका संवेगपूर्ण कंपन करता है।

व्याप्ति : यह **मध्य भारत** गुलदुम बुलबुल सिंधु, यमुना, ताप्ती तथा उड़ीसा जो सीमाएं बनाती हैं उस क्षेत्र के पतझड़ी वनों वाले हिस्सों के बाग, बगीचों उपवनों तथा वनों को गुंजार करती है और अपनी पांच सगी बहनों के साथ मिलकर सारे भारत को।

आहार : लोरैन्थस, लैन्टाना, जिजिफस (बेर), अंजीर (बरगद, पीपल आदि), सैंटालम, साल्वाडोरा तथा अन्य वृक्षों तथा झाड़ियों के फल या बीज खाती हैं। इरिथ्रीना, कप्पारिस, शाल्मलि (सेमल), वुडफोर्डिया, लोरैन्थस आदि के फूलों का मकरंद पान करती हैं। कीड़े-मकोड़े, विशेषकर 'नाशि' कीट (इल्ली, पतंगे, दीमक आदि) तथा पत्तों को नुकसान पहुंचाने वाले 'निष्पत्रकों' को भी खूब आहार बनाती है। काले चींटों तथा उड़नशील दीमकों को शौक से खाती है। परागण तथा बीजों का विक्षेपण या प्रकीर्णन भी बहुलता से करती है। कुल मिलाकर यह हमारे लिए, सुंदरता तथा मधुर गान के साथ बहुत लाभदायक है। अधिकतर वृक्षों या ऊंची जगहों पर ही बैठती है। इसका **प्रजननकाल** फरवरी से अक्तूबर तक है किंतु वर्षा से अधिक बंधा है। नर **नीड़** निर्माण में, सेने में तथा शावकों के पालन-पोषण में मादा की मदद करता है।

सितकिनार (भूरा) सतभाई **Large Grey Babbler**

1258. Turdoides malcolmi

कद : मैना, 28 सेमी.; आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : घोगई, गोगई, पैंगा, सतबह्निा, *सतभाई,* भैना, गंगई; **मराठी :** कोकट्टी, खेक्टा; **गुजराती :** भड़भड़िया, लालैड़ो; **कन्नड़ :** गोंग्या; **तेलुगु :** वेरी चिंडा, गोवा सिडा; **तमिल :** पंदिजित्ता; **संस्कृत :** गोकिराटी, हहोलिका, पीतपादा।

पहचान : चोंच तथा पैर सलेटी, लंबी क्रमांकित पूंछ जैसे खोंस दी गई हो। भूरा या धूसर पक्षी। **ऊपर :** हल्की भूरी पीठ पर भूरे धब्बे, माथे पर सफेद तिलक-सी धारियां; पूंछ में सफेद किनार तथा भूरी आड़ी पट्टियां। **नीचे :** उदर पांडु; भूरे कंठ तथा वक्ष पर गुलाबी आभा; चमकदार पीली आंखें; **नर-मादा** एक समान।
प्रजननकाल में, सतभाई कुल के समान यह भी दलों (5 से 12) में रहता है, वैसे अप्रजननकाल में 20 से 40 के झुंडों में। दल के जोड़े अलग अलग घोंसले बनाते हैं। ये, 'सतभाई कुल' के सदस्यों के साथ, टोली बनाकर कीड़ों की खोज में निकलते हैं। इनके तमिल नाम 'पंदिजित्ता' का अर्थ है 'सूअर पक्षी' क्योंकि ये लगभग सूअर के समान केवल अपने मुंह से आहार की ख़ोज बीन करते हैं। 'गोकिराटी' का भी यही अर्थ होता है। उड़ान छोटी तथा अनाड़ी, जमीन पर फुदकने में कुशल। घुसपैठियों की चेतावनी बहुत जल्द देते हैं। चूंकि उड़ने में ये कमजोर हैं, इसलिए शीघ्र चेतावनी देना तथा सारे दल का हो हल्ला करना इनके बचाव के लिए आवश्यक है। भ्रातृप्रेम इतना कि बाज यदि दल के किसी सदस्य पर आक्रमण करे तो सब के सब जोर जोर से चिल्लाते हुए उसके पीछे पड़ जाते हैं और अक्सर उसे भगाने में सफल होते हैं। इनके हल्ला करने के गुण के कारण इनके नाम 'हहोलिका' (संस्कृत) तथा 'भड़भड़िया' (गुजराती) हैं।

सूखे, खुले विरल झाड़ियों वाले क्षेत्रों में, बबूल तथा ढाक वनों में, नगर के बाग बगीचों में भी इन्हें पाना अपेक्षाकृत सुलभ है। गंगा-यमुना कछार से लेकर कावेरी कछार तक इनकी **रिहाइश** है। उत्तर-पश्चिमी भारत तथा पूर्वी भारत में नहीं पाए जाते।

प्रजननकाल अनिश्चित है। वैसे अधिकांश प्रजनन मार्च से सितंबर तक होता है। **नीड़** निर्माण क्रिया लगभग साल भर देखी जा सकती है। इनका घोंसला घास, टहनियां, जड़ें इत्यादि का कामचलाऊ कप होता है। उसे यह अक्सर झाड़ियों में बनाते हैं, किंतु वृक्षों में भी लगभग पांच मीटर की ऊंचाई तक बनाते हैं। मादा एक खेप में 3-4 चमकदार नीले (20 : 24 मिमी.) **अंडे** देती है। 'कल/सित शिखी **चातक**' अपने अंडे इनके नीड़ में देती है। पहले तो सतभाई जोड़ा अपने शावकों का तथा

चातक शावकों का पालन करता है और जब चातक शावक सतभाइयों से भी बड़े हो जाते हैं और ज्यादा आहार मांगते हैं तब, सारा दल अपने से बड़े चातक-शावकों का भी पालन करता है। अक्सर, एक से अधिक जोड़े भी घोंसलों की तथा उसमें पल रहे शावकों की देखभाल करते हैं। इसमें यह जरूरी नहीं होता कि जिस समय अन्य के घोंसले की यह मरम्मत कर रहा हो या जिन अन्य के शावकों की देखभाल कर रहा हो उस समय उस घोंसले के मालिक या उन शावकों के माता-पिता सतभाई वहां मौजूद हों। इनका दल प्रेम सचमुच अनोखा है। और इसलिए इनका सामान्य नाम सतबहिना या **सतभाई** पूर्ण रूप से सटीक है। किंतु कभी कभी इन भाई-बहिनों में भी लड़ाई हो जाती है और वह चोंच तथा नाखूनों से लड़ी जाती है, किंतु सौहार्द फिर वापिस आ जाता है।

जंगली (भूरा) सतभाई (Peninsular) Jungle Babbler

1262. Turdoides striatus orientalis

कद : मैना 25 सेमी.; आवासी

1261. T. s. sindianus (पश्चिमोत्तरी)
1263. T. s. somervillei (मुंबइया)
1264. T. s. malabaricus (मालाबारी)
1264ए. T. s. orissae (ओडेशी)
1265. T. striatus s. (उत्तर पूर्वी)

स्थानीय नाम : हिंदी : सतभाई, घूघई, कचपचिया, पैंगा, गयंगा, जंगली खैर; **मराठी** : भूसारिण, खेकटा; **गुजराती** : वन लालड़ो **भील** : नेलो, काउगो; **तेलुगु** : पैछा सीदा, आडवि सीदा; **मलयालम** : करिचिलक्किली; **संस्कृत** : गोराटी, गोकिराटी, गोकिराटिका, क़ुत्सितांजी, कश्मलांगी, हहोलिका, पीतपाद।

पहचान : पीली चोंच तथा पैर; पूंछ लंबी जैसे उसके शरीर में खोंस दी गई हो; भूरे रंग का बिखरे 'पर' वाला सुलभ पक्षी। **ऊपर** : मटमैला भूरा; पंख गाढ़े भूरे; पूंछ कत्थई **नीचे** : वक्ष धब्बेदार पीताभ भूरा, उदर भूरा पांडुर। सामने (सिर, कंठ) हल्का भूरा तथा पीछे कपिल भूरा। **नर-मादा** एक समान।

इन्हें जमीन पर सूखे पत्ते आदि पलटते हुए कीड़ों को खोजने के लिए चलते हुए देखा जा सकता है। खेत, बगीचे, बाग (आम के विशेषकर), शीशम कुंज जिनमें ऊंची घास लगी हो, रेतीली जमीन पर होने वाले 'झाड़' के उपवन तथा झंखाड़ वाली पहाड़ियां आदि इसे रहने के लिए पंसद हैं। इस उपजाति की **रिहाइश** उत्तर पश्चिमी भारत है।

इनका पारिवारिक गुण है झुंड में रहना तथा जोर से लगातार **चहचहाना**। अपने दल के भाई की रक्षा के लिए ये श्येन या बाज से भी लोहा लेने को तैयार

हो जाते हैं। इसके भिन्न भिन्न दल (6 से 12 लगभग) अपने अपने क्षेत्रों में ही रहते हैं। **'घुसपैठिये'** को ये बड़े गौर से तथा पूरी तैयारी से देखते हैं—अपने परों को फुलाकर, विशेषकर पीठ के परों को, जिससे लगभग मेहराब-सी बन जाती है। अपने पंखों को नीचे कर, पूंछ को फैलाकर उसे नीचे दबाकर तथा दाएं बाएं होते हुए उसे डराने के लिए आवाजें करते हुए देखते हैं। विशेष **खतरा** देखने पर फौरन झाड़ियों तथा वृक्षों पर पहुंच जाते हैं।

इसका **आहार** मुख्यतया चिड्डे, गुबरैले, तिलचट्टे, इल्लियां, मकड़ियां तथा कभी-कभार मेंढक तक हैं। ये अनाज, बीज, गूलर, बट फल, लैंटाना के बीज तथा अन्य बेरियां भी खाते हैं, और फूलों का मकरंद भी पसंद करते हैं। सारा समय ये जमीन पर ही आहार की खोजबीन करते रहते हैं।

इनका **प्रजननकाल** लगभग मार्च से अक्तूबर है। अपना घोंसला ये जमीन से 1 से लेकर 9 मीटर की ऊंचाई पर ही झाड़ियों तथा वृक्षों की टहनियों के बीच बनाना पसंद करते हैं। मादा फीरोजी रंग के सुंदर लगभग 4 अंडे एक खेप में देती है। एक दल का एक जोड़ा ही एक बार में अंडे देता है और इस तरह एक दल एक ही **घोंसले** से ऋतु भर काम चलाता है। नर-मादा सारे काम मिलकर करते हैं, तथा उस दल के अन्य सदस्य भी मदद करते हैं। **चातक** अपने अंडे इनके घोंसले में भी देती है। जब कल/सित (शिखी) चातक का बड़ा शावक, इनके दल के साथ जमीन पर घूमता है तब तक कोई **खतरा** सतभाई को नजर नहीं आता, किंतु ज्योंही वह छोटी उड़ान भरता है, तब उसके निचले हिस्से को देखकर जो कि किसी बाज पक्षी-सा नजर आता है, दल के कुछ सदस्य 'बाज-आया' की चेतावनी जोर से देते हैं। तब यह चातक-शावक फौरन दुबककर नीचे बैठ जाता है, और दल उसे पुनः अपना शावक स्वीकार कर लेता है और उसे फिर आहार दिया जाने लगता है।

दूधराज माखीखोर (Peninsular Indian) Paradise flycatcher

1461. Terpsiphone paradisi p. 1460. T. p. leucogaster

कद : 20 सेमी.; 50 सेमी. पताका पूंछ सहित; प्रवासी, अवासी

1463. T.p. saturatior

1464. T.p. nicobarica.

स्थनीय नाम : हिंदी : (युवा नर) : शाह बुलबुल, हुसैनी बुलबुल; (नर) : सुल्तान बुलबुल, मछमरनी, दूधराज; **कश्मीरी :** फहमबसिर (नर); रंग बुलबुल (मादा), लत्रज़, **बंग्ला :** स्वर्गेर पाखी, शाह बुलबुली; **उर्दू :** तकलाल; **गुजराती :** तरवारियो; **कन्नड़ :** नोण हिड्डुक; **तेलुगु :** टोका पिगली पिट्टा; **तमिल-मलयालम :** वाल कोंडा लाठी, वाल

कुरुवि; **कछारी** : दाओ राजा गोफु; **संस्कृत** : सृजय, रज्जुवाल, अर्जुनक, चेलकेतु, रज्जुवाल, लटवा।

पहचान : नर (4 वर्ष से बड़ा) : चमकदार नीली-काली ग्रीवा, सिर तथा कलगी। नीली चोंच तथा चक्षुवृत्त। दूधिया पंखों में हल्की कलौंछ; शरीर की शेष पक्षति दूधिया; पताका पूंछ के परों में कुछ काली धारियां।

(1 से 3 वर्ष) युवा : पीठ तथा पूंछ पाटल, कलगी तथा पूंछ छोटी, शेष नर के समान। **1 वर्ष नर तथा मादा** : सिर नीलाभ काला, कलगी छोटी; शेष ऊपर भूरा लोहित; कंठ, कनपटी तथा कंधर भस्मी; उदर सफेद; पूंछ छोटी। दूध के समान रंग होने के कारण **'दूध'**; तथा राजा के समान मुकुट तथा शाही लंबा धवल पिछौरा होने के कारण 'राज'।

इसकी अधिक सफेद पूंछ इसके शरीर से डेढ़ गुनी लंबी होती है और जब यह उड़ता है तो लगता है कि मानो एक पतंग उड़ी जा रही हो (संस्कृत नाम 'सृजय' 'जिसे उड़ाया जा रहा हो' अर्थात एक और नाम 'रज्जुवाल' 'पूंछ' रस्सी सरीखी लंबी)। इसके सफेद रंग के कारण तथा इसे अर्जुन वृक्ष भी प्रिय होने के कारण इसका एक नाम 'अर्जुनक' भी है (हिंदी में एक नाम 'सेछागुन' 'स्वच्छ गुण' अर्थात सफेद रस्सी) इसका सिर कलसिरी बुलबुल के सिर से बहुत मिलता है इसलिए इसे 'विशेष' बुलबुल कहते हैं, यथा 'शाह बुलबुली'।

प्रजननकाल में नर अपने पंखों को विशेष रूप से फड़फड़ाता हुआ गाता है, किसी ऊपरी डाली से उड़ान भर दो-तीन मीटर की दूरी पर ऊपर-नीचे ऊपर-नीचे उड़ता है इससे इसकी लंबी सफेद पूंछ भी सुंदर लहरियादार रेखाचित्र बनाती है। नर अपनी पूंछ के साथ अक्सर खेलता है, शायद मादा को प्रभावित करने के लिए। इसकी आम उड़ान भी लहरियेदार है और उड़ान के समय, इसकी फीतों जैसी दो लंबी सफेद पूंछें अद्भुत लगती हैं। कीड़ों को पकड़ने के लिए जब यह हवा में कलाबाजियां करता है तब इसकी सफेद पूंछों से नीले आकाश में बनते चित्र बहुत सुंदर लगते हैं। कभी वे एक सुंदर कुशल नर्तकी के फहराते घाघरे सरीखे लगते हैं (संस्कृत में एक नाम लटवा—चक्कर लगाने वाला)। इसे नहाना भी पसंद है, यह पानी को उछालकर गोल घूमता है और उछले पानी में नहाता है, तत्पश्चात वृक्ष पर बैठकर पक्षति को झटकारता है और पिच्छ प्रसाधन करता है। इनका जोड़ा अपनी विलक्षण सुंदरता के कारण हमेशा से लोकप्रिय रहा है। समाज संहिता रचने वाले याज्ञवल्क्य तथा मनु ने इसे अखाद्य पक्षियों की सूची में रखा है।

पहाड़ियों में लगभग 5,000 फुट की ऊंचाई तक तथा मैदानों में रहता है, ठंड में हिमालयी जाति मैदानों को आबाद करती है। उपवनों तथा बागों में इसे अक्सर देखा जा सकता है। इसे बस्तियों के पास रहना भी पसंद है।

मेघ/केसर फुटकी (Northern) Ashy Wren-Warbler

1515. Prinia socialis stewarti 1516. P.s. inglisi (पूर्वांचली)

कद : गौरैया -; 13 सेमी.; आवासी 1517. *P. socialis s.* (दक्षिणी)

स्थानीय नाम : हिंदी : फुटकी, *काली फुटकी;* **तमिल** : तिनु, कुरुवि; **मलयालम** : कटिर कुरुवि; **संस्कृत** : पुरल्लिका, टुंटुक।

पहचान : सिर, गरदन तथा पीठ : मेघवर्णी **पिछाड़ी** : केसरी आभा; पूंछ : भूरी, अकड़ी, क्रमांकित, काले तथा पिंगल छोर; कंठ : पीताभ सफेद; उदर तथा वक्ष : केसरांकित सफेद। खड़ी लंबी पूंछ ऊपर नीचे झटकाती है। केसराक्षी। **नर-मादा** एक समान।

कूजिनी उपकुल के 'दस पूंछ-पिच्छ' (वंश की पहचान की यह एक वैज्ञानिक विधि है) वंश का यह नन्हा चंचल पंछी है जो झाड़ झंखाड़ के बीच कीड़े-मकोड़े खोजता रहता है। यही गुण इसी वंश के चिकुर (Wren) समूह के पक्षियों में विशेष पाया जाता है इसलिए 'दस-पूंछ-पिच्छ वंश' के ऐसे पक्षियों के नाम में चिकुर (wren) विशेषण लगाते है। 'wren warbler' के लिए 'फुटकी' नाम अधिक उपयुक्त तथा प्रचलित है। फुटकी शब्द में नन्हापन, चंचलता; तथा 'फुट' ध्वनि के समान हल्के स्वरों में बोलने के गुण इस शब्द की ध्वनि से आ जाते हैं।

उत्तरी फुटकी अकेले या दुकेले राजस्थान के पूर्व, नर्मदा के उत्तर तथा बंगाल के पश्चिमी क्षेत्र के वनों, उपवनों, बगीचों में मजे से फुदकती रहती है। शहरी बागों में यह इतनी **सुलभ** है कि संस्कृत में इसका एक नाम पुरल्लिका (नगर वासिका) है। यह पानी का किनारा पसंद करती है। अचानक **खतरा** आने पर यह विद्युत स्फुलिंग के समान (संभवतया अपनी चोंच से) आवाज, 'किट, किट, किट,' निकालकर झटकों के साथ एक झाड़ी से दूसरी झाड़ी पर उड़ती है। समान्यतया यह पतले, नकनकाती-सी टीं टीं टीं स्वर, झाड़ियों के बीच फुदकते हुए गुनगुनाती है।

प्रजननकाल वर्षा ऋतु से बंधा है। नर **प्रणय** नृत्य के समय, चिम्मी-चिम्मी-चिम्मी ऊंचे स्वर लगातार 5-6 बार उमंग पूर्वक, किसी ऊंची जगह से उद्घोषित करता है तथा अपने पंखों को फड़फड़ाता है, पूंछ ऊपर नीचे मटकाता है और झटकों के साथ लहरियेदार उड़ान भरता है तथा साथ साथ 'फ्रैप फ्रैप' के समान बोल निकालता है। ये तीन तरह के **नीड़** बनाते हैं। एक तो चौड़ी पत्तियों को सी कर उसमें एक नाजुक कप के समान बनाते हैं। दूसरे, लंबी घास को लंबे अंडे के समान अन्य रेशों की सहायता से बुनकर बनाते हैं। तीसरे, कभी कभी घास को गोलाकार कप सरीखा भी बुनते हैं। ये घोंसले अक्सर पानी के पास झाड़ियों तथा घासों पर जमीन से कोई 50-60 सेमी. ऊपर बनाना पसंद करते हैं। मादा एक खेप में

3 से 5 कपिल रंग के (16 गुणा 12 मिमी. आमापी) अंडे देती है। नर-मादा गृहस्थी मिलकर चलाते हैं। सेने की अवधि लगभग 12 दिन। 23 सेमी. लंबी सितोदर मेघा चातक (584. *cacomantus passerinus*) इस 13 सेमी. की फुटकी के घोंसले में अपना अंडा दे जाती है। चातक का शावक फुटकी से भी बड़ा हो जाता है और ये फुटकी उसका लालन-पालन तब भी करते रहते हैं। मातृत्व की सहजवृत्ति इतनी तीव्र होती है कि शावक का इतना बड़ा कद भी उसे अजीब नहीं लगता। इसके छोटे से अंडों को हमेशा सांप, छिपकलियों, पांगर पंख कुक्कुभ (Coucal), नेवलों आदि से खतरा बना रहता है। इतने सारे खतरों के बीच ये नन्हीं-सी केसरिया फुटकी फुदकती रहती है और गाना गाती रहती है। ये तीन बहनें मरुस्थलीय तथा हिमालयी क्षेत्रों को छोड़कर सारे भारत को आबाद करती हैं।

धुज धानी दर्जिन **Indian Tailor Bird**

1535. Orthotomus sutorius guzuratus 1536. O.s. patia (पुरबिया)

कद : गौरैया , 13 सेमी.; आवासी *1537. O.s. luteus (मिश्मी)*

स्थानीय नाम : हिंदी, मराठी : *दर्जी,* फुदकी, पिछी, पतिया; **गुजराती :** तश्को, *दर्जीड़ो;* **बंग्ला :** टुनटुनिया; **तेलुगु :** लिक्का जित्ता; **मलयालम :** पानक्कुर, उवि; **तमिल :** थैयल चित्तु, पौन चित्तु; **संस्कृत :** टुंटुक, पुटिनी, प्रोटियक।

पहचान : छोटी, चंचल, **धानी** कूजिर्नी। पांडुर आभा लिए सफेद निम्नांग। मुरचई लाल टोपी; सफेद भौंह तथा **खड़ी पूंछ**। कंठ में छोटी काली रेखा। **नर-मादा** एक समान। **प्रजननकाल** में नर की दुम के बिचले दोनों परों की लंबाई बढ़ जाती है। खड़ी पूंछ ऐसे लगती है कि जैसे यह **ध्वज** ले जा रहा हो। कुल तेरह सेमी. लंबी छरहरी, किंतु इसकी आवाज—'टूविट टूविट' (दो चार बोल प्रति सैकंड) दो सौ मीटर से भी अधिक लंबी !! 'पुटिनी' या 'प्रोटियक' अर्थात पत्तों से **पुटिका** या पुड़िया बनाने वाली। 'टुंटुक' अर्थात छोटी छरहरी टुनटुन करने वाली।

प्रजननकाल मार्च-दिसंबर है किंतु अधिकतर मानसून की हरियाली के समय, नर द्वारा लाई सामग्री से, मादा अपना घोंसला सिलती है। एक तरफ आम, अंजीर, सागौन जैसे चौड़े पत्ते वाले वृक्ष तथा दूसरी तरफ बागों में (Canna) तथा क्रोटन के पौधे तक इसे अपनी पुटिका बनाने के लिए पसंद हैं। मकड़ी के जाले, सेमल की रुई आदि को इक्ट्ठा कर यह धागा बनाती है या वनस्पति के रेशों से धागे का काम लेती है। हां कभी कभी यह गठान नहीं बांधती, तब हवा के जोर से कभी कभी पत्तों की सिलाई खुल जाती है किंतु यह उन्हें बचाने में सफलता प्राप्त कर

ही लेती है। पत्तियों को सीने के बाद अंदर यह घास, रेशे, मकड़ी के अंडों की थैलियों आदि का कपनुमा **घोंसला** बनाती है। पक्षियों की अधिकांश प्रवासी जातियां तो थार में नहीं जातीं, थार में आवासी जातियां भी कम हैं, किंतु यह सारे भारत सहित थार को भी **आबाद** करती है। सूखे क्षेत्रों में जहां चौड़े पत्ते नहीं मिलते, वहां अनेक छोटी संकरी पत्तियों को लेकर ढीला कवच सी देती है। नर उसे सीने तथा बनाने की सामग्री लाकर देता है। मुख्यतया यह कीड़े व इल्लियां **खाती** है, किंतु विडंबना कि कभी कोई इल्ली इसके घोंसले की दीवार में बड़ा छेद कर देती है या पूरा घोंसला ही खा जाती है।

मेघ/केसर फुटकी तथा धुज धानी दर्जन एक ही उपकुल सिल्वाइनी (चटकिका) के पक्षी हैं। कद, आवास, प्रजनन आदि में बहुत समानता है। दोनों के अंडों को एक से खतरे हैं। सितोदर मेघा चातक (Plaintive Cuckoo) इसका भी शाव–परजीवी है। किंतु मेघ/केसर फुटकी की आवाज लगभग 100-150 मीटर जाती है, जबकि नर धानी दर्जिन की कोई 300 मीटर तथा फुटकी के 4-6 बार के स्थान पर यह 50-60 बार तक दुहराता है। थोड़ा सरलीकरण के साथ कहें तो कह सकते हैं कि बोल की तेजी तथा आवर्तन अन्य कारकों के साथ, आवश्यक 'प्रादेशिक क्षेत्र' के विस्तार पर निर्भर करती है। क्योंकि अपनी आवाज से यह अपने क्षेत्र के प्रतिद्वंद्वियों को चुनौती या चेतावनी देता है, उपस्थित मादाओं को अपना घर बसाने के लिए तैयार होने की सूचना देता है। यह विस्तार मुख्यतः आहार की उपलब्धि पर भी निर्भर करता है। आहार की उपलब्धि दो प्रकार हो सकती है, एक तो नर-मादा के लिए, दूसरे शावकों के लिए; जिसमें शावकों की अतिजीविता भी एक घटक होता है। जहां मेघ/केसर फुटकी का आहार कुछ सामान्य से जीव यथा कीड़े तथा उनके डिंभ हैं, वहीं दर्जिन के आहार में कीड़ों के विशेष वंश tenebrionid, curculionid भृंग, hemipterous चींटियां, Jassid मक्खियां आदि हैं। क्या धानी दर्जिन के भोज्य कीड़ों की उपलब्धि विरल है जिसके फलस्वरूप उसे अधिक विस्तृत क्षेत्र की आवश्यकता होती है, अन्यथा, क्या कारण है ?

धूमिल सितकंठी (Siberian) Lesser Whitethroat

1567. Sylvia curruca blythi (बैकली) 1569. S. c. minula (गोबीवाल)

कद : गौरैया-, 12 सेमी.; प्रवासी *1570. S.c. althea (कश्यपी)*

स्थानीय नाम : हिंदी : फुटकी, फुदकी; **कश्मीरी :** चेट हयोत; **तेलुगु :** चिन्ना नल्ल कंप जित्ता; **सिंधी :** चिया; **संस्कृत :** भस्म चूड़ चटकिका।

पहचान : सिर धूमिल; कंठ विशिष्ट सफेद; पंख और पीठ : धूमिल भूरे; वक्षोदर : धूसर सफेद; पूंछ : सितकिनार श्याम। **नर-मादा** एक-समान।

मध्य यूरेशिया में **प्रजनन** करने वाले ये पंछी शीत ऋतु में भारत (पूर्वोत्तर भारत को छोड़कर) आते हैं और ईरान, इराक तथा पूर्वी मध्य अफ्रीका में भी जाते हैं। इन्हें चट्टानी झाड़ियां, विशेषकर झरनों के किनारे, पसंद हैं। इनमें सरकती फुदकती ये इल्लियां तथा कीड़ों को खोजती हैं। इन्हें बबूल के पीले फूल भी प्रिय हैं जिनका मकरंदपान करती हैं। बबूल भी इनका धन्यवाद करते हुए इनके माथे पर पीला टीका लगा देता है। इन्हें करंड तथा कांडी की झाड़ियां भी विशेष पसंद हैं। सभी सितकंठियां, अक्सर उड़ते कीड़ों को लपकने की असफल मुद्रा में देखी जा सकती हैं। इनके आम बोल कर्कश 'टेंक टेंक' हैं, जैसे दो पत्थर आपस में टकराने पर करते हैं। इनका 'विदा' गान हल्के स्वर में आरोह-अवरोह में शुरू होता है तथा अंत अवरोही 'चिरचिट' में होता है। यह गान अक्सर भारत से 'बिदाई' के समय बसंत ऋतु में सुनने को मिलता है तथा प्रवास पर भी। बिदा के पूर्व अपनी लंबी यात्रा के लिए ये पुराने परों को गिराकर नए लगा लेते हैं।

मध्य यूरेशिया में इनका **प्रजननकाल** अप्रैल-अगस्त होता है। इनका **घोंसला** सूखी घास या जड़ों का पतला कप होता है जिसे ऊन आदि से बांधती हैं तथा उसके अंदर महीन घास या बालों की चादर बिछाती हैं। यह घोंसला झाड़ी में छिपाकर जमीन से लगभग एक मीटर की ऊंचाई पर बनाया जाता है। एक खेप में ये लगभग चार अंडे (18 : 13 मिमी.) देती हैं। इनके अंडों का रंग हल्का भस्मी, सफेद या मक्खनी होता है जिसपर भूरे चकत्ते तथा हल्के जांबुकी बिंदु होते हैं।

धूमिल सितकंठी (कूजनी) की तीन उपजातियां शीतकालीन प्रवास के लिए भारत आती हैं : (1) blythi बैकल झील के क्षेत्र से प्रवास के लिए आती हैं; (2) minula गोबी मरुस्थल के क्षेत्र से तथा (3) althea दक्षिणी कैस्पियन और कश्मीर-लद्दाख के बीच के क्षेत्र से। इनमें से blythi तथा althea तो लगभग सारे भारत में प्रवास करती हैं। तथा minula पाकिस्तान, हरियाणा तथा कच्छ में प्रवास करती है। समस्त प्राणी जगत (kingdom) के कशेरुकी संघ (phylum) में पक्षीवर्ग (class) का एक प्रमुख गण (order) है 'यष्टिसादि' (passeriformes)। शलभाश (musicapidae) कुल यष्टिसादि गण का विशाल कुल है जिसमें कूजनिका (Sylviinae) नामक 200 से अधिक जातियों (species) वाला एक विशाल उपकुल है जो कि शलभों को आहार बनाने के अतिरिक्त वातावरण को मधुर संगीतमय स्वरों से गुंजित रखता है।

इसकी चचेरी बहन कलमुंड सितकंठी (Orphean Warbler; 1565. *S. hortensis*) मादा से इसके रंगरूप मिलते हैं, किंतु वह इससे बड़ी है (15 सेमी.)।

सितोदर काला दहियल (Indian) Magpie-Robin

1661. Copsychus saularis s. *1662. C.s. ceylonensis (दक्षिणी)*
कद : बुलबुल, 20 सेमी.; आवासी *1663. C.s. erimelas (असमी)*
1664. C.s. andamaneusis (अंडमानी)

स्थानीय नाम : हिंदी : *दहियल,* दहियार, ग्वालिन, महरी, **(मध्यप्रदेश)** काली सूई चिड़िया; **बंग्ला :** *डॅइयल,* डॅइयर; **गुजराती :** *दैयड़;* **मराठी :** *दयाल,* दोमिंगा; **भील :** काब्रो; **लेप्चा :** जन्निद-फो; **तेलुगु :** पैड्डा नालंचि, सरेला गाडु; **तमिल :** गुंडू काविच्चन, वन्नाटि कुरुवि, पटकारि कुरुवि; **मलयालम :** मन्नाटिपीचि; **मुंडा :** हटयुरे; **ओराव :** *देयलो*; **असमिया :** दारी कटर; **मणिपुरी :** उचिनाओं; **कछारी :** दाओ गोफु गचिम; **संस्कृत :** कालकंठ, कलविक्ङ, अश्वाख्य, श्रीवद पक्षी, दाश्विक, दध्यक्ङ।

पहचान : नर : सिर, ग्रीवा, वक्ष तथा पीठ काले; बाजू में सफेद रेखा के साथ पंख चमकदार काले; पूंछ बीच में काली पट्टी के साथ सफेद और क्रमांकित तथा अक्सर तनी हुई; उदर सफेद। **मादा :** नर के समान, केवल ऊपर के काले रंग के बदले सलेटी; तथा कंठ और वक्ष भस्मी।

जैसे दही बेचने वाली दही की काली मटकी सिर पर रखकर जा रही हो और मटकी पर दही गिर गया हो इसलिए नाम दहियर या 'दहियल' या 'दध्यक्ङ, 'ग्वालिन' या 'महरी'। सी..., या स्वी...ई,..की सीटी वाले करुण गान से सूर्योदय का स्वागत करती है इसलिए नाम 'श्रीवद' तथा 'काली सूई'। गान में विविधता भी खूब है। गाते समय पूंछ नीचे रहती है किंतु बीच बीच में मानो ताल देने के लिए ऊपर उठती है। यह काला-सफेद पक्षी सर्वाधिक चुस्त और जानदार पक्षियों में से एक है और सुंदर भी। इसे **आबादी** पसंद है—बाग, बगीचे, कुंज, शुष्क पतझड़ वन तथा खुले हल्के वन में यह अकेला या दुकेला मिलता है। कावेरी के दक्षिण पूर्वांचल तथा थार को छोड़कर शेष भारत में इसका **आवास** है। गर्मियों में धर्मशाला, गंतोक जैसे हिल-स्टेशनों में घूमने चला जाता है।

प्रजननकाल में इनके नर शौर्य प्रदर्शन करते नजर आते हैं। सीना फुलाकर, चोंच ऊपर तान प्रतिद्वंद्वियों के सामने 'हिटलरी' परेड करते हैं। अपने क्षेत्र की रक्षार्थ लड़ने को तैयार रहते हैं। यह घुसपैठ नर और अनामंत्रित मादा पर क्रोध दिखाने के लिए कर्ण रूप गोता लगाकर, पंखों को V के आकार में खुला रखकर, पैर नीचे किए हुए अपने बदन को फुलाकर आक्रमण का नाटक करते हुए पास में उतरता है और उसका पीछा कर उसे भगाता है। विजय पश्चात लड़ाकू विमान के समान 'विक्ट्री रोल' (बेलन की तरह चक्कर) लगाता है। लहरियादार उड़ान की लहर की ढलान पर ये पूंछ खोलते हैं; जिससे सफेद परों की झलक मिलती है।

आहार : इनका मुख्य आहार चींटे, पतंगे, चिड्डे, इल्लियां, घोंघे, केंचुए, कनखजूरे, छिपकलियां तथा फूलों (सेमर, मंदार) का मकरंद आदि। जमीन पर कीड़े खोजते समय दरारों आदि में छिपे कीड़ों में भगदड़ मचाने के लिए झटके से पंख और पूंछ फैलाता है। **प्रजननकाल** फरवरी-अगस्त। दोनों मिलकर कहीं भी छेद मिलने पर घोंसला बनाते हैं तथा मिलकर सेने का काम तथा शावक का पालन पोषण करते हैं। मादा एक ऋतु में अंडों की दो खेप देती है। एक खेप में धानी रंग के 22×17 मिमी. आमाप के 3 से 6 अंडे तक देती है। अधिकांश पक्षियों की पूर्णायु जंगल में लगभग 10-12 वर्ष होती है, किंतु शावकों की मृत्यु की अधिकता के कारण, इनकी औसत आयु मोटे तौर पर 1-2 वर्ष निकलती है। हां पालतू अवस्था में पक्षी लगभग 15-20 वर्ष भी जीवित रहते हैं।

कथपंख थिरथिरा (Kashmir) Black Redstart

1671. Phoenicurus ochruros phoenicuroides

कद : गौरैया +, 15 सेमी.; प्रवासी, आवासी *1672. P.o. rufiventris (पुरबी)*

स्थानीय नाम : **हिंदी** : *थिरथिरा,* थिरथिरकम्पा; **लद्दाख** : सिनटिक; **कश्मीरी** : वोजुल लाट; **गुजराती** : *थरतरी;* **बंग्ला** : फिरिरा; **तेलुगु** : नुने बुंदी गाडु; **मुंडा** : कंकल; **संस्कृत** : कपेक्षुक, खंजरी, चलपिच्छक, चलकम्पने।

पहचान : नर : ग्रीष्म : **ऊपर**—माथा, आंखों के पास, गर्दन के बाजू तथा ऊपरी पीठ काली; शीर्ष तथा निचली पीठ सलेटी। पंख कत्थई। कटि तथा पूंछ कपिल। पूंछ में बीच के पंख कत्थई। **नीचे** : कंठ तथा वक्ष काला, शेष कपिल। **शीतऋतु** में काले रंग के किनारे सलेटी किनार। **मादा** : ऊपर-पीताभा लिए भूरी। आंखों के पास हल्का भूरा। पूंछ कपिल, बीच के पंख कत्थई; नीचे पिंजर भूरी।

प्रजनन के अतिरिक्त एकचर। शीतकालीन आगमन : सितंबर के पहले पक्ष में; अधिकतर प्रतिवर्ष वही पक्षी उसी स्थान पर, यहां तक कि, उसी बैठक में बैठता है। नर **मादाओं** से पहले आ जाते हैं, नरों की संख्या **मादाओं** से अधिक होती है। जब ये बैठते हैं तब बीच बीच में पूंछ में कंपन होता है, अपना सिर भी थोड़ी थोड़ी देर में नीचे झुकाते हैं। इसीलिए इसके नाम थिरथिरा, कंपा, कपेक्षुक, चलपिच्छक, खंजरी आदि हैं। कीड़ों पर इनकी आंख बड़ी सूक्ष्मता से लगी रहती है और दिखते ही तेजी से उड़कर या जमीन पर बैठकर उसका आहार बनाते हैं।

प्रजनन के लिए मार्च के अंत में उत्तर-पश्चिमी भारत से प्रस्थान कर पश्चिमी हिमालय के क्षेत्रों यथा बलूचिस्तान, गिलगिट, लद्दाख, कश्मीर, रुप्शू, लाहौल-स्पिति

आदि और उत्तरी पाकिस्तान जाते हैं। ये 2,000 मीटर से 4,000 मीटर की ऊंचाई पसंद करते हैं। ये अपने **घोंसले** चट्टानों के बीच या नीचे दरारों में बनाते हैं; घास, काई, धूपी (Juniper) की छाल तथा जड़ों से कप के आकार का बनाते हैं तथा उसमें नरम घास, बाल, पंख आदि बिछाते हैं। मादा एक खेप में 3-6 सफेद अंडे देती है। अंडे सेने के काम में नर भी मदद करता है। कोकिलें भी अपने अंडे इनके नीड़ में दे जाती हैं। इसके **गान** में 6-7 स्वरों की संरचना होती है।

इन्हीं का एक सगा भाई कलमुंड थिरथिरा (rufiventris) शेष भारत को आबाद करता है। यद्यपि सीमा पर दोनों जातियां एक साथ रहती हैं। इसका सिर तथा पीठ, सलेटी के बजाय पूरी काली होती है। सभी थिरथिरों (Phoenicurus वंश) में (कुछ अपवाद सहित) **कपिल तथा काला** (सलेटी भी) रंग अवश्य होता है। अधिकांशतया निचला वक्ष, उदर तथा कटि कपिल होती है, तथा कंठ और ऊपरी वक्ष काला होता है, शिखर और पीठ काली या सलेटी होती है। यद्यपि सीसई कपिलदुम अश्वक (1679 Plumbeous Redstart) तथा सितशिखर काला-कपिल अश्वक (1720. Whitecapped Redstart or River Chart) के मुख्य रंग रूप थिरथिरों से मिलते हैं किंतु वे Phoenicurus वंश के नहीं हैं इसलिए उन्हें थिरथिरा न कहकर अश्वक कहते हैं।

इस वंश *Phoenicurus* की चार जातियों में अलग पहचान करना कठिन हो जाता है। इनमें से एक *P. frontalis* 'नीलसिर थिरथिरा' का सिर नीला होता है, दूसरी *P. hodgesoni* 'सलेटीपीठ सितकेहुनी थिरथिरा' का कपिल के अतिरिक्त रंग मुख्यतया सलेटी होता है, कंठ काला तथा पंख एक छोटा चित्ता होता है। तीसरी *P. auroreus* कलपीठ सितकेहुनी थिरथिरा का मुंड तथा गरदन भस्मी, कंठ तथा पंख तथा पीठ काली होती है, इसके काले पंख पर भी एक बड़ा चित्ता होता है।

सुकंधी कल (सित) अश्वक — (Burmese) Pied Bush Chat

1701. Saxicola caprata burmanica — *1700. S.c. bicolor (हिमालयी)*

कद : गौरैया -, 13 सेमी.; आवासी; *1702. S.c. nilgiriensis (दक्षिणी)*

स्थानीय नाम : हिंदी : *काला* पिद्दा; **तेलुगु :** कुम्पा नालंचि; **मलयालम :** चुद्दीनतल-किलि; **तमिल :** *कल्लू* कुरुवि; **सिंधी :** पिद्दा; **कश्मीरी :** होर तिरिव; **संस्कृत :** शबल अश्वक, शबल क्षुप अश्वक।

पहचान : चमकदार काला; पंखों पर सफेद रेखा, पूंछ-पिच्छ (कटि) तथा उदर सफेद। पूंछ काली; शीत ऋतु में काले पंखों में भूरी किनार। उड़ान में पंखों की सितरेखा

तथा सितकटि स्पष्ट; **मादा :** सिर और पीठ भूरी; पंख पांडुर किनार के साथ भूरे; पूंछ धूमिल भूरी; **नीचे**—वक्षोदर मुरचई-पिंजर; पायु पांडुर। यह अश्वक सामने काला तथा पीछे सफेद (पूंछ छोड़कर) होता है इसलिए पूरा नाम सुकंधी कल-सित अश्वक होना चाहिए किंतु 'सुकंधी कल अश्वक' भी यथेष्ट है।

चपलता, जमीन पर तेजी से दौड़ने की क्षमता तथा पूंछ ऊपर नीचे करने की आदत के कारण इस समूह को अश्वक (Chat) कहते हैं। इसका पूरा नाम 'बर्मी सुकंधी कल-सित अश्वक' है क्योंकि बर्मा में इन अश्वकों की पांच उपजातियों में से मात्र यही पाई जाती है। जबकि भारत में तीन उपजातियां हैं। इन्हें खुले खेत, झाड़ी क्षेत्र, विशेषकर रामबांस की झाड़ी, पसंद हैं। दक्षिणी असम, दक्षिणी बांग्लादेश तथा पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, मध्यप्रदेश, राजस्थान, दक्षिणी सौराष्ट्र, महाराष्ट्र तथा तमिलनाडु में यह **प्रजनन** करता है और **निवास** भी। ठंड में *(S.c. bicolor)* उत्तर भारती भाई आकर इसकी संख्या बढ़ाते हैं।

आमतौर पर किसी झाड़ी, टेलीग्राफ तार आदि जैसी ऊंची जगह पर अकेला बैठा दिखता है किंतु उसकी मादा भी कहीं आस पास ही बैठी दिख सकती है। यह अपने क्षेत्र की रक्षा जमकर करता है। जमीन पर दिख रहे **कीड़े-मकोड़े** (चींटे, भृंग, डिंभ, चिड्डे, मकड़ियां) या हवा में उड़ रहे पतंगों को पकड़ता है।

प्रणय नृत्य : पूंछ के 'पर' फैलाकर, पंखों को धीरे धीरे चलाता हुआ यह ऊपर की ओर उड़ता है, पंखों को ऊपर रोककर या फैलाकर वक्रपथ से दूसरी बैठक पर मजे से उतरता है। साथ ही अपने सितकंधों तथा कटि के 'परों' को फुलाकर 'चिकचिक' के स्वरों के साथ कुछ सीटी के स्वरों से छोटा मधुर प्रणय गान गाता है। इसके साथ कभी कभी यह जैसे आवेश में एक मीटर ऊपर छलांग लगाकर अपनी बैठक पर आ जाता है। **खतरे** का सामना करने के लिए चेतावनी देने के लिए पंखों को नीचे दबाकर, सफेद कटि भी फुलाकर तेजी से आवाज करता हुआ अपनी गर्दन कुछ धमकी के अंदाज से आगे करता है।

प्रजननकाल : मार्च-अगस्त, मादा दो बार अंडे देती है। **घोंसला** कप के आकार का जमीन पर, दीवारों के छेद में, कुएं की दीवारों पर, नदी किनारों के गड्ढों में; घास तथा जड़ों से बनाते हैं और नरम घास तथा बालों से आरामदेह। एक खेप में (17×14 मिमी.) 3-5 हल्के नीले अंडे। 33 सेमी, लंबी 'सितांकितपूंछ श्यावकोकिल' (Cuculus canorus) इसकी 'शाव परजीवी' है। 'सितांकितपूंछ श्यावकोकिल' के अंडे सफेद भूरे से लेकर हल्के नीले रंग के होते हैं। यह दाय मां के आवास स्थानों में एक या दो सही रंग के अंडे देती है। कोकिल के अंडों के विभिन्न रंगों का अर्थ है कि यह विभिन्न जातियों के पक्षियों को अपना परजीवी शिकार बनाती है। इसके अंडे धाय मां के अंडों से 2-3 दिन पहले ही फूट जाते हैं। तथा पांच या छह दिनों में ही उनकी पीठ पर एक संवेदनशील हिस्सा विकसित

होता है जिसपर अंडों या शावकों का दबाव पड़ने पर यह पांच छह दिन का कोकिल शिशु शावक इन अंडों या शावकों को घोंसले के बाहर फेंक देता है।

(कथ/नील) सुकंधी श्यामा **Brownbacked Indian Robin**

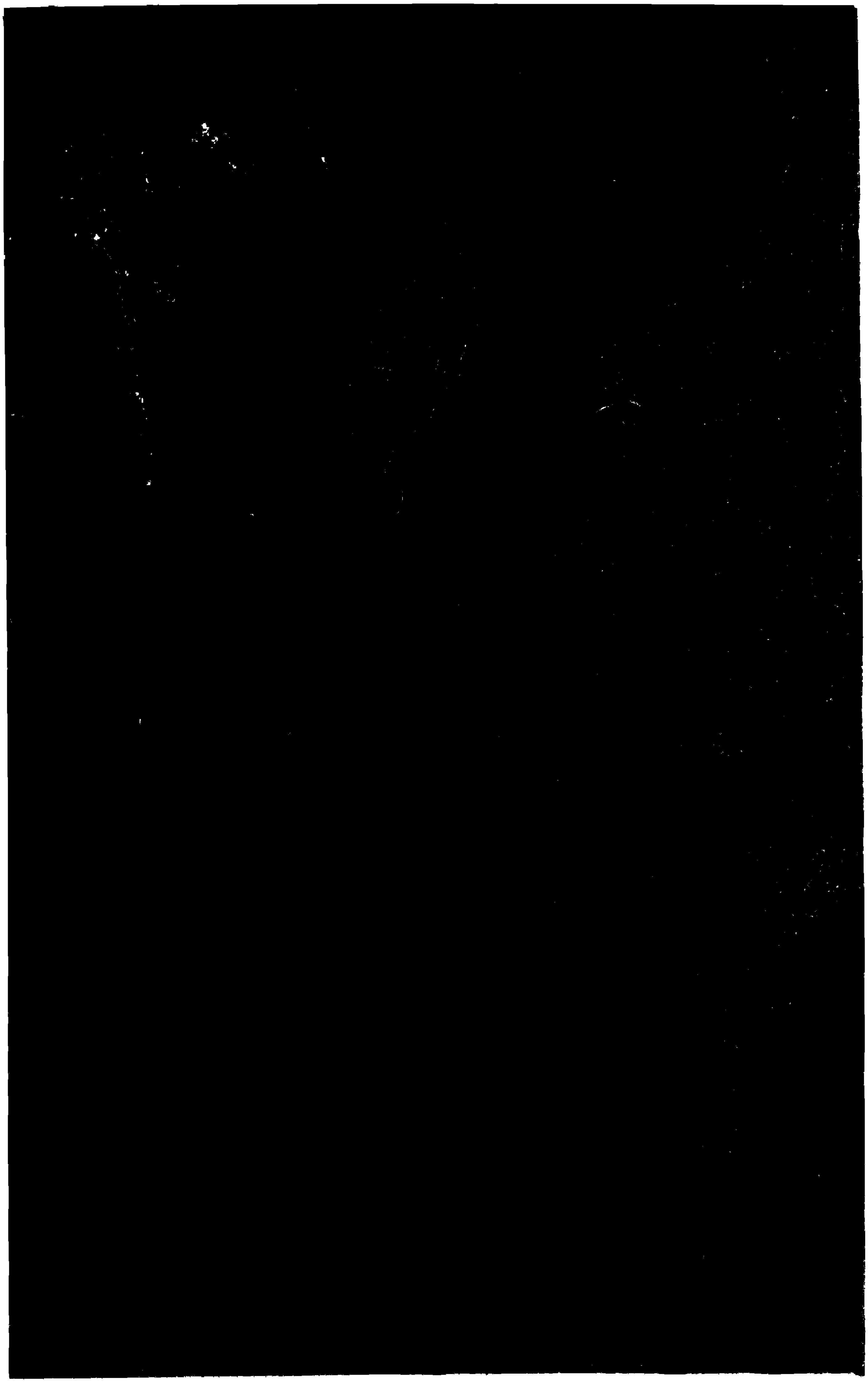
1717. Saxicolides fulicata cambaiensis (उत्तरी) 1718. S.f. erythrura (बिहारी)
कद : गौरैया, 16 सेमी.; आवासी *1719. S.f. intermedia (मध्यक)*
1720. S.f. fulicata (दक्षिणी)

स्थानीय नाम : हिंदी : कालचिड़ी, *श्यामा,* पवई, दामा; **भील :** दचको; **मराठी :** काल दुम्नट, चिड़क **गुजराती :** देवचकली, देवली, काली देवा; **बंग्ला :** दामा, कालचिड़ी; **तेलुगु :** नालंचि; **तमिल :** वन्नति कुरुवि, कारी कुरुवि; **मलयालम :** कालमन्नति; **संस्कृत :** *श्यामा* कपोतकी, पोदकी, कृष्ण पक्षी, कृष्ण शकुनि, कृष्णिका सितपक्षिणी (नर), कुमारी, पांडविदा।

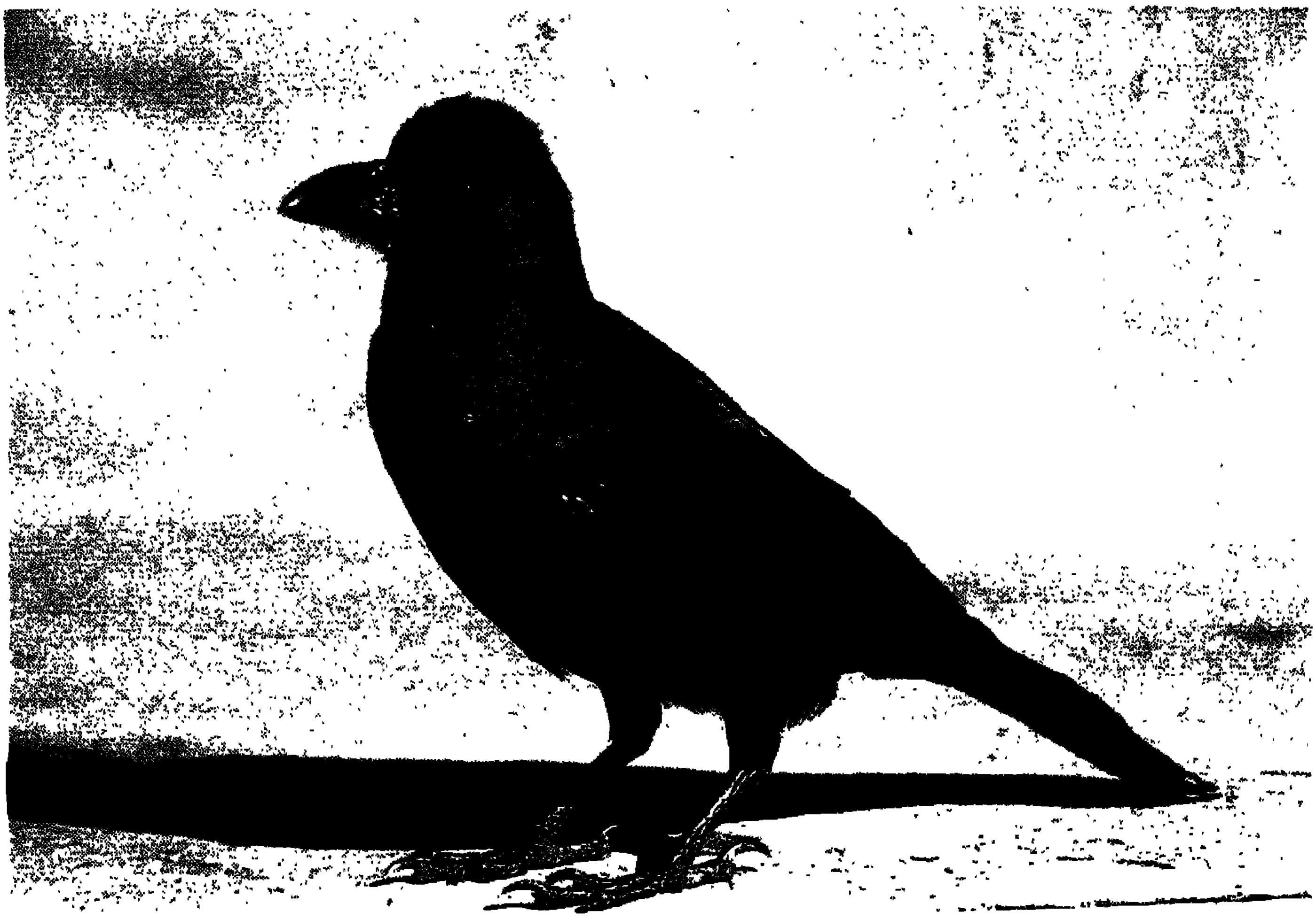
पहचान : नर : ऊपर : शीर्ष, पीठ तथा पंख प्रगाढ़ भूरे; कंधे पर सफेद पट्टी; पूंछ काली; **नीचे :** चमकदार प्रगाढ़ नीलाभ काला, पुच्छमूल पांगर। **मादा : ऊपर** नर के समान, केवल सितकंधे नहीं, तथा कर्णपिच्छों पर हल्का भूरापन। **नीचे** भस्मी भूरी, पुच्छमूल पांगर। नीलाभ काले रंग ने इसे श्यामा नाम दिया है।

आबादी के पास यह लगभग पालतू-सा व्यवहार करती है। इसे अच्छे सगुन का पंछी मानते हैं इसीलिए उसके नाम के साथ देवी के नाम जुड़े हैं। ये अकेले या जोड़े में बाड़ों पर, टीलों पर, जमीन पर अपने **आहार** की खोज में फुदकते या दौड़ते रहते हैं। इसके शावक अपनी रक्षा के लिए, बहुत ही विश्वासप्रद मृतक के समान बन जाते हैं—आंखें बंद, शरीर बिलकुल ढीला तथा गर्दन थोड़ी खिंची हुई।

नर सुकंधी श्यामा को अपने सफेद कंधों का बड़ा घमंड होता है। **प्रणय** नृत्य के समय मादा के सामने चक्कर लगाते समय अपने पंखों को खोलकर थोड़ा नीचे दबाकर कि वे जमीन छू लें, तेजी से कुछ कदम रखता है और अपने सफेद कंधे बड़े घमंड से प्रदर्शित करता है। अपनी पूंछ थोड़ी-सी फैलाकर उसे नीचे दबाता है कि वह लगभग जमीन छू लें तथा उसके पुच्छमूल का पांगर रंग बिल्कुल नहीं दिखे। अपनी छाती फुलाता है तथा गर्दन खींचकर चोंच आकाश की तरफ करता है। इस तरह, आधे गोले में, कुछ चक्कर लगाकर वह मादा के पास आता है और पूंछ ऊपर उठाकर पांगर रंग का प्रदर्शन बड़ी शान से करता है। मैथुन के बाद मानो अपनी खुशी बतलाने के लिए फिर **नृत्य** करता है। इसके **गान** में 4-8 स्वरों का मींड़ के



41 कपिल पुच्छलकाक (1032)



42 क — कलौंछी काक या घरेलू कौआ (1049)



42 ख — काला जंगली काक (1057)



43 क – गुलदुम बुलबुल (1127)



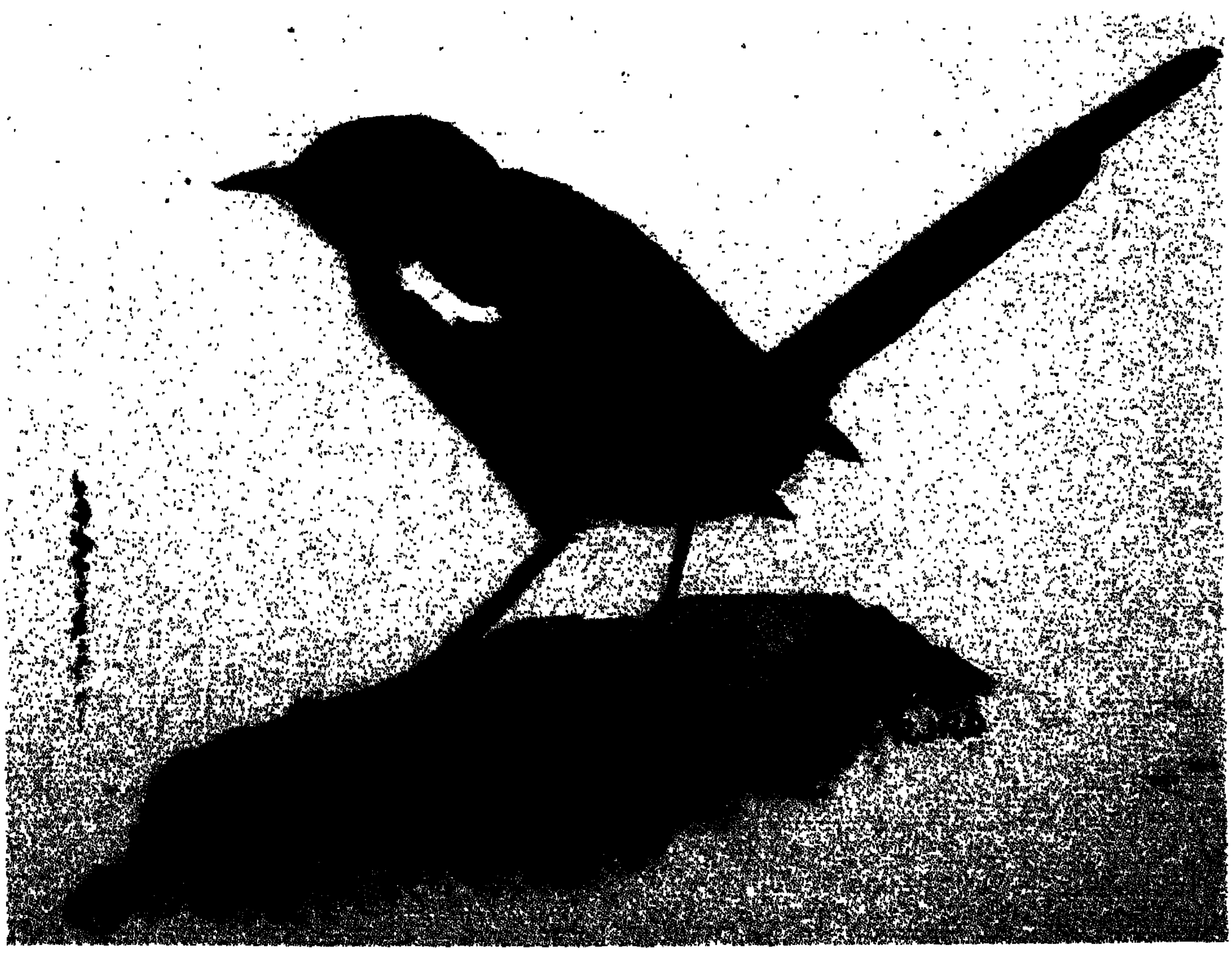
43 ख – जंगली सतभाई (पश्चिमोत्तरी) (1261)



44 मेघ/केसर फुटकी (1515)



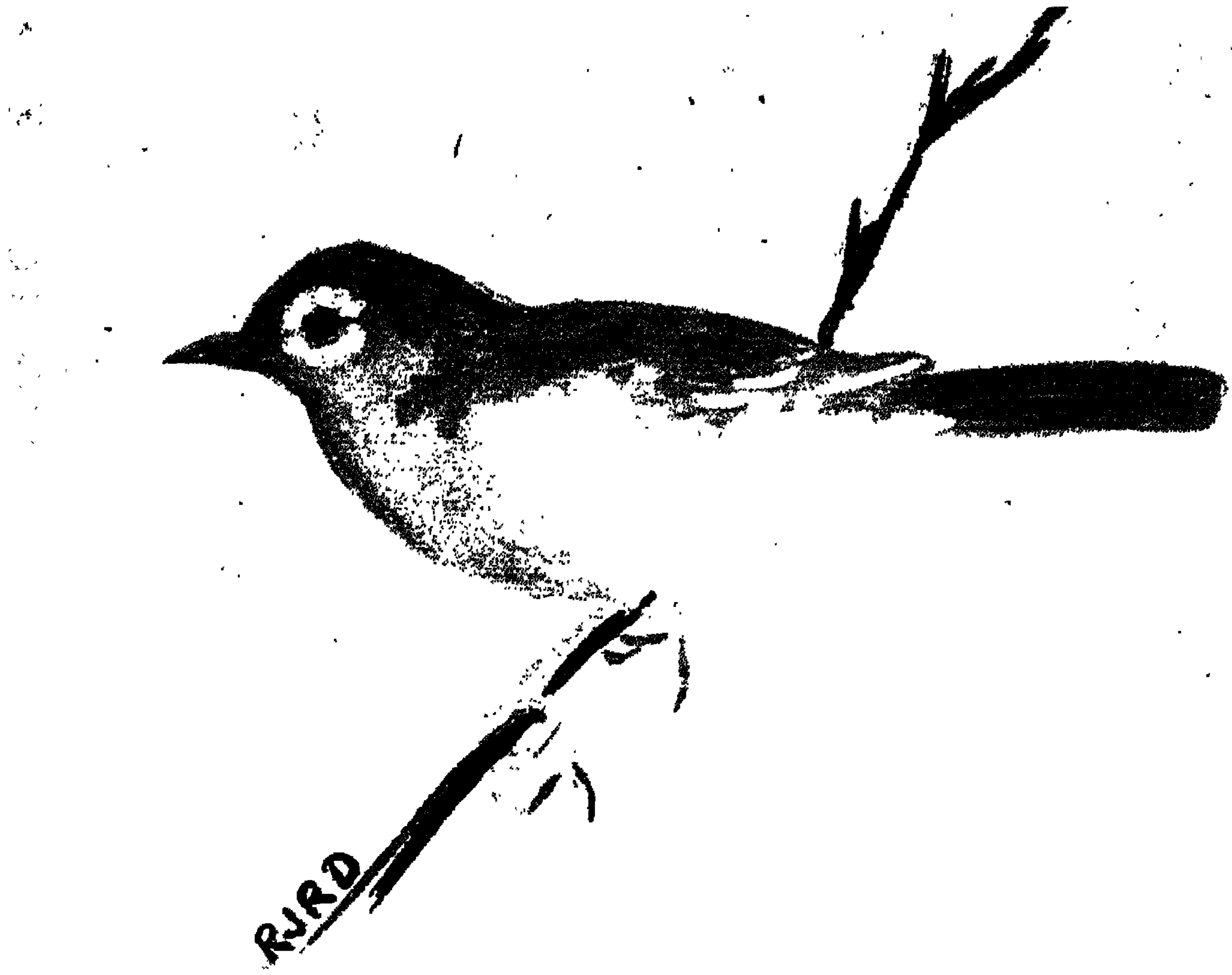
45 क – सितोदर काला दहियल (1661)



45 ख – सुकंधी श्यामा (1717)



46 जामुनी शकरखोरा (1917)



47 क – कंचन/सित सिताक्षी (1933)



47 ख – गौरैया (1938)



48 क – कथकंठ सोनल बया (1957)



48 ख – लाल मुनियां (1964)

साथ आरोह अवरोह होता है जिससे प्रसन्नता झलकती है। क्रोध या खतरे से उत्तेजित अवस्था में 'व्ही-च व्ही-च' दुहराता है।

घुसपैठिये या प्रतिद्वंद्वी नर के सामने यह आक्रामक प्रदर्शन करता है। सीना फुलाकर, गर्दन तानकर चोंच सीधी ऊपर कर, पेट के परों को फुलाता है, पूंछ के परों को भी फुलाता है, पूंछ खड़ी करता है कि वह सिर को छू ले, पांगर परों को भी फुलाता है, पूंछ को आक्रामक झटके देता है, साथ ही अपने पंखों को थोड़ा नीचे करता है और अपने कंधे की सफेद पट्टी बड़े घमंड से प्रदर्शित करता है।

प्रजननकाल मार्च से अगस्त। भारत में ताप्ती और सोन नदियों के क्रमशः उत्तर और पश्चिम में इसका आवास है। कीड़े और इल्लियां इसके मुख्य **आहार** हैं, दीमक इसे विशेष प्रिय हैं। **नर-मादा** मिलकर **नीड़** निर्माण, नीड़ सफाई तथा नई चादर बिछाना तथा शावक का पोषण करते हैं। सेने का काम मादा करती है। शिशु शावक को खिलाने का काम मादा करती है, नर आहार लाकर मादा को देता है।

कथ/सित पिंजर चर्चरी (North western) Paddyfield Pipit

1858. Anthus novaeseelandiae waitei *1857. A.n. richardi (पुरबिया)*

कद : गौरैया +, 15 सेमी.; आवासी *1859. A.n. rufulus (दक्षिणी-पूर्वी)*

1860. A.n. malayeusis (कैरली)

स्थानीय नाम : हिंदी : छरछरी, *चर्चरी,* चिल्लू, रुगेल; **गुजराती :** धान चिड़ी; **छोटा नागपुर :** सुरयिम, सर्वी, *चर्चिर;* **तेलुगु :** गुरपा मोडि-पिट्टा; **तमिल :** पुल्ल पुरके, नेट्टईकालि; **मलयालम :** चटुप्पन, बारम्बन; **संस्कृत :** *चर्चरी,* तुलिका, डुलिका।

पहचान : ऊपर : गाढ़ी भूरी जिस पर पिंजर आभा, पूंछ कत्थई तथा किनारे सफेद; **नीचे :** पांडु; वक्ष पर कत्थई रेखाएं। अपनी सगी बहन *(Richardi)* (17 सेमी.) (प्रवासी) से छोटी तथा कम भूरी और कम पीली, तथा दूसरी सगी बहन *(rufulus)* से कम भूरी और अधिक पीली। **नर-मादा** एक समान। भारत में चर्चरी वंश *(Anthus)* की 22 जातियां तथा उपजातियां हैं जिनमें से कुछ में भेद करना बहुत कठिन काम है। और उनमें से मात्र यही आवासी है, अन्य सभी प्रवासी।

चर्चरी खंजन के ही कुल का पक्षी है किंतु अलग चर्चरी *(Anthus)* वंश का है। इसका शरीर भी चुस्त और फुर्तीला होता है तथा यह भी खंजन समान पूंछ ऊपर नीचे टिलटिलाता या डुलाता है। (एक नाम तुलिका या डुलिका)। इसकी उड़ान

खंजन के समान लहरियेदार होती है। दूसरी तरफ इसका रंग रूप भरत से मिलता जुलता है; तथा **घोंसला** भी इसी के समान धूप से पके खुरके गड्ढे में बनाती है। इसे घास के मैदान, खूंट खेत, दलदली जमीन, पड़ती जमीन पसंद हैं। यह नर्मदा के उत्तर में और प्रयाग के पश्चिम में मिलती है। गर्मियों में हिमालय की तरफ जाती है। चर्चरी का एक अर्थ होता है 'हर्ष क्रीड़ा' जो इसके लिए सटीक है।

इसका मुख्य **आहार** कीड़े-मकोड़े तथा इल्लियां हैं। कीड़ों में झींगुर, चींटे, दीमक आदि हैं। घास आदि के बीज, नरम घास तथा अन्य वनस्पतियां भी इनका आहार हैं। अपना भोजन ये जमीन पर मुस्तैदी से दौड़-दौड़कर करते हैं, खंजन के ही समान। उड़ते समय इसकी **बोली** हल्की 'पिपिट पिपिट' या त्सीप त्सीप जैसी होती है। **प्रणय नृत्य** के लिए नर लहरियेदार उड़ान से ऊपर की ओर उड़ता है, ऊपर जाकर थोड़ा नीचे आता है और काफी ऊंचाई पर जाकर वक्राकार उड़ान में एकदम नीचे आ जाता है। भरतवंश की तरह, **प्रणय नृत्य** के साथ इसका गान भी चलता है। (ऊंचे) तार स्वरों में धीमी 'त्सीप' 'त्सीप' और कंपायमान स्वरों में अथवा 'क्लिंग क्लिंग' स्वरों में यह गान करता है। यदि इसके शावकों को खतरा हो तब यह घोंसले से कुछ मीटर ऊपर 'त्सिप त्सिप'-सी आवाज करता हुआ फड़फड़ करता हुआ आक्रमणकारी को भगाने के लिए, अपनी पूंछ को ऊपर उठाए और पंखों को आधा बंद किये हुए, जमीन तक आता है, और इस तरह यह आक्रमणकारी के ऊपर नीचे डराने की क्रिया दुहराता जाता है।

पक्षियों की पहचान के लिए, उनकी जाति के वंश तथा कुल की पहचान करना भी आवश्यक होता है। अर्थात यदि जाति न पहचान सके तो उसका वंश या कुल तो पहचानना आना चाहिए। चर्चरी और भरत वंश के पक्षियों के, उनके आवास के अत्यधिक समान होने के कारण, रूप रंग में काफी समानता आ गई है। भरत वंशियों की पूंछ चर्चरी की तुलना में छोटी होती है, चोंच आधार पर अधिक मोटी, वक्राकार तथा अधिक लंबी होती है; भरत वंशी अधिकतर भूरे या हल्के भूरे होते हैं जबकि चर्चरी प्रगाढ़ भूरी होती है। चर्चरी की पूंछ में खांचा स्पष्ट होता है, जब कि भरतवंशी की पूंछ वर्गाकार होती है। दोनों वंशों (चर्चरी तथा भरत) के पक्षी लंबे, मध्यम छरहरे, भूरे, थोड़ी लंबी टांगों वाले, भूचर होते हैं।

भस्मीशिखर पीलकिया Blueheaded Yellow Wagtail

1876. Motacila flava beema 1875. M.f. thumbergi (श्यासिरी)

कद : लंबी पूंछ गौरेया; 17 सेमी.; प्रवासी *1875 क. M.f. simillima* (लघुपूंछ)

1877. M.f. lutea (पीतसिरी)

1878. M.f. Melanogrisea (कलसिरी)

1879. M.f. leucocephala (सितसिरी)

1880. M.f. taivana (जैतूनी)

स्थानीय नाम : हिंदी : *पीलकिया,* खंजरीट; **गुजराती :** मटानो *पीलक्यो;* **बंग्ला :** खंजन; **उर्दू :** पीला ममोला; **मलयालम :** चारट्टलायन वल्कुलुकी; **मालदीव :** फैनफुदीनी; **संस्कृत :** गोपुत्र, गोप, गोपीत, गोपापुत्र, खंजरीट, खंजखेट, गूढ़नीड़, मुनिपुत्र, ऋषि पुत्र।

पहचान : शिखर भस्म के समान हल्का नीला; स्पष्ट सितभौंह तथा सित चिबुक; पीठ जैतूनी आभा लिए सलेटी; पंख तथा पूंछ सितकिनारी कत्थई; **नीचे :** चमकदार नींबुइ पीला। **नर-मादा** एक समान, किंतु मादा का रंग नर के रंग की अपेक्षा दबा हुआ। हमारे देश में प्रवासी खंजनों के प्रजननकालीन रंग देखने को धोखे से ही मिलते हैं। और ग्रहणकाल में उन्हें पहचानना मुश्किल है, क्योंकि ग्रहणकाल में इनके रंग दब जाते हैं या बदल जाते हैं।

किष्किंधा कांड में तुलसी प्रकृति वर्णन के समय कहते हैं, ''जानि सरद ऋतु खंजन आए। पाइ समय जिमि सुकृत सुहाए।'' अर्थात उनका आना सुकर्मों का सुफल होना है। खंजन *(Motacilla)* वंश के पक्षियों को मोटे तौर पर दो समूहों में बांटा जा सकता है : एक वे जिनमें पीला प्रमुख है और दूसरा वह जिनमें सफेद काला प्रमुख है। सफेद काले पक्षी ही वास्तव में खंजन हैं तथा अन्य पीलकिया अथवा खंजरीट। सभी पीलकिया प्रवासी हैं किंतु कुछ खंजन आवासी भी।

इस पक्षी के वंश का नाम 'खंजन' काव्यात्मक है, खंजन अर्थात आकाश में जन्म लेने वाला। प्रवासी खंजन हजारों, लाखों की संख्या में साइबेरिया, मंगोलिया, स्कैंडिनेविया आदि देशों से आते हैं और उनमें से अधिकांश हिमालय की ऊंचाइयों को पार करते हुए आते हैं। (हजारों किलोमीटर लंबी यात्रा के पश्चात, विरल ऊंचाइयों को पार करने के तुरंत बाद वे जमीन पर आना चाहते हैं, तब हिमालयवासी ऋषियों को लगता होगा कि मानो आकाश में जन्म लेकर वे भूमि पर उतर रहे हैं। फिर वे लगभग सारे भारत में जहां पानी उपलब्ध है, वहां पहुंचते हैं, निकोबार और मालदीव द्वीप समूहों तक। यह भस्मसिरी साइबेरिया के वोल्गा तथा बैकल झील के क्षेत्र से (ग्रीष्म ऋतु में) प्रजनन पश्चात छुट्टी बिताने आती हैं।

ये अधिकतर जल के किनारे या दलदलों या पानी भरे खेतों में कीड़े-मकोड़ों की तलाश में पूंछ मटकाते हुए घूमते हैं। गायों के झुंड के आसपास भागते कीड़ों को ये सरकसी उड़ानों से पकड़ते हैं। इसकी छोटे कदमों वाली चपल चाल इतनी आकर्षक होती है कि मनोहर चाल वाली षोडशी सुंदरियों को **खंजनगामिनी** की उपमा दी जाती है। ऐसी दौड़ों में जब यह रुकता है तब अपनी पूंछ को ऊपर नीचे टिलटिलाता है, मानो सोच रहा है कि आगे क्या किया जाए।

भस्मी शिखर पीलकिया अपनी बहनों के साथ **भोजन** करती है, पीलकिया की जातियां नरकुलों या गन्ने के खेतों में हजारों की संख्या में रात्रि बिताती हैं। भोजन के लिए अपने विश्रामालय से 30-35 किमी. दूर तक जाते हैं और सूर्यास्त पर जब हजारों की संख्या में लौटते हैं तब आकाश और सुनहला हो जाता है।

कलकंठी मेघा पीलकिया Grey Wagtail

1884. Motacilla caspica

कद : लंबी पूंछ गौरैया; (17 सेमी.); प्रवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : *पीलकिया;* **कश्मीर :** खाक दोब्बई; **पंजाब :** वल्कातारा; **असमिया :** हल्दिया बालिमाही; **तेलुगु :** मुदि तिपुडु जित्ता; **मलयालम :** बजीकुलुक्की।

पहचान : नर ग्रीष्म में : सिर तथा पीठ मेघवर्णी; सफेद भौंहें; कटि हरिताभ पीली; तीन सफेद धारियों सहित पंख कत्थई; सितकिनारी कत्थई पूंछ; कल्ला काला, **नीचे** नींबुइ पीली; **मादा :** पांडुर कंठ (गर्मियों में काले छींटे), नीचे दबा हुआ पीला। **नर** शीतकाल में मादा के समान।

साहित्य में सुंदर नारी के मनोहर नयनों की तुलना खंजन से की जाती है। इसलिए जब मैंने खंजन को पहली बार खंजन समझते हुए देखा तो इस पक्षी की मुद्रा ने, चाल ने, चपलता ने, सुगढ़ बनावट ने मेरा मन तो हर लिया किंतु मेरे मन में यह प्रश्न छोड़ दिया कि खंजन के नयन तो सामान्य ही हैं। फिर भारतीय साहित्य में खंजन के नयनों को इतना मान क्यों ? जब श्री दवे की पुस्तक में पढ़ा तब समझ में आया कि भारतीय कवियों की, इस उपमा के लिए कितनी ऊंची उड़ान है। सभी खंजन पक्षी रंग में सफेद और काले, बहुत चुस्त शरीर वाले, बड़ी मुस्तैदी से चलने वाले और अत्यंत चपल। इनके शरीर के **रूप और रंग** नारी की आंखों के **रूप रंग** से मेल रखते हैं, यदि दोखंजन आमने सामने पास पास खड़े किये जाएं तब वे दो सुंदर नयनों के समान दिखते हैं। किंतु पीलकिया इन खंजनों से किसी भी बात में कम नहीं है, केवल खंजन के वंश के रजत के स्थान पर उनके पास स्वर्ण है।

संभवतया इन्हें अपने स्वर्ण का इतना अभिमान है कि ये अकेले (कभी कभार दुकेले) ही फुदकते रहते हैं, हां बसेरे के लिए वृक्षों पर झुंडों में रहते हैं। नदी या झरनों के किनारे इनकी दौड़ बहुत मनमोहक लगती है नामदाफा की एक जंगली सड़क पर यह हमारी जिप्सी के आगे आगे उड़ता जा रहा था मेरे साथी बोले, "हमारे एयर मार्शल की जिप्सी के सामने बाकायदा पायलट (मोटरसाइकिल सवार सैनिक) चल रहा है।" उसने लगभग 1.5–2 किमी. तक पायलटिंग की !

इनका **प्रजननकाल** अप्रैलांत से जुलाई अंत; तथा स्थान कश्मीर, पश्चिमी हिमालय, यूरोप, चीन, मंगोलिया, कैस्पियन, साइबेरिया आदि। **प्रजनन नृत्य** में नर एकदम कुछ मीटर ऊपर उड़कर फिर वृत्त की परिधि में उड़कर थोड़ी दूर पर उतरता है और इसके साथ शिं शिं शिं का मधुर गाना गाता है। भारत में **शीतकाल** में प्रवास अगस्तांत से अप्रैल तक। कुछ कलकंठी भस्मी पीलकियां वापिसी के समय मई माह तक भी केरल तथा अन्य क्षेत्रों में देखी गई हैं; अगस्त माह में चंबा में 4,400 मीटर ऊंचाई पर अनेक पीलकियां देखी गई हैं। यह दर्शाता है कि भारत से इन्हें कितना अधिक प्रेम है। गृहस्थी के सारे कामों में नर बराबर हाथ बंटाता है। संस्कृत में इनका एक नाम गूढ़नीड़ भी है क्योंकि इनके नीड़ दिखते नहीं हैं। (प्रवासी है इसलिए वे प्रवासकाल में नीड़ नहीं बनाते) किंतु लद्दाख, कश्मीर, कुल्लू, मनाली वाले हिमालयी क्षेत्र में ग्रीष्म में प्रजनन करते हैं और वहां घोंसले बनाते हैं, अर्थात पंछी घोंसले, मुख्यतया अंडों तथा शावकों के लिए बनाते हैं।

(सितकर्णी) भस्मी/सित खंजन (Indian) White wagtail

1885. Motacilla alba dukhunensis 1886. M.a. Personata (पश्चिमोत्तरी)

कद : बुलबुल; 18 सेमी.; प्रवासी *1887. M.a. alboides (हिमालयी)*

1888. M.a. leucopsis (पूर्वोत्तरी)

1889. M.a. ocularis (पूर्वी)

1890. M.a. baicalensis (मध्योत्तरी)

स्थानीय नाम : हिंदी : धोबन, मामूला *खंजन;* **कश्मीर :** पींचकनी, दोब्बई **पंजाबी :** बल्कातारा; **गुजराती :** खत्रियानी (रंगरेजिन); **भील :** नाचंगोल; **बंग्ला :** *खंजन;* **असमिया :** बालिमाटी, तिपोसी; **मलयालम :** वेल्ला वल्कुलुक्की; **संस्कृत :** सूत्रकंठ, गूढ़नीड़, अंबर भद्र, मुनिपुत्र।

पहचान : वयस्क नर : शीतकाल–चौड़ा माथा, कपोल, कल्ला, ग्रीवा बाजू, उदर तथा निचली पूंछ सफेद; अनुकपाल तथा कंधर चमकदार काले; पीठ तथा कटि सफेद

किनारी के साथ पंख भूरे, पूंछ सफेद किनार के साथ कत्थई काली। सफेद वक्ष पर काली चंद्रिका। **बसंत तथा ग्रीष्मकाल** में अनुकपाल, कंधर, कल्ला तथा वक्ष काला। एक उपजाति 'मुखौटा' खंजन (personata) की पहचान उसका काला मुखौटा है जो माथा, आंखें और कान पर पतली पट्टी को सफेद छोड़ देता है, बाकी वक्ष तक मुखौटा काला, साथ ही हर ऋतु में इसके (मुखौटा खंजन) कर्ण पिच्छ सफेद रहते हैं।

रामचरितमानस में जब ग्रामीण स्त्रियां सीताजी से पूछती हैं कि राम या लक्ष्मण में से उनके पति कौन है, तब सीताजी रामचन्द्रजी का नाम न लेकर, इशारे से कहती हैं "खंजन मंजु तिरीछे नयननि। निज पति कहेउ तिन्हहिं सिय सैननि।।" पश्चिमी साइबेरिया इसका (भस्मी/सित) सच्चा घर है जहां यह अपनी संतान पैदा करता है। वैसे समस्त यूरेशिया, मोरक्को, ब्रितानिया, आइसलैंड इसके घर हैं। शीतकाल में यह प्रवास के लिए सारे प्रायमहाद्वीप में आता है।

सारा भोजन अकेले या दुकेले यह नदी, झरनों आदि के किनारे चपलता से दौड़ दौड़कर करता है, कभी कभी उड़ते कीड़ों को पकड़ने के लिए सरकसी उड़ान भी भरता है। अक्सर शहरों के खेत के मैदानों में खेलता नजर आता है। उतरते समय तथा दौड़ों के बीच अपनी पूंछ मजे से टिलटिलाता है। अपने क्षेत्र की रक्षा, विशेषकर प्रवासी पड़ावों पर जमकर करता है। दो प्रतिद्वंद्वी लगभग 30 सेमी. की दूरी रखते हुए, समानांतर एक ही दिशा में, सैनिक रक्षकों की भांति, अपनी स्वाभाविक गति से दौड़ते हैं और फिर 'पीछे मुड़ते' हैं। कभी एक अचानक सीधा ऊपर की छोटी उड़ान भरता है, मानो आक्रमण कर रहा हो दूसरा प्रतिक्रिया स्वरूप भी उड़ान भरता है, बचने के लिए। इस तरह की 'मिलिटरी पैट्रोल' देर तक चलती है, जब तक एक हार न मान ले। बसंत ऋतु में यह अपने **प्रजनन** क्षेत्र में लौटने लगते हैं। तत्पश्चात पतझड़ में शिशु समेत नदियों, झरनों और मैदानों में उत्सव मनाने आने लगते हैं। इसका मैदानों आदि में दौड़ना इतना सुंदर लगता है कि संस्कृत में इनका एक नाम तंडक (नृत्यांगना) है। गुणों से सुंदर स्त्री के मनोहर नयनों को खंजन की उपमा देना उसकी सार्थकता और बढ़ा देता है, उनमें इनकी चंचलता, शरीर के गठन का सुंदर आंखों के समान होना, रंगों में केवल सित श्याम होना, जल के निकट होने से सरसता का होना आदि हैं।

16 और 17 मार्च, 1961 में दो सितकर्णी भस्मी/सित खंजनों को कच्छ के प्रवासालय में अंगूठी पहनाई गई थी और उनमें से एक जून 1961 में किरोव (एशिया) में तथा दूसरा वोल्गाग्राड के निकट जुलाई में मिला जो क्रमश : 4,200 तथा 3,600 किमी. दूर हैं।

सितोदर काला खंजन **Large pied Wagtail**

1891. Motacilla maderaspatensis

कद : बुलबुल, 21 सेमी.; आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : मामूला, भुई मामूला, मामूला *खंजन;* **छोटा नागपुर :** नाचनगोल, हाटा रोवे; **असमिया :** बलिमाही, तिपोची; **मणिपुर :** खोंग्रनचक; **तेलुगु :** सकल सरेला गड़ु; **तमिल :** वन्नथि कुरुवि, कुलथ्थु कुरुवि; **मलयालम :** वालुकुनुबिक पक्षी; **संस्कृत :** कालकंठ, नीलकंठ, काकच्छदि *खंजन,* त्रिशंकुक; तंडक, *खंजन,* मिथुनिन, कर्कराक्ष, कर्करांग, मीनाम्रीण।

पहचान : सितोदर तथा बाकी शरीर काला, सुस्पष्ट सफेद लंबी भौंहें, पंखों पर सफेद पट्टियां; **नर-मादा** एक समान किंतु मादा के रंग कभी कभी दबे से। इसके रंग सभी ऋतुओं में एक समान। रूप तथा इसका गान भी सुकंधी कल...सित अश्वक से थोड़ा मिलता है किंतु शरीर की अलग बनावट के अतिरिक्त इसकी स्पष्ट भौंहें इसकी स्पष्ट पहचान बना देती हैं। खंजन वंश की गिनती विश्व में सर्वाधिक लंबी पूंछ (शरीर के अनुपात में) वाले दस पक्षियों में की जाती है। शरीर की लंबाई की लगभग 50 प्रतिशत पूंछ होती है।

कश्मीर से कन्याकुमारी तक रहने वाला यह पक्षी पूर्णतः भारतवासी है। सभी प्रवासी खंजन सगुन विचार या भविष्यवाणी के लिए उपयुक्त माने गये हैं किंतु इस आवासी सुंदर खंजन को नहीं; लगता है कि विदेशियों को महत्व देने की परंपरा बहुत पुरानी है।

अधिकतर यह पानी के पास जोड़ों में मिलता है और जोड़ा साल भर साथ रहता है (इसलिए 'मिथुनिन') शीतकाल में अन्य खंजनों तथा भांडीकों के साथ भी झुंड में मिलता है। इनके नाम हैं कर्कराक्ष (सुंदर नेत्रों के लिए दर्पण के समान), कर्करांग (सुगठित शरीर वाला)। और 'मीनाम्रीण' (मीन से भी अधिक चपल और रूपवान) आदि।

प्रजननकाल : उत्तर में, मार्च-जून तथा दक्षिण में दिसंबर से जून। इनके घोंसले पानी के पास ही मिलेंगे—पुल के नीचे, दीवार के, वृक्षों के गढ़ों में। **घोंसला** सूखी टहनियों, जड़ों, घास आदि का चबूतरा-सा जिसके बीचों बीच एक ऊन, बाल इत्यादि से आरामदेह बना कटोरा। इनका **प्रणय** गान और नृत्य बहुत ही भावनापूर्ण एवं आवेशमय होता है। नर आवेग पूर्ण गान के साथ, अपने परों को फुलाकर अपनी सुंदरता में चार चांद लगाते हुए धीरे धीरे शान से मादा के सामने जमीन पर उतरता है। फिर छाती के परों को पूरा फुलाकर, दोनों पंखों को पूरा खोलकर उन्हें पीछे ले जाकर उनके छोरों के थिरकते तीव्र कंपन के साथ अपनी प्रिया के पास बहुत

शान से जाता है। उसकी प्रिया भी मोहित होकर प्रणय नृत्य में शामिल हो जाती हैं—वह थोड़ा-सा प्रेमवश झुकती है, अपने कंधों के पास वाले पंख खोलती है और वे ऐसे थर थर कांपते हैं जैसे उनका तेजी से धड़कता हृदय। इसके बाद मैथुन होता है और नर का मस्त गायन भी चलता रहता है। इसके बाद नर जब उतरता है तब भी उसके पर फूले रहते हैं इसलिए इसका एक नाम है रतनिधि—रति का खजाना। मादा एक खेप में 3-5 अंडे देती है। भस्मी अंडों पर भूरे चित्ते होते हैं। **नीड़न** तथा शावक का पालन-पोषण नर-मादा मिलकर करते हैं।

आहार : त्रिदाक्ताइलिनी (Tridactylinae) आदि भृंग, टिड्डी, चिड्डे, घोंघे तथा छोटे बीज मुख्य आहार हैं जब रेत में भागते छिपते त्रिदाक्ताइलिनी भृंग को पकड़ना होता है तब यह पक्षी जोड़ों में उसका पीछा करना पसंद करते हैं। जैसे ही यह कहीं नजर आता है, तब इसे पकड़ने में रेत का एक 'जैट' (धार) उड़ता नजर आता है और भृंग एक खंजन की चोंच में।

जामुनी शकरखोरा (Indian) Purple Sunbird

1917. Nectarina asiatica a. 1916. N.a. Brevirostris (पश्चिमी)

कद : 10 सेमी.; आवासी *1918. N.a. intermedia (पुरबिया)*

स्थानीय नाम : **हिंदी** : काला पिद्दा (**पंजाबी**), *शकरखोरा,* फूल सूंघनी, जुगी जुगी (**भागलपुर**); **बंग्ला** : ठुनठुनी, मौचुंग; **गुजराती** : फलचकली; **छोटा नागपुर** : सूई; **मराठी** : चुम्का; **तेलुगु** : तेना पिट्टा; **तमिल** : तेन कुडि, पुकुडिच्चन; **मलयालम** : कुरुप्पन टेन्किली; **सिंधी** : डुनबर्ग; **संस्कृत** : नानारतन्त्रनूरुह, शींजिरिका, भृंगरोल, मधुकर, पुष्पंधय, मधुपखग।

पहचान : **प्रजनन ऋतु** : **नर** : ऊपर प्रगाढ़ चमकदार नीला तथा जामुनी; पंख प्रगाढ़ कत्थई; बाजू : फिरोजी आभा लिए नीला; उदर : प्रगाढ़ जामुनी; वर्क्षीय पिच्छ सिंदूरी तथा सुनहले (प्रसाधन में दिखते हैं या फिर उड़ते समय)। **ग्रहणकाल** में नर : ऊपर पीताभ जैतूनी भूरा; पंख तथा पूंछ श्याव; तथा नीचे : हल्का पीला, वक्ष एवं निचली गर्दन के मध्य में काली पट्टी होती है। **मादा** : **ऊपर** : जैतूनी भूरी; **नीचे** : दबा हुआ पीला।

प्रणय नृत्य में यह वृक्ष, विशेषकर पत्रहीन वृक्ष के शिखर से गाते हुए, दाएं बाएं झूलता हुआ, पंखों को ऊपर नीचे कर अपने वक्ष के सुनहरे तथा सिंदूरी परों का प्रदर्शन करता हुआ नीचे आता है। इसके प्रणय गान में ऊंचे और आह्लादमय दो से छह 'चिविट चिविट' से स्वर होते हैं। यह **ग्रहण** ऋतुओं में भी बहुत गाता

है किंतु तब इसके स्वर निचले 'चिरर चिरर' होते हैं। पुष्पलदी झाड़ियां पसंद करता है। अपनी चोंच से फूलों में से, स्थिर उड़ान के साथ मकरंद पान करता है।

केवल दो कुल के पक्षियों–पुष्पान्वेषी *(Dicaeidae)* तथा मकरंदी *(Nectarinidae)* की, न्यायपूर्वक तुलना, सुंदरता में, पुष्पों से की जा सकती है। अन्य कुलों के पक्षी सुंदर तो होते हैं किंतु इस उपमा के लिए बड़े होते हैं। पुष्पों से मकरंद पान करने वाला पक्षी भी पुष्प के समान, यह प्रकृति की सुंदर रचना है तथा साथ ही पक्षी की उत्तरजीविता बढ़ाती है। दोनों कुलों के पंख रत्नों के समान चमकते भी हैं ('नानारत्नतनूरूह', वायु पुराण 39, 18)। ये मधुप 'पक्षी' घुंघरू के समान मधुर स्वर में गाते भी हैं (शींजिरिका) तथा मधुप भौरों के समान ये फूलों का रसपान कर उनका परागण भी करते हैं। इन्हें महुआ के फूल तथा ताड़ वृक्षों के रस विशेष पसंद हैं। ये कीड़े जैसे डांस, मशकाभ, 'टिनाइड' तथा 'जिओमेट्रिड' आदि कीट के डिंभ, मत्कुण, घुन छोटी मक्खियां आदि खाते हैं। सुंदर तथा मनमोहक 'जामुनी शकरखोरा' की तीनों जातियां मिलकर सारे भारत को आबाद करती हैं।

इसकी चोंच लंबी तथा वक्र होती है। कुछ फूलों जैसे लोरैंथस, लंबे दलपुंज वाले फूलों का सफल परागण करने में जामुनी शकरखोरा एक प्रमुख पक्षी है।

नीड़ आरामदेह, गोलाकार, चिंदियों, कपास आदि से बना होता है जिसका प्रवेश द्वार छोटा होता है तथा जो, अक्सर, जमीन से थोड़े ऊपर शाखाओं से झूलता है। **प्रजननकाल** भूगोल के अनुसार बदलता है, मुख्यतया शुष्क ऋतु में है किंतु नीड़न क्रिया वर्ष भर देखने में आती है। मादा एक वर्ष में अंडों की दो खेप देती है। घोंसला झाड़ियों में कोई दो मीटर की ऊंचाई पर बनाता है; जो बाहर से कागज, छाल, धागे या कोई और कूड़े से ढका होता है, अक्सर मकड़ जालों से। नीड़ निर्माण मुख्यतया मादा ही करती है, सेने का काम केवल मादा करती है, नीड़ सफाई तथा शावक पोषण नर-मादा दोनों करते हैं। कभी कभी ये विचित्र स्थानों में घोंसला बना लेते हैं, यथा, लटकती रस्सियां, बिजली के तार, फ्लश टैंक की जंजीर, सूखते हुए नाइट गाउन की जेब...।

कंचन/सित सिताक्षी (Indian) White-eye

1933. *Zosterops palpebrosa p.* 1934. *Z.p. salimalii* *(आंध्री)*

कद : गौरैया, 10 सेमी.; आवासी 1935. *Z.p. nilgiriensis* *(नीलगिरी)*

1936. *Z.p. nicobarica* *(निकोबारी)*

स्थानीय नाम : हिंदी : बबूना, मोतीचूर; **बंग्ला :** चश्मा पाखी; **कछारी :** दाओतिशा-गोफु-पि; **तमिल :** वेल्लइ कन्नि, कन्नडि कुरुवि; **मलयालम :** वेल्लिक्कनि;

संस्कृत : पुत्रिका, चटकिका, सारंग।

पहचान : **ऊपर** : हरिताभ पीला, आंख पर स्पष्ट सफेद मुद्रिका तथा काली रेख; **नीचे** : कंठ तथा निचली पूंछ पीले, वक्ष तथा उदर सफेद, पूंछ वर्गाकार; योग्यता **नर-मादा** एक समान।

राजस्थान, आंध्र, तमिलनाडु, केरल छोड़कर हिमालय तराई से लेकर सारे भारत में, यह छोटा मोटा-सा मनहर पक्षी मिलता है। **प्रजनन** के लिए यह पहाड़ी हिस्से (1,000 से 3,000 मी. की ऊंचाई तक) अधिक पसंद करता है, अर्थात स्थानीय (ऊंचाई के अनुसार) प्रवासी हो सकता है।

मुख्यतः वृक्षों पर ही रहते हैं यद्यपि नदी, नहरों में स्नान करने नीचे आ जाते हैं। एक वृक्ष से दूसरे वृक्ष पर गाते हुए, पत्तों के नीचे झूमते हुए देखे जा सकते हैं। यद्यपि इसकी चोंच शकरखोरों जैसी लंबी नहीं है, तब भी कुछ फूलों के लिए इसकी चोंच तथा जीभ उपयुक्त है। इसे शाल्मलि, 'एरिथ्रिना', महुआ, 'लोरैंथस', 'वुडफोर्डिया', 'ग्रेविलिया रोबस्टा', नीलगिरी आदि के फूलों के मकरंद बहुत प्रिय हैं और बरगद आदि के फल तथा डंठल से निकलने वाला दूध, पीपल के फल; कीड़ों में मुख्यतया घुन *(Tamymeus hispida & indicus)*, चींटी *(Camponotus compressus, Phidaole malinsi ?, Polyrachis simplex)* तथा छोटे डिंभ (संभवतया *Tineid*) आदि इसके भोजन हैं। इसका सुरीला गान हल्के स्वरों में शुरू होकर क्रमशः तेज होता है फिर एकदम बंद हो जाता है और उड़ते हुए फिर शुरू हो जाता है। यह अधिकतर जोड़ों में और झुंड में भी रहती है।

इसका **प्रजननकाल** स्थान के अनुसार अप्रैल-सितंबर है। इसका **घोंसला** कप के आकार का डंठलों से झूले की तरह लटकता है। घोंसला घास, काई, मकड़जाल आदि का बना रहता है और बालों की चादर द्वारा मुलायम बनाया जाता है। मादा एक खेप में (15.2 : 11.5 मिमी.) 2 से 4 हल्के नीले अंडे देती है। घोंसला मुख्यतः मादा बनाती है किंतु अंडे सेने तथा शावकों का लालन-पालन दोनों करते हैं। सेने की अवधि 10-11 दिन होती है जो विश्व की लघुतम अवधियों में से एक है।

इसकी एक उपजाति आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु को आबाद करती है जो देखने और व्यवहार में इसी के समान है, केवल ऊपर तुलनात्मक रूप से पीला अधिक तथा सफेद उदर के बीच में एक पीली रेखा होती है और इसके वैज्ञानिक नाम में इसके खोजी सालिम अली को सम्मान मिला है। *Z.p. Salimalii* एक और उपजाति, *Z. nilgiriensis,* का ऊपर का रंग हल्की पीली आभा लिए तथा कंठ पीताभ कत्थई होता है, चोंच बड़ी तथा पूंछ लंबी होती है। *palpebrosa* उत्तरी बर्मा, दक्षिण-पूर्वी तिब्बत, जेचुआन, यूनान मथा इंडोनेशियाई क्षेत्रों को भी **आबाद** करती है। गौर तलब है कि अधिकांश उपजातियों की तरह ये उपजातियां मुख्यतया

अपने अपने क्षेत्रों में ही रहती हैं। कंचन/सित सिताक्षी में अनुकूलन योग्यता तेज है फलस्वरूप एक तरफ तो वह सिंधु से ब्रह्मपुत्रऔर लेकर कावेरी तक के क्षेत्रों को तथा दूसरी तरफ वन, कुंज, बाग, बगीचों यहां तक कि मरुस्थलीय उपवनों को भी आबाद करती है।

गौरैया (Indian) House Sparrow

1938. *Passer domesticus indicus* 1939. *P.d. Parkini* *(कश्मीरी)*

कद : 15 सेमी.; आवासी 1939 *क. P.d. bactrianus* *(तुर्की)*

स्थानीय नाम : हिंदी : *गौरैया,* चिड़िया, खास चूड़ि; **गुजराती** : चकली; **कश्मीरी** : सार, कांटूर; **भील** : चड़कल्पे; **छोटा नागपुर** : गढ़वा; **बंग्ला** : छोटी चड़ई; **असमिया** : घर चड़िका, घर सुरई; **मणिपुरी पः** सेंडांग; **मलयालम** : कुरुवि, नारायण पक्षी, आंगनडि कुरुवि; **तमिल** : उर कुरुवि, अडईकल कुरुवि; **संस्कृत** : अश्वक, ग्राम चटक।

पहचान : शिखर सलेटी; ऊपरी पीठ काले चित्तों के साथ कत्थई; सफेद कंधों के साथ पंख भूरे-कत्थई; कटि भूरी-सलेटी, पूंछ कत्थई, कपोल तथा कंठ के बाजू सफेद, सम्मुख तथा वक्ष काले, उदर धूसर सफेद;। **ठंड** में सिर के सलेटी रंग में भूरी आभा, कंठ तथा वक्ष के काले में सफेद किनार।

विश्व में मनुष्यों की मदद से विस्तार करने वाले पक्षियों में गौरैया सर्वाधिक संख्या में है तथा सुविस्तृत है। इसकी सर्वसुलभता ही है कि अनेक भारतीय भाषाओं में इसके नाम का अर्थ होता है 'पक्षी'। यह **समस्त** भारत-उपमहाद्वीप का (थार सहित) पक्षी है। इसकी सफलता का एक कारण इसका सहजीवी होना है। तथा दूसरा, छोटा होने पर भी, बड़े पंख और पूंछ की सहायता से इसकी उड़ान का शक्तिशाली होना।

प्रणय नृत्य : नर बड़ी शान से छाती फुलाकर 'त्सीं त्सीं' या 'चिर्र' **गान** करता है तथा अपने पंखों को नीचे दबाकर तथा पूंछ को तानकर मादा के पास फुदकता है। कभी कभी तीन या चार नर एक साथ एक मादा के पास नृत्य करते हैं और मादा उनमें से एक का वरण करती है और वे पूरे **प्रजननकाल** के लिए बंध जाते हैं। इस समय अन्य नर या मादा की अनाधिकृत चेष्टा तुरंत युद्ध का बिगुल बजा देती है। इसके विस्तार का एक कारण प्रतिवर्ष अनेक खेपों में अंडे देने की क्षमता भी है,। इसकी प्रजनन ऋतु उत्तर भारत में मार्च-जून, मध्य भारत में सितंबर-अक्तूबर तक बढ़ते बढ़ते दक्षिण भारत में वर्ष भर है।

दृढ़ चोंच वाले पक्षियों के समान गौरैया मुख्यतया घास, गेहूं, चावल इत्यादि के बीज **खाती** है। गोबर या लीद से गौरैया अधपचे बीज या अनाज के दाने निकालकर खाती है, या शायद कुछ कीड़े भी इसलिए इनका विस्तार शहर या गांव में जानवरों की आबादी पर भी निर्भर करता है। अपने शावकों को ये कीड़े, मकोड़े, इल्लियां ही खिलाते हैं और कभी कभी खुद भी कीड़े, दीमक, पतंगे आदि खाते हैं और किसान का ऋण मय ब्याज चुका देते हैं। इनके तथा भरत, भरद्वाज आदि के शावकों की आंखें जन्म से एक या दो सप्ताह बाद तक बंद रहती हैं।

इसकी कश्मीरी बहन अधिक गहरे रंग की है और इससे बड़ी है तुर्कीस्तानी बहन लद्दाख को आबाद करती है, और शीतकाल में पूर्वी राजस्थान को; पहाड़ी गौरैया का तो वंश ही अलग है।

संध्या समय इनके झुंड धूल में नहा धोकर, वापिस वृक्षों पर जाकर गाना गाते हैं और फिर घोंसलों में चले जाते हैं।

घोंसला बनाने के लिए इसकी दृढ़ इच्छाशक्ति के सामने तो मौलाना अबुल कलाम आजाद भी हारे थे। यद्यपि इसका घोंसला किसी छेद या सहारे पर रखा घास फूस आदि का ढेर ही होता है। 'सुगृह' *(Ploceidae)* कुल की इस बहन का घोंसला तो बया के नाम पर धब्बा ही कहलाएगा।

कथकंठ सोनल बया Baya Weaver Bird

1957. *Ploceus philippinus p.* 1958. *P.p. travencoreensis (कैराली)*
कद : गौरैया, 15 सेमी.; आवासी 1959. *P.p. burmanicus (पुरबिया)*

स्थानीय नाम : हिंदी : *बया,* सोन चिड़ी; बिजरा **बंग्ला :** लाबुई, कौलीक; **गुजराती :** सुघड़ी; **छोटा नागपुर :** सुयम; **मराठी :** डुडा पक्षी; **असमिया :** टूकरा, *बया* सोरई; **कन्नड़ :** चिप्पिग हक्कि; **तेलुगु :** पर्सुपु पिट्टा; **तमिल :** थुकन कुरुवि, तोंगा नाथन; **मलयालम :** अट्टककुरुवि; **संस्कृत :** पीतमुंड कलविण, कौलीक, चंचुसूची, सुगृह, कलिकार, कावृक, गृहकारी।

पहचान : प्रजनन : ऊपर : सुनहला शिखर, शेष कत्थई, पीठ पर सुनहली धारियां। **नीचे :** कर्ण तथा कंठ प्रगाढ़ कत्थई; वक्ष सुनहला; शेष हल्का पांडु। चोंच आधार पर बड़ी, कम लंबी तथा नुकीली और सशक्त। **मादा** : सिर, वक्ष, पीठ, भौंहें तथा ग्रीवा–बाजू पीताभ पांडु; कंठ पीताभ सफेद। सिर, पीठ तथा वक्ष के बाजू पर कत्थई धारियां, उदर हल्का पांडु। नर **ग्रहणकाल** में मादा के समान किंतु ऊपर रंग तथा धारियां प्रगाढ़। सुंदर उल्टी सुराही के समान लटके घोंसले इन्हीं की कारीगरी है।

बचपन में अमीर खुसरो की यह पहेली बूझा करते थे–'अचरज बंगला एक बनाया/ऊपर नींव तले पर छाया'। **नर** वर्षा ऋतु के आरंभ में ताड़ या बबूल सरीखे वृक्षों में अपना नीड़ बुनता है। बाहरी बनावट बनने के बाद **मादा** उस घोंसले का निरीक्षण करती है और यदि उसे सुंदर, सशक्त तथा उपयोगी पाती है तब वह **नर** का प्रणय निवेदन स्वीकार कर लेती है। और वे दोनों मिलकर उसे पूरा बुनते हैं। बया का अर्थ ही बुनकर होता है। जब मादा अंडा देती है तब नर दूसरी मादा के लिए घोंसला बुनने लगता है। कुशल नर एक ऋतु में आठ-दस मादाओं (औसत 4) के साथ भी जोड़ा बनाते देखा गया है। नर मात्र अपने नीड़ से मादा को आकर्षित नहीं करता वरन वर्षा प्रारंभ होते ही तथा सुनहली पोशाक पहन लेता है। साथ ही वह गाना गाता है और नृत्य भी करता है।

यजुर्वेद में (24, 24) एक ऋचा है, ''सोमाय लवाना लभते त्वष्ट्रे कौलिकान', अर्थात सौम्यता के लिए लवा (बटेर) तथा वास्तुशिल्प के लिए कौलीक ('बुनकर' पक्षी)। बया ने अतिजीविता के लिए दो मुख्य गुणों को प्रधानता दी है–पहला बहुत, ही सुरक्षित तथा सशक्त घोंसला तथा दूसरा 'यूथप्रियता'। बया का घोंसला प्रकृति की एक सुंदर, अनोखी तथा अद्‌भुत घटना है। ऐसी कुशल कारीगरी के लिए आदमी को दसों अंगुलियों का इस्तेमाल करना पड़ता है वह भी कुछ उपकरणों की सहायता लेते हुए, जबकि यह पंछी मात्र अपनी चोंच से यह जादू कर दिखाता है, हां गांठें लगाने के लिए यह अपने पंजों का भी इस्तेमाल करता है। इस उपकुल (Ploceinae) में नर का सबसे महत्वपूर्ण गुण है उसके नीड़-स्थान का चयन तथा नीड़ निर्माण की कुशलता। जबकि एक वर्ष की मादा प्रजनन के लिए तैयार हो जाती है, एक वर्ष के नर को पहला वर्ष नीड़ **निर्माण सीखने** में बिताना पड़ता है। इस कौशल के आधार पर ही एक के बाद एक मादाएं उसे चुनती हैं। यह उत्कृष्ट कौशल प्रत्येक नर बया में भी सुलभ नहीं होता, इसलिए एक नर अनेक मादाओं के लिए आवश्यक हो जाता है। एक सुरक्षित तथा मजबूत घोंसले के लिए मादा सेने तथा शावकों के पालन-पोषण का कार्य स्वयं करती हैं। एक ही ऋतु में अनेक उत्तम नीड़ निर्माण करने तथा अनेक मादाओं द्वारा अपनी जैसी कुशल संतान की उत्पत्ति करना अतिजीविता के लिए अधिक प्रभावी हो सकता है। इसमें क्या आश्चर्य कि विश्व में बहुलतम पक्षी एक बुनकर ही है–Red-billed Quelea *(Quelea quelea)* जो अफ्रीका के अधिकांश क्षेत्रों को आबाद करता है।

लाल मुनियां Red Munia Or Avadavat

1964. *Estrilda amandava a.*

कद : गौरैया, 10 सेमी.; आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : *लाल मुनियां,* तेलिया मुनियां; **बंग्ला :** लाल, *लाल मुनियां;* **तेलुगु :** टोड़ा जिनुवयि; **संस्कृत :** परोष्णी, लटवा, सुनार कलविक, सेव्य, पुष्पभूषी, चटिका, पुत्रिका।

पहचान : प्रजनन : नर : मुख्यतया शोण; पंख प्रगाढ़ कत्थई जिन पर थोड़े-से छोटे सफेद छींटे; पीठ पर जैतूनी छाया। पूंछ तथा निचला उदर कत्थई; बाजू पर सफेद छींटे। **ग्रहण** के समय उसकी पोशाक धूसर-भूरी होती है जिसमें लाल धब्बे होते हैं। पूंछ गोलाकार होती है। **नर** तथा **मादा** दोनों की चोंच लाल होती है। **मादा** का रंग जैतूनी-भूरा और कटि लाल होती है।

कितना प्यारा नाम है। संस्कृत साहित्य में इनका एक नाम 'पुत्रिका' है। हिंदी में नर को केवल **लाल** (प्रिय बेटा) तथा मादा को केवल **'मुनियां'** (मुन्नी—प्यारी बिटिया) कहते हैं। हमारे पूर्वज पक्षियों से कितना प्रेम करते थे। **'परोष्णी'** का अर्थ है बिंदुकित। **लटवा** के तीन अर्थ हैं—केसरिया संगीत वाद्य, नर्तकी। लाल मुनियां के लिए तीनों अर्थ सटीक हैं और हमारे पूर्वजों की सूक्ष्मदर्शिता बतलाते हैं। 'सुनाल' तथा 'सेव्य' पानी के पास उगने वाली घासों के नाम हैं जिनमें लाल मुनियां घोंसले बनाती हैं तथा **सेव्य** का एक अर्थ है लालन करने योग्य। लोग एक ही पिंजड़े में 8-10 लाल मुनियां पालते हैं। ये एक साथ न गाकर, एक के बाद एक क्रम से गाती हैं, इसलिए इनका गाना 'खिचड़ी' न होकर शुद्ध रूप में लंबे समय तक सुनने को मिलता है। ये एक पंक्ति में बैठकर सोती हैं तथा इनको पंक्ति के खुले छोर पर बैठना अच्छा नहीं लगता, इसलिए किनारे वाली लाल मुनियां बीच में बैठने का प्रयत्न करती है और यह क्रम देर तक चलता रहता है इसलिए इनका पिंजड़ा विशेष ढंग से बनवाया जाना चाहिए जिससे कि बैठने वाली डंडी के छोरों पर पिंजड़े का हिस्सा ढका हो। इनकी पंक्ति प्रियता को देखकर ही महाकवि सूरदास ने लिखा था, "मनु लाल मुनियां की पांती पिंजर दूरि चली।"

लाल मुनियां हिमालय (2,000 मी. से ऊपर), और शायद पूर्वी तथा केरल तट छोड़कर, थार सहित सारे भारत को **आबाद** करती है। इसे दलदली नरकुल, गन्ने के खेत, झील आदि के किनारे ऊंची घास वाले स्थल अधिक पसंद हैं। इसका मुख्य **आहार** घास के बीज हैं।

प्रजनन : इसका **प्रजननकाल** भारत में वर्षा के साथ बंधा हुआ है। नर-मादा **घोंसला** घास के गोले-सा बनाते हैं, या अक्सर फूलदार घास का बेलनाकार जिसका

प्रवेश द्वार बाजू में एक छेद जैसा होता है। घोंसले में नरम घास, सेवार आदि घासों या फूलों के रेशमी या कपासी लोमक, पंख आदि बिछाकर उसे नरम बनाते हैं। तालाबों, झरनों, नहरों आदि के किनारे कंटीली झाड़ियों पर नीचे की ओर तथा कभी कभी जल में डूबे सेवारों के बीच घोंसले बनाते हैं। एक खेप में मादा 6-10 अंडे देती है, इसका अर्थ हुआ कि इसके अंडों से पंछी तक के विकास में बहुत अधिक **खतरे** हैं। अंडों का आमाप 14 x 11 मिमी. होता है। खतरा इसलिए भी अधिक है कि ये अपने घोंसले जमीन पर, झाड़ी के नीचे बनाती हैं। जब मादा अंडे सेती है तब अक्सर नर घोंसले की मरम्मत करता है।

इसकी चचेरी बहन (या, भाई 'हरा लाल') 'हरी मुनियां' (Estrilda formosa) है जो यमुना तथा साबरमती के दक्षिण में तथा गोदावरी के उत्तर में इन्हीं के साथ रहती हैं। इसकी लाल चोंच इसके हरे रंग पर एक फूल के समान सुंदर दिखती है। यह जोड़ों या समूहों में अन्य मुनियांओं के संग झुंड में रहती है।

(कत्था/चूना) नुकीली मुनियां **Whitethroated Munia**

1966. *Lonchura malabarica m.*

कद : गौरैया, 10 सेमी.; आवासी

स्थानीय नाम : हिंदी : चड़चड़ा, चड़गा, चिड़क्का, पिद्दा, पिदड़ी, सफेद **मुनियां; गुजराती :** पवई, *मुनिया,* **बंग्ला :** पिदुरी, सॅर *मुनियां;* **तेलुगु :** जिनुवयी, **मलयालम :** कायलट्ट; **संस्कृत :** पिरिली, चटिका, पुत्रिका।

पहचान : हल्की **कत्थई** पीठ; प्राथमिक पंख, माथा तथा पूंछ प्रगाढ़ कत्थई; नोकदार पूंछ; चोंच नुकीली, मोटी और छोटी तथा इस्पाती नीली; कल्ला तथा कटि **सफेद।** नीचे हल्की कत्थाभा लिए सफेद; **नर-मादा** एक समान।

मुनियां, पुत्रिका जैसे पक्षियों के अति प्रिय नाम जो भारतीय भाषाओं में खूब मिलते हैं वे हमारा पक्षियों से गहरा आत्मिक संबंध बतलाते हैं। क्या विश्व की अन्य भाषाओं में, जिन पर भारतीय संस्कृति का प्रभाव नहीं पड़ा है, ऐसे नाम मिलते हैं ?

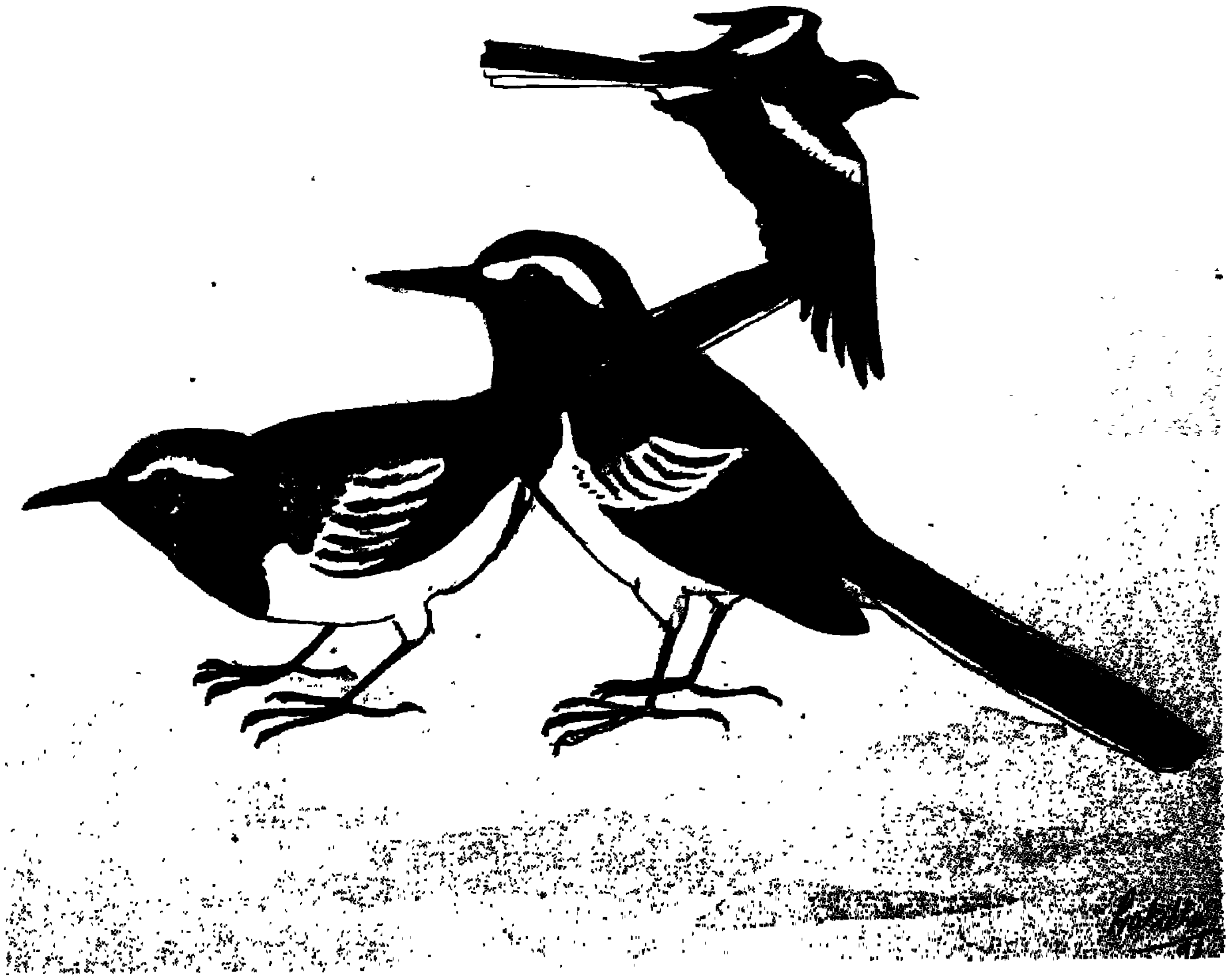
मुनियां बया तथा गौरैया से छोटी होती है किंतु उनके **घोंसलों** पर यह अक्सर कब्जा कर लेती है और कभी कभी गौरैया के घोंसलों में उनके अंडों के साथ इसके अंडे पाए गए हैं यद्यपि यह स्वभाव से अंडों के सेने के लिए **परजीवी** नहीं है। शावक पालन के पश्चात बया के त्यक्त घोंसलों का सामूहिक शयनागार के समान उपयोग करती है।

मुनियां मुख्यतया घास आदि के बीज **खाती** है और कभी मकरंद पान भी

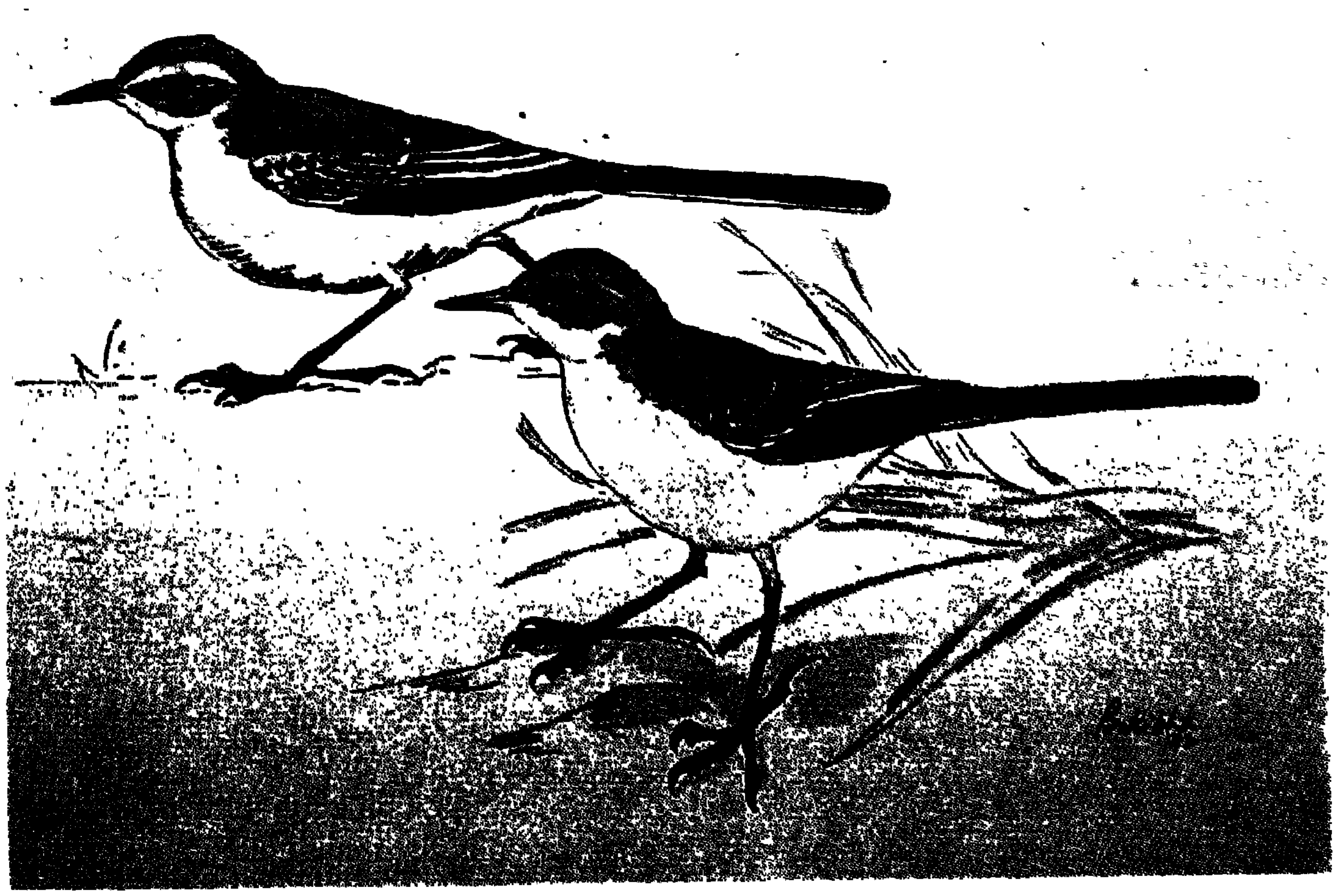
करती है। इसलिए घास के मैदान, खेत, बबूल आदि के जंगल इसकी प्रिय **रिहाइशें** हैं। इसे शुष्क जलवायु अधिक पसंद है इसलिए उत्तर-पूर्वी भारत में यह नहीं पाई जाती। यह झुंडों में, बाड़ों पर, उनके पास की जमीनों पर, बैलगाड़ियों की लीक पर अक्सर दिख जाती है।

प्रजननकाल : पंजाब में जुलाई-सितंबर; मध्य भारत में जनवरी-मार्च; हैदराबादी क्षेत्र में सितंबर-नवंबर; केरल में दिसंबर-मई तथा श्रीलंका में दिसंबर-मार्च। इसका **घोंसला** घास का बनता है जो बाहर से बेतरतीब दिखता है किंतु अंदर उसमें घास के फूल, कपास, पक्षियों के पंख आदि बिछे रहते हैं। अधिकतर कंटीली झाड़ियों में जमीन से 2-3 मीटर की ऊंचाई पर ये घोंसला बनाती हैं। मादा एक खेप में 4-8 सफेद अंडे देती है। (15.7 x 11.7 मिमी.) ऐसा लगता है कि नर-मादा दोनों सेने का काम करते हैं तथा घोंसले में दोनों ही एक साथ रात बिताते हैं। कभी कभार यह **गिद्ध और श्येन** के मोटे घोंसलों के बीच की टहनियों के भीतर अपना घोंसला बना लेती है और उनके 'साथ' ही रहती हैं। इस कार्य को इसकी हिम्मत कहें या दिया तले अंधेरा कहें, या आम तौर पर छोटे पक्षियों को खाने वाले श्येन के साथ 'संकर्मी' मित्रता कहें—आश्चर्य तथा शोध का विषय है।

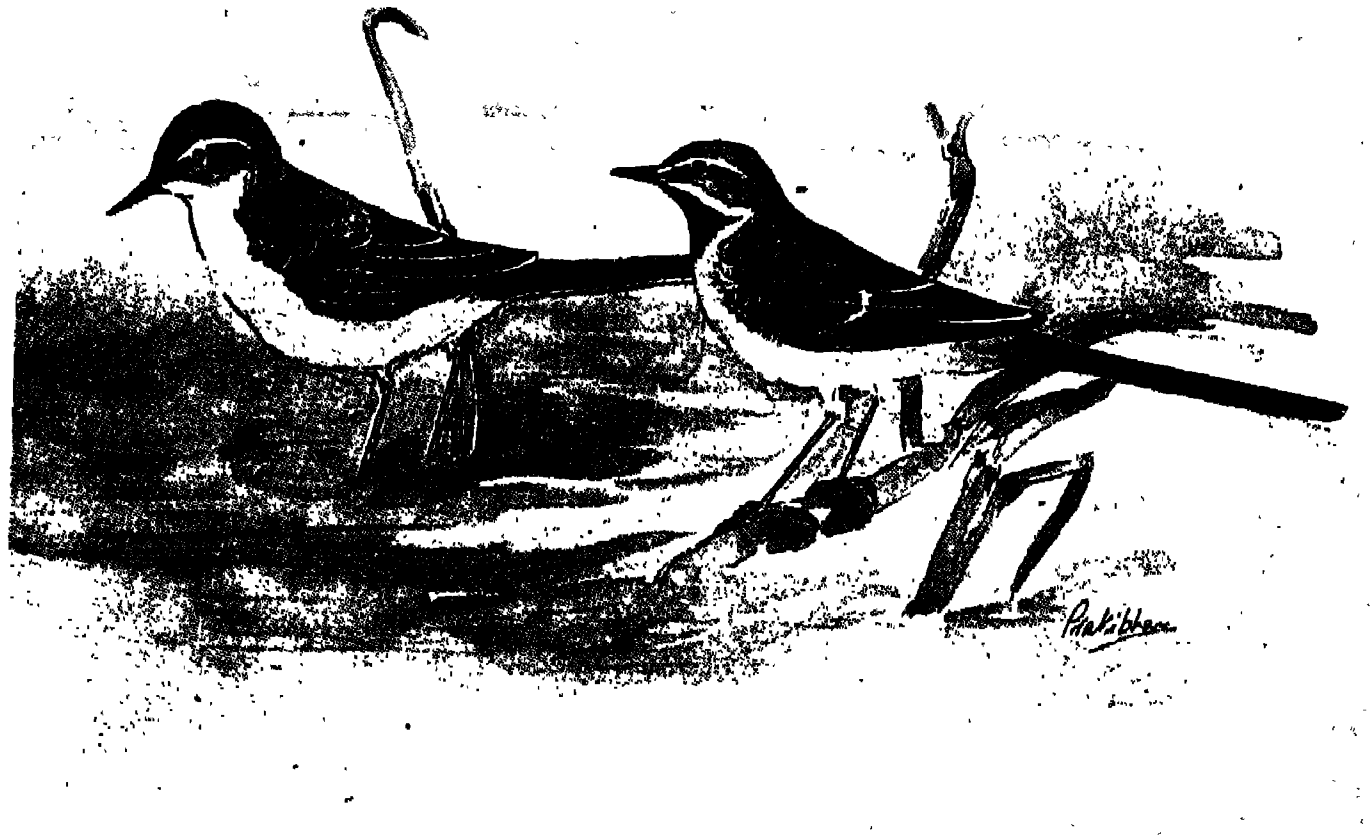
इसके **बोल** 'चिप, चिर्प'-सी आवाज में चहचहाना तथा कभी हल्की-सी सीटी। यह श्रीलंका, दक्षिणी पाकिस्तान तथा ईरान और दक्षिण पूर्वी सऊदी अरेबिया को भी **आबाद** करती है; तथा इसकी कुछ सगी बहनें मध्य अफ्रीका को। इसी के वंश की चचेरी बहन है (दक्खिनी) सितकटि मुनियां (Whitebacked Munia) जिसकी तीन सगी बहनें और हैं जो भारत को सुंदरता प्रदान करती हैं—एक है पूर्वांचली, एक अंडमानी, और एक निकोबारी।



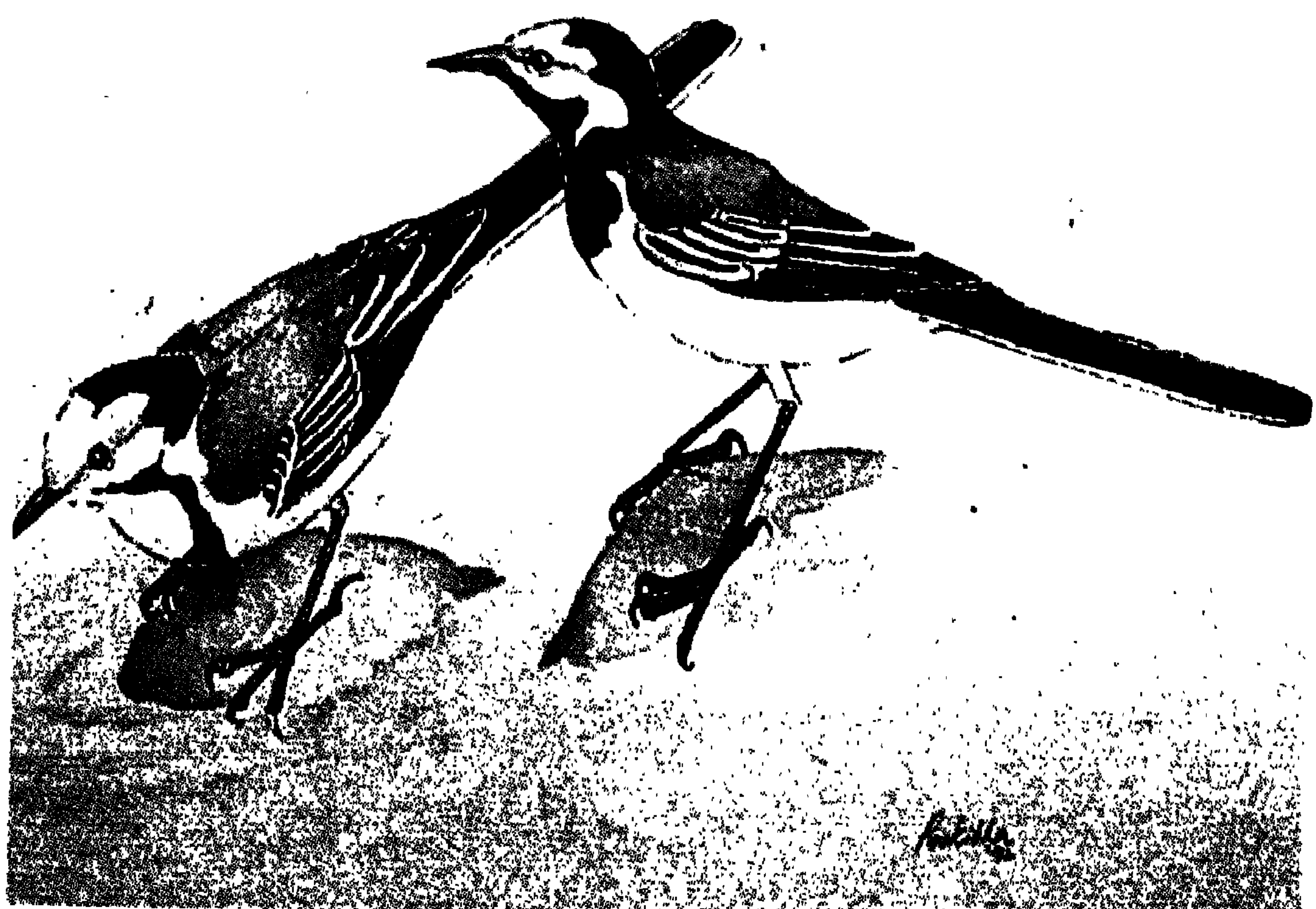
49 क – सितोदर काला खंजन (1891)



49 ख – भस्मी शिखर पीलकिया (1876)

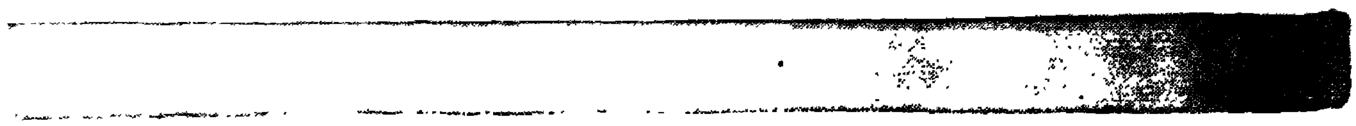


50 क – कलकंठी मेघा पीलकिया (1884)



50 ख – भस्मी/सित खंजन (1885)

कांस्य (bronze)—हल्की तांबई चंदनी आभा लिए चकमदार सफेद
(1957)



शोण (crimson)—जांबुकी आभा लिए चमकदार हल्का लोहित
(1119), (1964)



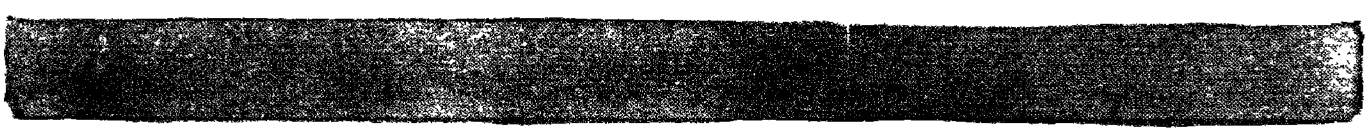
शोण (crimson)—जांबुकी आभा लिए चमकदार गाढ़ा लोहित
(366), (463), (792), (1127)



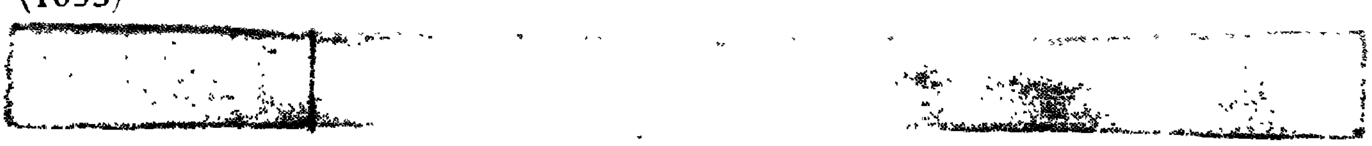
लोहित (blood)— लहू के समान लाल
(323), (1461)



मरून (maroon)—कत्थई आभा लिए गाढ़ा लोहित



पलाश (Flame of the forest)—चमकदार, लाल आभा लिए नारंगी
(1093)



पाटल (Rufous)—भूरी आभा लिए लाल
(1093), (1671)



तांबई (copper)—हल्की पीली आभा लिए शोण; तांबे समान
(1258)



ईंगुरी (vermilion)—नारंगी आभा लिए लोहित



केसरी (Saffron)—भूरी आभा लिए नारंगी; कुमकुम
(138), (723), (946), (1008)



सिंदूरी (scarlet, vermilion)—नारंगी आभा लिए शोण
(549), (940)



नारंगी (orange)—बराबर-बराबर लाल पीला मिला हुआ



मड्क (ferruginous)—मारच या जगसा; कलौंछ-भूरी आभा लिए कस
(940), (1535)



कपिल (rufous)—भूरी आभा लिए लाल
(1032), (1671)

[redacted]

बदामी (almond)—बादाम गिरी का रंग, नारंगी आभा लिए भूरा (90), (763)

[redacted]

भूरा (brown)—लाल, काला, पीला बराबरी से मिला हुआ (बभ्रु)
(133), (401), (541), (1262)

[redacted]

पांगर (chestnut)—कनोर; केसरी आभा लिए कत्थई
(5), (94), (105), (600)

[redacted]

कत्थई (catechu)—काकरेजी; प्रगाढ़ भूरा; कथ
(454), (736), (907), (1119)

[redacted]

कॉफी (Coffee)—कलौंछ भूरा
(912)

[redacted]

ललौंही पांगर (bay)—कथपांगर, ललपांगर, ललकथ
(940)

[redacted]

श्याव (Brownish black)—कत्थाभा काला
(185), (347), (401), (703)

पिंग (tawny)—हल्का पिंगल; गेहुंआं, हल्की लाल आभा लिए हल्का पीला
(907), (916) पिंगल-गाढ़ा पिंग

रेतीला (Sand)—बलुई, भूरी आभा लिए चंदनी
(899)

पांडु (buff)—पांडुर, भूरी आभा लिए हल्का पीला
(1258), (1535), (1876)

पुखराजी (topaz)—हल्की जांबुकी तथा कत्थाभा लिए पीला
(82)

चीकुई (Sepia)—लाल तथा कत्थाभा लिए पीला
(82), (763)

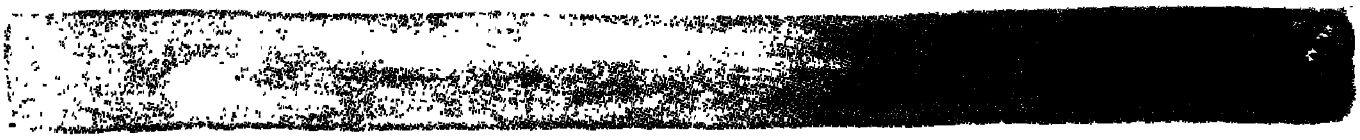
सुनहला (gold)—सोनल, स्वर्णिम, कुंदन, कंचन, स्वर्ण, सोन
(463), (792), (819), (1933)

नींबुई (Lemon)
(1844), (1876)

पिअरी (Turmeric)—हल्दी-सा
(1093)

खाकी (Khaki)—कंजई, मटिया, जमीन-सा; पीले हरे का लगभग बराबर का मिश्रण

धानी (virescent. verdure)—घासी, शाद्वली, धान-पत्ती-सा, कच्चा हरा
(792), (1935)



सुआपंखी (parrot)—तोतई, धानी से अधिक हरा
(549), (780)



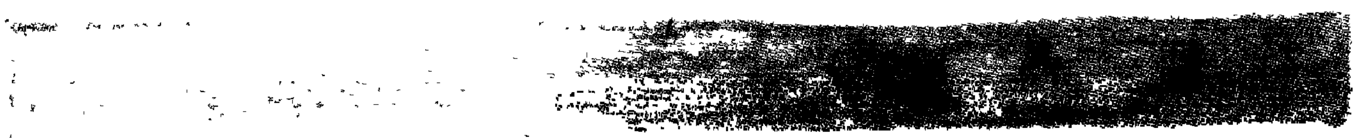
शमई (black with green tinge)—हरी आभा लिए काला
(52) (105)



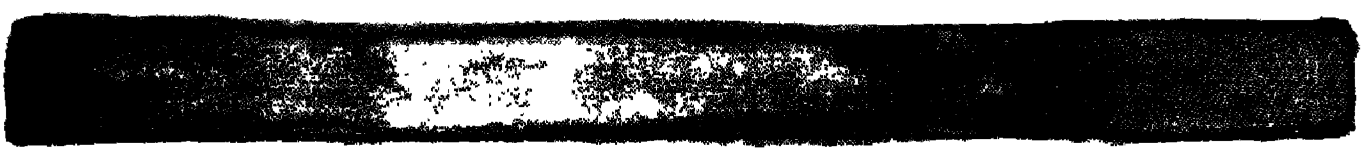
जैतूनी (olive)—जैतून की पत्तियों-सा नीली आभा लिए हरा
(401)



फीरोजा (turquoise)—फीरोजे-सा हरी आभा लिए चमकीला नीला
(311), (723), (750), (755)



तूतिया (blue vitriol)—नीलांजन, नीले थोथे-सा
(750)



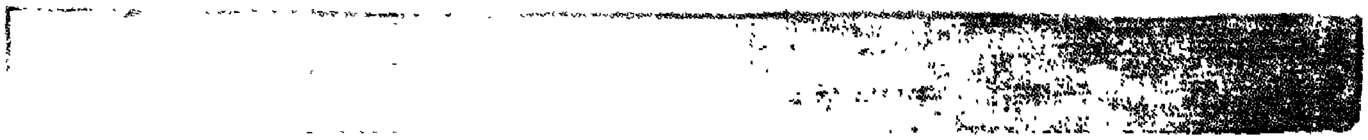
अरुण (down colours)—आसमानी नीली आभा लिए केसरी, नारंगी पाटल
(37), (541)



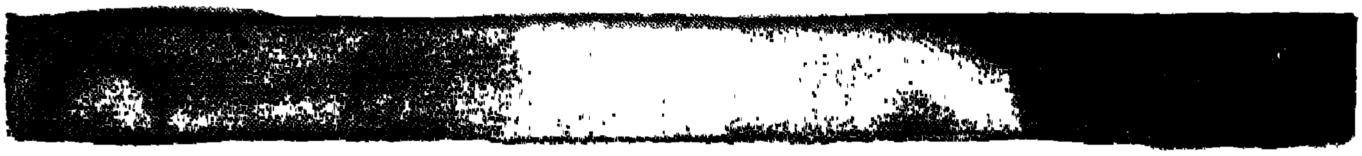
सलेटी (bluish dark grey)—नीली आभा लिए काला
(350), (1671), (1876)



अंजन (bluish grey)—गाढ़ा भस्मी
(36), (138), (940), (1515)



भस्मी (ash)–राख समान हल्की नीलाभा लिए सफेद
(940), (946) (1008), (1032)



जांबुकी (purple)–जामुन के गूदे का रंग, बैंगनी, हल्के और गाढ़े
(37)



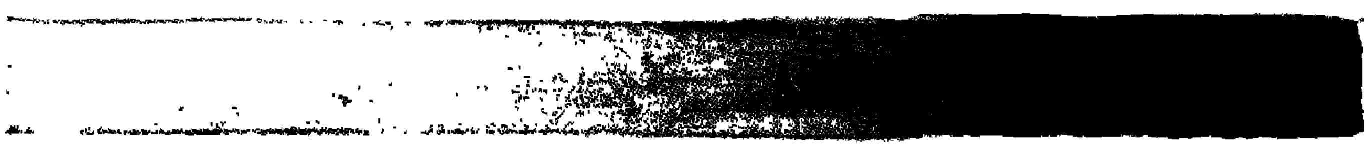
जामुनी (violet)–नीली आभा लिए गाढ़ा जांबुकी
(916), (1461), (1917)



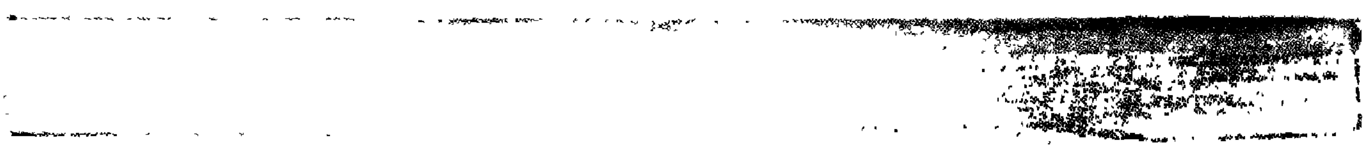
नीलक (lilac)–गुलाबी आभा लिए जांबुकी; नीलित
(534), (755), (541)



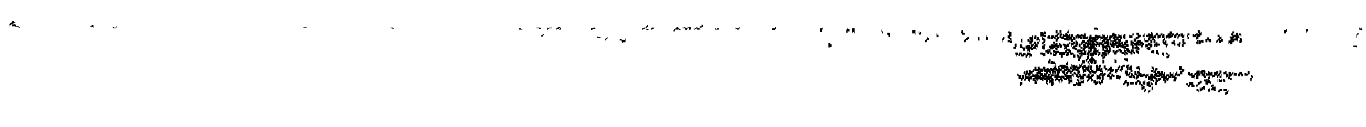
मेघ (rainy cloud, dark grey)–निचले वर्षाकारी बादलों का कालिमा वाला रंग (1884), (1515)



धूमिल (Smoky)–कजरारा, धुएं के समान काला, धूमर
(517), (1567), (1884)



कलौंछ (grey)–मैला सफेद; काला, सफेद मिला हुआ
(1661), (1567)



धूसर (off-white)–थोड़ा सफेद, हल्की भूरी, भस्मी, कलौंछ लिए सफेद
(1567), (1938)

संदर्भ पुस्तक सूची

(1) **हैंडबुक आफ द बर्ड्स आफ इंडिया एंड पाकिस्तान**—सालिम अली; आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस (ओ. यू. पी.)

(2) **ए पिक्टोरियल गाईड टू द बर्ड्स आफ द इंडियन सब-कांटिनेंट**—सालिम अली; बी. एन. एच. एस. एंड ओ. यू. पी.

(3) **भारत के पक्षी**—सालिम अली; हरियाणा साहित्य अकादमी परिषद

(4) **बर्ड्स इन संस्कृत लिटरेचर**—के. एन. दवे; मोतीलाल बनारसीदास

(5) **भारत के पक्षी**—राजेश्वरप्रसाद नारायण सिंह, प्रकाशन विभाग

(6) **बर्ड्स ऑफ इंडिया**—विक्रम ग्रेवाल; गाईड बुक कंपनी लि., हांगकांग

(7) **वाट्स दैट बर्ड ?**—कल्पवृक्ष, नयी दिल्ली

(8) **सिक्स्टी इंडियन बर्ड्स**—धर्मकुमार सिंह, प्रकाशन विभाग

(9) **कामन बर्डस ऑफ इंडिया**—डगलस डेवर; एन. बी. डी. पब्लि., नयी दिल्ली

(10) **हमारे परिचित पक्षी**—सालिम अली, लाइक़ फ़तेहअली; ने.बु.ट्र.

(11) **हंटर्स आफ द एयर**—एस. एम. उस्मान; डब्ल्यू. डब्ल्यू. एफ., इंडिया

(12) **बर्ड्स आफ द ट्रॉपिक्स**—एम. डी. इंग्लैंड; हैमलिन

(13) **हैंडगाईड टू द बर्ड्स आफ द इंडियन सब-कांटिनेंट**—मार्टिन वुडकाक; कौलिन्स

(14) **पक्षी निरीक्षण पुस्तिका**—बाल सुब्रमण्यम; पर्यावरण शिक्षण केंद्र, अहमदाबाद

(15) **वर्ल्ड बर्ड्स**—ब्रायन पी. मार्टिन; गिनैस

कुछ अन्य उपयोगी पुस्तकें

(1) **इंडियन हिल बर्ड्स**—सालिम अली; ओ. यू. पी.

(2) **ए गाइड टू द बर्ड्स आफ दिल्ली एरिया**—उषा गांगुली, नयी दिल्ली

(3) **द वाटरबर्ड सेंक्चुअरी आफ भरतपुर**—कैलाश संखल

(4) **ब्रीडिंग बर्ड्स आफ कश्मीर**—बेटस, आर. एस. पी. एंड ई. एच. एन.; ओ. यू. पी.

परिशिष्ट

तीन या अधिक भारतीय भाषाओं में
एक से नाम वाले पंछी

36.	(Heron) **अंजन**	हिंदी, बंग्ला, संस्कृत
44.	(Cattle Egret) **गौ पिंगला बक**	हिंदी, बंग्ला, संस्कृत
52.	(Night Heron) **वाक**	हिंदी, गुजराती, तमिल, संस्कृत
81.	(Goose) **हंस**	हिंदी, बंग्ला, असमिया, उड़िया, मराठी, गुजराती, सिंधी (हंज), संस्कृत
90.	(Shelduck) **चकवा**	हिंदी, बंग्ला (चाका); असमिया (चाकोई), मराठी, लद्दाखी, संस्कृत
91.	(Spotbilled duck) **वरमुखी**	हिंदी, बंग्ला, असमिया, संस्कृत
105.	(Shoveller) **खंतिया**	हिंदी, बंग्ला (खंतामुखी), असमिया, संस्कृत (खात)
133.	(Kite) **चील**	हिंदी, बंग्ला, असमिया(चिलन), संस्कृत (चिल्लन)
138.	(Shikra) **शिकरा**	हिंदी, मराठी, गुजराती (शिकरो), बंग्ला (शिकरे)
185.	(Vulture) **गिद्ध**	हिंदी, मराठी, गुजराती (गीध)
186.	(Egyption Vulture) **शकुंत**	हिंदी, बंग्ला, संस्कृत
236.	(Chukor) **चकोर**	हिंदी, मराठी, गुजराती, बंग्ला, चंबा (चकरू), तमिल तथा कश्मीरी (सकोर,) तेलुगु, संस्कृत
245.	(Partridge) **तीतर**	हिंदी, बंग्ला (तितिर), मराठी, सिंधी, संस्कृत (तित्तिर)
311.	(Peafowl) **मोर या मयूर**	हिंदी, बंग्ला, मराठी, गुजराती, असमिया,

		(मोइरा), सिंधी (मुर), संस्कृत
323.	(Sarus) **सारस क्रौंच**	हिंदी, मराठी, बंग्ला, गुजराती, संस्कृत
350.	(Common Coot) **दसरी**	हिंदी, तेलुगु, गुजराती (दसड़ि)
366.	(Lapwing) **टिटिहरी**	हिंदी, मराठी (टिटवी), गुजराती (टिटोड़ी), सिंधी (टिटिंचर), संस्कृत (टिट्टिभ)
454.	(Gull) **गंगचील**	हिंदी, बंग्ला, संस्कृत
503.	(Green Pigeon) **हरियल**	हिंदी, गुजराती (हरिल), संस्कृत (हरिताल)
517.	(Rock Pigeon) **पारावत**	हिंदी (पारावा), बंग्ला (पायरा), मराठी (पारवा), गुजराती (पारवुन), कन्नड़ (पारीवाल), मलयालम (प्रावु), संस्कृत
549.	(Parakeet) **तोता**	हिंदी, बंग्ला, असमिया, कश्मीरी, मलयालम (तत्ता)
570.	(Pied Cuckoo) **चातक**	हिंदी, मराठी, संस्कृत
590.	(Koel) **कोयल**	हिंदी, मलयालम (कुयिल), तमिल (कुयिल), मालदीवी, तेलुगु (कोविल), कन्नड़ (कोगिल), मराठी (कोकील), संस्कृत (कोकिल)
600.	(Coucal) **कुक्कुभ**	संस्कृत, असमिया (कुकुह), मराठी, (कुंभार) हिंदी, नेपाली, संस्कृत
703.	(Swift) **बतासी**	हिंदी, नेपाली, संस्कृत
723.	(King Fisher) **मछरंगा**	हिंदी, बंग्ला, संस्कृत (मत्स्य रंग)
736.	(King Fisher) **किलकिला**	हिंदी, कच्छ, गुजराती
750.	(Green Bee-eater) **पत्रिंगा**	हिंदी, मराठी (पतेरी), गुजराती
755.	(Indian Roller) **नीलकंठ**	हिंदी, बंग्ला, गुजराती, कश्मीरी, संस्कृत
780.	(Geen Barbet) **कुटुर्रू (बसंता)**	हिंदी (कोटुर), बंग्ला (बड़ा बसंता), मराठी (कुटुर्गा), कन्नड़ (कुटुर हक्की), मलयालम (कुटुर्रू वन), तमिल (कुटुर्रू कुक्कुरुवन) संस्कृत—कुटर्रू
792.	(Barbet) **बसंता**	हिंदी, बंग्ला तथा असमिया
899.	(Crested Lark) **चंडूल भरत**	हिंदी (चंडूल), गुजराती (चंडूल), संस्कृत (चूडाल), बंग्ला (भरत), मराठी (भरद्वाज)
907.	(Skylark) **अग्निकंठी कत्थई भरद्वाज**	हिंदी (अगिन जित्ता, भरत), मराठी, बंग्ला (झुंटी भरत), तेलुगु (भरत पिट्टा), संस्कृत
940.	(Shrike) **लटोरा**	हिंदी, गुजराती, बंग्ला
953.	(Oriole) **पीलक**	हिंदी, गुजराती, मराठी तथा संस्कृत

994.	(Myna) **मैना**	हिंदी, गुजराती, बंग्ला, मराठी, नेपाली, कन्नड़, तमिल, तेलुगु, मलयालम
1049.	(House Crow) **कलौंछ काक**	हिंदी, कश्मीरी (काव), गुजराती (कागड़ो), मराठी (कावला), बंग्ला, असमिया (काकसोरई), तेलुगु (मंची काकी), कन्नड़ (काग), तमिल (नल्ल काक), मलयालम (कोक्क), सिंधी (काण), कछारी, कचनागा (इन्रुईकाक), मणिपुरी (क्वाक), कुकी (वो काक), संस्कृत
1119.	(Bulbul) **बुलबुल**	हिंदी, गुजराती, बंग्ला, उर्दू, असमिया।
1535.	(Tailor Bird) **दर्जिन**	हिंदी, मराठी, गुजराती, (दर्जीड़ो)
1661.	(Magpie Robin) **दहियल**	हिंदी, बंग्ला, गुजराती (दैयड़) मराठी

अंग्रेजी नामों की सूची

5	Grebe	Little, or Dabchick
455	Gull	Black-headed
454		Brown-headed
36	Heron,	Grey
52		Night
42		Pond; Paddy Bird
37		Purple
763	Hoopoe,	European
767	Horn bill	Grey
1102	Iora	Marshall's
358	Jacana	Pheasant-tailed
962	King Crow	Black Drongo
719	Kingfisher	Lesser Pied
723		Little Blue
736		Whitebreasted
590	Koel	Indian
366	Lapwing	Redwattled
899	Lark	Crested
1661	Magpie Robin	
912	Martin	Plain Sand
1093	Minivet	Small
347	Moorhen	Indian
1964	Munia	Red
1966		Whitethroated
1008	Myna	Bank
994		Brahminy of Blackheaded
115	Nakta	
953	Oriole	Golden
650	Owlet	Spotted
42	Paddy Bird	Pond Heron
549	Parakeet	Roseringed
236	Partridge	Chukor
245		Grey
311	Peafowl	

503	Pigeon	Bengal Green
517		Blue Rock
93	Pintail	
1858	Pipit	Paddyfield
1671	Redstart	Black
1717	Robin	Indian
755	Roller	or Blue Jay
401	Sandpiper	Common
27	Shag	Indian
90	Shelduck	Ruddy
138	Shikra	
105	Shoveller	
940	Shrike	Baybacked
946		Rufousbacked
907	Skylark	Small
1938	Sparrow	House
72	Spoonbill	
97	Spotbill Duck	
997	Starling	
430	Stilt,	Blackwinged
60	Stork	Painted
916	Swallow	
703	Swift	House
1535	Tailor Bird	
94	Teal	Common
463	Tern	River
1032	Treepie	
186	Vulture	Egyptian
185		Whitebacked
1876	Wagtail	Blueheaded Yellow
1884		Grey
1891		Large Pied
1885		White
343	Waterhen	Whitebreasted

1933	White-eye	
1567	Whitethroat	Lesser
819	Woodpeker	Goldenbacked
847		Yellowfronted Pied
1515	Wren-warbler	Ashy

हिंदी नामों की सूची

912	चटी	दुग्धोदर कॉफी
1858	चर्चरी	कथ/सित पिंजर
570	चातक	कल/सित (शिखी)
72	चिमटा चंचु	(शराटी)
133	चील	दुशाखी कत्थ
28	जलकाक	सितठोड़ी (छोटा)
27	जलकाक	सितकर्ण
358	जलमंजुर	पुच्छल
347	जलमुर्गी	सितकिनार (श्याव)
366	टिटिहरी	ललमुंही
245	तीतर	(कथ/पिंग) जाल
549	तोता	ललकलकंठी
1671	थिरथरा	कथपंख कल
1535	दर्जिन	धुज धानी
343	दवाक	कल/सित
350	दसरी	तिलक
1661	दहियल	सितोदर काला
767	धनेश	कलनक श्याव
115	नकटा	कल/सित
755	नीलकंठ	पाटलग्रीव
534	पंडुक	कलकंधर नीलक
541		नीलकसिर पाटल
750	पत्रिंगा	पिंग/तूतिया
94	पांगरसिर हरिताक्षी	
517	पारावत	(दुपट्टी) धूमिल
44	पिंगला	गौ
953	पीलक	कलपंखी
1884	पीलकिया	कलकंठी मेघा
1876		भस्मीशिखर
1032	पुच्छलकाक	कपिल
763	पुत्रप्रिय	बदामी शेखर
650	पैंचा	चीतल सितकंठी
1515	फुटकी	मेघ/केसर
49	बगला	कलचंचु शिखी

703	बतासी	(सितकटिकंठ) वर्गपूंछ
1957	बया	कथकंठ सोनल
792	बसंता	सोनकंठ तम्हेरा
780		ललौंछ हरा कुटरू
1119	बुलबुल	कनेरा
1127		गुलदुम
899	भरत	बलुइ चंडूल
907	भरद्वाज	कत्थ/अगिन
916	भांडीक	पिंगोदर जमुनकंठ
962	भुजंगा	दुशाखी काला
723	मछरंगा	नील/केसर
60	महाबक	केसरमुखी
1461	माखीखोर	दूधराज
1966	मुनियां	(कत्था/चूना) नुकीली
1964		लाल
1008	मैना	केसराक्षी गंग-
997		(तारक) तेलन
994		ब्राह्मणी
311	मोर (मयूर)	
430	लमगोड़ा	कल/सित
946	लटोरा	केसरिया
940		(सिद्युति) ललकथपीठ
97	वरमुखी	हंसक
52	(वाक)	कल/सित चंद्र-
1093	(विस्फुलिंग)	हल्दी कुमकुम
1917	शकरखोरा	जामुनी
186	शकुंत	पांडु-सित
138	शिकरा	मेघ/केसरी
1102	शोबिगी	सोनकालर
1717	श्यामा	(कथ) सुकंधी
1262	सतभाई	जंगली (भूरा)
1258		सितकिनार (भूरा)
323	सारस	लोहितसिरी (क्रौंच)
401	सिकतार	(कथ/सित) चंद्रकंधी

1567	सितकंठी	धूमिल
1933	सिताक्षी	कंचन/सित
93	सींकपर	
82	हंस	दुपट्टी (सितसिर)
81		ललचंचु कथाली
105	हंसक	खंतिया
115		नकटा कल/सित
94		पांगरसिर हरिताक्षी
90		बदामी चकवा
97		वरमुखी
93		सींकपर
503	हरियल	(भस्मोदर) सोनकंठा

सामान्य शब्दावली

अंकुड़ी	90 अंश कोण या अधिक मुड़ी हुई नोकदार चोंच या कांटा; hook
अंग	शरीर के मुख्य भाग या अवयव; organs of a body
अंगद	बांह पर धारण करने वाले आभूषण; बाजूबंद; केयूर
अंगु	एक प्रकार का हिमालयी वृक्ष; ash tree
अंडा	चपटा गोल-सा पिंड जिसमें से सांप, मछली, पक्षी, कीट आदि के बच्चे निकलते हैं; कोष; अंडम्; अंड
अंडाकार	अंडे सरीखा दीर्घवृत्तीय आकार; इस पिंड के दो अक्षों के माप, वृत्त की अपेक्षा, अलग होते हैं; Eggshape, ellipsoidal
अंडा-सेना	पक्षियों का घोंसले में अंडों पर बैठकर उन्हें गरमी पहुंचाना, ऊष्मायन; incubation
अंडी	एरंड या रेंड का वृक्ष जिसके बीजों से जुलाबदायक तेल निकलता है; castor
अंडैल	वह मादा पक्षी या सरीसृप जिसके पेट में अंडे हों; a female about to lay eggs
अंतरीय	कमर के नीचे पहनने वाले वस्त्र; परिधान
अंबुधि	गभीर सागर संबंधी; pelagic
अखरोट	एक हिमालयी वृक्ष जिसके बीज में मस्तिष्क के आकार का गूदा होता है; सूखे मेवे का एक प्रकार; walnut
अगाड़ी	अग्रग, सामने की, आगे की, अग्रणी; Frontal
अग्रग	सामने की, अगाड़ी, अग्रणी; leading
अतिजीविता	विकास में बढ़त (जाति के); survival
अधः	नीचे का
अधि	बड़ा या ऊपर का
अनु	अनुसरण करते हुए; छोटा; उसी दिशा में; नीचे का
अनुदैर्घ्य	लंबाई या गति की दिशा में; longitudinal
अनूप	दलदल; पंक; पानी से भरा; swamp

अभिडीन	आरंभ की उड़ान
अवतरण	ऊपर से उड़ते हुए जमीन या पानी पर उतरने की क्रिया; landing
अभिसारी	विभिन्न दिशाओं से चलकर एक ही दिशा में आना; Convergece
अवडीन	नीचे की ओर उड़ान
अविडीन	पक्षियों की सीधी और सामने की ओर उड़ान
आनुरूप्य	अनुरूपता; सादृश्य; **समरूपी;** camouflage
आम	पीले गूदेदार स्वादिष्ट फल का वृक्ष; Magnifera indica
आवरण	ओढ़नी, ढक्कन, चादर, **छाद;** cover. coverts
इल्ली	सूंडी; कुछ कीटों के डिंभ (वयस्क पूर्व स्थिति) जो अपना पोषण स्वयं करते हैं; झिनगा; caterpillar, larva, grub
उड्डयन	ऊपर की ओर उड़ना, **उड्डीन**
उत्तमांग	ग्रीवा तथा सिर
उत्तरीय	कमर के ऊपर पहने जाने वाले वस्त्र; प्रावार
उत्प्लावकता	तरल (जैसे पानी) में डूबने उतराने के बल पर जिस बल से वह ऊपर फेंकता है; buoyancy
उपरितरण	जमीन या पानी से उठकर उड़ने की क्रिया; take-off
उपरि	ऊपर वाला या स्थित; upper. above
ऊष्मायन	पक्षियों द्वारा अपने अंडों पर बैठकर (या मशीन द्वारा) गरम रखना; incubation
एकचर	एकल; अकेला रहने वाला
एता	हरिण के समान कुलांचे वाली चाल; लहरियेदार उड़ान
एषणी	छानबीन करने वाली; Probing
कंबु	एक प्रकार का मृदु कवची; शंबुक; slug
कक्ष	कांख; axil armpit
कच्छ	नीची जमीन जिसमें नदी, सागर का पानी भर जाता है; उथला दलदल; marsh
कथाली	कत्थई रेखाएं
कनोर	पांगर वृक्ष जिसके बीज का रंग केसरिया आभा लिये कत्थई हो; chestnut
करंज	चमकदार हरी पत्तियोंवाला वृक्ष जिसके बीज से तेल निकाला जाता है; beech, pongamia
करंड	एक तरह की चमेली, करड़; capparis aphyla
करिमोली	चिनार के समान पत्तियों वाला समशीतोष्ण जलवायु वाला वृक्ष; maple

कल	काले का समासगत रूप; black
कलांकुर	सारस; sarus crane
कलाविक	मुर्गा, कृकवाकु, कुक्कुट; towl
कलियाना	पक्षियों में नये पंख निकलना; to bud
कवचधारी	वल्कली, परुष कवची; कठोर खोल वाले केंकड़े जैसे प्राणी; crustacea
कशेरुकी (संघ)	रीढ़ की हड्डी वाले प्राणी; vertebrate; vertebrata (Phylum)
कषीका	ऊपर मुड़ी हुई वक्र (हल के समान) चोंच; कुसिया; like a plough
कांडी	एक प्रकार का पौधा; prosopis specigera
काकारि	काक का अरि (शत्रु) अर्थात उल्लू
किंशुक	पलाश, टेसू; flame of the forest
कीकर	बबूल; A. nilotica सूखी जलवायु में उगने वाला कांटेदार वृक्ष; Acacia arabica
कुल	कुछ कुछ समान वंशों का समूह; family
कृमि	छोटे कीड़े; worm
क्रमांकित	क्रम से बड़े (चौड़े) से छोटे (संकरे) होते हुए या विलोम; graduated
केलिकंदब	एक प्रकार का पौधा; Stephegyne parvitlora
कोशित कीट	कोये (एक प्रकार का खोल) में बंद कीड़ा (यथा रेशम), शंखी; Pupa
कैल	एक प्रकार का चीड़; (पीताभा लिए मेघ का रंग); pine
क्षैतिज	क्षितिज के अनुरूप, अक्ष, आड़ी; horizontal
खग	पक्षी, खेचर; (आकाश में गमन करने वाले); bird
खांचेदार	खचित; notched
खुंटही	खूंटे या ठूंठ के समान; stumpy
खैर	कत्था, खदिर; catechu
खौंता	नीड़, घोंसला; nest
गंग	गंगा, नदी या पानी से संबंधित; गांग; bank
गगन	आकाश; sky
गण	प्राणियों के वर्गीकरण में एक खंड जो वर्ग के नीचे तथा कुल के ऊपर है, कुछ कुछ समान कुलों से मिलकर बना समूह; order
गरान	नदी के मुख के दलदली हिस्से के वन; mangrove
गार्जेट	वक्ष, कंठ, कपोल इत्यादि को घेरे में डालने वाला मोटा गोल-सा निशान; gorget

गुबरैला	भृंग, भौंरा, फूंगा; beetle eg coleoptera
गुरुपिच्छ	देहपिच्छ; pennae
गुल्म	बिना तने का पौधा; thicket
गूलर	जंगली अंजीर; sycamore, ficus glomerata
ग्रहणकाल	प्रजननकाल के बाहर का समय; non breeding season, eclips
घासवल्गी	चिड्डे के समान, घास के रंग का, घास पर मिलने वाला कीट; grasshopper
घुन	गेहूं आदि अनाज में लगने वाला छोटा-सा कीड़ा; weevil
घोंघा	मृदुकवची जल जंतु; शंबुक; snail
चलनी	छलनी, छत्री, उदाहरण—आटा चालने की छत्री; strainer, filter
चाड़ी	कीप, चुंगी; funnel
चित्तीदार	अधिकतर सफेद धब्बों वाली सतह, अंकित; speckled
चित्राम	चित्र में अनेक बार दुहराई गई रेखाएं या आकृतियां; pattern
चिरम्भण	चील के तेज बोल 'चिल ल ल' के समान आवाज
चूर	बड़ी चौड़ी नदियों के द्वीप
चूषक	मकरंद चूसने वाला; रस निकालने वाला; nectar feeding
चौड़	पहाड़ी नदियों का चौड़ा रेतीला पाट
छद्मावरण	ऐसा रंग रूप जो पृष्ठभूमि में छिप-सा जाये, एकरूप, **समरूप**; समावरण; camouflage
छाद	ढांकने वाली वस्तु, (फूस का) छप्पर; cover, coverts
छायारूप	तीव्र प्रकाश की पृष्ठभूमि में किसी की दिखने वाली छाया-सी आकृति; silhouette
जगत	वनस्पति जगत; प्राणि जगत; जीव जगत; animal kingdom
जलग	उथले पानी में चलने वाले पक्षी; waders
जलरंग	पानी के लिए नाचने गाने वाला; sandpipers
जसंवगकुवंजा	जगत, संघ, वर्ग, गण, कुल, वंश तथा जाति; Kingdom, phylum. class, order, genus and species
जलाक्रांत	जल से घिरा तथा डूबा हुआ; water logged
जाति	वे पक्षी जो आपस में न केवल बहुत समान हैं वरन प्रजनन भी कर सकते हैं। वर्गीकरण में वंश के नीचे वाला खंड; species
जुगालीकृत	एक बार खाकर आधा पचाया भोजन जिसे पक्षी निकालकर अपने शावकों को खिलाते हैं; regurgitated
झम्पाशी	(आहार के लिए) गोता लगाने वाला, जैसे कौड़ियाला
झींगा	छोटा लमपूंछा कठोर कवची जीव; prawn, Palaemon serratus

झींगुर	झिल्लीक, जंगलों में अपनी टांगों की रगड़ से लगातार आवाज पैदा करने वाले वृक्षवासी जीव (कीट); cricket, Gryllidae family
झाउ	पानी के पास उगने वाली झाड़ियों का एक प्रकार; tamarisk
झिनगा	इल्ली; caterpillar
झिरि	झिरिका, भृंग, झींगुर, घास वल्गी आदि के लिए सामान्य नाम
टंक	छैनी, कुल्हाड़ी के लोहे के फल के आकार का उपकरण; wedge
टंकाकार	फन्नी; टंक के आकार का, उदाहरण–'सलेटी/केसर फुटकी' की पूंछ, 'धनेश' की पूंछ।
टिड्डा	टीड़ी, शलभ की जाति का भयंकर विनाशकारी कीट; locust
ठाठल	मांसल लटकने वाला उपांग; मांसल पालि; wattle; ललमुंही टिटिहरी के मुख पर लाल ठाठल; सोनकर्णी जामुनी मैना के कनपटी पर सोनल ठाठल
डयन	उड़ान, उड़ने की क्रिया
डांस	भुनगा, दंशक; gnat
डिंब	अंडा; egg
डिंभ	डिम्भक; इल्ली; झिनगा; larva. caterpillar
डीन	पक्षियों की उड़ान
डैन	परन
ताड़	सुपारी, नारियल, खजूर इत्यादि के वृक्ष; Palm
तृतीयक	तीसरा हिस्सा; पक्षियों के पंख के बाजू के पास वले पंख; tertiaries
त्रोटि	बीज तोड़ने वाली चोंच; तोते, कुलिंग के समान चोंच; nut cracking beak
दालचीनी	दारचीनी; इस वृक्ष की भीतरी छाल जो मसाले का काम करती है; cinnamon
दुशाख	एक शाखा जहां दो शाखाओं में फूटती है, द्विशाखी; दुपूंछी; fork
द्वाभा	गोधूलि बेला, प्रातः तथा संध्याकाल; उषाकाल; twilight; crepuscular
द्विकपाटी	सीपी के अंदर रहने वाले समुद्री प्राणी; शुक्ति; bivalve; oyster
द्वितीयक	दूसरा, दूसरे हिस्से वाला; पक्षियों के पंख के प्राथमिक तथा तृतीयक के बीच वाले पंख; secondaries
देवादारु	हिमालयी शकु वृक्ष की एक भव्य जाति; a kind of ceder.
द्युति	हंसों तथा हंसकों की केहुनि पर विशिष्ट, चमकदार, रंगीन पिच्छ; mirror; speculum

धारारेखी	ऐसा आकार जो हवा या पानी में चलने पर सबसे कम कर्षण; drag) उत्पन्न करे; धारा में सबसे कम गतिरोध करने वाला; streamlined
धारीदार	जिसमें धारियां हों; रेखा तथा पट्टी के बीच की मुटाई वाली धारियां; streaks
ध्वज (धुज)	पताका, झंडा, झंडे का डंडा या कपड़ा, धुज; धुजा flag, mast.
धोरण	उड़ान में पक्षियों का विन्यास; विरचन; flying formation
नकनकाना	नाक से आवाज निकालना; nasal voice or tone
नरकुल	सरकंडा, सेवार, सिवार, शैवाल, वलीक; water reeds; bulrush
निम्नांग	निचले शरीर के अंग; पेट, कमर, पूंछ, पैर; lower body
निर्मोचन	पुराने पंखों का गिरना; moulting
निलंबी	लटकने वाली; pendant
निवेशिका	अत्यंत सकरी समुद्री खाड़ी; creek
निष्पत्रण	पत्तों का अस्वस्थ होना या झड़ना, ऐसा करने वाले कीट या रसायन; defoliation
नीड़शावक	घोंसले से न निकल सकने योग्य शावक; nestling
नीम	स्वास्थ्य के लिए उपयोगी वृक्ष; neem *(Melia azadirachta)*
नेत्रवलय	आंख के चारों ओर का साफ दिखने वाला वृत्त; eye-ring
नेत्रिका	आंख से संबंधित; नेत्री
पंक	कीचड़, दलदल; bog, swamp
पंकनटिनी	दलदल में पाई जाने वाली विशेष मछली; mud skipper; neola
पकड़दार	पकड़ सकने की योग्य (यथा पंजों से डाल); catching ability
पक्षीवर्ग	सत्ताइस पक्षीगणों से मिलकर बना 'पक्षीवर्ग'; Aves
पक्षीसमूह	दल, झुंड, व्यूह, धोरण, वर्ग, कुल, यूथ, गण, संघ, राशि; Covey,flight, formation
पट्टित	पट्टीदार; striped
पताका	झंडा; लहराने वाली लंबी चीज; Flag, racket
पराडीन	दूसरी ओर उड़ना, दूर उड़ना
परिडीन	गोल चक्कर में उड़ना; circling flight
परिप्लावी	हमेशा जल के साथ रहने वाला
परुष	कठोर, बिंदुकित, खुरदरा; hard, spotted, rough
पश्च	पीछे का, बाद में आने वाला; trailing, towards back
पश्चग	पीछे रहने वाली, बाद में आने वाला
पश्चग कोर	पंख की पीछे वाली किनार; trailing edge

पश्चजल	ज्वार से निचली जमीन में भर जाने वाला जल; back waters
पार्श्वीय	चौड़ाई या गहराई की दिशा में, बाजू का; lateral, tank
पालि	ठाठल लटकने वाला मोटा नरम मांसल अवयव जैसे निचला कान; lobe, wattle.
पिछाड़ी	पक्षी के शरीर का पिछला हिस्सा—कमर, उपस्थ तथा पूंछ; rear
प्रवासी	वे पक्षी जो प्रजनन एक जलवायु क्षेत्र में करते हैं तथा ग्रहणकाल अन्य क्षेत्र में बिताते हैं, विशेषकर अन्य देश में; migratory
प्रकीर्णन	(विकिरण, फैलाना, रंगों को बांटकर फैलाना; dispersion,) scattering
प्रडीन	हंसों की-सी उड़ान, हर दिशा में उड़ना
प्रादेशिक	क्षेत्र पर अधिकार जमाने वाला; क्षेत्री; territorial
प्रोड्डीन	जो ऊपर उड़ गया हो; बगलों, बलाकाओं के समान उपरितरण करना
पीपल	मंदिरों के निकट पाया जाने वाला विशाल वृक्ष; pipal, ficus religiose
फन्नी	टंक, टंकाकार वस्तु, छैनी या कुल्हाड़ी जैसा आकार; wedge
फूंगा	भृंग, गुबरैला; beetle
बटवृक्ष	बरगद, लटकती जड़ों वाला विशाल वृक्ष; ficus indica
बबूल	सूखी जलवायु का कांटेदार वृक्ष, कीकर का भाई, Acacia nilotica
बांगुर	पंछियों को पकड़ने का जाल; net
बांज	हिमालयी वृक्षों की एक जाति का विशाल तथा मजबूत वृक्ष; oak, Quercus
बाजू	पार्श्व; lateral, flank
बृहत	अत्यंत विशाल, दीर्घ; giant, grand, major, mass, large, great
बृहत्तर	बृहत से बड़ा; larger
बैंगची	मेंढक के डिंभ; भेक डिंभ; tadpole
भुथरा	भौंथरा, जिसकी धार खराब हो गई हो; blunt
भृंग	गुबरैला, फूंगा; beetle
भ्रांत	रंगण; एक ही स्थान पर (बिंदु पर) उड़ना; भ्रांति; थरथराना; hover
भेक	मेंढक; frog
मंदन	उपापचय (metabolism) क्रिया का शिथिल होना किंतु दीर्घनिद्रा (hibernation) नहीं; (मरमर पक्षी अल्प समय के लिए कर लेते हैं); torpid
मकरंद	फूलों का रस; nectar

मक्खी	मक्षिका; दो पंख वाला छोटा उड़ने वाला सुलभ कीट; माखी; fly
मझला	बड़े से छोटा; मझोला; middle
मत्कुण	खटमल; bug
मशकाभ	छोटे भुनगे की जाति का कीट, विशेषकर chirononiidae कुल का सदस्य; midge
महुआ	विशाल वृक्ष जिसके फल की शराब बनती है; Bassia latifolia
मुस्ता	पानी के किनारे उगने वाली एक घास; मोथा; sedge
मांसभोजी	विशेषकर मृत मांस खानेवाला; Sarcophagus
माध्यक	एक प्रकार की औसत संख्या जिसमें घटनाओं की संख्या के अनुसार वह मध्य में रहती है; median
मृदुकवची	नरम शरीर वाले जल-जंतु; mollusc
मृदुरोमिल	पक्षियों के सर्वाधिक नरम तथा गरम पर; down
यष्टि	पतली शाखा, डाल, यष्टिक, पक्षिसाद; branch
यष्टिसाद	शाखा पर बैठने वाले, डालग्राही; perch, perching
यूथ	पक्षियों का झुंड; covey
यूथचर	यूथप्रिय, सामाजिक, झुंड में खाने, रहने वाले; gregarious
यूष	रस; juice
रंक	दरिद्र; (मीनरंक–मछली का लोभी गरीब) किलकिला; kingfisher
रंग	नाचना; (मत्स्यरंग–मछली के लिए नाचने वाला; किलकिला)
रंगण	एक स्थान पर स्थिर नाचना या उड़ना; hover. थरथराना; भ्रांति
लल	लाल का समासगत रूप; red
लैगून	समुद्री पानी से बनी हुई झील; lagoon
लोमक	कांस घास के फूल का कपासी हिस्सा; शाल्मलि का भी; floss
लौटन	प्रवास पश्चात पक्षियों का प्रजनन क्षेत्रों में लौटना
वंश	कुछ कुछ समान 'जातियों' के पक्षियों की संहति 'वंश' कहलाती है; वर्गीकरण में 'कुल' तथा 'जाति' के बीच की कड़ी : genus, genera
वर्ग	वर्गीकरण में संघ (Phylum) तथा गण (order) के बीच की कड़ी; class
वर्गीकरण	सभी वस्तुओं, प्राणियों को उनके भौतिक गुणों के आधार पर समूहों में बांटना। सभी प्राणियों को सात श्रेणियों में बांटा गया है–'जसंवग कुवंजा'।
वर्णिमा	रंग की छटा, आभा; Hue, tint or quality of a colour
वल्कली	कठोर या परुष कवची; crustacea

वल्मीक	दीमक की मिट्टी की बांबी; ant hill
विक्षेपण	एक समूह का अपने अवयवों में बंटना; dispersion
विरचन	धोरण; उड़ान में पक्षियों का विन्यास; flying formation
विशाल	बृहत; giant
विशाव	ताजे पंख वाला शावक; fledgeling
वेदार	बड़ा गोध या गोह; monitor lizard
व्याप्ति	फैलाव, पक्षी की रिहाइश के स्थान का फैलाव या वितरण; distribution
शंखी	कोशित कीट; pupa
शंबु	Mytilacea तथा Unionacea कुलों के द्विकपाटी प्राणी, शुक्ति; bivalves
शल्क	मछली के समान त्वचा की बनावट; scale
शावक	पक्षियों के शिशु; चकुला, चिंजा, चूजा; fledgeling
शिखर	चोटी, शिखा; crown, crest
शीर्ष	सिर; head, top
शेखर	शिखाधारी, शिखा; crested
संकर्म	उभयलाभप्रद कार्य; synergy : 1+1>2
संघ	वर्गीकरण में जगत (kingdom) तथा वर्ग (class) के बीच; phylum
सरीसृप	रेंगने वाले जैसे सांप, छिपकली आदि जंतु; reptiles
सादृश्य	आनुरूप्य, समरूपता, छद्मावरण; camonflage
सिंघाड़ा	पानी में पैदा होने वाली एक प्रकार की (चौड़े पत्ते वाली) वनस्पति जिसका फल (पसलियों के आकार के) खाया जाता है; water-chestnut
सूंडी	इल्ली, झिनगा, कीटों के डिंभ; caterpillar. grub, 'agrotis', 'opatrum'
सेवार	एरका, जल-घास; bulrush
स्फुटन	अंडों से चूजों का निकलना; अंडजोत्पत्ति; hatching

अंग और उपांग

अंस	स्कंध, कंधा; Shoulder
अंसीय	कंधीय, कंधी; scapular
अंसपिच्छ	कंधीय पिच्छ
अग्रग कोर	पंख की सामने वाली या आगे वाली किनार; leading edge
अगाड़ी	सामने के अंग
अधः	नीचे का, निम्न; lower, under
अधिपक्ष्माभ	बरौनियों के ऊपर की आभा; भौंह, भ्रू; supercilium
अधोपुच्छ	पूंछ का निम्न भाग; under tail
अनुकपाल	सिर का शिखर तथा घाटा के बीच का भाग; occiput
आवरक,	आवरण, छाद, परों का छाद; coverts
उत्तमांग	छाती, ग्रीवा, सिर
उदर	पेट; belly, abdomen
उर	छाती, वक्ष (विशेषकर निचला)
ऊरू	जंघा, रान
एषणी	छानबीन करने वाली; probing
कंठ	सामने की ग्रीवा; throat
कंठा	चौड़ी कंठी
कंठी	कंठ पर पहनने वाली माला या पहनने वाला
कंध	अंस; scapula
कंधी	कंधे वाला (वाली)
कंधर	गरदन, विशेषकर निम्न, ग्रीवा का पिछला भाग; lower nape
कटि	कमर; पक्षी के संदर्भ में **ऊपरी कमर**; rump
कटीर	कूल्हों का गर्त; कटिप्रोथ; rump
कर्ण	कान
कल्ला	ठोड़ी तथा कंठ; (नई कोमल पत्ती)
कपाल	सिर का ऊपरी भाग; भाल, शिखर तथा अनुकपाल

कपोल	गाल cheek; गंड
कूर्च	चंचुनेत्रांतर, आंख तथा चोंच के बीच का भाग; lores
कक्ष	कांख पत्ती के डंठल था टहनी के बीच का कोण; axil
कक्षक	कांख; axilla
कक्षपिच्छ	कक्ष पर; axillars
काक्षिक	कक्ष पर; axillaries
काकल	कंठमणि; टेंटुआ, कौआ, घाटी; adam's apple
कोमलपिच्छ	वे पिच्छ जो देह पिच्छ के नीचे होते हैं; down-feathers
कोर	किनार; edge
कूब	ऊपरी पीठ; upper back
कोशित	कीट की तृतीय अवस्था, शंखी; pupa
गंड	कपोल; cheek
गंडास्थि	कपोलास्थि; malar bone
गरदन	ग्रीवा का पिछला भाग, घाट, घाटा, कंधरा, गुछी
गरदनी	गरदन पर डाला हुआ कपड़ा या अन्य वस्तु
गला	गरदन, कंठ, ग्रीवा, गल
गाल	कपोल; cheek
गुछी	गरदन; ग्रीवा का पिछला भाग; nape
गार्जेट	कल्ला, कपोत आदि को घेरने वाला वृत्त; gorget
गावदुम	चौड़े से सकरी होती पूंछ; graduated tail
गुम्फ	गलमुच्छ; Whiskers
गुल्फ	गोड़ा हांग; leg घुटिका; पादांगुल तथा टखने के बीच की हड्डी tarus
ग्रंथि	रस स्रवण करने वाला उपांग; gland
ग्रीवा	कंठ तथा गरदन; neck; throat and nape
घांटी	कंठमणि, कौआ; काकल; throat
घाटा	गरदन का ऊपरी भाग; घाट; upper nape
चंचु	चोंच; beak, mandible
चिबुक	ठुड्डी; ओंठ के नीचे की हड्डी, ठोड़ी; chin
चोटी	शिखर; crest
छाती	वक्ष; chest, breast
छाद	आवरक; परों का आवरण; coverts
जंघा	जांघ; घुटने तथा कमर के बीच का अंग; रान; thigh
जानु	घुटना; knee

टंकाकार	छैनी का आकार; फन्नी; wedge-shaped
टांग	टंग; गोड़ा; leg
टखना	चरण तथा पिंडली का जोड़;0 ankle
टेंटुआ	काकिल, कंठमणि, काकल, घाटी; adam's apple
ठाठल	मांसलपालि; wattle
ठुड्डी	चिबुक ठोड़ी; Chin
	डांस भुनगा, दंश; gnat.
डालग्राही	डाल पकड़कर बैठने वाला पक्षी; Perching
डिंब	अंडा; egg
डिम्भ	इल्ली; larva
डिंभक	इल्ली; larva
डिंभकोष	प्रडिम्भ कोष; pupal gallery
ढक्कन	आवरक, छाद (परों का); covert
तृतीयक	पंख का तीसरा भाग; tertiaries
त्रोटि	चंचु, चोंच, त्रोटी; beak
देहपिच्छ	आकृति पिच्छ; Penna; contour feather, beak
द्वितीयक	पंख का दूसरा भाग; secondaries
धोरण	विरचन; flying formation
नाखून	पादांगुल के नख, पंजे के नख; talon
निम्नांग	पेट, कमर और पूंछ; limbs
निर्मोचन	परों का झड़ना; moulting
निलंबी पर	लटकने वाले पर; pendant
नीड़ शावक	nestling
पंख	पक्ष, डैने; wing
पंख किनार	wing edge
पंजा	पक्षियों (पशुओं) का नाखूनी पैर; नखर; claw, talon
पूंछ	पूच्छ, दुम; tail
पग	टांग, गोड़ाद्ध; leg
पक्ष	पंख, डैने; wing
पक्षक	छोटा पंख; winglet
पक्षति	पिच्छ-कलाप या समूह; परों या पिच्छों का समूह; plumage
पक्ष छोर	पंखों का कोना; wingtip
पक्षपिच्छ	पंख के पर; remiges, wing's feathers
पक्षी	पखेरू पंछी; पर वाला द्विपाद कशेरुकी प्राणी; Bird

पखुरा कंधे और बांह के जोड़ के पास का अंग

पक्षांत पंख, भुजा, पंख काटना, पर कैंच करना; pinion

पखेरू पक्षी, खेचर, पाखी, खग, पच्छी, विहंग, पंछी, चिड़िया, नभचर, परिंदा

पताका पूंछ लहराती पूंछ; racket-tail

पद पैर, चरण; foot

पदकंट उपांगुष्ठ; spur

पर पक्षी की चमड़ी पर पिच्छाओं (शलों) पर लगे नरम रोम; पिच्छ, feather

पपोटा तीसरी पलक; Nictitating membrane

परितारिका पुतली (आंख की); परितारिका पट्ट; iris

पश्चग पक्ष कोर trailing wing edge; पंख की पिछली किनार

पादांगुलि पैर की अंगुलि; toe

पादजाल झिल्ली लगा चरण; webbed feet

पायु पक्षी की गुदा; vent

पालि ठाठल मुख पर कहीं नरम, मोटा मांस का लटकने वाला अवयव, ललरी, झालर; lobe, wattle, lappet

पिच्छ परों का समूह; feather

पिच्छाक्ष सिंगी सी नलिका, शुरू में पोली बाद में ठोस जिस पर 'पर' लगे रहते हैं, शल; quill

पिच्छक परों का संयोजित पिच्छ; plume

पिछाड़ी पिछला भाग, निचली पीठ तथा उदर से लेकर पूंछ तक का पक्षी का शरीर, पिछौरा

पीठ पृष्ठ, गर्दन तथा कमर के बीच का शरीर; back

पुच्छ पूंछ (पक्षी की); tail

पुच्छांत पूंछ का अंतिम भाग

पुच्छ छाद पूंछ के मूल पर उगने वाले 'पर'

पुच्छ पिच्छ पूंछ के पर समूह; tail feathers

पुच्छ मूल पूंछ का आरंभिक सिरा; tail's root

पूंछ पर (लंबे) पूंछ के लंबे पिच्छ; retrices

पेड़ू नाभि तथा उपस्थ के बीच का भाग; निचले उदर से पायु तक का भाग; मध्य निचला शरीर

पृष्ठ पीठ; back

प्रडिम्भ कोष कोशित समूह; pupal gallery

प्राथमिक छाद पंख छादों में निचला छाद; primary coverts

प्राथमिक पिच्छ	पंख का पहला भाग जो नोक या पक्ष छोर की तरफ होते हैं; primary wing-feathers
बाजू	पार्श्व; flank
बुनकर पक्षी	घोंसला बुनने वाला पक्षी; weaver bird
बृहत्पंख छाद	बड़ा पंख-छाद; greater wing coverts
भाल	माथा, ललाट; forehead
भौंह	भ्रू, भौं, आंख के ऊपर धनुषाकार बाल; eye-brow supercilium
माध्यक पक्षछाद	पंख के बीच वाले छाद; median wing coverts
मुंड	ऊपरी सिर; कपाल का वह भाग जिस पर बाल उगते हैं
मृदुरोमिल	नरम रोम वाला; with down feathers
यष्टिग्राही	यष्टिसाद, डाल, शाखा को पंजों से पकड़ने बैठने वाला पक्षी; डालग्राही; Perching bird
रान	जांघ, ऊरु, कमर और घुटने के बीच का शरीर; thigh
रोम	त्वचा या चमड़ी से उगने वाले पर या बाल, रोयां; animal hair, wool, fir, bristle, down
रोमपिच्छ	लगभग बाल के समान पर; filoplume
लघु पंख-छाद	छोटे पंख-छाद; lesser wing coverts
ललरी	कान के नीचे या अन्य लटकने वाला नरम मोटा मांस अवयव, लोलकी, ठाठल; पालि; wattle, lappet
वक्ष	छाती; chest, breast
वृक्षारोही	वृक्ष पर चढ़ने वाला (पक्षी); tree climber
शल	पिच्छाक्ष, पिच्छ के केंद्र में हड्डीनुमा या सींगनुमा नलिका जो प्रारंभ में पोली रहती है तथा बाद में वर्गाकार ठोस, तथा जिस पर 'पर' लगे रहते हैं; quill
शलभाश	वे पक्षी जो मुख्यतया पतंगे खाते हैं
शल्क	मछली के ऊपरी सतह की बनावट की तरह अर्ध गोलकों का विन्यास; scale
शावक	पक्षियों (या जानवरों) का शिशु जिसके पर पूरी तरह न उगे हों; चूजा, चेनुआ; fledgeling
शिखर	सिर का ऊपरी भाग, चोटी, शिखा; crown, crest
शिखरी	शिखा सहित; शेखर; crested
शीर्ष	सिर, मस्तक, माथा, ललाट, किसी वस्तु का सबसे ऊपरी हिस्सा; the head, top part
सम्मुख भाग	सामने का भाग; सिर, गर्दन तथा वक्ष और पीठ, अगाड़ी; front
सिर	गरदन के ऊपर का शरीर; head

रंगों की वर्णिमाएं/परिभाषाएं

रंगों की वर्णिमाएं

स्वाद, सुगंध, आवाज या गान, स्पर्शबोध या रंग का शब्दों में वस्तुपरक वर्णन, यदि असंभव नहीं तो अत्यंत कठिन काम है। [तुलसी की एक चौपाई का पुनःउद्धरण करना चाहता हूं—"श्याम गौर किमि कहौं बखानी। गिरा अनयन नयन बिनु बानी।।" ...जिह्वा के पास नयन नहीं हैं तथा नयनों के पास वाणी नहीं है !] इन्हें समझाने के लिए उदाहरणों की मदद लेना नितांत आवश्यक है। मात्र 'लाल' रंग कहने से प्रत्येक श्रोता या पाठक को विभिन्न लाल ही समझ में आएंगे। खरबूजी लाल, लोहित या मंडूरी लाल कहने से 'विभन्नता' बहुत सीमित हो जायेगी किसी श्रोता का 'लोहित' अधिक गाढ़ा हो सकता है और किसी का कम; इसलिए विविधता थोड़ी बहुत बनी रहेगी। इस विविधता को इस पुस्तक में नगण्य करने के लिए रंगों का उनके नामों के साथ मुद्रण किया जा रहा है—यथा लोहित की एक पट्टी जिसमें कम गाढ़े से शुरू होकर अधिक गाढ़ा लोहित दर्शाया गया है। यह लोहित कितना परिशुद्ध मुद्रण होता है। यह मुद्रंण की उच्च प्रौद्योगिकी पर निर्भर करेगा। किंतु तब भी रंगों की आपेक्षिक परिशुद्धि बनी रहेगी—यथा, जो लोहित पट्टी में दर्शाया गया है लगभग वैसा ही लोहित सभी स्थानों में होगा।

पक्षियों के रंग तो अनंत (लगभग) हैं किंतु शब्द बहुत सीमित, इसलिए एक एक शब्द रंगों की आभाओं की उनके सांद्रता (गाढ़ा या हल्का) के एक क्षेत्र को ही संप्रेषित करेगा, एक शुद्ध रंग को नहीं। अंततः सही रंग पंछी निहारक उस पंछी को देखकर ही समझ सकेगा, मेरे शब्द उसे उसके निकट ही ले जा सकेंगे।

रंग भी अजीब हैं, वही रंग गीला होने पर सूखे से भिन्न नजर आता है, छाया में प्रकाश वाले रंग से भिन्न तथा भिन्न रंगों के सान्निध्य में जैसे वही रंग एक दूसरी आभा ले लेता है। सबसे मुख्य बात यह कि पंछी स्वयं उम्र, लिंग, स्थान, ऋतु, आहार के अनुसार रंग बदलता है। क्या रंगों के आकर्षण का एक कारण उनकी अनंत विविधता-स्थैतिक ही नहीं, गतिक भी—नहीं है ? मैं रंगों के लिए लगभग सौ शब्दों का उपयोग करना चाहता था ताकि 'भूरी आभा लिए शोण', 'जैतूनी आभा लिए पीला' जैसे पदों का उपयोग कम से कम करूं। किंतु व्यवहार

में पंछियों की पुस्तक में जिसमें वैसे भी नए नाम बनाए जा रहे हों, इतने सारे रंगों के नाम पाठक को भ्रमित नहीं तो चकित तो कर ही सकते हैं। अतएव मात्र लगभग 45 शब्दों से ही काम चला रहा हूं। इन शब्दों को नीचे दर्शाया गया है। रंग के साथ उन पंछियों की क्रम संख्या भी दी गई है जिनमें वे रंग हैं। याद रखिए, असली रंगों का ज्ञान तथा आनंद आपको पंछी निहारन में ही मिलेगा, शब्द तो मात्र इशारा हैं।

रंगों की परिभाषाएं

कांस्य	कंसल, हल्की तांबई-चंदनी आभा लिए सफेद; bronze
शोण	किरमिजी, जांबुकी आभा लिए चमकदार लोहित; crimson
लोहित	रक्तिम, लहू के सामान लाल; blood
पलाश	ढाक, टेसू, चमकदार लाल आभा लिए नारंगी; flame of the forest
पाटल	गुलाबी, भूरी आभा लिए लाल; rose
पिंजर	पाटली आभा लिए पीला; fulvous
तांबई	हल्की पीली आभा लिए शोण; copper
ईंगुरी	नारंगी आभा लिए लोहित; vermilion
केसरी	कुमकुम, भूरी आभा लिए नारंगी; saffron
सिंदूरी	नारंगी आभा लिए शोण; scarlet
नारंगी	लाल पीले का विशेष मिश्रण; orange
मंडूक	मुरचई; मोरचे, जंग समान, कलौंछ भूरी आभा लिए केसरी; ferrugi-nous
कपिल	लाल आभा लिए भूरा; rufous
बदामी	बादाम गिरी का रंग, नारंगी आभा लिए भूरा; almond
भूरा	बभ्रु; लाल, काले तथा पीले का विशेष मिश्रण; brown
पांगर	कनोर; केसरी आभा लिए कत्थई; chestnut
कत्थई	प्रगाढ़ भूरा, कत्थ, कथ; catechu
कॉफी	कलौंछ भूरा; coffee
पांगर-ललौंही	कथपांगर, ललपांगर, ललकथ; bay-colour
श्याव	कत्थाभ काला; brownish black
पिंग	गेहुंआ हल्की लाल आभा लिए हल्का पीला, हल्का पिंगल;. tawny
पिंगल	गाढ़ा पिंग

रेतीला	बलुई, भूरी आभा लिए पिंग; sand
पांडु	पांडुर, भूरी आभा लिए हल्का पीला; buff
पुखराजी	हल्की जांबुकी आभा लिए कत्थई पीला; topaz
चीकुई	लाल तथा कत्थाभा लिए पीला; sepia
सुनहला	कुंदन, कंचन, स्वर्णिम पीला; gold
नींबुइ	lemon
पिअरी	हल्दी; turmeric
खाकी	कंजई, मटिया, पीले हरे का विशेष मिश्रण; khaki
धानी	शाद्वली; कच्ची धान सा; कच्चा हरा; सरसोंइ; verdure, viriscent
सुआपंखी	तोतई; धानी से अधिक हरा; parrot
शमई	हरी आभा लिए काला; black with green tinge
जैतूनी	जैतनू की पत्तियों-सा नीली आभा लिए हरा; olive
फिरोजा	हरी आभा लिए चमकीला नीला; turquoise
तूतिया	निलांजन नीले थोथे-सा; blue vitriol
अरुण	आसमानी आभा लिए केसरी, नारंगी, पाटल; dawn-colours
सलेटी	नीली आभा लिए काला; bluish dark grey
अंजन	गाढ़ा कलौंछ; dark grey
भस्मी	राख के समान हल्की नीलाभा लिए सफेद; ash
जांबुकी	जामुन के गूदे-सा रंग, हल्का या गाढ़ा बैंगनी; purple
जामुनी	नीली आभा लिए प्रगाढ़ जांबुकी
नीलक	गुलाबी आभा लिए हल्का जांबुकी; नीलित; lilac
मेघ	वर्षाकारी बादलों का कालिमा वाला रंग; rainy cloud, dark grey
धूमिल	गाढ़ा कजरारा, धुएं के समान काला; smoke
कलौंछ	मैला सफेद, हल्की कालिमा लिए हुए; grey
धूसर	हल्का भूरा, भस्मी, कलौंछ लिए सफेद; off-white